# डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर के ऐतिहासिक उपन्यासों का अध्ययन

## (सार्वकालिक चेतना के सन्दर्भ में)

## Dr. Rajendra Mohan Bhatnagar Ke Aitihasik Upanyaso Ka Adhyayan

## (Sarvkalik Chetna Ke Sandarbh Me)

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा

की

पीएच.डी. (हिन्दी), उपाधि हेतु प्रस्तुत

**शोध–प्रबन्ध**

**कला संकाय**

**शोधार्थी**

**सम्पूर्णानन्द गौत्तम**

**शोध पर्यवेक्षक**

**डॉ. मुरलिया शर्मा**

**हिन्दी–विभाग**

**राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा (राज.)**

**कोटा विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)**

**वर्ष 2020**

# C E R T I F I C A T E

I feel great pleasure in certifying that the thesis entitled **''डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर के ऐतिहासिक उपन्यासों का अध्ययन (सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में)''** by **Sampurnanand Gotam** under my guidance.

He has completed the following requirements as per Ph.D. (Hindi) regulations of the university.

a. Course work as per the university rules.
b. Residential requirements of the university (200 days.)
c. Regularly submitted annual progress report.
d. Presented his work in the departmental committee.
e. Published/accepted minimum of two research papers in a referred research journal.

I recommend the submission of thesis.

Date : **Dr. Muraliya Sharma**

Place : (Research Supervisor)

# ANTI-PLAGIARISM CERTIFICATE

It is certified that Ph.D Thesis "**डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर के ऐतिहासिक उपन्यासों का अध्ययन (सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में)**" by **Sampurnanand Gotam** has been examined by us with the following anti-plagiarism tools. We undertake the follows :-

a. Thesis has significant new work/knowledge as compared already published or are under consideration to be published elsewhere. No sentence, equation, diagram, table, paragraph or section has been copied verbatim from previous work unless it is placed under quotation marks and duly referenced.

b. The work presented is original and own work of the author (i.e. there is no plagiarism). No ideas, processed, results or words of others have been presented as author's own work.

c. There is no fabrication of data or results which have been complied and analyzed.

d. There is no falsification by manipulating research materials, equipment of processes, or changing or omitting data or results such that the research is not accurately represented in the research record.

e. The thesis has been checked using URKUND and found within limits as per HEC plagiarism Policy and instructions issued from time to time.

**Sampurnanand Gotam**
(Research Scholar)

Place :
Date :

**Dr. Muraliya Sharma**
(Research Supervisor)

Place :
Date :

# शोध–सार

साहित्य सदैव मानव समाज को जीवन मूल्यों एवं संदर्भों के माध्यम से सार्वकालिक सत्य के प्रति चेतना प्रदान करने का उद्देश्यपरक कार्य करता है साहित्य इतिहास और वर्तमान के मध्य सेतु स्थापित करता है वर्तमान एवं भविष्य के लिए मानवीय मूल्यों की व्याख्या करता है। डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर जी उपन्यास विधा के ऐसे शिल्पकार है जिन्होंने साहित्य को इतिहास से सम्पृक्त करते हुए वर्तमान एवं भविष्य के समक्ष चिरंतन सत्य को प्रकाशित करने का कार्य किया है। साहित्य सत्याधारित होने पर ही शाश्वत एवं सार्वकालिक होता है अतः उपन्यासकार ने उपन्यास लेखन में महापुरुषों के जीवन चरित्र के माध्यम से मानवीय मूल्यों एवं संघर्ष को लेखन का विषय बनाया है। महापुरुषों का जीवन चरित्र प्रस्तुत करते समय इतिहास से प्राप्त तथ्यों एवं निष्कर्षों के द्वारा तत्कालीन द्वन्द्व को भी प्रकाशित किया है महापुरुषों द्वारा किये गये कार्यों की पृष्ठभूमि में सार्वकालिक सत्य को परखा है। डॉ. भटनागर जी द्वारा रचित ऐतिहासिक उपन्यासों में सार्वकालिक चेतना को मानवीय मूल्यों के संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है। मूल्य शाश्वत, सार्वभौमिक होते है जीवन से सम्पृक्त संदर्भो में इनकी प्रासंगिकता बनी रहती है। उपन्यासों में मानवीय मूल्यों के संदर्भ में सार्वकालिक चेतना को शोध का विषय बनाने का मेरा प्रयास रहा है। सत्य, अहिंसा, स्वतंत्रता, धर्म, संस्कृति, अर्थ, संवेदना, स्त्री विर्मश, दलित विमर्श, सामाजिक संदर्भ, दर्शन, इतिहास, राजनीति, समाज, मानवीय चिंतन, प्रेम, चरित्र जैसे मूल्यों पर महापुरुषों के चिंतन को प्रस्तुत करने के साथ ही वर्तमान पीढ़ी को दिशा देने का प्रयास इनके उपन्यासों में परिलक्षित होता है।

''डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर के ऐतिहासिक उपन्यासों का अध्ययन'' (सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में) शोध विषय को मैंने पाँच अध्यायों में विभाजित करते हुए अंत में उपसंहार प्रस्तुत किया है।

**प्रथम अध्याय** सार्वकालिक चेतना के विविध आयाम एवं स्वरुप से संबंधित है। इसमें सार्वकालिक चेतना के अर्थ, स्वरुप, प्रकृति, अन्तर्सम्बन्ध, विविध स्वरुप आदि का विवेचन किया गया है। यह इसलिए है कि शोध कार्य की क्रियान्विति सार्वकालिक चेतना की परिधि में ही रहे।

**द्वितीय अध्याय** में डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर के उपन्यासों का तात्विक विवेचन किया गया है। जिसमें उपन्यास की परिभाषा, स्वरुप, संवेदना, शिल्प, समसामयिक संदर्भ के साथ ही चरित्रगत विविध स्वरुप पर प्रकाश डालते हुए उपन्यासकार के व्यक्तित्व एवं कृतिव का संक्षिप्त परिचय भी सम्मिलित किया गया है।

**तृतीय अध्याय** में डॉ.भटनागर के ऐतिहासिक उपन्यासों में निहित ऐतिहासिकता, सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक चेतना का अध्ययन सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में किया गया है। इन बिन्दुओं के माध्यम से मानवीय जीवन मूल्यों को लेकर साहित्यकार के चिंतन को स्पष्ट करने का संक्षिप्त प्रयास किया है।

**चतुर्थ अध्याय** में डॉ. भटनागर के उपन्यासों में सार्वकालिकता के विविध आयामों का विवेचन करते हुए, धर्म और सम्प्रदाय, प्रेम विषयक स्थापनाएँ नगरीय एवं ग्रामीण बोध, स्त्री विमर्श, दलित विमर्श जैसे बिन्दुओं को व्याख्यायित किया गया है। साहित्यकार द्वारा निहित उद्देश्य की क्रियान्विति को स्पष्ट रुप से समझा जा सके।

**पंचम अध्याय** में डॉ. भटनागर के उपन्यासों में स्थापित मूल्य चिंतन एवं शिल्प गत सौन्दर्य को निरुपित किया गया है। इस अध्याय के अंतर्गत मानवीय मूल्यों का चिंतन दर्शन धर्म एवं संस्कृति, समसामयिकता, साहित्य की विविध दृष्टियाँ एवं शिल्प विधान के महत्व को रेखांकित किया है।

अंत में **उपसंहार** में डॉ. भटनागर के उपन्यासों में व्यक्त सार्वकालिक चेतना के संदर्भ को विषयवार निष्कर्ष के रुप में प्रस्तुत किया है साथ ही उपन्यासकार द्वारा स्थापित मूल्यों का भी सम्यक् विवेचन किया गया है। साहित्य में स्थापित मानवीय मूल्यों का अध्ययन मानव समाज को सदैव दिशा देने का कार्य करता है किसी भी साहित्य का मूल्यांकन या विश्लेषण मानवीय मूल्यों के संदर्भ में ही होना चाहिए क्योंकि साहित्य की यही विशेषता हर युग में शाश्वत एवं प्रासंगिक बनी रहेगी।

♦♦♦♦

# CANDIDATE DECLARATION

I here by certify that the work, which is being presented in this thesis, entitled " **डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर के ऐतिहासिक उपन्यासों का अध्ययन (सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में)**" in partial fulfilment of the requirement for the award of the Degree of Doctor of philosophy, carried under the supervision of **Dr. Muraliya Sharma** and submitted to the research center University of Kota, University of Kota, Kota represents my ideas in my own words and whenever other ideas or words have been included. I have adequately cited and referenced the original sources. The work presented in this thesis has not been submitted else where for the award any other degree or diploma from any institution.

I also declare that I have adhered to all principles of academics honesty and integrity and have not misrepresented or fabricated or falsified any idea/date/fact/source in my submission. I understand that violation off the above wil be a cause for disciplinary action by the university and can also evoke penal action from the sources which have thus not been properly cited from whom proper permission has not been taken when needed.

Date : **Sampurnanand Gotam**

Place :

This is to certify that the above statement made by (Mr.) Sampurnanand Gotam (Registration No........................) is correct to the best of my knowledge.

Date : **Dr. Muraliya Sharma**

Place : (Reseach Supervisor)

# प्राक्कथन

राजस्थान के स्वतंत्रता के अमर सेनानी महाराणा प्रताप के व्यक्तित्व के बारे में मुझे बचपन से ही सुनना अच्छा लगता था। पिताश्री अध्यापक थे। अतः संस्कारों में महापुरुषों के महान कार्यों को हर अवसर पर समझाया जाता था। महापुरुषों के प्रति श्रद्धा एवं विश्वास होने के कारण ही उनके जीवन चरित्र को आत्मसात् करने के लिए मेरा जिज्ञासु मन सदैव लालायित रहता है। शोध के क्षेत्र में मुझे अवसर मिला तो मैंने राजकीय महाविद्यालय कोटा की हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ. मुरलिया शर्मा जी से इस विषय पर चर्चा की। डॉ. मुरलिया जिनका चिन्तन सदैव जीवन मूल्यों एवं सामाजिक विषयों पर अधिक रहा है उन्होंने मुझे डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर जी का 'एक अंतहीन युद्ध' उपन्यास का अध्ययन करने के लिए कहा। वहीं से मेरा मन महापुरुषों के प्रति अनुसंधान करने के लिए प्रेरित हुआ। मेरी जिज्ञासा को सार्थक दिशा देने का प्रयास डॉ. मुरलिया शर्मा जी के कुशल निर्देशन में प्रारम्भ हुआ। डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर हिन्दी उपन्यास विधा के एक सशक्त हस्ताक्षर है। इनके लेखन का उद्देश्य भारतीय इतिहास के महान् व्यक्तियों के जीवन चरित्र के माध्यम से वर्तमान चिंतन को दिशा प्रदान करना रहा है। डॉ. भटनागर के उपन्यासों का अध्ययन करने पर इनके उपन्यासों में जो दृष्टि एवं चिंतन परिलक्षित होता है। वह सार्वकालिक चेतना के अधिक निकट है। शोध निर्देशक जी ने गहन अध्ययन एवं मनन के उपरांत डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर जी के ऐतिहासिक उपन्यासों का अध्ययन (सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में) विषय पर मुझे शोध कार्य करने के लिये प्रेरित किया।

मेरे द्वारा डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर के ऐतिहासिक उपन्यासों में मीरा, महर्षि अरविन्द, सरदार पटेल, महात्मा गाँधी, चैतन्य महाप्रभु, सुभाष चन्द्र बोस, महाराणा प्रताप, विवेकानंद, सूरदास, जैसे युग दृष्टा के जीवन चरित्र पर लिखे गये उपन्यासों का चयन किया गया। मैंने अपने शोध कार्य को समीक्षात्मक रूप से इन चरित्रों के साथ ही अधिक सम्पृक्त रखा है। तथा शोध कार्य भी इन्हीं पर रचित उपन्यासों तक सीमित है।

शोध कार्य हेतु मैंने इनके द्वारा रचित सभी ऐतिहासिक उपन्यासों एवं अन्य गद्य रचनाओं का भी अध्ययन किया है। यह अध्ययन इसलिए आवश्यक था क्योंकि मेरा उद्देश्य उपन्यासों में उपस्थित सार्वकालिक चेतना को आत्मसात् करना था। जो इस शोध कार्य के लिए नितांत आवश्यक था। इनके उपन्यासों का अध्ययन करने के पश्चात् ही मेरी जिज्ञासा समाधान पाती है। हम समझ सकते हैं कि एक उपन्यासकार के तौर पर डॉ. भटनागर जी ने अपने साहित्यिक कर्तव्यों की पूर्ति कहाँ तक की है ? इनके द्वारा व्यक्त चिंतन कितना सार्वकालिक चेतना का वाहक है ? सार्वकालिक चेतना से संबंधित मूल्यों को लेकर इनकी दृष्टि क्या रही है ? इनके

द्वारा स्थापित सार्वकालिक मूल्यों का चिंतन कितना उपयोगी है ? इनके द्वारा जीवन मूल्यों की पुर्नस्थापना का प्रयास कितना सार्थक है ? सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में इनके द्वारा रचित उपन्यास अपने साहित्यिक प्रयासों में कहाँ तक सफल रहे हैं ? मेरा शोध कार्य डॉ. भटनागर के उपन्यासों में इन सभी प्रश्नों की जिज्ञासा को निरूपित करने का प्रयास है।

इस शोध विषय को मैंने पाँच अध्यायों में विभाजित करते हुए अंत में उपसंहार प्रस्तुत किया है। शोध कार्य के अंत में जिन पुस्तकों, उपन्यासों, संदर्भ ग्रंथों, पत्रिकाओं, शब्दकोशों और मेगजीनों की सहायता ली है। इन्हें संदर्भ ग्रंथ सूची में सूचीबद्ध किया गया है।

**प्रथम अध्याय** सार्वकालिक चेतना के विविध आयाम एवं स्वरूप से संबंधित है। इसमें सार्वकालिक चेतना के अर्थ, स्वरूप, प्रकृति, अन्तर्सम्बन्ध, विविध स्वरूप आदि का विवेचन किया गया है। यह इसलिए है कि शोध कार्य की क्रियान्विति सार्वकालिक चेतना की परिधि में ही रहे।

**द्वितीय अध्याय** में डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर के उपन्यासों का तात्विक विवेचन किया गया है। जिसमें उपन्यास की परिभाषा, स्वरूप, संवेदना, शिल्प, समसामयिक संदर्भ के साथ ही चरित्रगत विविध स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए उपन्यासकार के व्यक्तित्व एवं कृतिव का संक्षिप्त परिचय भी सम्मिलित किया गया है।

**तृतीय अध्याय** में डॉ. भटनागर के ऐतिहासिक उपन्यासों में निहित ऐतिहासिकता, सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक चेतना का अध्ययन सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में किया गया है। इन बिन्दुओं के माध्यम से मानवीय जीवन मूल्यों को लेकर साहित्यकार के चिंतन को स्पष्ट करने का संक्षिप्त प्रयास किया है।

**चतुर्थ अध्याय** में डॉ. भटनागर के उपन्यासों में सार्वकालिकता के विविध आयामों का विवेचन करते हुए, धर्म और सम्प्रदाय, प्रेम विषयक स्थापनाएँ नगरीय एवं ग्रामीण बोध, स्त्री विमर्श, दलित विमर्श जैसे बिन्दुओं को व्याख्यायित किया गया है। साहित्यकार द्वारा निहित उद्देश्य की क्रियान्विति को स्पष्ट रूप से समझा जा सके।

**पंचम अध्याय** में डॉ. भटनागर के उपन्यासों में स्थापित मूल्य चिंतन एवं शिल्प गत सौन्दर्य को निरूपित किया गया है। इस अध्याय के अंतर्गत मानवीय मूल्यों का चिंतन दर्शन धर्म एवं संस्कृति, समसामयिकता, साहित्य की विविध दृष्टियाँ एवं शिल्प विधान के महत्व को रेखांकित किया है।

अंत में **उपसंहार** में डॉ. भटनागर के उपन्यासों में व्यक्त सार्वकालिक चेतना के संदर्भ को विषयवार निष्कर्ष के रूप में प्रस्तुत किया गया है। साथ ही उपन्यासकार द्वारा स्थापित मूल्यों का भी सम्यक् विवेचन किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची में इस शोध के आधार ग्रंथों, संदर्भ ग्रंथों, अंग्रेजी ग्रंथों, पत्रिकाओं, शब्दकोशों एवं इन्टरनेट उपलब्ध मेंगजीन, आदि की सूची प्रस्तुत की गई है।

विषय चयन से लेकर इस शोध के प्रस्तुतिकरण तक उत्साहवर्द्धक दिशा निर्देशन के लिए मैं अपनी सौम्य निर्देशक डॉ. (श्रीमती) मुरलिया शर्मा का हृदय से ऋणी हूँ। मुझे सामग्री संकलन के लिए स्वयं उपन्यासकार डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, डॉ. मथुरेशनंदन कुलश्रेष्ठ व अनेकानेक प्रकाशन संस्थानों एवं महाविद्यालय के पुस्तकालय से उपयुक्त सहायता मिली है। अतएव मैं इन सबके प्रति आभार व्यक्त करता हूँ। मेरे बड़े भ्राता डॉ. हरिहरानंद शर्मा जी शोध कार्य की जटिलता को आसान करने में अपना श्रम एवं मार्गदर्शन प्रदान किया है। इस हेतु में सभी साभार एवं धन्यवाद के अधिकारी है।

मेरे पूज्य पिताजी श्री भैरूलाल शास्त्री ने सदैव मुझे अध्ययन के लिए प्रेरित किया है। मेरे अध्ययनन के प्रति निष्ठावान् लगाव के वे प्रेरणास्त्रोत है। मेरी पूज्य माताजी श्रीमती इन्द्रा शर्मा जी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित कर, मैं उनके ऋण से उऋण होना नहीं चाहता, उनकी कृपा, प्रेरणा और मार्गदर्शन मेरे जीवन पथ में आलोक भरे। यही मेरी आकांक्षा है। अंकल जी श्री. सुरेन्द्र शर्मा जी का भी हार्दिक आभार जिनका पुत्रवत् स्नेह और मित्रवत् मार्गदर्शन मुझे विद्यार्थी जीवन से ही प्राप्त होता रहा है। मेरे परिवार के सभी स्वजन एवं मेरी पत्नी श्रीमती रिंकी शर्मा के साथ पुत्र राघव एवं अनुज अन्नू मेरी प्रत्येक उपलब्धि की बेसब्री से प्रतीक्षा करते है। मेरे इस सर्जनात्मक अनुष्ठान में उनका भी मानसिक योगदान है। मैं इन सभी को आभार और धन्यवाद देकर इनके अधिकार क्षेत्र को सीमित नहीं करना चाहता, वे सभी इसी प्रकार अपनत्व बनाएँ रखे मेरी यही कामना है।

अंत में, मैं यही कहना चाहूँगा कि हिन्दी की उपन्यास विधा में यदि मेरा शोध प्रबन्ध किंचित् योगदान देने में सफल रहा, तो एक जिज्ञासु विद्यार्थी का प्रयास सार्थक होगा। इस प्रबन्ध में जो कुछ श्लाध्य है। वह गुरूजनों एवं स्वजनों की प्रीती प्रतीति का पुण्य फल है। और जो कुछ अपठनीय है, उसमें मेरी अज्ञता ही मेरी सहचरी है।

**शोधार्थी**

सम्पूर्णानन्द गौत्तम

# विषय—अनुक्रमणिका


| क्र.सं. | विवरण | पृष्ठ संख्या |
|---|---|---|
| 1. | शोध सार | i - ii |
| 2. | प्राक्कथन | iii - iv |
| 3. | **प्रथम अध्याय : सार्वकालिक चेतना के विविध आयाम व स्वरूप** | **1 — 38** |
| | (क) सार्वकालिक चेतना से आशय | |
| | (ख) सार्वकालिक चेतना : प्रकृति एवं स्वरूप | |
| | (ग) साहित्य और सार्वकालिक चेतना अंतःसम्बन्ध | |
| | (घ) सार्वकालिक चेतना के विविध स्वरूप | |
| | (ड) गद्य की विविध विद्याएँ व सार्वकालिक चेतना | |
| 4. | **द्वितीय अध्याय : डॉ राजेन्द्र मोहन भटनागर के उपन्यास : तात्त्विक चिंतन** | **39 — 88** |
| | (क) उपन्यास की परिभाषा एवं प्रकार | |
| | (ख) डॉ भटनागर के उपन्यास : एक अध्ययन | |
| | (ग) डॉ. भटनागर के उपन्यास : संवेदना और शिल्प | |
| | (घ) डॉ. भटनागर के उपन्यास : समसामयिक संदर्भ | |
| | (ड) डॉ. भटनागर के उपन्यास : चरित्रगत विविध स्वरूप | |
| 5. | **तृतीय अध्याय : डॉ. भटनागर के उपन्यास : सार्वकालिक चेतना** | **89 — 127** |
| | (क) ऐतिहासिक चेतना | |
| | (ख) सांस्कृतिक चेतना | |
| | (ग) सामाजिक चेतना | |
| | (घ) आर्थिक चेतना | |
| | (ड.) राजनैतिक चेतना | |

6. **चतुर्थ अध्याय : डॉ. भटनागर के उपन्यास : संवेदना के विविध आयाम** **128 – 183**

(क) धर्म और सम्प्रदाय

(ख) प्रेम विषयक स्थापनाएँ

(ग) नगरीय एवं ग्रामीण बोध

(घ) स्त्री विमर्श

(ड.) दलित विमर्श

7. **पंचम अध्याय : डॉ. भटनागर के उपन्यास :** **184 – 242**

**मूल्य चिंतन और शिल्पगत सौन्दर्य**

(क) मानवीय मूल्य : चिंतन

(ख) दर्शन धर्म एवं संस्कृति की अन्र्तदृष्टि

(ग) समसामयिक संदर्भ

(घ) साहित्य की विविध दृष्टियाँ

(ड.) शिल्प विधान

8. **उपसंहार** **243 – 251**

9. **शोध सारांश** **252 – 264**

10. **संदर्भ ग्रंथ सूची** **265 – 268**

**प्रकाशित शोध पत्र**

# प्रथम – अध्याय

# प्रथम अध्याय

# सार्वकालिक चेतना के विविध आयाम व स्वरूप

## (क) सार्वकालिक चेतना से आशय

हिन्दी उपन्यासों में 'सार्वकालिक' विषय पर विचार करते समय मानव के मस्तिष्क में अनेक प्रश्न कौंधते हैं उन सभी विचारों में मानव मूल्यों और परम्पराओं का मूल्यांकन स्वतः ही होने लगता है। सहस्त्रों वर्षों से चला आ रहा द्वन्द्व मानव मस्तिष्क के सागर में ज्वार की भांति नवीन प्राचीन संरचनाओं से उलझ रहा होता है आखिर ऐसा होना भी आवश्यक है, क्योंकि विषय 'सार्वकालिक' से सम्बन्धित है अर्थात् जो हर समय होता है, जो सब कालों में होता है, सभी नियमों का, सभी सम्बन्धों का, धर्म एवं संस्कृति का, मानव मूल्यों का, सत्य एवं अहिंसा का, व्यक्ति के स्वातंत्र्य एवं अस्तित्व का, राजनीति का, तथा मानव सम्बन्धों का, सार्वकालिकता क्या है? यह प्रश्न ही मानव के मन मस्तिष्क को झंकृत कर देता है। सहस्त्रों वर्षों से चला आ रहा अनुसंधान आज भी पर्याप्त नहीं दिखाई देता है थोड़ा और जानने की चाह मनुष्य को सार्वकालिक बना ही देती है धर्म, संस्कृति किस युग में नहीं थे ? किस युग में नहीं होगें? क्या कल्पना भी की जा सकती है, इन के बिना किसी मानव समुदाय या समाज की। मनुष्य अपनी स्वतंत्रता के लिए सदैव प्रयास कर रहा है युग चाहे वैदिक हो, पौराणिक हो, चाहे आधुनिक, व्यक्ति अपनी स्वतंत्रता एवं अस्तित्व को हर हाल में बनाये रखना चाहता है। वैदिक काल से लेकर आज तक मानव के मूल्यों में किंचित मात्र भी परिवर्तन नहीं हुआ है वह आज भी उन्हीं परम्पराओं एवं संदर्भो में अपने आप को ढूँढने का प्रयास कर रहा है जिन संदर्भो एवं परिस्थितियों में उसके पूर्वज थे। आप चाहे कितने भी आधुनिकता से पूर्णतया प्रेरित हों अपनी संस्कृति को अक्षुण्ण बनाये रखने में अपना योगदान दे रहे है। विषय चाहे धर्म, संस्कृति, स्वतंत्रता, परम्परा या मानवीय मूल्यों का हो, इन सभी तत्वों की सार्वकालिकता अनादि काल से अद्यतन बनी हुई है मनुष्य के विचारों में होने वाला परिवर्तन क्षण भंगुर है परन्तु मानव जीवन के प्रारम्भ से चले आ रहे इन संदर्भो की सार्वकालिकता सदैव बनी रहेगी।

सार्वकालिक से आशय सब काल के लिए, सब समय के लिए उपयुक्त से है काल का चक्र निरंतर गतिशील है वह अपनी परिक्रमा निर्बाध गति से कर रहा है एक प्रक्रिया है, जो अनंत काल से चली आ रही है जो शाश्वत, सत्य, प्रासंगिक एवं सार्वकालिक है। आखिर ऐसा क्या है? जिसे हम सार्वकालिक कह सकते है जैसे प्रकृति, प्रकृति का हर तत्व अपनी सार्वकालिकता का द्योतक है हर युग में उसके अस्तित्व का बना रहना शाश्वत, सत्य एवं सार्वकालिक है। "हर एक

का अपना अस्तित्व है। अब हर एक के अस्तित्व–बिम्ब को एक आँधी उखाड़ फेंकना चाहती है, तब सहज महाराणा प्रताप की याद आने लगती है। वस्तुतः वह हमाारे दुर्द्धर्ष संघर्ष, निष्ठा, समर्पण और पराक्रम की अपूर्व धरोहर है। वह ऐसा इतिहास है, जो कभी मर नहीं सकता। ऐसे भी अनेक प्रयास हुए हैं और आगे भी होते रहेंगे जो महाराणा प्रताप की गरिमा को संदेह की शय्या पर सुलाना चाहेंगे। वे यह भूल गये हैं कि अब महाराणा प्रताप का इतिहास मानव–जीवन का पर्याय बन चुका है और अब कोई भी ऐतिहासिक खोज उसे प्राप्त प्रतिष्ठा से अपदस्थ नहीं कर सकती।''[1] सहस्त्रों वर्षों से प्रकाशित सूर्य, चंद्र, पृथ्वी, वायु, आकाश सब अपनी सार्वकालिकता एवं सार्वभौमिकता का परिचय देते है साहित्य में वर्णित मानव के जीवन मूल्य एवं जीवन संदर्भ भी सार्वकालिक होते है मानव जन्म लेता है तथा उम्र भर अपने जीवन मूल्यों और संदर्भों के साथ संघर्ष और समन्वय करता हुआ इस संसार से चिरकाल के लिए विदा ले लेता है सार्वकालिकता का इससे श्रेष्ठ उदाहरण क्या हो सकता है जन्म–मृत्यु शाश्वत, सत्य, एवं सार्वकालिकता को धारण करने वाला श्रेष्ठ उदाहरण है।

जीवन का एक पक्ष सांसारिक है तो एक पक्ष दार्शनिक है विवेचना का विषय चाहे जो भी रहा हो जैसे राजनीति, धर्म, संस्कृति, समाज, अर्थ, आदि वह कदाचित् अपने जीवन मूल्यों से दूर नहीं रह सकता है जीवन का लक्ष्य सार्वकालिक तत्वों की अनुभूति के साथ ही प्राप्त किया जा सकता है। मानव के व्यवहार को साहस एवं सामर्थ्य सार्वकालिक चेतना के तत्वों द्वारा ही प्राप्त होता है सार्वकालिकता का संदर्भ मानव के जन्म से ही पृथ्वी पर उपस्थित हुआ है जो आज तक अक्षुण्ण बना हुआ है।

'साहित्य समाज का दर्पण है' यह उक्ति सार्वकालिकता की स्वतः व्याख्या प्रस्तुत करती है समाज का आधार मानव की अनुभूतियाँ है इन्हीं अनुभूतियों को साहित्य नवीन दृष्टिकोण के साथ प्रस्तुत करने का श्रम करता है। डॉ. राम विलास शर्मा लिखते है–''व्यक्ति और समाज अन्योन्याश्रित है, व्यक्ति के बिना समाज की कल्पना नहीं की जा सकती, समाज के बिना व्यक्ति एक सामाजिक प्राणी के रूप में असम्भव है। भाव जगत् व्यक्ति के मन में भी होता है। किन्तु उसका परिष्कृत और समृद्ध रूप सामाजिक विकास सामाजिक जीवन से ही संभव हुआ है। भाव जगत् का आधार व्यक्तिगत और सामाजिक दोनों ही कोटि की अनुभूतियाँ है। इन दोनों ही कोटि की अनुभूतियों का आधार मनुष्य का सामाजिक जीवन है।''[2]

महात्मा गाँधी जी द्वारा अपनाया गया 'अहिंसा' का सिद्धान्त किस युग में सार्वकालिक नहीं था जरा विचार कीजिए आखिर किस प्रकार हम कह सकते है कि यह तब प्रासंगिक था तब नहीं था 'धर्म' की सार्वकालिकता पर यद्यपि आज के युग में बहुत से विरोध निषेध के द्वारा इसके स्वरूप पर प्रश्न चिहन लगाने का प्रयास किया जा रहा है परन्तु सच यह है कि मानव चाहे कितना भी वैज्ञानिक या आधुनिक हो जाए वह धर्म के मूल सिद्धान्तों एवं स्वरूप से पृथक नहीं हो

सकता है राजनीति वर्तमान युग में यद्यपि दूषित हो गई है परन्तु यह कहना कतई उचित नहीं होगा कि वह अपनी सार्वकालिक चेतना से मुक्त हो गई है किसी भी क्षणिक या दीर्घकालिक परिवर्तन, किसी मूल संदर्भ की अवहेलना अधिक समय तक नहीं कर सकता है संसार के प्रत्येक देश, काल में होने वाले आंदोलन एवं क्रांति इसका प्रमाण है।

भारतीय साहित्य में पृथ्वी के जन्म से लेकर वर्तमान समय तक ऐसे अनेक उदाहरण आप को मिल जाएगें जो यह सिद्ध करते है कि सार्वकालिक चेतना मनुष्य के साथ उसी प्रकार सम्पृक्त है जिस प्रकार पृथ्वी के साथ प्रकृति है साहित्यकार का प्रमुख दायित्व यह होता है कि वह अतीत से संदर्भों का चयन कर वर्तमान को दिशा देने का कार्य करे। भारतीय जनमानस को साहित्य ने सत्यं, शिवं एवं सुन्दरम् की परिकल्पना से सम्बद्ध किया है हमारे प्राचीन ऋषि मुनियों ने जिन मूल्यों को आधार बनाकर अपने ग्रंथों की रचना की वे आज भी प्रासंगिक है। श्रीमद्भागवत गीता, रामायण, महाभारत, पुराण एवं अन्य कई ग्रंथों में जो वैज्ञानिकता, धार्मिकता, सांस्कृतिकता, ऐतिहासिकता, सामाजिकता आदि है वह आज भी लोगों को प्रेरणा दे रही है। ''महाभारत सामान्य काव्य नहीं है, बल्कि सम्पूर्ण भारतीय संस्कृति का शब्दकोश है। उस पर कलम चलाते समय दायित्व बोध संपन्न राष्ट्र को एक साथ दो चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। वह प्रार्थना को अपनी इच्छा और सुविधा के अनुसार न तो बदल सकता है, और न उसे उद्वत चित्रित कर अपने विवेक और समकालीन बोध को संतुष्ट ही कर सकता है। उसे पुरानी प्रामाणिकता को बनाये रखकर नयी व्याख्याओं के द्वारा उसकी सार्वकालिकता को आधुनिक संदर्भो में उजागर करने का दुरूह कार्य करना पड़ा है।''[3]

आज साहित्य में जितने भी विषयों को समावेशित किया गया है वे सब विषय सार्वकालिक होने का प्रमाण स्वयं देते है उदाहरण के रूप में राजनीति को ही ले तो इस गंभीर विषय की सार्वकालिकता आज भी बनी हुई है महाभारत, रामायण, जैसे ग्रंथों को अध्ययन करने पर सत्ता एवं शक्ति का संघर्ष उस युग से लेकर आज तक ठीक अपने परम्परागत रूप में ही परिलक्षित होता है। राजनीतिक नियम एवं नीतियाँ आज भी उतनी प्रासंगिक है जितनी उस युग में थी सार्वकालिकता पर विचार करते हुए जब हम साहित्य की ओर बढ़ते है, तो यह भी हमें सार्वकालिक ही दृष्टिगत होता है आखिर ऐसा क्या छूट गया जो लिख नहीं पायें? ऐसा क्या मिला जो लिख दिया? अर्थात् साहित्य मानव मस्तिष्क का प्रतिबिम्ब है प्रतिबिम्ब वैसा ही होता है जैसा समाज होता है। समाज के अंतर्गत सभी तत्वों का समावेश एवं सामंजस्य होता है। स्वस्थ समाज निरंतर परिवर्तित एवं प्रगतिशील होता है। साहित्य का यह दायित्व है कि वह उस शाश्वत, निरंतर, प्रगतिशील समाज के सार्वकालिक पक्ष को प्रकाशित करने पुनीत कार्य करे। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने कहा है–''प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति में परिवर्तन के साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है आदि से अंत तक इन्हीं चित्तवृत्तियों की परम्परा को परखते हुए साहित्य परम्परा के साथ उनका सामंजस्य दिखलाना ही साहित्य का इतिहास कहलाता है।''[4]

साहित्यकार के लिए किसी भी घटना के विषय पर लेखन से पूर्व उसकी ऐतिहासिकता एवं प्रासंगिकता का ज्ञान अनिवार्य है क्योंकि साहित्य सदैव किसी शाश्वत सत्य की व्याख्या को प्रस्तुत करने का कार्य करता है। अतः साहित्यकार अपनी रचना में ऐसे मूल्यों या पक्ष का उद्‌घाटन करने का प्रयास करता है जिसका चिंतन सार्वकालिक होता है किसी भी साहित्यिक कृति की श्रेष्ठता का पैमाना उस रचना में व्यक्त सार्वकालिक तत्वों की व्याख्या से है जिस रचना में सार्वकालिक तथ्यों एवं तत्वों की व्याख्या जितनी अधिक होगी उतनी ही वह रचना प्रसिद्ध एवं श्रेष्ठ होगी। तुलसीदास कृत ''रामचरितमानस'' में व्यक्त सार्वकालिक विवेचन एवं विश्लेषण काल की सीमाओं का अतिक्रमण कर हर युग में प्रासंगिक है इसी कारण यह ग्रंथ हर युग में सार्वकालिक चेतना का वाहक है सार्वकालिकता से युक्त साहित्यिक कृति का प्रमुख गुण उसकी नवीनता एवं सत्य का अन्वेषण है यदि कोई भी कृति शाश्वत सत्य की व्याख्या नवीन दृष्टिकोण के साथ करती है, तो वह श्रेष्ठ साहित्य की श्रेणी में आती है।

**सार्वकालिक चेतना का अर्थ**

'सार्वकालिक का सामान्य अर्थ है – सब काल में होने वाला या सब समय में उपस्थित रहने वाला। सर्व +काल +इक से मिलकर यह शब्द निर्मित हुआ है इस निर्मित शब्द का मूल शब्द 'काल' है जिसका अर्थ है 'समय या युग'। इस शब्द में 'सर्व' उपसर्ग के साथ 'इक' प्रत्यय का प्रयोग हुआ है। योग स्वरूप 'सार्वकालिक' शब्द निर्मित हुआ है। अतः सार्वकालिक से आशय है सब काल के लिए, सब समय के लिए उपयुक्त से है। काल का चक्र निरंतर गतिशील है वह अपनी परिक्रमा निर्बाध गति से कर रहा है यह प्रक्रिया अनंतकाल से चली आ रही है जो शाश्वत, सत्य, प्रासंगिक एवं सार्वकालिक है।

चेतना–मानव मन का अनुभूत सत्य है, ज्ञान है, संवेदना है चेतना मानव को प्रेरणा प्रदान करती है उसके जीवन में जागरूकता उत्पन्न करती है चेतना मानव मस्तिष्क और हृदय की समन्वयात्मक अनुभूति है चेतना मानव मन के अन्तर्द्वन्द्व की निष्कर्षतम व्याख्या है चेतना के प्रभाव से मानव तत्कालीन गतिविधियों पर अपना चिंतन, मनन करता है चेतना मानव को साहस एवं सामर्थ्य प्रदान करती है। चेतना का यह स्तर भिन्न–भिन्न होता है परन्तु यह होती हर मनुष्य में है चेतना के प्रवाह से मानव का मन किसी नवीन परिवर्तन की स्थापना की ओर उन्मुख होता है चेतना का व्यापक अर्थ शब्दकोश में ज्ञान, मनोवृत्ति, स्मृति, प्रज्ञा, बुद्धि, सुधी, होश, संज्ञा, समझना आदि लिए जाते हैं। यह मानव की स्पर्शात्मक हार्दिक अनुभूति है चेतना ही मानव को सजीव सिद्ध करती है रवीन्द्र जैन के अनुसार–'' चेतना प्राणी मात्र में निहित वह शक्ति है, जो उन्हें निर्जीव और जड़ वस्तुओं से अलग बनाती है। और उन्हें चैतन्यमय बनाकर सजीव सिद्ध करती है।''[5]

चेतना मानव की जागृति का एक रूप है जो अपने आस–पास के वातावरण से प्रभावित होता है चेतना का कोई निश्चित मात्रा या पैमाना नहीं है यह भिन्न भिन्न स्थितियों में अलग अलग होती है डॉ. सैनी ने चेतना के संदर्भ में लिखा है–" वह ऐसी शाश्वत सरिता के समान है, जिसमें विभिन्न बोध विभिन्न अनुभूतियाँ और विभिन्न स्मृतियाँ बुदबुदे के समान आकार धारण करती है और तिरोहित हो जाती है किन्तु उसका अनंत प्रवाह समग्रता के साथ गतिमान रहता है।"[6] चेतना मानव मन की अभिव्यक्ति की वाहक है।

अतः सार्वकालिक चेतना का अर्थ शाश्वत, सत्य, चिरंतन रहने वाले तत्वों के प्रति जागृति है। मानव एक सामाजिक प्राणी है समाज से जुड़े संदर्भ एवं प्रसंगों के प्रति मानव का व्यवहार चेतना की सशक्त अभिव्यक्ति है सार्वकालिक चेतना से जीवन का हर पक्ष सम्पृक्त है क्योंकि जीवन मूल्यों से जुड़ा प्रत्येक विषय सार्वकालिक चेतना को अभिव्यक्त करता है आदिकाल से लेकर अब तक समाज में बहुत सारे परिवर्तन हुए है। उन सब परिवर्तनों की श्रृंखला के पीछे सार्वकालिक चेतना का ही भाव है।

समाज में व्याप्त स्थिति–परिस्थितियों के बीच झूलता मानव मन जब संवेदना को ग्रहण करने लगता है तो सार्वकालिक चेतना से प्राप्त निष्कर्षो से परिवर्तन के साथ नवीनता की सृष्टि होती है सार्वकालिक चेतना हर युग, हर काल में स्थापित सत्य एवं शाश्वत है यह मानव को दैवीय रूप में प्राप्त होती है।

सार्वकालिक चेतना से जुड़ा हर विषय स्वयं अपने स्वरूप को स्पष्ट करने में सक्षम है धर्म की आवश्यकता, अनिवार्यता या उसके आदर्शो की स्थापना में सार्वकालिक चेतना हर युग में संघर्ष को प्रेरणा देती हुई परिलक्षित होती है राजनीति के संघर्ष को जब हम व्याख्यायित करने का प्रयास करते है तो युगों से चला आ रहा संघर्ष हमें सार्वकालिक चेतना से प्रेरित दिखाई पड़ता है। मानव का अन्तर्मन समाज की गतिविधियों से जब प्रभावित होता है तो उसकी चेतना में दृष्टिगत होने वाले तत्व सार्वकालिक ही नजर आते है। अतः स्पष्ट है कि सार्वकालिक चेतना किसी स्थिर तत्व का प्रतीक न होकर हमेशा शाश्वत, नवीन, चिरतंन, सत्य बनी रहने वाली मानवीय अभिव्यक्ति है यह हमेशा धर्म, राष्ट्र, समाज, संस्कृति एवं मानव से जुड़े मूल्यों में दृष्टिगोचर होती है अतः सार्वकालिक चेतना का अर्थ है शाश्वत, चिरंतन एवं सत्य जो कि सदैव मानवीय मूल्यों से सम्पृक्त होता है।

**सार्वकालिकता एवं अन्य साहित्यिक शब्द**

सार्वकालिकता क्या है? यह बोध केवल क्या पर मंथन करने से पूर्ण नहीं हो जाता है अपितु वह किन संदर्भो में उपस्थित है यह जानना अत्यावश्यक है। सार्वकालिकता से

समसामयिकता, समकालीनता, प्रासंगिकता एवं आधुनिकता से क्या सम्बन्ध है यह जानना सम्यक् रूप से सार्वकालिकता को और अधिक स्पष्ट करने के लिए महत्वपूर्ण हो जाता है।

### 1. सार्वकालिकता एवं समकालीनता

दोनों शब्दों में मूल शब्द 'काल' है जो भूत, भविष्य एवं वर्तमान के रूप में विभाजित किया गया है इन दोनों शब्दों की साम्यता एवं विषमता का अंतर काल के आधार पर ही निर्भर है कोई भी काल अपने तात्कालीक संदर्भो के साथ जुड़ा रहता है उसके साथ पात्र, घटना, स्थिति परिस्थितियों का जुड़ाव रहता है और इस तरह के संदर्भ समकालीन होते है परन्तु जहाँ ये संदर्भ अपने युग एवं काल की सीमा को पार करते हुए अन्य युग एवं काल में भी प्रेरणा प्रदान करते है वहाँ ये सार्वकालिक हो जाते है। कवि विजेन्द्र के अनुसार ''समकालीनता तारीख और दिन से नहीं बल्कि विश्व दृष्टिकोण से पहचानी जाती है।''[7]

समकालीनता अपने समय से जुड़े संदर्भो एवं प्रसंगों की व्याख्या करती है जबकि सार्वकालिकता अपने समय से जुड़े संदर्भो को वर्तमान के साथ प्रेरणात्मक रूप में प्रस्तुत करती है समकालीनता समय के साथ सम्पृक्त होती है सार्वकालिक समय के साथ भी है और समय के बाद भी अन्य काल में भी अपनी भूमिका का निर्वाह करती है साहित्यकार अपनी कृति में समकालीन परिवेश के साथ जुड़े तथ्यों का विवेचन विश्लेषण करता है वह समाज के तत्कालीन विषयों की व्याख्या करता है। मैनेजर पाण्डडेय ने समकालीनता को समय की परिधि से मुक्त माना है वह कहते हैं ''केवल नया ही समकालीन नहीं होता, बल्कि जो सार्थक है, वही समकालीन है, चाहे वह पुराना ही क्यों ना हो।''[8] मानव को वर्तमान समय का चिंतन प्रदान करता है सार्वकालिकता इस अर्थ में अधिक महत्वपूर्ण है कि वह तत्कालीन समय से जुड़े हुए अतीत के संदर्भो की व्याख्या कर मानव को भूत, वर्तमान, भविष्य में चैतन्य रखती है उसके साथ तथ्यों की प्राचीनता अवसरों पर सार्वकालिक दृष्टि प्रदान करती है समकालीनता एवं सार्वकालिकता दोनों ही मानव मूल्यों का अध्ययन समय के बोध के साथ करती है ये दोनों शब्द साहित्य में एक दूसरे के पूरक अर्थ में प्रयोग किये जाते रहे है।

### 2. सार्वकालिकता एवं समसामयिकता

साहित्यकार अपने समय के विषयों एवं मानव मूल्यों को लेकर लेखन कार्य करता है वह अपने काल की घटनाओं से जुड़े तथ्यों को जीवन मूल्यों के साथ अभिव्यक्त करता है ''वास्तविक अर्थों में संवेदनशील एवं जागरूक वही है जो समय की नब्ज अपने हाथों में लिए प्रतिपल परिवर्तित हो रहे परिवेश एवं स्थितियों को प्रत्येक स्पन्दन को अनुभव करता चलता है और तज्जन्य संवेदनाओं, मान्यताओं, मूल्यों और विश्वासों पर आधारित लोक मानस पर नजर रखता है। केवल इस तरह से वह अपने समय को वास्तविक अर्थ में जीता है। अपने काल खण्ड जुडे

रहने का एक ही स्त्रोत है, समकालीन साहित्य का पठन–पाठन, क्योंकि संवेदनशील कवि या लेखक की अपनी कृतियों के माध्यम से अपने युग की युगीन–मानस की अविकल प्रतिलिपी प्रस्तुत करने की चेष्टा करते हैं।''[9] साहित्य में हर साहित्यकार ने अपने समय, युग को देखा, समझा और उस पर टिप्पणी की है टिप्पणी करते–करते समय वह कभी आदर्श का पालन करता तो कभी यथार्थ का, तो कभी दोनों के समन्वित रूप का उसके समक्ष समाज को एक बेहतर, स्वस्थ, सुन्दर 'कल' देने की धुन सवार है वर्तमान की व्यवस्था को बदल कर वह एक बेहतर 'कल' की तलाश में मानव को चेतना प्रदान करने का कार्य कर रहा था इस अर्थ में उसकी रचनाएँ अपने समय एवं युग की प्रस्तुति देने का सशक्त माध्यम है ''समसामयिकता इतिहास बोध की प्रक्रिया है, जो निरंतर परिवर्तित होती रहती है। अतः समसामयिकता का प्रयोग जब हम साहित्य में करते हैं तो उसका स्पष्ट अर्थ यह होता है कि, हम विगत आगत दोनों से वर्तमान को जोड़ते हैं।''[10] सार्वकालिकता इस स्थिति पर थोड़ी सी अलग अभिव्यक्ति देती है वह काल एवं समय के साथ जुड़ी हुई है परन्तु उसका कल, आज और कल एक दूसरे से पूर्णतया जुड़ा हुआ है वह मानव मूल्यों की स्थापना में सहयोग करती है वह काल के बंधनों से मुक्त एक काल से दूसरे काल तक निर्बन्ध मूल्यों के सहारे विचरण करती है यद्यपि इन दोनों के मध्य जो स्थापना है वह 'समय' बोध को लेकर ही है परन्तु जहाँ तक साहित्य में इन दोनों से जुड़े हुए विषयों का प्रश्न है उस पर हम यही कहेंगे कि ये एक दूसरे के सहयोगी हैं यद्यपि समय विशेष के संदर्भ में दोनों अंतर हो सकता है तथापि जीवन मूल्यों की दृष्टि से दोनों एक दूसरे से काफी समानता रखते है।

### 3. सार्वकालिकता और आधुनिकता

'आधुनिकता' से तात्पर्य प्रारम्भ में प्राचीन रूढ़ियों में बदलाव, व्यवस्था परिवर्तन, नवीन साहित्य प्रयोग, नवीन विधाओं एवं नवीन विषयों पर लेखन से लिया गया था धीरे–धीरे यह बात कालांतर में स्पष्ट हो गई कि आधुनिकता एक मूल्य है जो कि मानव के जीवन संदर्भ में चेतना का प्रतीक है दूधनाथ सिंह जी के अनुसार–''आधुनिकता से मेरा तात्पर्य यह है कि, जो चीज हमारी सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक स्थितियों में हमारी अनुभूति और हमारा भावबोध बना रहा हो, यानि जो चीजें हमारे समाज, हमारी राजनीति और ऐतिहासिक परिस्थितियों से लगी हुई हैं। वही आधुनिकता हो सकती है।''[11] आधुनिकता से अभिप्राय समाज में व्याप्त अव्यवस्थाओं के प्रति विद्रोह कर समाज में व्यवस्था की स्थापना करना है समाज में कालांतर में जिन प्रथाओं की रूढ़ान्धता के कारण मानवीय मूल्यों का ह्रास होने लगा था उनके प्रति जागृति ही आधुनिकता है।

आधुनिकता का अर्थ विचारों में नवीन स्थापनाओं से लिया गया है ये स्थापना समाज की विश्रृंखलता को रोकती है मानव मन के अन्तर्द्वन्द्व और उनसे जुड़े मूल्यों की व्याख्या करती है इस अर्थ में आधुनिक मानव ही मूल्यों से जुड़ा हुआ एक नवीन साहित्यिक मूल्य बोध है। डॉ. बैचेन ने

इस संदर्भ में कहा है कि "आधुनिकता एवं विशेष (स्पेशल) मूल्य है जिसने सामान्य साहित्यिक घटनाओं और चिंतन को प्रभावित किया। परिणामस्वरूप साहित्यिक मूल्यों के एक नये रूप का भी सूत्रपात इस आधुनिकता के साथ होता है।"[12] सार्वकालिकता और आधुनिकता दोनों साहित्यिक शब्दावली में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं आधुनिकता जहाँ नवीन प्रयोगों के साथ जीवन मूल्यों को स्थापित करने का प्रयास करती है वहीं सार्वकालिकता प्राचीन और नवीन के बीच स्थापित मूल्यों का अतीत के संदर्भ में वर्तमान को प्रेरणा देने का कार्य करती है दोनों शब्दों में एक दूसरे के मन्तव्यों को पूरा करने का सामर्थ्य है। अतः इन दोनों में भले ही आलोचक दृष्टि अंतर करती रही है परन्तु जीवन मूल्यों के सम्बन्ध में ये दोनों ही एक दूसरे के सहयोगी है।

### 4. सार्वकालिकता एवं प्रासंगिकता

प्रासंगिकता का मूल कार्य समाज के संदर्भ में सत्य का प्रकाशन है निर्मल वर्मा के अनुसार –"अपने युग के प्रति लेखक की प्रासंगिकता इससे सिद्ध नहीं होती कि वह किन तात्कालिक विचारधाराओं को अपनी रचनाओं में व्यक्त करता है।.............., बल्कि इसमें निहित होता है कि किस हद तक वह अपने भीतर की दमित वर्जनाओं से मुक्ति पाकर जीवन के उन सार्वभौमिक सत्यों को उजागर कर सके, जो हर समय और समाज के संदर्भ में प्रासंगिक होते हैं।"[13] सार्वकालिकता काल विशेष के संदर्भ में मानव मूल्यों की स्थापना में योगदान देती है। 'प्रासंगिकता' से तात्पर्य है कि प्रसंग विशेष के संदर्भ मानव मूल्यों को दृष्टि प्रदान करना रहा है अर्थात जब कोई प्रसंग मन की उलझन को अन्तर्द्वन्द्व के भंवर में उलझा हुआ पाता है तो अतीत से किसी प्रसंग के माध्यम से उस समस्या का समाधान ढूँढने का प्रयास करता है तो यह प्रासंगिकता होती है। डॉ. नगेन्द्र के अनुसार "सार्थकता या प्रासंगिकता आधुनिक समीक्षा का नवीन शब्द प्रयोग है, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि इसकी धारणा सर्वथा नयी है। प्रासंगिकता का सम्बन्ध मुख्यता पुराने साहित्य से होता है और वर्तमान युग के संदर्भ में पुराने साहित्य की सार्थकता या प्रासंगिकता देखना लक्ष्य होता है।"[14] अतः हम कह सकते हैं कि पूर्ण घटित घटनाओं या प्रसंगो के द्वारा वर्तमान समय की समस्या को चेतना प्रदान करना प्रासंगिकता है। सार्वकालिकता भी इसी अर्थ में प्रयुक्त होती है प्रासंगिकता में प्रसंग या संदर्भ विशेष को व्यक्त किया जाता है वहीं सार्वकालिकता मानव जीवन मूल्यों के साथ प्रसंगों को दृष्टि प्रदान करती है किसी विषय की कालगत व्याख्या न करके सार्वकालिक चेतना मानवीय मूल्यों से जुड़े भावों एवं विषयों की चेतनागत अभिव्यक्ति करती है।

### सार्वकालिक शब्द का कोशगत अर्थ

i. "सार्वकालिक –सार्व (वि.) 1 सबका (जैसे सार्वभौम, सार्वजनिक) 2, सब समय के लिए उपयुक्त 2, सब काल से सम्बन्धी।"[15]

ii. ''सार्वकालिक वि.त्रि.भूत, भविष्य, वर्तमान तीनों कालों का''।[16]

iii. ''सार्वकालिक वि.सं.सब काल सम्बन्धी। सब सम्बन्धों के योग्य''[17]

iv. ''सार्वकालिक – वि. सब समय के लिए अनुकूल''[18]

v. ''सार्वकालिक – सभी कालों से संबंध रखने वाला''[19]

vi. ''सार्वकालिक – चिरंतन सत्य, नित्य, शाश्वत सर्वकालीन''[20]

vii. ''सार्वकालिक – वि. जो सब कालों में होता है, सब समयों का''।[21]

viii. ''सार्वकालिक – नित्य शाश्वत, सब कालों का चिरंतन''[22]

ix. ''सार्वकालिक – सार्वकालीन, शाश्वत, नित्य, चिरंतन, सदा, सनातन''[23]

x. सार्वकालिकता के लिए अंग्रेजी में 'Universal' (यूनिवर्सल) शब्द का प्रयोग होता है जो ''सार्वभौमिकता एवं सार्वकालिकता के अर्थ में प्रयुक्त होता है। 'Universal' (यूनिवर्सल) – सार्वभौमिक, विश्व सम्बन्धी, सर्वव्यापी''[24]

## (ख) सार्वकालिकता चेतना की प्रकृति एवं स्वरूप

सार्वकालिकता चेतना को आधुनिक युग के जीवन मूल्यों एवं संदर्भो में विविध रूपों में व्याख्यायित किया गया है। मानव का मन मस्तिष्क सदैव इन्हीं उलझनों को सुलझाने में लगा रहता है कि क्या आधुनिक है?, क्या प्राचीन है ? तो उसे इस चर–अचर जगत् में सब कुछ सार्वकालिक ही परिलक्षित होता है सब कुछ, हर युग में प्रासंगिक दृष्टिगत होता है आदि से अनंत तक की समस्त अवधारणाओं, जीवन मूल्यों, जीवन संदर्भों के साथ सम्पृक्तता एवं जागृति ही सार्वकालिक चेतना कहलाती है। सार्वकालिक चेतना से आशय केवल इतना ही नहीं है कि जो कल था वह आज भी है, अपितु इस अर्थ में है कि कल जिस रूप में जिस भाव में जिन मूल्यों से प्रेरित था, जिन संदर्भो से सम्पृक्त था, अक्षरशः वैसा ही आज है, जैसा कल था और सम्भवतः भविष्य में भी उसी रूप में उपस्थित रहेगा।

सार्वकालिक चेतना एक अवधारणा है इसका सम्बन्ध काल से कम मूल्यों से अधिक है यह विविध विचारों और भावबोधों यहाँ तक की परस्पर विरोधी भावबोधों का भी समवेत रूप है साहित्य में सार्वकालिकता चेतना का प्रत्यक्ष सम्बन्ध सृजनशीलता, मूल्य दृष्टि और जीवन संदर्भों से है भारतीय साहित्य में यद्यपि सार्वकालिक चेतना सर्वत्र दिखाई देती है क्योंकि साहित्य सदैव सार्वकालिक मूल्यों का अध्ययन नवीन संदर्भों में करता रहा है संसार का प्रत्येक तत्व यद्यपि किसी न किसी रूप में सार्वकालिक चेतना से सम्बद्ध है। सार्वकालिक चेतना की प्रकृति में चर–अचर जगत के समस्त मूल्यों एवं तत्वों का अध्ययन किया जाता रहा है।

सार्वकालिक चेतना मानव के अनुभूत, शाश्वत, सत्य की व्याख्या है जब कभी भी मानव अपने आप से हारकर नैतिक पतन की ओर अग्रसर होता है, तब साहित्य यथार्थ के धरातल पर सत्य को आदर्श के रूप में प्रस्तुत करता हुआ मानव को सार्वकालिक चेतना से संरक्षण प्रदान करता है। सत्य के साथ आदर्श का प्रस्तुतीकरण ही सार्वकालिक चेतना का प्रमुख गुण है कई युगों से निरंतर जीवन मृत्यु के चक्र से गति पाता हुआ संसार का यह महायात्री आज भी अपने जीवन मूल्यों की शाश्वतता एवं सत्य का अनुसंधान करता है वह अपने आपको आधुनिक परिप्रेक्ष्य में ढालने का प्रयास कर रहा है युगों से चला आ रहा अनुसंधान हर बार एक नवीन दृष्टिकोण के साथ मानव को अतीत के साथ सम्पृक्त कर रहा है परन्तु मनुष्य की खोज उसका अनुसंधान आज भी जारी है। सत्य का अन्वेषण मनुष्य को सार्वकालिक चेतना से परिचय कराता है यद्यपि सार्वकालिक चेतना का विषय बहुत विस्तृत है तथापि हम कुछ मूलभूत तत्वों के द्वारा इसकी प्रकृति को समझ सकते है।

i. सत्य

ii. अहिंसा

iii. आध्यात्मिकता

iv. स्वतंत्रता

v. भक्ति भावना

vi. राष्ट्र निर्माण

vii. शिक्षा

i. **सत्य** – साहित्य ने सदैव सत्य का राज मार्ग अपनाया है सत्य का अनुशरण करने के कारण साहित्य सार्वकालिक चेतना का कुशल संचालक है सार्वकालिक चेतना ने सत्य के आधार पर ही भारतीय संस्कृति एवं समाज की अवधारणा को प्रस्तुत किया है सत्य हमेशा मानव के हितों की यथार्थ व्याख्या प्रस्तुत करता है मानव को सत्य का पालन करने पर जीवन परिस्थितियों का सामना करने में सरलता रहती है सत्य की पालना हेतु मानव अपने व्यवहार को संयमित करता है। महात्मा गांधी ने सत्य को ईश्वर माना है। सत्य को अंतरात्मा की आवाज के रू में स्वीकार करते हुए कहा है ''तुम्हारी अंतरात्मा जो कहती है वही सत्य है।''[25] मानव के व्यवहार में एक आदर्श सामाजिक गुणों का विकास सत्य के द्वारा ही होता है वर्षों से हमारे भारतीय सभ्यता संस्कृति के विविध पक्षों का जुड़ाव सत्य पर आधारित रहा है सत्य ही एक मात्र ऐसा तत्व है जिसने भारतीय एवं भारतीयता को आज भी मौलिक रूप में अक्षुण्ण बनाये रखा है सत्य मनुष्य को सदैव कल्याण की भावना की प्रेरणा देता है।

**ii. अहिंसा** – महात्मा गाँधी जी के मतानुसार ''अहिंसा ऐसा अस्त्र है, जिसे कोई भी भौतिक बल झुका नहीं सकता। अहिंसा की शक्ति को संख्या या मात्रा की सीमा में नहीं बांधा जा सकता।''[26] भारतीय सनातन संस्कृति में हिंसा का कोई स्थान नहीं है अहिंसा का पालन मनुष्य युगों से करता चला आ रहा है मानव के गुणों में अहिंसा के प्रति आज भी विश्वास होना सार्वकालिक चेतना की सतर्क व्याख्या है महात्मा गाँधी के अनुसार ''अहिंसा आत्मिक बल की प्रतीक होती है, जिसके विरोध में भौतिक बल चाहे कुछ समय के लिए विजयी हो जाय : किन्तु अन्ततः उसे पराजित होना ही पड़ेगा। हिंसा केवल कुछ ही लोगों के लिए सम्भव है और वह भी अवास्तविक रूप से, जबकि अहिंसा जनसाधारण का स्वाभाविक धर्म है क्योंकि यह हम जैसे जीवों का शाश्वत कानून है।''[27] अहिंसा ने मनुष्य को ऐसा अनुशासित किया कि उसने समस्त जगत् को अपना अनुशरण करने के लिए प्रेरित किया है। प्राचीन काल से चली आ रही यह परम्परा हर युग में महानता के साथ प्रासंगिक रही है महात्मा बुद्ध का दर्शन हो या वैदिक काल की व्याख्या या आधुनिक युग का संदर्भ सभी में अहिंसा को सार्वकालिक चेतना का प्रमुख तत्व स्वीकार किया हैं। सम्राट अशोक को महान् और गाँधी को महात्मा बनाने वाली अहिंसा सार्वकालिक चेतना का सर्वोत्तम उदाहरण है।

**iii. आध्यात्मिकता** – 'आध्यात्मिकता' भारतीय दर्शन पर आधारित चिंतन है। वर्षो से लगातार किये जा रहे अनुसंधान के महत्वपूर्ण विषय के रूप में आज भी स्थापित है जो विषय भूत वर्तमान और भविष्य में भी अपना महत्व बनाये रखता है वह सार्वकालिक चेतना का विषय है मानव को अध्यात्म के द्वारा ही मानसिक तृप्ति प्राप्त होती है मानव को विपरीत परिस्थितियों सम्बल प्राप्त होता है अध्यात्म ही मनुष्य को समस्याओं के समाधान की शक्ति देता है वर्षों से मनुष्य संसार की परेशानियों से क्षुब्ध होकर, पीड़ित होकर किसी ऐसी चेतना से, शक्ति से सम्बल पाना चाहता है जो उन परिस्थितियों में मानव जीवन को विवेक, आशा एवं जुझारू होने का आशीर्वाद प्रदान कर सके महर्षि अरविन्द ने आध्यात्मिकता पर टिप्पणी करते हुए कहा है कि''भारत को अपने आध्यात्मिक अतीत का ज्ञान कराना चाहा और उन्हें यह देखकर सन्तोष भी हुआ कि देशवासियों में अपने अतीत के गौरव के प्रति आस्था जाग्रत होने लगी। अरविन्द ने चेतावनी दी कि यदि हम अपना यूरोपीयकरण करेंगे तो हम अपनी आध्यात्मिक क्षमता, अपना बौद्धिक बल, अपनी राष्ट्रीय लचक और आत्मपुनरूद्धार की शक्ति को सदा के लिए खो बैठेंगे। राष्ट्रवाद को ईश्वरीय आदेश और प्रेरणा बतलाकर अरविन्द ने राष्ट्रीय जीवन में एक नवीन चेतना भर दी। उन्होंने देशवासियों से कहा कि आत्मा में ही शाश्वत् शक्ति का निवास है और उसे जगाने पर अर्थात् आन्तरिक स्वराज्य प्राप्त कर लेने पर हमें सामाजिक दृढ़ता, बौद्धिक महत्ता, राजनीतिक स्वतन्त्रता, विश्व पर प्रभाकारित–सब कुछ स्वतः ही प्राप्त हो जायेगा।''[28] आध्यात्मिकता की कुशलता है कि वह मानव की इस आवश्यकता की पूर्ति वर्षों से करती हुई आ

रही है अध्यात्म से प्रेरणा प्राप्त कर मनुष्य आज अपने जीवन में परेशानियों का हल अतीत से ढूँढना चाहता है अतीत और वर्तमान का अटूट सम्बन्ध है दुखी, पीड़ित और भग्नाशा से खण्डित मनुष्य में आशा का संचार करने का कार्य भारतीय साहित्य में अध्यात्म के द्वारा वर्षों से निरंतर किया जा रहा है यही कारण है कि हमारा आध्यात्मिक दर्शन दूसरे देशों की सीमा पार भी अपना स्वरूप विस्तृत करने में सफल हुआ है। अतः हमारे भारतीय साहित्य में भी इस महान सार्वकालिक चेतना का महत्व आज भी प्रासंगिक है।

iv. **स्वतंत्रता** – 'स्वतंत्रता' शब्द अपने आप में स्वतंत्र होने का परिचय देता हुआ प्रतीत होता है स्वतंत्रता की भावना मनुष्य में जन्म से प्रारम्भ हो जाती है बाल गंगाधर तिलक ने कहा है कि स्वराज्य मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है और मैं इसे प्राप्त करके रहूँगा। अधीनता को प्राणी किसी भी हाल में स्वीकार नहीं करना चाहता है। 'स्वतंत्र' शब्द से आशय यहाँ अपने अधिकारों के प्रयोग से है। मनुष्य को जीवन के साथ समाज की व्यवस्था में सहयोग देने के लिए जो अधिकार प्राप्त है। उनका प्रयोग करने की स्वतंत्रता मनुष्य को हमेशा चाहिए स्वामी दयानंद का विचार है कि ''व्यक्ति आत्मोन्नति के प्रयत्न कर सके, इसके लिए उसे पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त होनी चाहिए। लेकिन व्यक्ति के लिए स्वतन्त्रता का सममर्थन करते हुए भी दयानन्द स्वच्छन्दता के समर्थक नहीं हैं। वे व्यक्ति के आचरण के सामाजिक नियमन की आवश्यकता को स्वीकार करते हैं। उन्होंने अपेक्षा की है कि सामाजिक कल्याण की दृष्टि से, व्यक्ति को अपने व्यवहार पर समाज अथवा राज्य द्वारा आरोपित प्रतिबन्धों को स्वीकार करने के लिए तत्पर रहना चाहिए।''[29] मानव को अनुशासित करना समाज का दायित्व है परन्तु जब कोई व्यक्ति अनुशासन का अधिकार छीन कर नियंत्रण करते हुए समाज के लोगों की स्वतंत्रता का हनन करने लगता है तो क्रांति का सूत्रपात होता है। मानव का यह संघर्ष युगों से चला आ रहा है भारतीय समाज में ऐसे कई उदाहरण आपको मिल जाएँगे जब मानव समुदाय को नियंत्रित कर अधीन बनाने का प्रयास किया गया और कुछ समय तक ऐसा हुआ भी है पर मनुष्य में व्याप्त स्वतंत्रता की भावना सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्त होने के कारण संघर्ष का मार्ग खोजती रही है। स्वतंत्रता सार्वकालिक चेतना का सशक्त उदाहरण है क्योंकि जब कभी भी इस तत्व का हनन हुआ है मानव ने इसके लिए हर काल में संघर्ष किया है। अतः स्वतंत्रता सार्वकालिक चेतना का प्रमुख तत्व है।

v. **भक्ति भावना** – ईश्वर के स्वरूप का चिन्तन एवं श्रद्धा विश्वास का मिला जुला रूप है 'भक्ति भावना'। मानव ने सदैव पारलौकिक सत्ता के प्रति अपना विश्वास एवं आभार व्यक्त किया है। वह उसके कभी अपनी आँखों से तो नहीं देख पाया है परन्तु जब कभी भी परिस्थितियों के चलते उसकी आशा क्षीण होने लगती है तो कोई अज्ञात सत्ता उसे आशा का अर्घ्य देकर चली जाती है। डॉ. मुंशीराम शर्मा लिखते है कि ''जो मानव की इच्छा शक्ति है, वह आनंद प्राप्ति के लिए होती है। पवित्रता या आचार का पालन ही आत्मा के अमरत्व की सिद्धि है। जो चिरकाल से

पवित्र प्रभु की घोषण करती आयी है, जहाँ आचार्य है वहाँ श्रेष्ठता है, और जहाँ श्रेष्ठता है वहाँ ईश्वर है, जहाँ ईश्वर है वहाँ भक्ति है।''[30] निराशा को आशा में परिवर्तित करने का अद्भुत कार्य केवल भक्ति के द्वारा ही सम्भव है।

भक्ति सार्वकालिक चेतना से परिपूर्ण है हर युग हर काल में इसकी उपस्थिति सार्वकालिकता को प्रमाणित और जीवन्त करती है मानव उसे कभी प्रकृति में ढूँढता है तो कभी कल्पना सागर की अनुभूत लहर में प्राणी प्रकृति के स्वरूप में उसका स्वरूप, चित्र ढूँढने का प्रयास करता है तो कभी कल्पना के सहारे उस अज्ञात, अचेतन, शाश्वत सत्य को प्रमाणित करना चाहता है ईश्वर कैसा है? यह तो मानव कभी प्रमाणित नहीं कर सका है परन्तु उसे अनुभव है उसके स्वरूप का जो उसके हृदय की गहराइयों में विचरण कर रहा है। बाबा तुलसीदास जी ने सम्पूर्ण जीवन ईश्वर की साधना में व्यतीत किया है ईश्वर के स्वरूप की सार्वकालिकता की व्याख्या करते हुए केवल इतना ही कहा ''जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखी तहाँ वैसी''। ईश्वर का स्वरूप शाश्वत सत्य है और मनुष्य की आत्मा सदैव उसके साथ बनी रहेगी युगों से चला आ रहा ईश्वरीय स्वरूप का वर्णन एवं व्याख्या हर युग में नवीन एवं प्रासंगिक प्रतीत होती है भक्ति का भाव अनुभूति का विषय है जो सार्वकालिक चेतना का प्रतीक है।

vi. **राष्ट्र निर्माण** –'राष्ट्र' सार्वकालिक चेतना की प्रमुख प्रकृतियों में से एक है मानव एक सामाजिक प्राणी है समाज में रहकर वह कुछ नियमों को सामाजिक व्यवस्था हेतु बनाता है जिसका सभी पालन करते हुए सहयोग करते है। मानव का स्वभाव है कि वह अपने अस्तित्व को सदा के लिए सुरक्षित रखना चाहता है जब सुरक्षा का प्रश्न उपस्थित होता है तब संगठन का भाव पैदा होता है संगठित रहने की संकल्पना से प्रेरित होकर राष्ट्र का निर्माण होता है राष्ट्र निर्माण का प्रयास वर्षों से चला आ रहा है डॉ. राजमल बोरा ने इस संदर्भ में कहा है कि –'' यह ऐतिहासिक बोध है। राष्ट्र के नागरिक अपने आप को पहचाने अपने आप को पहचानने में उन्हें अपनी उपलब्धियों का ज्ञान होगा उन्हें अपने भू भाग की सीमाओं का ज्ञान हो उन्हें अपने भू–भाग, इतिहास, भूगोल मालूम हो और इस आधार पर राष्ट्र नागरिक अपने समान, आर्थिक, और राजनैतिक हित को समझे।''[31] जब मानव के अधिकार, समाज, कर्तव्य, अर्थ, संस्कृति, सभ्यता, इतिहास की रक्षा की बात होती है तब राष्ट्र निर्माण का लक्ष्य हर व्यक्ति के मानस पटल पर स्वतः अंकित हो जाता है वह अपने समाज को ऐसे राष्ट्र में बदलते हुए देखना चाहता है जहाँ कालांतर में उसके मानव मूल्यों की रक्षा हो सके राष्ट्र की कल्पना व्यक्ति में सुरक्षा की भावना के साथ सदैव मानव हितों की रक्षा करने वाले समाज के रूप में है और रहेगी राष्ट्र निर्माण की भावना सार्वकालिक चेतना की पक्षधर है।

vii. **शिक्षा** – शिक्षा मनुष्य के जीवन को संस्कार प्रदान करती है मानव के जीवन में शिक्षा संस्कार एवं भावी जीवन की संभावनाओं की पूर्ति करने का साधन है हर काल में शिक्षा का महत्व

बना हुआ है यह एक सार्वकालिक चेतना तत्व है जो हर युग में मानव को अनुशासित एवं सभ्य बनाता है वायुपुराण में लिखा है ''ज्ञानात् शाश्वतस्योपलब्धिः।''[32] ज्ञान से ही शाश्वत की उपलब्धि होती है। शिक्षा से हम जीवन जीने की कला ही नहीं सीखते अपितु उन सभी मूल्यों का जीवन परिस्थितियों में कुशल, यथार्थ एवं आदर्श के साथ प्रस्तुत करना भी सीखते है मानव अपने व्यवहार को नियंत्रण करना, विभिन्न परिस्थितियों के साथ सामंजस्य बिठाना शिक्षा के द्वारा ही सीखता है।

**''शुनः पुच्छमिव व्यर्थजीवितं विद्यया विना।**
**न गुह्वगोपने शक्तं न च दशंनिवारणे।।''[33]**

शिक्षा के माध्यम से समाज में सभ्य एवं अनुशासित नागरिक तैयार किये जाते है। जिनका लक्ष्य समाज के हितों की पूर्ति हेतु कार्य करना है। वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक शिक्षा की सार्वकालिक चेतना बनी हुई है। ऋग्वेद में लिखा है कि ''अक्षण्वन्तः कर्णवन्तः सखायो मनोजवेषु असमाय भूबुः। ''यदि कोई मनुष्य दूसरे से बड़ा है तो इसका तात्पर्य यह नहीं कि उसके पास कोई अतिरिक्त नेत्र या हाथ होते हैं बल्कि वह बड़ा इसलिए होता है कि उसकी बुद्धि व मस्तिष्क शिक्षा के द्वारा अधिक प्रखर व पूर्व होते है।''[34] शिक्षा मानव को ज्ञान, विज्ञान, कला, संस्कृति, तकनीक, आदि में निपुण बनाकर उनको मानव हितार्थ कार्य करने की प्रेरणा देती है। भारतीय इतिहास में सदैव शिक्षा के महत्व पर प्रकाश डाला गया है भारतीय इतिहास के महापुरूषों ने भी शिक्षा के विषय पर व्यापक एवं विस्तृत चर्चा करते हुए जीवन संदर्भो में आवश्यक बताया है फलस्वरूप वैदिक युग से लेकर आधुनिक युग तक शिक्षा में नित नवीन प्रयोग एवं अनुसंधान हो रहे है ज्ञान विज्ञान की व्याख्या नवीन सूत्रों के साथ की जा रही है मानव अपने अनुसंधानों के द्वारा समाज एवं राष्ट्र को सहयोग देना चाहता है शिक्षा की सार्वकालिक चेतना का इससे अधिक प्रमाण क्या हो सकता है शिक्षा ने हर युग हर परिस्थिति में मनुष्य को मानवीय गुणों से सम्पृक्त कर उसे व्यवहृत करना सिखाया है।

## (ग) सार्वकालिक चेतना और साहित्य का अंतः सम्बन्ध

सार्वकालिक चेतना और साहित्य का सम्बन्ध अनादि काल से निरंतर चला आ रहा है साहित्य ने सदैव मूल्यों का सूक्ष्म अवलोकन किया है मूल्यों की धुरी समाज के मध्य होती है एवं मानव की चेतना को जागृत करने का सबसे सशक्त माध्यम साहित्य होता है यही कारण है कि साहित्य और चेतना का अंतःसम्बन्ध इतिहास विदित है मानव इतिहास के तथ्यों को वर्तमान परिप्रेक्ष्य में समझने का जो प्रयास करता है उसमें साहित्य ही पथ प्रदर्शक बनता है। साहित्य ने अपनी अनेक विधाओं के द्वारा मूल्यों की नैतिकता एवं पवित्रता को बनाये रखा है जब कभी भी समाज अपने मूल्यों से भटकने लगता है तो साहित्य अपने सार्वकालिक तथ्यों को इतिहास से सम्पृक्त कर वर्तमान समय में मानवीय चेतना के द्वारा दिशा प्रदान करने का कार्य करता है

साहित्य का मुख्य कार्य मानवीय संवेदनाओं के यथार्थ का प्रस्तुतीकरण करना है। मानव एक सामाजिक प्राणी होने के कारण समाज के प्रत्येक पक्ष एवं घटना से प्रभावित होता है इन्हीं घटनाओं का गहन अध्ययन एवं विश्लेषण कर आदर्श रूप में प्रस्तुत करना साहित्य का महत्वपूर्ण दायित्व है।

इतिहास की पुनर्व्याख्या एवं मूल्यांकन का कार्य साहित्य करता है इतिहास सार्वकालिक चेतना के तत्वों से परिपूर्ण है अतः साहित्य और सार्वकालिक चेतना का यह सम्बन्ध वर्षों से निरंतर एक दूसरे का पूरक बना हुआ है समाज को क्या चाहिए और उसके प्रयोग का संकेत साहित्यिक कृतियों में से प्राप्त किया जा सकता है। बड़े–बड़े ऋषि–मुनियों ने जिन ग्रन्थों में अध्यात्म, ज्ञान, विज्ञान, तकनीक, स्वास्थ्य एवं अन्य कई रोचक जानकारियों का समावेश किया वे सब आज भी सार्वकालिक चेतना का प्रकाश समस्त संसार में फैला रहें है। ''वाल्मीकि, व्यास, शेक्सपियर, होमर, शंकराचार्य, रवीन्द्रनाथ आदि ऐसे लोग दुनिया में आये और दुनिया को ज्ञान वस्तु भी दे गये और जो सदा के लिए उसकी मदद में काम आये। जब शांति की जरूरत थी तब शांति देने वाली चीज उन्होनें दी। जब उत्साह की जरूरत थी तब उत्साह देने वाली चीज दी। जिस समाज को जिस चीज की जरूरत थी उसे लोगों के पास इन लोगों ने ही पहुंचाया। हमसे समाज का जीवन बदला। जो बड़ी–बड़ी क्रांतियों हुई उसके पीछे विचारक और साहित्यिक थे।''[35]

सार्वकालिक चेतना और साहित्य का सम्बन्ध पृथ्वी पर मनुष्य के जन्म से ही चला आ रहा है मानव का मन हमेशा विकारों से भरा हुआ है विकार से तात्पर्य मनुष्य की भावात्मक सोच से है भावात्मक रूप से जुड़े सभी बिन्दुओं पर जब हम दृष्टि डालते है तो पाते है कि जिस भाव बिन्दु पर हम विचार कर रहे है वह अनादि काल से मनुष्य के चिंतन का केन्द्र रहा है विचारों की श्रृंखला लगातार अपने आप से द्वन्द्व करती हुई काल, देश की सीमाओं के बंधनों से मुक्त होकर संसार में स्वच्छन्द विचरण कर रही है इन्हीं विचारों की व्याख्या करने का पुनीत कार्य साहित्य के माध्यम से सम्पन्न किया जाता है सार्वकालिक चेतना के तत्वों, तथ्यों, पक्षों, का विश्लेषण कर समाज को नवीनता के साथ प्रस्तुत करना ही साहित्य की सार्वकालिकता चेतना के साथ अंतःसम्बन्ध को स्थापित करता है।

आज हम अपने आप को सभ्य एवं आधुनिक होने का दावा करते हैं। वस्तुतः हमारे संस्कार, संस्कृति, आधुनिकता, मानवीय संवेदना, सकारात्मकता का परिणाम है। मानव प्रारम्भ से संघजीवी रहा है वह अपना विकास समूह में ही देखना चाहता है उसे अपने समूह, संगठन की सुरक्षा एवं अस्तित्व की चिंता सदैव घेरे रहती है उसका यह चिंतन वर्षो से चला आ रहा है और सम्भवतः आगे भी चलता रहेगा। साहित्य ने इस चिंतन का सूक्ष्म अवलोकन कर आदर्श समाज की स्थापना पर बल देने का प्रयास किया है।

मनुष्य ने सदैव अपने आस–पास के वातावरण को आत्मिक रूप से महसूस किया है वह उन तथ्यों को पहचानने में लगा है जो सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्त है 'पराधीन सपनेहु सुख नाही' रामचरित मानस की पंक्ति परतंत्रता की पीड़ा से मुक्ति की प्रार्थना करती हुई प्रतीत होती है ''वहीं तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा'' सुभाष चन्द्र बोस का यह नारा अधीनता से संघर्ष का पथ प्रदर्शक है इन दोनों ऐतिहासिक महानायकों में सैकड़ों वर्षो एवं युगों का अंतर होते हुए भी इनकी स्वतंत्रता के प्रति चेतना सार्वकालिक है इस चेतना को प्राण रूप देने का कार्य साहित्यिकों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से किया है मानव के मन की पीड़ा, संशय, घुटन, छटपटाहट, संघर्ष, हर्ष, उत्साह, साहस आदि की विस्तृत व्याख्या करने का कार्य साहित्य ने पूर्ण मनोयोग के साथ किया है जो सार्वकालिकता चेतना और साहित्य के सम्बन्ध को दर्शाता है।

सार्वकालिक उपन्यासों में लेखक सदैव इतिहास की घटनाओं एवं तथ्यों के माध्यम से ऐसे जीवन मूल्यों और संदर्भों को प्रस्तुत करता है जो प्रत्येक काल में उपस्थित थे वह इन सभी संदर्भों को अपने रचनात्मक कौशल के माध्यम से वर्तमान संदर्भो एवं परिस्थितियों में भी जीवन्त बनाए रखता है ''साधारणतः ऐसे उपन्यास जिसमें अतीतकालीन, पात्र, वातावरण और घटनाओं के ज्ञात तथ्यों को कल्पना से माँसल और जीवन्त बनाकर रखने का प्रयास होता है, ऐतिहासिक उपन्यास कहते है।''[36] इतिहास ने हमेशा वर्तमान को दिशा प्रदान करने का कार्य किया है इतिहास ने ही वर्तमान की रूपरेखा का निर्माण करने में सहयोग प्रदान किया है इतिहास के साथ साहित्यकार अपनी कल्पना का मिश्रण अवश्य करता है परन्तु यह कल्पना तथ्यों, घटनाओं, तिथियों से पूर्णतया सम्पृक्त होती है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उपन्यास के संदर्भ में कहा है ''उपन्यास आधुनिक युग की देन है। नये गद्य के प्रचार के साथ–साथ उपन्यास का प्रचार हुआ है। आधुनिक उपन्यास केवल कथा मात्र नहीं है, और पुरानी कथाओं और आख्यायिकाओं की भाँति कथा सूत्र का बहाना लेकर उपमाओं, रूपकों, दीपकों और श्लेषों की छटा और सरस पदों पर गुम्फित पदावली की घटा दिखाने का कौशल भी नहीं है। यह आधुनिक वैयक्तिकवादी दृष्टिकोण का परिणाम है। इसमें लेखक अपना एक निश्चित मत प्रकट करता है और कथानक को इस प्रकार से सजाता है कि पाठक अनायास ही उसके उद्देश्य को ग्रहण कर सके और उससे प्रभावित हो सके। लेखकों का इस प्रकार का वैयक्तिक दृष्टिकोण ही नए उपन्यासों की आत्मा है। कथानक को मनोरंजक और निर्दोष बनाकर और पात्रों के सजीव चरित्र–निर्माण तथा भाषा की अनाडंबर सहज प्रवाह की योजना के द्वारा उपन्यासकार अपने वैयक्तिक मत को ही सहज स्वीकार्य बनाता है। जिस उपन्यासकार के पास आधुनिक युग की जटिल समस्याओं के समाधान के योग्य अपना प्रबल वैयक्तिक मत नहीं है वह आधुनिक पाठकों को आकृष्ट नहीं कर सकता।''[37] कल्पना का आश्रय भी केवल इतना ही लिया जाता जो भावों को प्रकट करने में सहायक एवं सक्षम हो कथा की रोचकता एवं प्रसंगानुकूल कल्पना का मिश्रण साहित्य को रोचक

बनाता है साहित्यकार पात्रों के संवाद एवं संवेगों से इतिहास की घटनाओं एवं तथ्यों को सरल रूप में समझाने में सहायता के लिए विवेकानुसार कल्पना का मिश्रण करता है साहित्यकार अपनी सम्पूर्ण साहित्यिक क्षमता और सृजनशीलता का प्रयोग करते हुए इतिहास को बिना कोई क्षति पहुँचाए पूर्णतः वर्तमान में प्रासंगिक एवं सार्वकालिक घोषित करता है वृन्दावन लाल वर्मा जी ने इस संदर्भ में कहा है कि –''इतिहास किसी विशेष काल में घटी घटनाओं का विवरण होता है। उन घटनाओं से सम्बन्धित पात्रों का एक लेखा होता है परन्तु ऐतिहासिक उपन्यासों में उन घटनाओं को कल्पना के द्वारा आकर्षक सीमा का अतिक्रमण न कर सके। इतिहास की आत्मा को आघात न पहुँचा सके। घटनाओं के स्वरूप को विकृत कर न सके।''[38]

इतिहासकार और उपन्यासकार की दृष्टि में तुलनात्मक अंतर होता है। इतिहासकार जहाँ इतिहास को यथार्थ के साथ प्रस्तुत करने में अपनी दक्षता समझता हैं। वहीं उपन्यासकार ऐतिहासिक मूल्यों को अपनी मौलिक शक्ति के बल पर जीवंत प्रसंगों के साथ सार्वकालिक चेतना के रूप में प्रस्तुत करने में विश्वास व्यक्त करता है। इतिहासकार क्या था? के प्रश्नाकुल मानस के साथ यथार्थ के धरातल पर तथ्यों का संकलन करता है। साहित्यकार का प्रश्नाकुल मन क्यों था? की भाव भूमि पर जीवन मूल्यों एवं परिस्थितियों पर दृष्टिपात करता है। ''साहित्य समाज का दर्पण होता है।'' इस उक्ति की सार्थकता व्यक्त करने की क्षमता एवं साहस साहित्य एवं साहित्यकार में ही निहित होती है।

साहित्यकार हृदय की अनुभूत कल्पना से सत्य का अन्वेषण करने का साहसिक कार्य करता है। शुद्ध हृदय एवं तर्कशील मानसिकता से इतिहास की घटनाओं, मनोवृत्तियों का सही आकलन करने का श्रम करता है। इतिहास यथार्थ एवं तथ्यों पर आधारित होता है। जबकि साहित्य मनोवृत्तियों के साथ यथार्थ को रेखांकित करने का प्रयास करता है। इतिहास का कथ्य ही साहित्य को लक्ष्य प्रदान करता है। साहित्यकार का उद्देश्य रहता है कि वह अपने विवेक एवं बुद्धि चार्तुय से समाज में व्याप्त जीवन मूल्यों को सार्वकालिक चेतना के द्वारा व्यक्त करता रहे। वह उन सभी ऐतिहासिक घटनाओं को समाज के समक्ष एक प्रेरणा स्त्रोत के रूप में प्रस्तुत करता है। डॉ. सुरेश सिन्हा ने लिखते है – ''जो साहित्य कालातीत है, वह निश्चय ही आत्मोपलब्धि का साहित्य है, और अपने युग की सांस्कृतिक चेतना के साथ घनिष्ठतम रूप में सम्बद्ध है। यही कारण है कि आज का उपन्यासकार अपने युग जीवन को आत्मगत रूप में ही स्पष्ट करने की चेष्टा करता है। वह अपनी आंतरिक संवेदना को अपने वैयक्तिक स्वातंत्र्य की शर्त स्वीकार कर मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा करने का प्रयत्न करता है। वह जीवन के अंदर से जीवन का साक्षात्कार करता है। और यह आत्मान्वेषण की प्रक्रिया भी है। जिससे मानवीय मूल्यों को गति प्राप्त होती है।''[39]

साहित्य और सार्वकालिक चेतना का एक दूसरे के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। यह सम्बन्ध वर्षों एक दूसरे से इतना धुल मिल गया है, कि यह एक परम्परा के रूप में प्रतिष्ठित हो गया है। साहित्य का लक्ष्य है समाज एवं वर्तमान पीढ़ी को दिशा प्रदान करना ताकि वह अपने जीवन संघर्ष एवं मूल्यों के प्रति चैतन्य रह सके और वह इस कार्य की पूर्ति हेतु इतिहास से उन संदर्भों का चयन करता है जो सार्वकालिक होने के साथ ही वर्तमान को संवारने एवं सम्भालने की क्षमता रखते है। साहित्य में ऐसे कई हस्ताक्षर है जो सार्वकालिक चेतना की साहित्यिक परम्परा के सशक्त उदाहरण है। वर्षों से युगों द्वारा स्थापित होने वाले महानायकों के जन्म एवं युग परिवर्तन के साहस की सार्वकालिक चेतना प्राचीन समय से लेकर आज तक ज्यों की त्यों साहित्य में उल्लेखित की जाती रही है। श्रीमद्‌भागवत और रामचरित मानस की पंक्तियाँ सार्वकालिक साहित्य चेतना के अंत सम्बन्ध को व्यक्त करती है।

**"यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।**
**अभ्युत्थानमधर्मस्य तदाऽऽत्मानं सृजाम्यहम्।।"**[40]

**"जब जब होई धरम की हानि बाढ़हि असुर अधम अभिमानी**
**तब तब प्रभु धरहीं मनुज सरीरा, हरहि सकल सज्जन भव पीरा।।"**[41]

साहित्यकार का लक्ष्य होता है कि वह इतिहास को कल्पना एवं मौलिक प्रतिभा के सामर्थ्य पर प्रस्तुत कर समाज के नव निर्माण में सहयोग करे। इसी कारण वह अतीत के चरित्रों एवं घटनाओं को कल्पना रूपी धागे में पिरोता हुआ चलता है। साहित्य और सार्वकालिक चेतना की सम्बद्धता ही वर्तमान पीढ़ी को जीवन मूल्यों का सही आकलन करना सिखाती है। किसी पात्र को अतीत की पृष्ठ भूमि से उठाकर वर्तमान जीवन संदर्भों के धरातल पर प्रस्तुत करना ही उपन्यासकार का श्रेष्ठ प्रयास होता है। अतीत का सही मूल्यांकन वर्तमान करता है, और उसके प्रयोग और परिणाम भविष्य को दिशा दिखाने का काम करते है। साहित्य और सार्वकालिक चेतना का सम्बन्ध सामाजिक व्यवस्थाओं की उन जर्जर और प्राचीन परम्परागत मान्यताओं से है जो अब परिर्वतन की ओर उन्मुख है। साहित्यकार ने अपनी सूझ–बूझ से ऐसी मान्यताओं एवं परम्पराओं को समाज से दूर कर समाज को स्वस्थ एवं विवेकशील बनाने का प्रयास किया। इतिहास में मानव समुदाय में कई बार कुछ तात्कालिक कारणों से कुछ नियम तत्कालीन समय की आवश्यकता को पूरा करते हुए प्रतीत होते है। साहित्यिक परम्परा ने अपने चिन्तन से इन नियमों की आवश्यक समय सीमा भी निर्धारित की है। सार्वकालिक चेतना शाश्वत, सत्य एवं चिरंतन विषय की विवेचना करती है। इसी कारण समाज में होने वाले क्षणिक परिवर्तन के दूरगामी परिणामों पर दृष्टि डालते हुए साहित्य समाज को सावधान करने का कार्य करता है।

1757 के बाद जब भारत में अंग्रेजों का आगमन हुआ। इन्होंने एक व्यापारी के वेश में प्रवेश किया था और धीरे–धीरे सम्पूर्ण भारत पर अपना शासन स्थापित कर लिया। अंग्रेजों की

मंशा थी कि भारत उनका उपनिवेश बना रहे परन्तु यहाँ की सभ्यता एवं संस्कृति ने स्वतंत्रता की सार्वकालिक चेतना के द्वारा लोगों के ह्रदय में प्राण भर दिये। वहीं साहित्य ने अपनी रचनाओं के द्वारा समाज एवं देश की दशा को लोगों के समक्ष प्रकट करने का साहस किया। साहित्यकार अपने युग एवं परिवेश के लिए सदा चिंतित रहता था। वह अपने इतिहास से प्रेरणा प्राप्त कर वर्तमान के साथ भविष्य की रूपरेखा भी तैयार करता है। इतिहास साक्षी है कि जब कभी राष्ट्र निर्माण, संस्कृति, धर्म, परम्परा, स्वतंत्रता, अर्थ, सभ्यता एवं मनुष्यता पर संकट आया तब साहित्य ने समाज से किसी ऐसे महानायक का चुनाव कर लिया जो युग में परिवर्तन की क्षमता रखता था। यद्यपि हम कृष्ण और राम की तुलना किसी सामान्य मनुष्य से नहीं कर सकते। परन्तु उनके आदर्श कर्तव्य ऐसे थे जिन पर सामान्य मनुष्य भी चलकर महानायक की भूमिका का निर्वाह कर सकता है। प्राचीन काल से लेकर अब तक कोई भी ऐसी समस्या नहीं जिसका समाधान हमारे साहित्य में उपस्थित न हो। चन्द्रगुप्त से लेकर महात्मा गाँधी तक राष्ट्रनिर्माण की संकल्पना को आज भी सार्वकालिक चेतना द्वारा साहित्य में प्रतिष्ठित किया जाता रहा है।

## (घ) सार्वकालिक चेतना के विविध स्वरूप

साहित्यकार सामान्यतः अपनी रचना को मानवीय संवेदना के धरातल पर यथार्थ बोध के आधार पर संकलित करता है तथा कल्पना के मिश्रण से एक एक घटना पर दृष्टि डालता हुआ आगे बढ़ता है। कहाँ? क्या? कब? कैसे? क्यों? आदि प्रश्नों के द्वन्द्व को सुलझा लेने के पश्चात् ही वह सृजन कर्मरत् रहता है। साहित्य समाज की परिस्थितियों एवं प्रवृत्तियों से जुड़ा रहता है। हिन्दी साहित्य की उपन्यास विधा में जब उपन्यासकार अपनी लेखनी किसी ऐतिहासिक पात्र की व्याख्या करने के लिए उठाता है। तो उसके मन की गहराई किसी अँधेरे कुंए की गहराई से कम नहीं होती है। इतिहास का अध्ययन करने से पूर्व इतिहास के प्रभाव और परिणाम का भी चिंतन करना आवश्यक होता है। यही चिंतन सार्वकालिक मूल्यों की तह तक जाकर उन तथ्यों को खोज निकालता है जो कहीं न कहीं छूट गये हैं।

उपन्यासकार जब भी साहित्य और इतिहास को सम्पृक्त करना प्रारम्भ करता है। तो उपन्यासकार के मन में अतीत के मूल्यों की वर्तमान प्रासंगिकता का ध्यान सदैव रहता है। अर्थात् मूल्य सदैव वर्तमान और भविष्य को प्रभावित करते रहे है शम्भुनाथ जी ने कहा है कि ''साहित्य और कला में जीवन मूल्यों का रूपायन होता है। वे सूक्ष्म सिद्धान्त न रहकर अपने का अभिव्यक्त करते हैं। एक प्रकार से समस्त साहित्य प्रतीकात्मक प्रक्रिया है जिसमें जीवन मूल्य उपचेतन मन से ऊपर आकर चेतन लोक में स्थान पाते है।''[42] उपन्यासकार सदैव ही उन जीवन संदर्भों की व्याख्या करना चाहता है जिन मूल्यों का स्थायित्व अनादि काल से चला आ रहा है अतः हम उपन्यासों में ऐतिहासिक पात्रों का मूल्यांकन करते है, तो सम्पूर्ण घटना क्रम सार्वकालिक चेतना से जुड़ा हुआ प्रतीत होता है। जीवन और मूल्य दोनों एक दूसरे के पूरक है यदि हम इन दोनों

को अलग करना भी चाहे तो यह सम्भव नहीं है डॉ. जगदीश गुप्त के अनुसार ''बिना मानवीय संवेदनाओं को केन्द्र में रखे मूल्य की कल्पना नहीं की जा सकती।''[43] जीवन की समाप्ति पर भी मूल्यों की जीवनंतता बनी रहती है सार्वकालिक चेतना ही है जो सभी युगों में समान रूप से हर पात्र में किसी न किसी रूप में पायी जाती है जब हम सार्वकालिक चेतना के स्वरूप पर दृष्टि डालते है तो हमें यह विविध स्वरूपों में दिखाई देती है इसके स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए हम अग्रांकित बिन्दुओं का सम्यक् विवेचन करेंगें ताकी इससे जुड़े मूल्य एवं जीवन संदर्भो का सही मूल्यांकन हो सके।

सार्वकालिक चेतना विविध रूपों में हमें सभी जीवन संदर्भो में देखने को मिलती है। जीवन की गतिशीलता के साथ मूल्यों की चेतना भी निरंतर बनी हुई है जीवन के सभी पक्षों पर इसका प्रभाव दिखाई देता है। इसके विभिन्न रूप हमें दिखाई देते है।

**ऐतिहासिक चेतना** – 'मानव जीवन का एक इतिहास है जो अनादि काल से चला आ रहा है। मानव नवीन अवधारणाओं की प्रस्तुति देता रहा है वह अपने आप को सदैव आधुनिक रूप में देखने का अभ्यस्त है उसे लगता है जो कि आज है वह कल नहीं था जो आज है, वह कल और आधुनिक होगा मानव संघ जीवी है। वह सदैव अपने को अपने समाज में प्रस्तुत करता है इसी कारण वह सदैव इतिहास का निर्माण करता चलता है जो बीत चुका, जो स्मरणीय है, विचारणीय है, प्रेरणा देने वाला वह आज भी प्रासंगिक है यही भाव इतिहास के प्रति चेतना को जन्म देता है। चेतना मानव मस्तिष्क का वह बिन्दु है जहाँ वह उचित अनुचित को अपनी बुद्धि की तुला पर उचित तथ्यों के परिमाण पर तौलता हुआ निष्कर्षों तक पहुँचता है यही निष्कर्ष मानव की सार्वकालिक ऐतिहासिक चेतना का स्वरूप धारण करती है।

इतिहास सार्वकालिक मूल्यों की दृष्टि से पूर्ण होता हुआ वर्तमान की पुनर्व्याख्या से संशोधित हुआ नवीनता की ओर उन्मुख होता है यही नवीनता सार्वकालिक इतिहास चेतना की द्योतक होती है ऐतिहासिक चेतना से पूर्ण उपन्यासों के लेखन में भी उपन्यासकार को पूर्ण सावधानी रखनी पड़ती है प्रभाव और परिणाम का चिंतन भी उपन्यासकार को प्रभावित करता है इसी कारण वह उपन्यास लिखते समय किसी इतिहास क्रम की भूमि पर यथार्थ का बीज बोकर कल्पना के खाद से सींचता है। इसी संदर्भ में प्रमुख ऐतिहासिक उपन्यासकार हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है – ''ऐतिहासिक उपन्यास लिखना कठिन कार्य है। लेखक को आधुनिकता प्रगति का पूरा ज्ञान होना चाहिए।''[44] साहित्कार इतिहास को आधुनिकता के साथ प्रस्तुत करता है। इतिहास में पात्र, घटनाएँ सब अपने आप में उदाहरण है जिसकी प्रासंगिकता को स्पष्ट करना ही उपन्यासकार का लक्ष्य होता है। पं. राहुल सांस्कृतायायन कहते है –'' ऐतिहासिक उपन्यास में हमें ऐसे समाज और उसके व्यक्तियों का चित्रण करना पड़ता है जो सदा के लिए विलुप्त हो चुके है किन्तु उन्होंने जो पद्चिन्ह् छोड़े है उसके साथ मनमानी करने की इजाजत नहीं दे

सकता ऐतिहासिक उपन्यासकार का विवेक वैसा ही होना चाहिए जैसा कि इतिहासकार का होता है। उसे समझना चाहिए कि कौनसी साम्रगी का मूल्य अधिकतम और किसका कम है।''[45]

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर उपन्यास साहित्य के मूर्धन्य विद्वान है इनके सभी उपन्यास चाहे वे सामाजिक हो, राजनैतिक हों, ऐतिहासिक हों, सभी में जीवन की शाश्वत एवं सार्वकालिक मूल्यों की स्थापना है इनके उपन्यासों में जहाँ जीवन संदर्भों की व्याख्या अतीत से वर्तमान को दिशा प्रदान करती हुई दिखाई देती है। वहीं इतिहास के उन पक्षों का भी उद्‌घाटन करने का प्रयास करती है जिनकी आज मानव को अधिक आवश्यकता है।

उपन्यास विधा में चरित्र को साक्षात् उपन्यासकार अनुभूत करता है वह उन सभी मूल्यों एवं जीवन लक्ष्यों का अध्ययन विविध परिस्थितियों के संदर्भ में करता है जिनमें वे जीवन मूल्य अपना अस्तित्व कायम रख सकने में समर्थ रहे हैं वर्तमान की सभी स्थिति–परिस्थितियाँ भूतकाल की घटनाओं से प्रेरित होकर अपने भविष्य का लक्ष्य निर्धारित करती है परन्तु आज मानव आधुनिकता की भाग–दौड़ में अपना इतिहास बाँचना भूल गया है। अतः वह अपने आपको वर्तमान में आधुनिकता के हाथों में सौंप में चुका है आधुनिकता की स्थिति कुछ ऐसी हैं कि लगता है सब कुछ नवीन एवं प्रासंगिक है परन्तु वह सदैव अतीत के संदर्भों से सम्पृक्त रहा है। उपन्यासकार जब जीवन मूल्य एवं संदर्भों का विवेचन, विश्लेषण एवं अध्ययन करता है तो पाता है कि यह सब सार्वकालिकता को ग्रहण किये हुए ही तथ्य है। सार्वकालिकता का बना रहना ही जीवन है क्योंकि जीवन सार्वकालिक है तो उससे जुड़ी हर चीज, पदार्थ, मूल्य, सन्दर्भ, प्रगति, स्थिति, प्रवृत्ति सब कुछ सार्वकालिक ही होती है।

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ऐतिहासिक उपन्यास साहित्य में एक ऐसा नाम है जो एक ही चरित्र पर एक से अधिक उपन्यास लिख चुके है इतिहास को लिखना यथार्थ पर निर्भर होता है परन्तु जब इतिहास से सम्बन्धित पात्रों के जीवन चरित्र पर लिखना हो तो उस पात्र की मनोस्थितियों के साथ तादात्मय स्थापित करना पड़ता है। डॉ. भटनागर ने अपने आपको साहित्य की उस अवस्था तक स्थिर कर लिया है जहाँ सारी कल्पना यथार्थ के साथ जुड़कर साकार रूप ग्रहण करने लगती है। यही कारण है कि भटनागर जी ने एक ही ऐतिहासिक चरित्र पर एक से अधिक उपन्यास लिखने में सफलता प्राप्त की है। डॉ.भटनागर जी ने महाराणा प्रताप, महर्षि अरविन्द योगी, विवेकानन्द, सुभाष चन्द्र बोस, सरदार, महात्मा गाँधी, सूरदास, मीरा आदि अनेक ऐतिहासिक महापुरूषों पर अपनी लेखनी को समृद्ध करने का स्तुत्य प्रयास किया है। इन्होंने सदैव इतिहास के शाश्वत एवं सार्वकालिक तथ्यों का अनुसंधान, अनुशीलन किया है।

**व्यक्ति चेतना** – मानव का स्वभाव विविध विकारों एवं गुणों से भरा हुआ है। इन्हीं गुणों के आधार वह अपने सामाजिक व्यवहार को प्रदर्शित करता है। सामाजिक जीवन में अपने दायित्व, कर्त्तव्यों

एवं अधिकारों का प्रयोग करता है। मानव का स्वभाव समाज में प्रचलित मान्यताओं एवं परम्पराओं से प्रभावित होता है। इस प्रभाव के दो पक्ष उभरकर सामने आते है। सकारात्मक एवं नकारात्मक। सकारात्मक पक्ष मानव स्वभाव की संतुष्टि एवं विकास को परिभाषित करते है जबकि नकारात्मक पक्ष मानव स्वभाव के अवगुणों को परिभाषित करते हैं जो मानव के विकास में बाधा उपस्थित करते है। मानव एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर ही वह अपना विकास कर सकता है। वह अपनी समस्या और समाधान समाज से ही प्राप्त करना चाहता है। समाज के हर पहलू पर वह अपनी स्थिति को स्पष्ट करता है। मानव जन्म से लेकर मृत्यु या यों कहे कि मृत्यु के बाद भी अपनी पहचान और छवि को सामाजिक आदर्श के रूप में स्थापित करने का प्रयास करता है। अस्तित्व का प्रश्न सदैव से मानव को प्रभावित करता है। मानव स्वभाव की सर्वप्रमुख विशेषता भी यही है।

– "मानक हिन्दी कोश के अनुसार 'व्यक्तित्व' (व्यक्ति + त्व) व्यक्ति – व्यक्त होने की अवस्था या भाव, किसी व्यक्ति की निजि, विशिष्ट, क्षमताएँ, गुण, प्रवृत्तियाँ आदि जो उसके उद्देश्यों, कार्यों, व्यवहारों आदि में प्रकट होती है। और जिनमें उस व्यक्तित्व का सामाजिक स्वरूप स्थित होता है।"[46]

– जे. एम. ग्राहम और मनोविज्ञान के अनुसार – "अधिकांश लोग व्यक्तित्व का अर्थ उत्साह, प्रफुल्लता, साहस, विध्वस्थता समझते है। असल में व्यक्तित्व व्यक्ति में निहित वह खास चीज है। जो उसको सर्वसाधारण की भीड़ में निराला बनाए रखती है।"[47]

– मानव के व्यक्तित्व निर्माण में शिक्षा का बहुत बड़ा एवं महत्वपूर्ण योगदान रहा है। मानव के व्यक्तित्व निर्माण में शिक्षा की महती भूमिका होती है। शिक्षा के योग से मानव अपनी बुद्धि के आधार अपने गुणों का समाज के समक्ष मूल्यांकन करना प्रारंभ करता है। मानव को जीवन के हर पहलू पर विचार करने के लिए बुद्धि के साथ साथ शिक्षा का सहयोग मिलना अपेक्षित है। शिक्षा का व्यक्तित्व के निर्माण में बहुत बड़ा योगदान है। शिक्षा व्यक्तित्व में चरित्र का निर्माण करती है। चरित्र का समाज पर प्रभाव पड़ता है। समाज पर पड़ने वाला हर प्रभाव मानव को अपने उचित अनुचित का ज्ञान कराता है। बुद्धिमान होना मानव का स्वभाव है परन्तु शिक्षित बुद्धिमान होना मानव का व्यक्तित्व है।

बुडवर्थ ने इस संदर्भ में कहा है –"वैसे तो बुद्धि व्यक्तित्व के निर्माण का मूलाधार तत्व है और बुद्धिमान पर निर्भर करती है। परन्तु आदमी ज्ञान संचय मात्र से बुद्धिमान नहीं कहलाता है। बल्कि संचित ज्ञान के सदुपयोग से बुद्धिमान कहलाता है"[48] व्यक्ति के गुणों का सामाजिक रूप से सकारात्मक व्यवहार ही मानव समुदाय के लिए उचित है। मानव को अपने गुणों के आधार पर समाज में नीतिगत व्यवहार करना चाहिए। व्यक्तित्व का निर्माण सामाजिक गुणों के आधार पर ही

होता हैं। तो सौ फीसदी यह भी आवश्यक है कि व्यक्तित्व के गुणों का उपयोग भी समाज के हित में ही होना चाहिए। समाज मानव के व्यवहार का सही मूल्यांकन करता है। मानवीय गुणों का आंकलन, उचित–अनुचित, का ज्ञान समाज में रहकर ही होता है। इन सभी जीवन संदर्भों में व्यक्ति की चेतना जागृत होने लगती है।

व्यक्ति चेतना का सार्वकालिक सन्दर्भ यह है कि यह हर युग में, हर अवस्था में जागृत रहती है। मानव समाज का एक अंग है। समाज एक संघ है। संघ का महत्व इस बात में अधिक है कि समाज अनुशासित एवं संरक्षित रहे। इसी कारण मानव अपने हितों के साथ सामाजिक हितों कि लिए भी संघर्ष करता नजर आता है। वह समाज के प्रत्येक वर्ग का सारथी होता है। वह सदैव अपने आपको उन सभी की चिन्ताओं में उलझा हुआ पाता है जो समाज के द्वारा प्रभावित होती है। वह संगठित, संरक्षित, अनुशासित समाज की कल्पना से प्रेरित होता है और वह सभी में उन गुणों का विकास देखना चाहता है जिनका होना समाज के लिए आवश्यक है।

**राष्ट्रीय चेतना –** ऐतिहासिक उपन्यासों में लेखन का उद्देश्य चाहे जो भी रहा हो परन्तु वह राष्ट्र चेतना से विलग नहीं है। हमारा अतीत हमें सदा से ही राष्ट्र निर्माण के पवित्र संकल्प की प्रेरणा देता रहा है। भारतीय साहित्य की प्राचीन एवं नवीन विचारधारा राष्ट्र निर्माण के प्रति संकल्पित है। यह संकल्प ही हमें राष्ट्रीय चेतना के सार्वकालिक मूल्यों का आभास कराता है। एक राष्ट्र का स्वप्न हर युग में देखा गया, हर युग में किसी न किसी चरित्र ने इस संकल्प को पूर्ण करने का प्रयास किया। सार्वकालिक तथ्यों की ओर दृष्टि डालते हैं तो यह राष्ट्रीय चेतना हर युग में दोहरायी जाती रही है। राष्ट्र के प्रति निष्ठा एवं कर्तव्य बोध ही राष्ट्रीय चेतना कहलाती है। हम किसी भी कालखण्ड की बात करे सभी कालों में, राष्ट्रीय चेतना के स्वर मुखरित रहे हैं। मानव संघजीवी है। वह अपने दायित्व एवं कर्तव्यों से मानव हितार्थ राष्ट्र निर्माण की परिकल्पना को पूर्ण करने का प्रयास करता है। समाज की सबसे छोटी इकाई मानव है वस्तुतः राष्ट्र निर्माण की परिकल्पना में प्रारम्भ बिन्दु भी वही है।

राष्ट्रीय चेतना की सार्वकालिकता विचार के साथ सहज रूप में भाव और मूल्यों से सम्पृक्त रहती है। मानव अपने समाज को एक ऐसे सूत्र में बांधता है जिसे एकता, अखण्डता नाम दिया जा सकता है मानव के परिवार, कुटुम्ब, समुदाय, समाज,गांव, शहर, राज्य, राष्ट्र की इस श्रृंखला के केन्द्र में मानव ही है मानव के अधिकारों पर किसी अन्य का अतिक्रमण न हो, वह अपने अधिकारों का जिनमें सबसे प्रमुख स्वतंत्रता है, बिना किसी अवरोध के दायित्व बोध के साथ प्रयोग कर सके यही भावना राष्ट्रीय चेतना को सार्वकालिक बनाती है। डॉ. सुधीन्द्र के अनुसार ''भूमि, भूमिवासी, जन और जन संस्कृति तीनों के सम्मिलन से राष्ट्र का स्वरूप बनता है। भूमि अर्थात् भौगौलिक एकता, जन अर्थात् जनगण की राजनीतिक एकता और जन संस्कृति अर्थात् सांस्कृतिक एकता तीनों के समुच्चय का नाम 'राष्ट्र' है।''[49] 'राष्ट्र' शब्द अपने आप में एक संगठन

का बोध कराता है एवं सदैव मानव को संगठित रूप में रहने की प्रेरणा देता है मानव के हित संगठन के माध्यम से संरक्षित एवं सवंर्द्वित किये जा सकते हैं। मानव को अनुशासन एवं संस्कार भी यहीं से मिलते हैं और वह अपने अधिकार एवं कर्तव्यों का समुचित रूप से पालन करना भी सीखता है राष्ट्रीय चेतना को उदाहरण रूप प्रस्तुत करने की या इसे व्यवस्थित करने की आवश्यकता है ही नहीं क्योंकि जहाँ तक दृष्टि और सृष्टि है वहाँ तक यह जन चेतना के रूप में उपस्थित है चाणक्य, हर्षवर्धन, रविचन्द्र सैन, महाराणा प्रताप, विवेकानन्द, रवीन्द्रनाथ टैगोर, महात्मा गाँधी आदि ऐसे महापुरूष है जो राष्ट्र एवं जन चेतना के प्रतिनिधि है। इन लोगों ने अपने अपने युग के लोगों को संगठित करने का प्रयास किया।

'राष्ट्र' शब्द नागरिकों के दायित्व, कर्तव्य और अनुशासन का प्रतीक है। यह एक ऐसा संगठनात्मक स्वरूप है; जिसमें एक सबके लिए एवं सब एक के लिए समर्पित है और सबके लिए राष्ट्र हित सर्वोपरि है भारत देश में बोली, भाषा, रंग–रूप, आकार–प्रकार, खान–पान, रहन–सहन, संस्कृति, सभ्यता जैसे विविध पक्षों में असमानता होते हुए भी एक राष्ट्र का संकल्प अपने आप में अद्‌भुत है राष्ट्र का विचार यहाँ जन आंदोलन है सब एक झंडे के नीचे अपने अस्तित्व को सुरक्षित रखने का प्रयास करते है बाबूगुलाब रॉय ने राष्ट्रीयता के संदर्भ में कहा है–"एक सम्मिलित राजनीतिक ध्येय में बँधे हुए किसी विशिष्ट भौगोलिक ईकाई के जन समुदाय के पारस्परिक सहयोग और उन्नति की अभिलाषा से प्रेरित उस भू भाग के लिए प्रेम और गर्व की भावना को राष्ट्रीयता कहते है।"[50] राष्ट्र में जनता की समर्पित भावना का स्वरूप सच्ची एवं सार्वकालिक चेतना है। अतः राष्ट्रीय चेतना की सार्वकालिकता यही है कि हर व्यक्ति सुरक्षित एवं संगठित रहे।

**नारी चेतना –** नारी चेतना अर्थात नारी के व्यक्तित्व एवं अधिकारों के प्रति जागृति है। परन्तु नारी के सम्पूर्ण पक्षों का उद्‌घाटन वास्तव में नारी चेतना कहलाता है। मानव के पृथ्वी पर जन्म से वह अपने संघर्ष को गतिमान करती हुई आगे बढ़ रही है युग चाहे वैदिक हो या पौराणिक या आधुनिक उसके संघर्ष में किसी प्रकार की न्यूनता का आभास नहीं होता है वह सदैव संघर्षरत एवं प्रयासरत दिखाई देती है अब प्रश्न यह है कि आखिर नारी का संघर्ष किससे है? पुरूष, स्त्री, समाज, मूल्य, परम्परा या स्वयं से बस यहीं से शुरू होता है 'स्त्री विमर्श'। स्त्री के सभी पक्षों पर विचार का नाम है नारी चेतना वैदिक युग से ही नारी को त्याग, सहिष्णुता एवं समस्त मानवीय गुणों से सम्पन्न बताया गया है इतिहास पर दृष्टि डालते हुए जब हम नारी के सम्बन्ध में अध्ययन करना प्रारंभ करते है तो हमें हर समय नारी के साथ 'त्याग' शब्द का होना सार्थक लगता है। आखिर त्याग ही तो वह गुण है जिसकी कसौटी पर नारी को तोला जाता है। समाज के बुद्धिजीवियों की दृष्टि में त्याग नारी का आवश्यक गुण है और यही गुण सम्भवतः नारी को सम्पूर्णता प्रदान करता है। 'त्याग' ढाई अक्षर का यह शब्द किसी स्त्री या पुरूष के जीवन की

दिशा और दशा को बदल देने की क्षमता रखता है। त्याग और नारी सम्भवतः एक दूसरे के पर्याय है नारी को जहाँ भी लगा या तो वह स्वयं अपनी इच्छाओं का त्याग कर देती है या फिर उससे वह बलात् करवा लिया जाता है। जब मैं इतिहास पर दृष्टि डालता हूँ तो मेरे सामने सबसे क्रूर एवं नृशंस उदाहरण के रूप में सती प्रथा, बाल विवाह, अनमेल विवाह, डायन प्रथा, बहु विवाह, विधवा, जौहर, साका, घरेलू हिंसा आदि के रूप में प्रस्तुत होते है।

नारी का जीवन सचमुच अद्भुत है वह अनादि काल से अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह करती हुई अपने जीवन संघर्षो के बीच झूलती हुई प्रतीत होती है कहीं से भी शुरू कीजिए आपको नारी संघर्ष की प्रतिमूर्ति ही नजर आयेगी। स्त्री का यही एक पक्ष नहीं है और भी अनेक ऐसे पक्ष है जहाँ पर नारी अपने अस्तित्व की पहचान को लेकर संघर्षरत है। इतिहास में अनेक ऐसे उदाहरण मिल जाऐंगें जहाँ नारी के त्याग एवं समर्पण की गाथा सार्वकालिकता चेतना से सम्पृक्त है।

नारी सदैव अधीन रही है पिता, भाई, पति, पुत्र, के या यों कहे पुरूष के वह मुक्ति चाहती है इन बंधनों से जो आदि काल से इसे जकड़े हुए है वह अपना सर्वांगीण विकास चाहती है वह पुरूष के साथ अपनी समकक्षता चाहती है उसे उन सब अधिकारों की चाहत है जो मानव को समानता के साथ दिये गये है परन्तु समाज ने उन पर अतिक्रमण कर रखा है। स्त्री स्वयं में एक चेतना है वह अंधेरों में उस टिमटिमाते तारे की भाँति है, जो सम्पूर्ण अंधकारमय जगत् को अपने अस्तित्व से चुनौती दे रहा है स्त्री को आवश्यकता है शिक्षा की, तकनीक की, ज्ञान की तब वह स्वतः ही अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो समाज के प्रति अपने दायित्व एवं कर्तव्यों का निर्वाह कर सकेगी।

अतः हमें नारी चेतना के सम्बन्ध को इतना समझने की आवश्यकता है कि नारी मानव सम्बन्धों की आधारशिला है। प्रकृति ने उसे शारीरिक रूप से सृजनात्मक बनाया है। पालक, पोषक के रूप में चित्रित किया है। वह सदैव पुरूष की सहभागी, सहधर्मिणी है। उसे उसके अधिकारों से वंचित रखना किसी अपराध से कम नहीं है। स्त्री के बुद्धि चातुर्य से घबराने की नहीं, वरन् परामर्श की संभावना होनी चाहिए। स्त्री–पुरूष एक दूसरे के पूरक है, विरोधी नहीं यही चेतना ही नारी चेतना का सच्चा स्वरूप है।

**साहित्यिक चेतना –** 'साहित्य समाज का दर्पण' है यह उक्ति अपने आप में अपने स्वरूप की व्याख्या करती है। साहित्य मानव के कृत्यों की व्याख्या करता है। वह सदैव मानव के विचारों को परिभाषित करता रहा है मानव मन की अनुभूतियों की अभिव्यक्ति देता है स्वानुभूत भावों का प्रस्तुतीकरण करने में सहायक रहा है अंततः साहित्य हर युग के शाश्वत मूल्यों को सार्वकालिक चेतना के साथ ग्रहण करने और अभिव्यक्त करने में सक्षम है जैनेन्द्र कुमार कहते हैं कि–''मानव

जाति की इस उन्नत निधि में जितना कुछ अनुभूति भंडार लिपिबद्ध है वही 'साहित्य' है, और भी अक्षर बद्ध रूप में जो अनुभूति संचय विश्व को प्राप्त होता रहेगा 'साहित्य' है।''[51] मनुष्य जब कभी भी अपने मूल्यों की अवधारणाओं को नकारने का प्रयास करता है, तब साहित्य मानव को अनुशासित करने की स्वप्रेरणा प्रदान करता है। साहित्य की यही विशेषता साहित्यिक चेतना कहलाती हैं।

मानव समाज की एक इकाई है वह अपने क्रिया कलापों से समाज को सदा प्रभावित करता रहा है इसी कारण समाज और मानव एक दूसरे से सम्बद्ध है मानव के व्यक्तित्व के दो पहलू होने के कारण व्यवहार भी दो पक्षों में परिवर्तित होता है यह पक्ष सकारात्मक भी हो सकता है और नकारात्मक भी सकारात्मकता मनुष्य को आगे बढ़ाने का कार्य करती है साहित्य सकारात्मक पक्ष को प्रेरणा देने का कार्य पूर्ण मनोयोग से करता है वहीं नकारात्मकता समाज को तोड़ने, तिरोहित करने का, अव्यवस्थित, अमर्यादित एवं अनुशासनहींनता की ओर ले जाती है साहित्य अपने दायित्व बोध से स्वतः अनुप्राणित होकर नकारात्मक पक्ष का धैर्य एवं तटस्थता के साथ विरोध करता हुआ समाधान की ओर बढ़ता है।

साहित्य का इस प्रकार का समर्थन और विरोध ही साहित्यिक चेतना कहलाता है। साहित्य सदैव चेतन है, नवीन है, साथ ही समकालीन एवं सार्वकालिक भी है। डॉ. देवराज के अनुसार—''नवीनता से मतलब है ऐसे तत्वों पर गौरव जो किसी क्षेत्र में मानवता के मूल्यांकन व दृष्टि को ज्यादा बदल देने वाले सिद्ध होते है। नवीनता मौलिकता का एक तत्व है।''[52] साहित्य की सार्वकालिकता जीवन संदर्भ के उन सभी मूल्यों से सम्पृक्तता ग्रहण किये हुए है जिनसे मानव किसी न किसी तौर पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ा हुआ है। साहित्यिक भावों का प्रकाशन एवं प्रस्तुतीकरण साहित्य की सार्वकालिक चेतना का सृजन करता है।

साहित्य हर काल में अपनी चेतना से मानव को अनुशासित एवं संयमित बनाता रहा है। साहित्य का काल एवं देशों की सीमाओं से परे होना इस बात का प्रमाण है कि साहित्य सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्त है। भारत के इतिहास का अध्ययन करने पर हमें राजनीति, समाज, राष्ट्र, धर्म, संस्कृति एवं सभ्यता सभी में साहित्यिक चेतना के तत्व स्वतः स्पष्ट परिलक्षित होते है भारत के वैदिक काल से लेकर वर्तमान युग तक हर काल खण्ड में व्यक्ति को साहित्यिक चेतना ने सभी अवरोधों से मुक्त किया है समाज में व्याप्त विसंगति, कुण्ठा, विपन्नता, अन्याय, करूणा, प्रेम, सहानुभूति, स्वार्थ, त्याग, परिवार, विघटन, परिवर्तित जीवन मूल्यों का प्रभाव, यौन संबंध, बदलते सामाजिक मूल्य, नैतिक मूल्य आदि सभी पक्षों का यथार्थ किन्तु समन्वयात्मक रवैये के साथ प्रस्तुति देना ही साहित्यिक चेतना का प्रमुख उद्देश्य एवं लक्ष्य है।

साहित्य अपने उद्देश्य में सफल रहे इसलिए वह अपनी पैनी दृष्टि से हर युग का मूल्यांकन एवं विश्लेषण करता है ''साहित्य शब्द से साहित्य में मिलने का भाव पाया जाता है। वह केवल भाव–भाव का, भाषा–भाषा का, ग्रंथ–ग्रंथ का ही मिलन नहीं, अपितु मानव के साथ मानव का अतीत के साथ वर्तमान का, दूर के साथ अत्यंत निकट का अंतरंग मिलन भी है, जो साहित्य को छोड़कर अन्यत्र कहीं संभव नहीं है।''[53] मानव मन की उस गहराई तक पहुँचने का प्रयत्न करने का प्रयास करता है जहाँ विकारों के सागर में द्वन्द्व का तूफान किसी परिवर्तन की सृष्टि करने वाला है साहित्यिक चेतना का सर्वप्रमुख दायित्व यही है कि वह इन सब की पूर्व सूचना अपने साहित्य के माध्यम से समाज के समक्ष प्रस्तुत करता है। अतः साहित्य ने हर युग में, हर क्षण अपने दायित्व एवं कर्तव्य का पालन बड़ी कुशलता एवं प्रतिबद्धता के साथ किया है चाहे युग कोई भी रहा हो साहित्य अपने आप में मानव को चेतना को अर्ध्य देता रहा है।

## (ड) गद्य की विविध विधाएँ व सार्वकालिक चेतना

साहित्य काल, देश की सीमाओं से परे अपनी निरंतरता के साथ विभिन्न विधाओं के माध्यम से सदैव सार्वकालिक मूल्यों की व्याख्या करता आया है साहित्य, शाश्वत, चिरंतन एवं सार्वभौमिक है यही कारण है कि मानव हितार्थ लिखा गया साहित्य सार्वकालिकता को ग्रहण कर लेता है प्रेमचंद जी के अनुसार–''साहित्य उस रचना को कहेंगे जिसममें कोई सच्चाई प्रकट की हो, जिसकी भाषा प्रौढ़ और सुन्दर हो और जिसमें दिल और दिमाग पर असर डालने का गुण हो। साहित्य की बहुत सी परिभाषाएँ की गई है, पर मेरे विचार से उसकी सर्वोत्तम परिभाषा जीवन की आलोचना है। चाहे वह निबंध के रूप में हो, चाहे कहानियों के या काव्य के रूप में, उसे हमारे जीवन की व्याख्या करनी चाहिए।''[54] एक साहित्यकार जब भी अपने आस पास की घटनाओं से प्रेरणा ग्रहण कर लेखनी उठाता है तो उसके समक्ष मूल्यों का मूल्यांकन एवं विश्लेषण के साथ यथार्थ का सम्प्रेषण भी रहता है।

साहित्यकार अपने साहित्यिक प्रयासों के द्वारा सार्वकालिक मूल्यों का चिंतन कर उन्हें नवीन रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास करता है इस कार्य को करने के लिए वह गद्य की विविध विधाओं का आश्रय लेता है विद्या चाहे कोई भी हो चिंतन एवं लेखन सदैव सार्वकालिक ही होता है भारतीय साहित्य की अनुपम विशेषता यही है कि वर्षों से चला आ रहा कालचक्र भी साहित्य की प्रासंगिकता का खण्डन नहीं कर पाया हर युग, हर काल में साहित्य अपनी सार्वकालिक चेतना की मोहर काल के हृदय पर साहस एवं विनम्रता के साथ लगाता रहा है यही कारण है कि विधाओं की नवीनता में साहित्य सार्वकालिक चेतना से सम्बद्ध रहा है।

## गद्य की विधाऐं

1. कहानी
2. नाटक
3. एकांकी
4. निबंध
5. आलोचना
6. रेखाचित्र
7. जीवनी
8. संस्मरण

1. **कहानी** – भारतीय साहित्य एवं संस्कृति प्रायः मानव की भलाई का पुनीत कार्य अनादि काल से करते आ रहे है साहित्य ने सत्य, शिव एवं सुन्दरम् की परिकल्पना को साकार करने का स्तुत्य प्रयास किया है। मानव के मन की सूक्ष्म संवेदनाओं को टटोल कर उन्हें प्रतिबद्ध किया है मानव के वैयक्तिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक आदि पक्षों का चित्रण आदर्श एवं यथार्थ के साथ किया है मूल्यों की रक्षा एवं सामाजिक हितों की रक्षा साहित्य वर्षों से बिना किसी विश्राम के करता आ रहा है यहीं कारण है कि विश्व की किसी भाषा में लिखा गया साहित्य मानव हितों का सदैव पक्षकार रूप में उपस्थित रहा है।

कहानी एक ऐसी सरल सुबोध एवं सहज विद्या है जो भारतीय चिंतन का सार्वकालिक विश्लेषण कर जन सामान्य को सत्य एवं सुन्दरम् की परिकल्पना का परिचय देती है। कहानी कालांतर से चली आ रही वह विधा है जो बाल्यकाल में मानस पटल पर अंकित होने वाले सवालों का जबाव बड़े सहज सरल एवं मनोरंजन ढंग से देने में सक्षम है कहानी ने सदैव मानवीय मूल्यों के हितार्थ अपनी प्रस्तुति दी है कहानी से समाज के लोगों को मनोरंजन के साथ शिक्षा भी मिलती है जीवन की दिशा ओर दशा में आवश्यकतानुसार परिवर्तन भी संभव होता है आज युग चाहे जितना भी तकनीक के साथ अपने आधुनिक होने का ढिंढोरा पीटे परंतु सत्य यह है कि आज भी कहानी अपनी सरलता, सहजता एवं मनोरंजक, परन्तु शिक्षाप्रद उद्देश्यों की पूर्ति का सर्वश्रेष्ठ माध्यम है।

कहानी के संदर्भ में मुंशी प्रेमचंद ने कहा कि ''सबसे श्रेष्ठ कहानी वह होती है जो किसी मनोवैज्ञानिक सत्य पर आधारित हो।'' उक्त कथन इस बात की ओर स्पष्ट संकेत कर रहा है कि जहाँ सत्य है वहाँ मूल्य शाश्वत चिरंतन एवं सार्वकालिकता ग्रहण किए होते है कहानी में समाज में स्थापित सामाजिक मूल्यों को प्रकाशित करने का कार्य किया करती है।

हिन्दी कहानी साहित्य ने सार्वकालिकता से आधार ग्रहण कर युगानुसार शाश्वत सत्य को उद्घाटित करने का प्रयास किया है। विषय की विविधता ने सार्वकालिक चेतना को और भी मजबूती प्रदान की है राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक, पारिवारिक, दाम्पत्य, स्त्री विमर्श, छुआछूत, यंत्रणा, भौतिकता, बदलते परिवेश, भ्रष्टाचार, नैतिकता, आध्यामिकता, संस्कृति या अन्य कोई भी विषय हो कहानी ने अपनी सहजता, सरलता के साथ के मानव को उस सार्वकालिक चेतना से अनुप्राणित किया है। कहानी लेखन में कल्पना मिश्रण अवश्य होता है परन्तु आधार सार्वकालिक मूल्यों की चेतना से ही सम्पृक्त रहता है। सुरेश सिन्हा के अनुसार–''कहानी जीवन के यथार्थ की प्रतिच्छाया होती है। वह मानव जीवन के संघर्ष के किसी संवेदना जन्म पक्ष को प्रकट करती है और जीवन के प्रगतिशील तत्वों को समाहित करते हुए नवीन मानव मूल्यों का स्थापना अथवा अन्वेषण नहीं करती, वरन् वह पुराने मूल्यों की खोज भी करती है, जो आज किन्हीं कारणों से विघटित हो चुके हैं। पर जो परिवर्तनशील परिस्थितियों में भी मानवीय भावधारा के उत्थान के लिए आवश्यक प्रतीत होते है।''[55]

2. **नाटक –** नाटक साहित्य की श्रेष्ठ विधाओं में से एक है। नाटक का सम्बन्ध रंगमंच से है और रंगमंच का सम्बन्ध पात्रों, चरित्रों के भावों, मूल्यों एवं संधर्ष से है। पात्र एवं चरित्र प्रभावित होते हैं समाज में व्याप्त संवेदनाओं एवं विसंगतियों से नाटक के पात्र किसी भी विषय को आत्मसात् कर सार्वकालिक चेतना को जागृत करने में पूर्णरूपेण सक्षम है। साहित्य की प्राचीन परम्परा में नाटक का प्रमुख स्थान है। 'काव्येषु नाटकं रम्यम्' के अनुसार नाटक में भावों को प्रदर्शित करने की अद्‌भुत क्षमता है सार्वकालिक चेतना और नाटकों के मध्य गहरा सम्बन्ध वर्षों से चला आ रहा है समाज में चाहे आदर्श प्रस्तुतिकरण की बात हो या किसी घटना पर ध्यान आकर्षण की, नाटक ने अपने तत्वों के साथ सार्वकालिक चेतना को जागृत करने का प्रयास किया है। नाटक का सम्बन्ध जीवन से है क्योंकि जिन्दगी एक रंगमंच है और प्रत्येक व्यक्ति अपना किरदार निभा रहा है। 'अभिनय' शब्द आपको उन परिस्थितियों एवं प्रवृत्तियों की ओर संकेत करता जो मानवीय संवेदनाओं से जुड़ी हुई हैं।

नाटक मनुष्य के सुख, दुख, संधर्ष, आकांक्षाएँ, द्वन्द्व, विषमता, और भी अन्य विकारों की सार्वकालिक चेतना को पुन व्याख्यायित करने में सक्षम है। डॉ. चन्दू लाल दुबे ने इस संदर्भ में टिप्पणी की है –''नाटक जीवन से प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित करता है। वह रंगमंच पर संधर्षशील मनुष्य और उसके संधर्षमय जीवन की सहज अवतारणा कर देता।''[56]

साहित्यकारों ने अपने लेखन में ऐसे विषयों का अंकन किया हैं जिन्हें समझने में या यों कहिये कि समाज की पकड़ से दूर थे विषयों की विविधता और उसके प्रभाव का अंकन और

मंचन ने व्यक्ति को मंथन करने के लिए प्रेरणा दी जो नाटक की सार्वकालिक चेतना एवं साहित्यिक श्रेष्ठता को व्यक्त करती है।

यथार्थ का मूल्यांकन करना और अभिनय के साथ समाज के समक्ष आदर्श रूप में प्रस्तुत करना श्रेष्ठता है मानवीय संघर्ष को दिखाना और उससे जुड़े हर घटनाक्रम का सूक्ष्म विश्लेषण करना नाटक का दायित्व है। ''नाटक का संघर्ष वास्तव में सामाजिक जीवन में व्याप्त संघर्ष को रूपायित करता है। यह संघर्ष हमारे सामाजिक जीवन, नीति–नियमों, वैयक्तिक, चरित्र–संस्कारों, मान्यताओं, विचारों, भाव, संयोगों आदि से सम्बन्धित होता है। अतः नाटक में अभिव्यक्त संघर्षपूर्ण परिस्थितियों के चित्रण से साधारणीकृत हुआ हृदय संघर्षजन्य दंश से मुक्त प्रसन्न हो जाता है। नाटक के गीत मन की भावुकता, कल्पना एवं अनुभूतियों की तुष्टि करते है। इसमें स्वाभाविक जीवन में गतियों को पकड़ने की क्षमता अधिक रहती है। इसलिए समाज का व्यापक जन समुदाय इसमें अपने जीवन का प्रतिबिम्ब देखता है। नाटक मात्र मनोरंजन की वस्तु न होकर जीवन की अनुशीलता से उनके यथार्थ को प्रस्तुत करता है।''[57]

3. **एकांकी** –''एकांकी नाट्य साहित्य का वह नाट्य प्रधान रूप है जिसके माध्यम से मानव जीवन के किसी एक पक्ष, एक चरित्र, एक कार्य, एक परिपार्श्व, एक भाव की ऐसी कलात्मक व्यंजना की जाती है कि ये एक अविकल भाव से अनेक की सहानुभूति और आत्मीयता प्राप्त कर लेते है।''[58] साहित्य की हर विधा भावों की अभिव्यक्ति के सशक्त माध्यम के रूप में उपस्थित है किसी भी विधा का जन्म अचानक से नहीं होता है न ही वह जल्द ही विकसित होती है विधा के जन्म और विकास के पीछे एक कारण है एकांकी में भावों से जुड़े विषय, परिवेश घटनाक्रम और प्रभावित होने वाले मूल्य को प्रस्तुत किया है हिन्दी साहित्य अपने साहित्यिक दायित्व का निर्वाह करते हुए एक लघु समय में परन्तु पूर्ण अभिव्यक्ति में सक्षम एकांकी विधा को भावात्मक सूत्रों की सरल व्याख्या प्रस्तुत करने में सामर्थ्यवान् है। हम इस प्रश्न से सरोकार नहीं रखते कि इस विधा का जन्म कहाँ हुआ है? हम मंथन और विश्लेषण करना चाहते हैं कि एकांकी विधा ने अपने साहित्यिक कर्तव्य की पूर्ति कहाँ तक की है? संसार की विशालता में साहित्य की सर्वव्यापकता का सहज बोध होता है। यह सर्वव्यापकता हमें संकेत देती है कि साहित्य का हर मूल्य, विचार, प्रभाव, सार्वकालिक चेतना का वाहक ही नहीं साझेदार भी है। सार्वकालिक चेतना को अपने लघु रूप में पूर्णता के साथ दर्शक के हृदय तक पहुँचाने का काम एकांकी ने बखूबी किया है।– डॉ गोविन्द त्रिगुणायत एकांकी को परिभाषित करते हुए लिखते है –''एकांकी नाटक का लघु नाट्य रूप है, जिसमें एक परिस्थिति, एक घटना, या एक भावना जनित संवेदना की अभिव्यक्ति किसी संघर्ष के सहारे चाहे, वह बाह्य या अभ्यांतर, अभिनयात्मक शैली इस प्रकार की जाती है कि उसमें

प्रभाव ऐक्य का उद्बोध हो और उस उद्बोध से दर्शक और पाठक दोनों की रागात्मक वृत्ति तिलमिलाकर तड़प उठती है।''[59]

एकांकी विधा अपने लघु स्वरूप के कारण समस्त भावों का केन्द्रीयकृत कर लेती है। एकांकी अपनी सरलता से उस चरित्र के भाव बोध को संवेदना के केन्द्रिय स्तर तक पहुँचाने का कार्य करती है एकांकी एक अंक का नाटक होता है जिसके कारण यह किसी विशेष मूल्य के साथ सम्पृक्त रहता है डॉ दशरथ ओझा लिखते है–'' जो नाटक एक अंक में समाप्त होने वाला, एक सुनिश्चित लक्ष्य वाला, एक ही घटना, एक ही परिस्थिति, और एक ही समस्या वाला हो, जिसके कथानक में कौतूहल और वेग, गति में विद्युत सी वक्रता और तेजी से विकास में एकाग्रता और आकस्मिकता के साथ चरम सीमा पर ही प्रभाव की तीव्रता के साथ हो जाता है जिसमें प्रासंगित कथाओं का प्रायः निषेद्य घटनाओं की विविधता का निवारण तथा चारित्रिक प्रस्फुटन में आदि, मध्य और अवसान का निर्जन हो, उसे एकांकी कहना चाहिए।''[60]

एकांकी एक ऐसी साहित्यिक विधा है जिसके माध्यम से संसार के किसी भी भाव, मूल्य या पक्ष का उद्घाटन किया जा सकता है एकांकी का मूल कार्य होता है कि पाठक या दर्शक को उस संवेदना के साथ जोड़ना जो केन्द्र बिन्दु है ''एकांकी साहित्य की वह नियंत्रित एवं संयमित विधा है जिससे एक ही घटना को इस प्रकार अभिव्यक्त किया जाता है कि उसके भाव ऐक्य से पाठकों और दर्शकों का मन आकृष्ट और आक्रांत हो उठता है।''[61]

एकांकी यद्यपि पाश्चात्य जगत् की विधा हो सकती है परन्तु भारतीय मूल्यों को साथ लेकर चलने में पूर्णतः सक्षम है साहित्य का मूल समाज है और समाज का केन्द्र मानव और मानव का आधार उसका अतीत है अतीत के अनसुलझे रहस्यों को सुलझाने का अवसर साहित्यिकार लघु रूप में एकांकी विधा के साथ मनुष्य को प्रदान करता है यही एकांकी विधा की सार्वकालिक चेतना है।

4. **निबंध** –''यदि गद्य कवियों या लेखकों की कसौटी है, तो निबंध गद्य की कसोटी है।'' आचार्य शुक्ल ने निबंध को कसौटी के समकक्ष बताया है। अतः निबंध की महत्ता उक्त पंक्ति से स्पष्ट हो जाती है निबंध हिन्दी साहित्य की ऐसी विधा है जिसमें निबंध का दृष्टिकोण सदैव लेखक की अनुभूति से जुड़ा रहता है। बाबू गुलाबराय लिखते है–''निबंध में व्यक्तित्व छिपाया नहीं जा सकता लेखक जो कुछ लिखता है, उसको अपने निजि रूप में अथवा अपने निजि दृष्टिकोण से देखता है। उसके पीछे उसके निजि अनुभव की प्रेरणा दिखायी देती है।''[62]

निबंध का विषय संसार का कोइ भी विषय हो सकता है क्योंकि साहित्य की हर विधा, भाव, क्षण, घटना, पात्र, चरित्र विषय सार्वकालिक चेतना के वाहक है। सार्वकालिक चेतना के

वाहक होने के कारण ही साहित्य सदैव अमिट व अमरत्व धारण किये हुए है जहाँ तक साहित्य में निबंध विधा का सवाल है तो यह लेखक की व्यक्तिगत छाप के साथ विषय की गम्भीरता पर अपने ढंग से विचार प्रस्तुत करता है। निबंध भावात्मक, विचारात्मक, ललित, आत्मपरक, वर्णनात्मक, व्यंग्यपरक, आदि किसी भी स्वरूप में मनुष्य के भावों की प्रस्तुति अपने आत्मीय भाव के अनुसार स्वतंत्र ढंग से की जा सकती है निबंध का प्रमुख गुण उसका स्वछन्द एवं मौलिक होना है। यही वजह है कि निबंध को कसौटी परक माना जाता है। परन्तु इस कठिनता का आभास तब लेखक को अधिक होता है जब वह सार्वकालिक चेतना दीप्त हो मूल्यों को प्रकाशित करने मौलिक कार्य करता है। डॉ. राम चन्द्र वर्मा लिखते है –''निबंध का स्वरूप मुख्यतः साहित्यिक होता है। किसी विषय या उसके किसी अंग का अच्छा अध्ययन करके नये और मौलिक ढंग से उसका संक्षेप में स्वतंत्र रूप से विवेचन करते हुए जो गम्भीर और अपेक्षया कुछ विवरणात्मक लेख प्रस्तुत किया जाता है, वहीं पारिभाषिक क्षेत्र में निबंध कहलाता है। इससे तर्क और उसकी दृष्टि से सब अंगों के विवेचन का पूरा ध्यान रखा जाता है और इस पर लेखक के व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप व्यक्त होती है। इसका रूप गठा हुआ और ठोस होता है प्रायः दार्शनिक, नैतिक, राजनीतिक, सामाजिक, साहित्यिक, आदि विषयों पर निबंध लिखे जाते है।''[63]

निबंधकार जब निबंध में किसी ऐतिहासिक विषय का चयन करता है तो उसे सदैव यह भय रहता है कि लेखन के दौरान कहीं किसी प्रकार से ऐतिहासिक मूल्यों की अवहेलना न हो जाए इसलिए वह ऐतिहासिक विषय का चयन कर उसके सार्वकालिक मूल्यों की व्याख्या बड़ी सजगता के साथ करता है निबंधकार अपने निबंधों में हमेशा मौलिकता को बनाए रखना चाहता है उसका लेखन स्वच्छन्द और स्वतंत्र होता है और ऐसा होना भी चाहिए क्योंकि निबंध की मौलिकता एवं सार्थकता उसकी विशेषता है साहित्यकार जब कभी किसी ऐतिहासिक पात्र, चरित्र, विषय, घटना का चयन वह निबंध लेखन के लिए करता है तो वह अतीत के माध्यम वर्तमान पीढ़ी को एक संदेश प्रेषित करना चाहता है। यह संदेश निबंध का मौलिक और सार्वकालिक चेतना से जुड़ा रहता है।

5. **आलोचना** – 'आलोचना' साहित्य का मूल्यांकन एवं विश्लेषण कर व्याख्या करने का कार्य करती है आलोचना साहित्य की प्रत्येक विधा का विश्लेषण कर उसके तथ्यों को उद्घाटित करने का प्रयास करती है जो कहीं पाठक या दर्शक से जाने अनजाने में छूट गये है। आलोचना का यही कार्य उसकी मौलिकता को प्रमाणित करता है साहित्य की यह विधा यद्यपि साहित्य का ही एक हिस्सा है परन्तु यह न्याय प्रणाली के समान कार्य करती है साहित्यकार जब साहित्य लेखन करता है तो यह आलोचना विधा ही उसके साहित्यिक कृतित्व का मूल्यांकन करती है साहित्य का लेखन मौलिक एवं हार्दिक होना चाहिए। आलोचना का कार्य केवल किसी साहित्यिक कृति का मूल्यांकन करना ही नहीं

होता अपितु वह उन मूल्यों, पक्षों, खण्डों, तथ्यों पर भी विचार करता है जो साहित्यकार पाठक के समक्ष प्रस्तुत नहीं कर पाया। ''आलोचना सिद्धान्तों को व्यवहार में लाने की पद्धति है जो साहित्य को जीवित और जीवंत बनाती है। यह कृति को भीतर से भीतर की और खोजने का अभिमान है। कृतित्व और उसकी संरचना को समझने का मौलिक प्रयास है।''[64]

आलोचना सदैव मानव को एक दृष्टि प्रदान करती है। जिससे वह अपने निजिपन से बाहर निकल कर साहित्यिक मूल्यों एवं शाश्वत सत्य का अन्वेषण कर सके। साहित्यकार और आलोचक में केवल निरीक्षण—परीक्षण का ही भेद नहीं है, अपितु किसी विषय की गम्भीरता एवं उसके प्रभाव के मूल्यांकन का भी भेद होता है साहित्य में आलोचना ने सदैव सार्वकालिक चेतना को महत्व दिया है इसी कारण उसने आलोचना करते समय अपने अतीत से प्रेरणा लेते हुए वर्तमान संदर्भ में नवीन मूल्यों की स्थापना में अपना सहयोग दिया है डॉ. सुरेश सिन्हा के शब्दों में ''साहित्य नवीन मानव मूल्यों की स्थापना कर एक शाश्वत सत्य की स्थापना में संलग्न होता है। आलोचना का उद्‌देश्य इस शाश्वत सत्य एवं मानव मूल्यों का अन्वेषण है।''[65]

हिन्दी साहित्य की आलोचना विधा का महत्वपूर्ण कार्य यह है कि वह साहित्यकार के कृतित्व एवं उसके अनुभूत तथ्यों का निष्पक्ष मूल्यांकन कर सार्वकालिक, सार्वभौमिक, शाश्वत, चिरंतन सत्य पर आधारित मूल्यों की स्थापना में सहयोग दे। सार्वकालिक चेतना और आलोचना पूर्णतया एक दूसरे पर आश्रित हैं क्योंकि दोनों का समान गुण चेतना है। चेतना सत्य एवं शाश्वत मूल्यों की वाहक होने के कारण सार्वकालिक गुणों से सम्पृक्त होती है।

6. **रेखाचित्र** – हिन्दी की आधुनिक गद्य विधा में रेखाचित्र एक विशिष्ट रूप में निखर कर सामने आई है। रेखाचित्र अन्य गद्य विधाओं की तरह भावों से सम्पृक्त होती है। परन्तु रेखाचित्र की लघुता और सजीवता इसे एक नवीन अस्तित्व प्रदान करती है। हिन्दी साहित्य में यह विधा यथार्थ का अधिक बोध कराती है। रेखाचित्र के संदर्भ में डॉ. भागीरथ मिश्र ने कहा है—''रेखाचित्र का प्रमुख उद्देश्य चरित्र की सजीवता से हृदय परिष्कार, धारणा परिवर्तन, उदारता का विकास, लोक हृदय का निर्माण, न्याय के प्रति जागरूकता, चेतना, दुखियों के प्रति करूणा आदि भाव जाग्रत करना है। इस प्रकार प्रेम और सहानुभूतिपूर्ण जीवन का आदर्श स्थापित करना और जीवन के वास्तविक रूपों और अनुभवों में रस लेना रेखाचित्रों का तुलनात्मक अध्ययन है।''[66]

'रेखाचित्र' यह शब्द दो शब्दों का संयोग है ''रेखा और चित्र'' रेखा से यहाँ तात्पर्य पंक्तियों से है तथा चित्र सम्भवतः किसी यथार्थ का प्रस्तुतीकरण है। जब साहित्यकार के समक्ष किसी विषय को अभिव्यक्ति देने का विचार आता है तो वह साहित्य की उस विधा का चयन

करता है जो विषय के सर्वथा अनुकूल हो, ऐसे में जहाँ तक रेखाचित्र का प्रश्न है, वहाँ लेखक नपे–तुले शब्दों में बड़ी सरलता एवं सजीवता के साथ यथार्थ का चित्रण करता है। रेखाचित्र मानवीय संवेदनाओं से जुड़ा होने के कारण सार्वकालिक चेतना का संचालन है। रेखाचित्र में कभी किसी पात्र, घटना, वातावरण का चित्रण होता है तो कभी वर्ण्य विषय यथार्थ परिस्थितियों का बोध कराता है। रेखाचित्र में उन विचारों एवं भावों को भी स्पष्ट करने का प्रयास किया जाता है। जो देश, काल की सीमाओं से परे सार्वकालिक मूल्यों से सम्पृक्त है। सार्वकालिक चेतना का संदर्भ अतीत से समर्थन पाता है। यही कारण है कि प्रत्येक युग में साहित्य सार्वकालिक चेतना का रक्षक, प्रचारक एवं व्याख्याकार रहा है।

7. **जीवनी –** हिन्दी साहित्य में जीवनी विधा आदर्श का प्रस्तुतीकरण करने का सशक्त माध्यम है। जीवनी विधा के अंतर्गत किसी महापुरूष के चरित्र पर प्रकाश डाला जाता है। भारतीय साहित्य में आदर्श प्रस्तुतीकरण के माध्यम से समाज को दिशा प्रदान की जाती रही है। आदर्श की बात जब भी आती है, तो भारतीय जनमानस के स्मृतिपटल पर राम कृष्ण, शिव के अवतारों के अनगिनत नैतिक दायित्व एवं आदर्श एक साथ घूमने लगते है। भारतीय साहित्य सदैव सत्यं, शिवम्, सुन्दरम् की परिकल्पना पर आधारित रहा है। अतः प्राचीन काल से ही आदर्श एवं प्रेरणा के लिए ऐतिहासिक महापुरूषों के जीवन से उदाहरण लेकर समाज के सामने रखे जाते रहे हैं। यद्यपि हिन्दी साहित्य में जीवनी विधा को आधुनिक विधा माना जाता है तथापि हमारे प्राचीन ग्रंथ रामायण, महाभारत, पुराणों में अनेक ऐसे पात्रों का जीवन चरित्र समाज को नित प्रति संदेश देता रहा है।

जीवनी साहित्य के द्वारा किसी ऐतिहासिक पात्र का जीवन चरित्र प्रकाशित करने का कार्य साहित्यकार द्वारा किया जाता है। साहित्यकार जब किसी महापुरूष के इतिहास पर दृष्टि डालता है तो मूल्यों की गहराइयों में उपस्थित परिस्थितियों के भंवर में खुद को उलझा हुआ सा पाता है। हर युग का पात्र या चरित्र अपनी परिस्थितियों के साथ समायोजन कर समस्त परिस्थितियों को अपने अनुकूल ठीक उसी प्रकार बना लेता है जैसे दक्ष नाविक तूफान को अपना सहयोगी बना लेता है। मानव की समस्याएँ हर युग में सार्वकालिक मूल्यों के साथ जुड़ी रहती है जीवनी के द्वारा मूल्यों और परिस्थितियों का मूल्यांकन किया जाता है। मूल्यों द्वारा समाज के समक्ष एक आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करना जीवनी साहित्य का लक्ष्य होता है। जीवनी साहित्य का उद्‌देश्य समाज के सामने ऐसे उदाहरण प्रस्तुत करना है जो सामान्य जीवन में मानव के सामने उसी रूप एवं परिस्थिति में उपस्थित होते है। जिनमें साहित्य मानव को प्रज्ञा, प्रेरणा और दिशा प्रदान करता है। संघर्ष के द्वारा परिस्थितियों पर विजय प्राप्त करने के लिए साहित्य का यही उद्देश्य सार्वकालिक चेतना को गति प्रदान करता हुआ सदैव कर्म पथ पर अग्रसर रहता है।

8. **संस्मरण** – संस्मरण स्मृतियों से जुड़ा है। स्मृतियाँ अतीत की गहराईयों से सम्पृक्त होती है। संस्मरण के अंतर्गत लेखक इतिहास से विषय, घटना व्यक्ति का चयन करता है। तथा अपनी व्यक्तिगत अनुभूतियों को रोचकता के साथ प्रस्तुत करता है। संस्मरण किसी घटना या व्यक्ति के साथ अनुभूत किया गया यथार्थ का प्रस्तुतीकरण है। संस्मरण के द्वारा घटित घटना, या व्यक्ति के गुण दोष का शाश्वत मूल्यांकन अतीत की स्मृतियों के सहारे पुनः दोहराया जाता है।

अतीत सदैव वर्तमान को दिशा प्रदान करता है। क्योंकि मानव का इतिहास उसे गलतियों को दोहराने की आज्ञा नहीं देता है उसे आगाह करता है मूल्यों के प्रति उसके दायित्व क्या है? मानव संवेदना से प्रभावित होकर व्यवहार करता है इसी कारण उसका समस्त मूल्यांकन समाज के आधार पर होता है। समाज से प्रभावित हर चिन्तन उसकी चेतना को व्यक्त करता है। समाज नित प्रति नवीन परन्तु सार्वकालिक मूल्यों के साथ उसके व्यवहार का निरीक्षण परीक्षण करता है। संस्मरण में किसी पात्र या घटना को हृदय की पुण्य स्मृतियों के सहारे पुनः पाठक के सामने जीवन्त किया जाता है। जीवन का बीता हुआ कल आज को समझता हुआ प्रतीत होता है। अवसर होता है उन स्थितियों प्रवृत्तियों को समझने का जिनमें व्यक्ति का अनुभूत भाव शाश्वत एवं यथार्थ है। अतः संस्मरण किसी घटना या व्यक्ति का पुनः स्मरण ही नहीं अपितु उन तथ्यों का भी परिचायक है जो कहीं हर युग हर काल में पुनः अपने आपको दोहराते है। साहित्य की संस्मरण विधा यद्यपि आधुनिक है। तथापि इसमें या मानवीयता एवं सार्वकालिक चेतना की अनुभूतियाँ शाश्वत एवं सत्य है।

♦ ♦ ♦ ♦

## संदर्भ सूची


1. सूर्यवंश का प्रताप (भूमिका)–डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर अनुराग प्रकाशन
2. आस्था और सौन्द्रर्य : डॉ. राम विलास शर्मा , राजकमल प्रकाशन, इलाहबाद, सं 1990 पृ.24
3. एक व्यक्तित्व नरेन्द्र कोहली –संपादक कार्तिकेय कोहली क्रिएटिव बुक कम्पनी (2000) पृ.30
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास. सं. आठ रामचन्द्र शुक्ल, नागरी प्रचारिएी सभा, काशी (सं 1997)
5. निर्मल वर्मा के उपन्यासों में युग चेतना : डॉ. डी. एम. दोमडीया पैराडाइज पब्लिशर्स, पृ.159
6. सुमित्रानंदन पंत की सौन्दर्य चेतना : डॉ. राजकुमार सैनी वाणी प्रकाशन 1972 पृ. 47
7. कृतिओर–कवि विजेन्द्र पृ. 02
8. अनभै साँचा–मैनेजर पाण्डेय पृ. 02
9. उपन्यास का आँचलिक वातायन–डॉ. रामपत यादव पृ. 42
10. समकालीन कहानी युग बोध का सन्दर्भ–डॉ. पुष्पपाल सिंह, राधाकृष्णन प्रकाशन 1986 पृ. 84
11. नई कहानी में आधुनिकता बोध–डॉ. साधना शाह, पुस्तक संस्थान, कानपुर सं. 1978, पृ. 132
12. समकालीन साहित्य और समीक्षा–डॉ बैचेन सन्मार्ग प्रकाशन दिल्ली 1976 पृ.127
13. आदि अंत और आरम्भ–डॉ. निर्मल वर्मा, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली 2001 पृ. 129
14. वीणा अंक 01 जनवरी 1991 डॉ. नगेन्द्र पृ. 42
15. राजपाल हिन्दी शब्द कोश डॉ. हरदेव बाहरी, राजपाल एण्ड सन्स (1990) पृ. 824
16. संस्कृत, हिन्दी, इंगलिश, डिक्शनरी, डॉ. एस. पी. भारद्वाज,युगल एन्टर प्राइजेज (2010) पृ. 949
17. एस.चन्द हिन्दी, हिन्दी शब्द कोश : द्वारका प्रसाद पृ. 794
18. छात्रोपयोगी हिन्दी शब्द कोश : सं. डॉ. जयनारायण कौशिक, डॉ. देवेन्द्र आर्य, मिश्रीलाल, पृ 268
19. व्यावहारिक हिन्दी भाषा व्याकरण कोश : तनसुखराम गुप्त व ओम प्रकाश शर्मा, इलाहबाद (1963) पृ.सं. 514
20. हिन्दी पर्यायवाची कोश डॉ. भोलानाथ तिवारी, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली (1989) पृ.सं. 656
21. नारायण हिन्दी शब्द सागर – प्रोफेसर श्याम सुन्दरला पृ.सं. 706

22. पर्यायवाची शब्द कोश – गोविन्द चातक, तक्षशिला प्रकाशन पृ.सं. 267
23. गरिमा, हिन्दी, पर्यायवाची शब्द कोश – अनिल कुमार सलिल, पृ.सं. 306
24. MEGA, DICTIONARY अरिहंस प्रकाशन, पृ. 968
25. प्रतिनिधि भारतीय राजनीतिक विचारक–डॉ. पुखराज जैन–साहित्य भवन पब्लिकेशन 2013, पृ. 147
26. प्रतिनिधि भारतीय राजनीतिक विचारक–डॉ. पुखराज जैन–साहित्य भवन पब्लिकेशन 2013, पृ. 148
27. प्रतिनिधि भारतीय राजनीतिक विचारक–डॉ. पुखराज जैन–साहित्य भवन पब्लिकेशन 2013, पृ. 148
28. प्रतिनिधि भारतीय राजनीतिक विचारक–डॉ. पुखराज जैन–साहित्य भवन पब्लिकेशन 2013, पृ. 297
29. प्रतिनिधि भारतीय राजनीतिक विचारक–डॉ. पुखराज जैन–साहित्य भवन पब्लिकेशन 2013, पृ. 297
30. भक्ति का विकास–डॉ. मुंशीराम शर्मा राधाकृष्णन प्रकाशन, नई दिल्ली 1974, पृ. 29
31. आधुनिकता और राष्ट्रीयता–डॉ. राजमल बोरा, नमिता प्रकाशन, औरंगाबाद, पृ.46
32. वायुपुराण 16/21
33. सुभाषितरत्न संग्रह, 31/08
34. ऋग्वेद (10/07/17)
35. बिनोवा साहित्य खण्ड 12 साहित्य और आत्म ज्ञान विज्ञान, पृ. 04
36. ऐतिहासिक उपन्यासों में कल्पना और सत्य की प्रस्तावना–हजारी प्रसाद द्विवेदी डॉ. बी. एस. चिन्तामणी, विद्या भवन, वाराणसी 1959
37. हिन्दी साहित्य हजारी प्रसाद का उद्‌भव और विकास–हजारी प्रसाद राजकमल प्रकाशन 1991
38. आलोचना उपन्यास विशेषांक – वृन्दावनलाल वर्मा 1954
39. हिन्दी उपन्यास – डॉ.सुरेश सिन्हा, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद (1977)
40. श्रीमद्‌भागवत गीता – गीता प्रेस गोरखपुर (4.7)
41. रामचरित मानस – तुलसीदास कृत – गीता प्रेस गोरखपुर
42. व्यक्ति और स्रष्टा–डॉ. शम्भुनाथ सिंह, लोक भारतीय प्रकाशन इलाहाबाद 1968, पृ. 92
43. 'लहर' सितम्बर 60, पृ. 36
44. ऐतिहासिक उपन्यास मे कल्पना और सत्य – डॉ. बी.एस. चिन्तामणी, विद्या भवन, वाराणसी 1959

45. आलोचना–उपन्यास विशेषांक, अक्टूबर 1954
46. मानक हिन्दी कोष पाँचवा खण्ड राजचन्द्र वर्मा, पृ. 124
47. मनोविज्ञान–डॉ. बुडवर्थ, पृ. 74
48. मनोविज्ञान–डॉ. बुडवर्थ, पृ. 89
49. हिन्दी कविता में युगांतर–डॉ. सुधीन्द्र आत्माराम एण्ड संस, पृ. 28
50. राष्ट्रीयता–बाबू गुलाब रॉय, किताब घर प्रकाशन, 1995 दिल्ली, पृ. 02
51. साहित्य का श्रेय और प्रेय–जैनेन्द्र कुमार पूर्वोदय प्रकाशन सं. 1976, पृ. 20
52. कल्पना–सितम्बर 1962–डॉ. देवराज उपाध्याय
53. भारतीय काव्य शास्त्र के सिद्धान्त–डॉ. सुरेश अग्रवाल अशोक प्रकाशन 1994 पृ. 27
54. कुछ विचार–प्रेमचंद सरस्वती प्रेस बनारस, पृ. 07
55. हिन्दी कहानी उद्‌भव एवं विकास – डॉ. सुरेश सिन्हा, अशोक प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 01
56. नाटक और रंगमंच चन्दूलाल दूबे, अभिनंदन ग्रंथ सं. शिवराम माली, पृ.18
57. लक्ष्मीनारायण लाल का नाट्‌य साहीत्य सामाजिक दृष्टि–डॉ करूणा शर्मा वाणी प्रकाशन 2002, पृ.34
58. हिन्दी साहित्य कोश खण्ड 1– सम्पादक धीरेन्द्र वर्मा, पृ. 169
59. साहित्यिक निबंध – वेद प्रकाश शर्मा, पृ. 66
60. हिन्दी एकांकी का रंगमंचीय अनुशीलन –भुवनेश्वर अन्नपूर्णा प्रकाशन 1970, पृ. 71
61. एकांकी कुंज–सं.आधा प्रसाद द्विवेदी तथा पाण्डेय, पृ. 11
62. पं. विद्यानिवास मिश्र का निबंध लोक – डॉ दिलीप देशमुख
63. शब्द साधना–'रामचन्द्र वर्मा, पृ. 272
64. ए हिस्ट्री एण्ड लिटरेरी क्रिटीसिज्म – हेरी व्लेमायस, पु. 350
65. हिन्दी आलोचना का विकास डॉ. सुरेश सिन्हा पृ. 14

# द्वितीय – अध्याय

# द्वितीय अध्याय

# डॉ. राजेन्द्र भटनागर के उपन्यास : तात्विक विवेचन

## (क) उपन्यास की परिभाषा एवं प्रकार

हिन्दी साहित्य में उपन्यास विधा मानव मन की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बन चुकी है। उपन्यास के अंतर्गत मानव के समस्त भावों को अभिव्यक्त करने की अद्‌भुत क्षमता है। यह विधा मानव के सभी पक्षों को प्रस्तुत करने एवं उनसे संबंधित समस्त समस्याओं का समाधान ढूँढने में सक्षम है। उपन्यास एवं उपन्यासकार का महत्वपूर्ण दायित्व यह है कि वह सभी तत्वों, खण्डों, वर्गो, पक्षों एवं दृष्टिकोणों का अध्ययन करता है। उपन्यासकार यथार्थ के धरातल पर मानवीय चेतना की सम्पृक्ति के साथ मानव कल्याण की साधना में तटस्थ होकर कार्यरत रहता है। उपन्यास में विस्तार भावों को अभिव्यक्त करने की पूर्ण क्षमता विद्यमान है। डॉ. प्रेम कुमार ने कहा है–''एक श्रेष्ठ उपन्यास का आधार निश्चय ही कोई कथा होती है, जिसकी नींव पर कथाकार अपनी जीवन दृष्टि को खड़ा करता है। यह जीवन दृष्टि व्यापक अनुभवों के सहारे खड़ी हो जाती है।''[1]

साहित्य की समस्त विधाएँ मानवीय संवेदना और उनसे जुड़े सभी शाश्वत, सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक मूल्यों का चिंतन करती है। उपन्यास का वृहद् आयाम एवं गद्यात्मक रूप और रचना कौशल इसकी लोकप्रियता का प्रमुख कारण है उपन्यास सत्य का अन्वेषण करता हुआ असत्य के भ्रम को तोड़कर समाज के समक्ष समाधान को प्रस्तुत करने का प्रयास करता है। ''उपन्यास एक प्रकार से सत्य की खोज और यथार्थ एवं असत्य के छद्‌म को ध्वंस करने का एक साहित्यिक हथियार है। मनुष्य जीवन को यथार्थ का चित्र देने की आकांक्षा रखने वाली इस विधा ने मनोरंजन के लिए परम्परागत माध्यम से जीवन के विविध रूपों का उद्‌घाटन करना ही इसकी प्रमुख आकांक्षा रही है।''[2]

साहित्य ने सदैव अपने दायित्व का निर्वाह करते हुए निरंतर, गतिशील रहकर, जीवन मूल्यों को मानव कल्याण के लिए प्रस्तुत किया है। उपन्यास विधा का सर्वश्रेष्ठ गुण उसकी वृहद्‌ता है। जिसके फलस्वरूप साहित्य की मौलिक एवं कल्पना शक्ति को विकसित होने का सौभाग्य प्राप्त होता है। उपन्यासकार अपने आप को साहित्य के उस अज्ञात सागर में संघर्ष के लिए निरावलम्ब छोड़ देता है। साहित्य सागर की विभिन्न लहरों के थपेड़ों में सार्वकालिक चिंतन निरंतर शोधरत रहता है। उसकी साधना एवं शक्ति का स्वर प्रस्फुटित होनें लगता है और फिर सृजनात्मक एवं रचनात्मक स्वरूप का मूल्यांकन होने लगता है।

उपन्यासकार एक तपस्वी की भांति तटस्थ होकर चिंतन और मनन में तब तक लगा रहता है जब तक वह उस सार्वकालिक सत्य को न खोज ले जिसकी तलाश में वह भटक रहा है। डॉ. त्रिभुवन सिंह के शब्दों में –''मानव स्वभाव के विविध पक्षों का सर्वांगीण ज्ञान, विभिन्न आमोदप्रद प्रसंग, मार्मिक व्यंग्य तथा हास्य की जितनी सुन्दर व्यवस्था एवं चित्रण अत्यंत सशक्त भाषा में उपन्यासों के माध्यम से संभव है। उतनी किसी भी अन्य साहित्य रूप के माध्यम से संभव नहीं है।''[3] उपन्यास साहित्य ने मानवीय संवेदनाओं को हृदय की सूक्ष्म भावनाओं से सँजोने का प्रयास किया है। मनुष्य एक सामाजिक एवं संघजीवी प्राणी है उसका विकास, उत्थान एवं पतन समाज के मध्य होता है वह समाज की प्रत्येक परिस्थिति एवं प्रवृत्ति का भोक्ता है। उसे समाज में नित नवीन अनुभव प्राप्त होते है। अनुभवों को अच्छे बुरे भावों से जोड़कर वह आदर्श व्यवस्था की आशा में किसी ऐसी विचारधारा का अनुसरण करना चाहता है जो सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्त हो।

जीवन के हर पक्ष का कुशल निरीक्षण कर उसके रहस्यों से पर्दा उठाने का कार्य वर्षों से साहित्य ने किया है उपन्यास ने अपने सूक्ष्मातिसूक्ष्म अवलोकन से मनुष्य की उस चेतना को जागृत करने का प्रयास किया है जो संघर्ष की प्रेरणा से ओतप्रोत है। जिसने मनुष्य को एक आदर्श समाज की स्थापना में सहयोगी बनाया है। डॉ. श्याम वर्मा के अनुसार–'' जहाँ अन्य कलाएँ और अन्य विधाएँ एक निश्चित सीमा पर आकर रूक जाती है। क्योंकि उसके आगे राह नहीं है। वहाँ उपन्यास कहीं नहीं रूकता बढ़ता जाता है। आगे आगे और आगे क्योंकि उसने सब विधाओं की शक्ति को स्वायत्त कर लिया है, इसलिए उसकी शक्ति की कोई सीमा नहीं है, वह अपरिमेय है।''[4]

डॉ. गणपति चन्द्रगुप्त ने उपन्यास का अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा – ''उपन्यास शब्द का मूल अर्थ है उप + न्यास अर्थात् निकट रखी हुई वस्तु । किन्तु आधुनिक युग में इसका प्रयोग साहित्य के ऐसे रूप विशेष के लिए होता है जिसमें दीर्घ कथा का वर्णन गद्य में किया जाता है।''[5] श्री रामचन्द्र वर्मा द्वारा संपादित मानक हिन्दी कोश में उपन्यास का अर्थ है–''वाक्य का उपक्रम बंधाना, अमानत, धरोहर प्रमाण वह बड़ी और लम्बी आख्यायिका जिसमें किसी व्यक्ति के काल्पनिक या वास्तविक जीवन चरित्र का चित्र अंकित या उपस्थित किया जाता है।''[6] उपन्यास का प्रचलन हिन्दी में अंग्रेजी एवं बांग्ला से प्रभावित रहा है। इस बात में भी कतई संदेह नहीं कि हिन्दी के साहित्यकारों पर आर्थर कानन डायल, शरदचन्द्र, बंकिमचन्द्र जैसे उपन्यासकारों का भी प्रभाव रहा है। भारतीय उपन्यासकार एवं अन्य भाषाओं के उपन्यासकारों में भावात्मक रूप से कोई विशेष अंतर नहीं है परन्तु भारतीय साहित्य में जहाँ सत्य के साथ सुन्दर एवं शिवत्व की भावना का समावेश रहता है वहीं पाश्चात्य साहित्य यथार्थ की भाव भूमि पर सिर्फ मानवीय भावनाओं की शुद्ध अनुभूति देने का लक्ष्य रखता है।

साहित्यकार का लक्ष्य मानव के व्यवहार का अध्ययन कर सदैव समाज हित में आदर्श रूप में स्थापित करना रहता है लेखक को इसमें सफलता एवं असफलता के भँवर का सामना भी करना पड़ता है पाश्चात्य देशों से चली आ रही इस साहित्यिक विधा का जब भारतीय परिवेश में समन्वय हुआ तो भारतीय उपन्यासकारों अपनी लेखनी के बल पर इसका मंथन, मनन, एवं संशोधन किया है। उपन्यास साहित्य हिन्दी गद्य साहित्य की नवीन एवं आधुनिक विधा है। भारत देश में इस विधा का प्रवेश तत्कालीन परिस्थितियों के परिणाम स्वरूप हुआ। उस समय देश संकटकाल से गुजर रहा था। भारत की संस्कृति एवं सभ्यता पर लगातार प्रहार हो रहे थे। प्राकृतिक प्रकोप भी भारत की जनता झेल रही थी। जमींदार, सामंत, नबाव, साहूकार, आम जनता का शोषण करते थे। वहीं अंग्रेजो ने भी अपनी नीतियों से जनता को विवश एवं लाचार कर दिया था। ऐसे समय जब समस्त भारत में निराशा का वातावरण चरम पर था। साहित्य में नवीन विधाओं का प्रयोग हुआ तथा इन विधाओं के द्वारा भारतीय जीवन एवं दर्शन की वैज्ञानिकता एवं आध्यात्मिकता पर प्रकाश डाला गया था।

उपन्यास साहित्य ने अपने आधुनिक परिवेश में भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता का परिचय प्राप्त कर उसे भारतीय जनमानस की संवेदनाओं के अनुकूल प्रस्तुत किया है। डॉ. गणेशन ने कहा है–''जैसे महाकाव्य जीवन के सभी अंगों का स्पर्श कर सकता है, उसी प्रकार या उससे भी बढ़कर उपन्यास जीवन का सर्वांगीण निरीक्षण कर सकता है।''[7] भारतीय साहित्य की समन्वयवादी भावना ने उपन्यास साहित्य में बहुत से ऐसे प्रयोग किये जो मानव की चेतना को जाग्रत करने में सहयोगी रहे है। इस विधा ने जहाँ मानव के मन की गहराइयों का विशुद्ध विवेचन किया वहीं राष्ट्रीय चेतना को भी सशक्त किया है। उपन्यास विधा ने प्रारम्भ में उपदेशात्मक एवं सुधारात्मक दृष्टिकोण को सँवारा और धीरे–धीरे इस विधा ने सम्पूर्ण जीवन दृष्टि एवं मानवीय मूल्यों की स्थापना में अहम् भूमिका का निर्वाह किया। यद्यपि साहित्य की प्रत्येक विधा का योगदान अविस्मरणीय है तथापि उपन्यास विधा ने सम्पूर्ण जीवन के विविध पक्षों का चित्रण करने में दक्षता प्राप्त की है।

### उपन्यास की परिभाषा

1. ''उपन्यासकार विश्वामित्र की भाँति सृष्टि बनाता है। किन्तु वह सृष्टि के नियमों से भी बँधा रहता है उपन्यास में सुख–दुख, प्रेम, ईर्ष्या, द्वेष, भाषा, अभिलाषा, महत्वाकांक्षाओं, चरित्रों का उत्थान पतन आदि जीवन के सभी दुखों का समावेश रहता है।''[8]

   **बाबू गुलाब राय**

2. ''उपन्यास व्यक्ति के अपनी परिस्थितियों के साथ सम्बंध की अभिव्यक्ति के उतरोत्तर विकास का प्रतिनिधित्व करता है।''[9] **अज्ञेय**

3. ''उपन्यास नये युग की नयी अभिव्यक्ति का रूप है। साहित्य के रूपों में उद्भव के शाश्वत और सामयिक रसायन का परिणाम होते है।''[10] **डॉ. सत्येन्द्र**

4. ''उपन्यास मूलतः हिस्सेदारी की क्रिया है। सोश्यल एक्शन है। एक विशेष समय में आपसी संबंधों और व्यक्तियों को समझना और उनके बनते बिगडते स्वरूप को विकसित होते हुए दिखाना ही उपन्यास है।''[11] **राजेन्द्र यादव**

5. ''उपन्यास समकालीन जीवन का इतिहास है। हम जिस युग में जी रहे है उपन्यास उस सामाजिक परिवेश में पूर्ण और सही पुनःनिर्माण है।''[12] **जार्ज मूर**

6. ''उपन्यास गद्य कथा है जिसमें मुख्यतः काल्पनिक पात्र और कल्पनाएँ रहती है। उपन्यास को जीवन का एक बड़ा दर्पण कहा जा सकता है उसमें साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा अधिक विस्तारवादी दृष्टि रहती है। उपन्यास को हम अनेक रूपों में वर्णित कर सकते है। उसे सादा और सरल वर्णन सामाजिकता का चित्र, चरित्र प्रदर्शन तथा जीवन दर्शन ज्ञान अधिक कह सकते है और यदि उन सारी विशेषताओं को छोड़कर उसे केवल उपन्यासकार का व्यक्तित्व कहे तो भी अनुचित न होगा''[13] **जे.बी.प्रीस्टले**

7. ''उपन्यास लेखक के जीवन का आख्यान नहीं उस समूचे जीवन का परिप्रेक्षण है जिसे वह देखता, समझता, भोगता, और रचता है यह जीवन चाहे किसी एक व्यक्ति का हो अथवा पूरे समाज का या उसके किसी विशेष अंश का, होगा हमेशा वृहत्तर ,गंभीर, अन्विति पूर्ण, व्यापक और हुआ।''[14] **डॉ.शान्तिस्परूप गुप्त**

8. ''उपन्यास पर्याप्त आकार की वह मौलिक गद्य कथा है जो पाठक को एक काल्पनिक पर यथार्थ संसार में ले जाती है। जो लेखक द्वारा व्यक्तिगत रूप से अनुभूत और सर्जित होने के कारण नवीन होता है।''[15] **गोपाल राय**

9. ''उपन्यास विशद् गद्य कथा है यह कथा साधारण जीवन जैसी है पर गति में प्रसार है। और उसके पात्र मनुष्य सरीखे होकर भी विलक्षण है। साधारण जीवन में वृहद्ता है, बिखराव है और कार्य कारण संबन्ध अस्पष्ट सा है। उपन्यास में व्यक्त जीवन अनुभूत और विश्लेषित है।''[16] **डॉ.शशीभूषण सिंघल**

10. उपन्यास गद्य साहित्य का वह समर्थ रूप है जिसमें प्रबंध काव्य का सुसंगठित वस्तुविन्यास, महाकाव्य की सी व्यापकता, गोतों की सी मार्मिकता, नाटकों सा प्रभाव गर्भीय तथा कहानियों की सी कलात्मकता एक साथ मिल जायेगी।''[17] **डॉ. त्रिभुवन सिंह**

डॉ. लक्ष्मीसागर बार्ष्णेय के अनुसार–''साहित्य के अन्य रूपों की अपेक्षा उपन्यास में जीवन की यर्थाथता, सत्यता, आवश्यकताएँ और स्वतंत्र व्यक्तित्व और मूल्यों का निरूपण अधिक होता

है।''[18] साहित्य सदैव मानव के व्यवहार एवं उसके प्रभाव का मूल्यांकन समाज की भावभूमि पर किया करता है। इसके पीछे मूल धारणा यह है कि मानव समाज की एक ईकाई है जो अपना उत्थान, विकास और पतन इसी समाज में प्राप्त करता है। साहित्यकारों ने गद्य की विविध विधाओं में इसका चुनाव वहाँ किया है जहाँ एक सम्पूर्ण घटनाक्रम के विविध पक्षों का उद्घाटन करने के लिए वृहताकार विधा की आवश्यकता थी इन सब दृष्टिकोणों के बीच उपन्यास साहित्य अपने विकास और स्वरूप को लेकर निरंतर प्रयत्नशील रहा है। उपन्यास साहित्य अपने नित नवीन परन्तु सार्वकालिक मूल्यों की चेतना के लिए पुष्पित एवं पल्लवित रहा है।

उपन्यास के स्वरूप को समझने के लिए हमें उपन्यास के भेदों को समझना होगा। उपन्यास हमेशा किसी न किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए लिखा जाता है लेखक अपनी रूचि के अनुसार किसी विषय का चयन करता है तथा भावात्मक प्रस्तुति करने में जुट जाता है हिन्दी साहित्य की विधा निम्नलिखित उपन्यास के प्रकारों का प्रचलन है।

i. ऐतिहासिक उपन्यास

ii. सामाजिक उपन्यास

iii. आदर्शवादी उपन्यास

iv. यर्थाथवादी उपन्यास

v. समस्या प्रधान उपन्यास

vi. मनोवैज्ञानिक उपन्यास

vii. राजनीतिक उपन्यास

viii. आँचलिक उपन्यास

ix. जासूसी, ऐयारी, तिलस्मी उपन्यास

x. सांस्कृतिक उपन्यास

### i. ऐतिहासिक उपन्यास

इतिहास के विषयों का पुनर्मूल्यांकन करने के लिए उपन्यासकार अतीत के सन्दर्भो को नवीन मूल्यों के साथ सम्पृक्त करता है। वह ऐसे तथ्यों, पक्षों से, पाठकों को रूबरू कराता है जहाँ वह अपने कल्पनागत भावों के साथ यथार्थ को परिभाषित करने की आवश्यकता समझता है उसके समक्ष इतिहास पुनःघटित एवं पुनर्संगठित होने लगता है। डॉ. सत्येन्द्र के शब्दों में–''ऐतिहासिक उपन्यासों में देशकाल का सबसे अधिक ध्यान रखा जाता है। इन उपन्यासों के

लेखक की सफलता इस बात पर निहित रहती है कि वे जहाँ तक हो सके अपनी कल्पना शक्ति का उपयोग करके तत्कालीन परिस्थितियों का बिम्ब ग्रहण करा सके।"[19] हिन्दी में वृन्दावन लाल वर्मा, हजारी प्रसाद, भगवती चरण वर्मा, अमृतलाल नागर जैसे उपन्यासकारों ने इस प्रकार के उपन्यासों के माध्यम से समाज में ऐतिहासिक चेतना को सार्वकालिक मूल्यों के साथ प्रस्तुत करने में सफलता प्राप्त की है।

मानव के लिए अपने पूर्वजों के संघर्ष को समझना अत्यंत आवश्यक है क्योंकि संघर्ष का मूल्य अनमोल है भोगी हुई पीड़ा एवं वेदना की चीख को अनुभव करना जरूरी है भारत का इतिहास अपने वैभव पर था तो वहीं वैभव नष्ट होने पर हमने क्या देखा? क्या अनुभव किया? यह सब जानना नई पीढ़ी के लिए आवश्यक है क्योंकि इतिहास से प्राप्त गौरव एवं प्रेरणा अन्तर्मन को संतुष्टि देती है। इतिहास ने हमें पहचान दी है हम कौन है? इस प्रश्न का उत्तर सिर्फ हमें इतिहास ही दे सकता है। अतः हमारे साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में इतिहास से जुड़े तथ्यों, घटनाओं, प्रसंगों एवं व्यक्तित्वों से जुड़े संदर्भो को भावात्मक रूप से प्रस्तुत किया है। भारत को भारतीय बनाया है हमारे पूर्वजों के द्वारा किये गये संघर्ष ने हमें इतिहास के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने का अवसर दिया है। रफी साहब द्वारा गाया गया यह गीत इतिहास और वर्तमान के बीच की संघर्षात्मक अवस्था को स्वयं व्यक्त कर देता है।

**"हम लाएँ है तूफान से कश्ती निकाल के**

**इस देश को रखना मेरे बच्चों सम्भाल के।"**

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने नीले घोड़े का सवार, अंतहीन युद्ध, दिल्ली चलो जैसे कई ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना कर साहित्य में अतुलनीय योगदान दिया है।

### ii. सामाजिक उपन्यास

साहित्य सदैव समाज का प्रतिनिधित्व करता है उपन्यासकार इस सत्य को उद्घाटित करता हुआ समाज में प्रचलित परम्पराओं, रीतियों, रिवाजों, एवं उनसे जुड़ी, घटनाओं का विश्लेषण मानव मन की संवेदनाओं के आधार पर तय करता है। वह इस समाज में व्याप्त उन बुराइयों पर मानवीय दृष्टिकोण का पक्ष उद्घाटित करता है। सामाजिक उपन्यास लिखने के पीछे साहित्यकार का उद्देश्य मानव की समाज के प्रति कर्तव्यनिष्ठा एवं मानवीय चेतना को जागृत करना होता है। डॉ. भटनागर ने मोनालीसा, सन्नी, परिधि, माटी की गंध जैसे सामाजिक उपन्यासों की रचना कर सामाजिक समस्याओं पर प्रकाश डाला है।

समाज की अपनी आवश्यकता है वह उन आवश्यकताओं को महसूस करता है मानव समाज की एक ईकाई है तथा उससे जुड़े सभी पहलुओं से समाज प्रभावित होता है। अतः

साहित्यकार का लक्ष्य होता है कि वह समाज के आदर्श एवं यथार्थ के बीच एक सेतु का निर्माण कर सत्य, शिव एवं सुन्दरम की अवधारणा को बनाए रखे। समाज में होने वाले परिवर्तनों एवं घटनाओं से जुड़ी मानवीय संवेदना को साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत कर समाज को दिशा प्रदान करे। साहित्यकार निरूद्देश्य रचना का निर्माण नहीं करता है साहित्यकार का लक्ष्य होता है कि वह उन पक्षों को समझाए जो समाज की आवश्यकता से जुड़े है वह समाज का ध्यानाकर्षण करना चाहते है इसके लिए उपन्यासकार लगातार अपने साहित्य सृजन के माध्यम से लोगों में चेतना जगाने का कार्य करता है। साहित्यकार समाज से जुड़े हर पक्ष, तथ्य एवं प्रसंग को मानव चेतना के लिए प्रस्तुत करने का प्रयास करता है रामायण से लेकर आज तक रचा जाने वाला साहित्य समाज की आदर्श व्यवस्था में सहयोगी रहा है समाज और साहित्य का यह संबंध वर्षों से निरंतर एक दूसरे का पूरक रहा है।

### iii. आदर्शवादी उपन्यास

भारतीय साहित्य की सर्वप्रमुख विशेषता यही है कि यह सदैव आदर्श की प्रस्तुति करने में सहायक रहा है उपन्यास साहित्य वृहदाकार होने के कारण साहित्यकार को कल्पना के साथ आदर्श का प्रस्तुतीकरण करने का साधन प्राप्त हो गया हैं समाज में व्याप्त बुराइयों पर चिंतन कर समाज की समस्याओं एवं परम्पराओं पर प्रहार किया है साम्प्रदायिक, स्त्री शिक्षा, अनमेल विवाह, बाल विवाह, वृद्ध विवाह, भ्रूण हत्या, दहेज प्रथा, छुआछूत, ऊँच–नीच, सती प्रथा, डायन प्रथा, वैश्या प्रथा, जैसी कई समस्याओं के साथ साहित्यकारों ने आदर्शवादी उपन्यास लिखने में अग्रणी भूमिका निभाई है। मुंशी प्रेमचन्द से साहित्य में आदर्शवाद की प्रतिष्ठा गोदान, रंगभूमि जैसे उपन्यासों की रचना के साथ की है।

आदर्शवादी उपन्यासों में समाज की बुराईयों पर प्रकाश डाला जाता है समाज को विश्रृंखल होने से बचाने का प्रयास किया जाता है समाज की हर घटना मानव मन पर गहरा प्रभाव डालती है। अतः उपन्यासकार आदर्श को स्थापित करने के लिए कल्पनागत भावों का सहारा लेकर चरित्र निर्माण का प्रयास करता है। मुंशी प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों में ऐसे कई चरित्रों की सृष्टि की है। जिनसे समाज टूटने से बच जाए। चेतना के साथ दृष्टि होनी चाहिए जो समाज की एकता एवं अखण्डता को बनाए रखने में सक्षम रहे। साहित्य में ऐसे विषयों की स्थापना द्वारा समाज के आदर्शवादी मूल्यों को संरक्षण प्रदान किया जाता है।

### iv. यर्थाथवादी उपन्यास

साहित्य में सत्य को ज्यों का त्यों लिखने के प्रयास ने यथार्थवादी उपन्यासों को एक सशक्त माध्यम माना है उपन्यास लेखकों ने अपनी बौद्धिकता के बल पर मानवीय व्यवहार का अध्ययन कर यथार्थ लेखन की प्रस्तुतियाँ दी हैं। यथार्थ का लेखन साहित्यकार के लिए इस

कारण से आवश्यक हो गया था क्योंकि समाज को दिशा देने के लिए उसे वास्तविकता से समाज का परिचय कराना आवश्यक था। समाज जब रूढ़िग्रस्त हो गया तब साहित्यकारों ने यथार्थवादी उपन्यासों के माध्यम से मानवीय संवेदनाओं को जागृत ही नहीं किया अपितु समय रहते विकार ग्रस्त समाज का इलाज भी किया। 'गोदान' यथार्थवादी धरातल का उत्कृष्ट उदाहरण है।

यथार्थ का लेखन करते समय लेखक की जिज्ञासा समाज की समस्या के समाधान की ओर अधिक रहती है। उपन्यास लेखन यहाँ रोचकता की अपेक्षा थोड़ी सजगता का अधिक बोध कराता है। उपन्यासकार का उद्देश्य समाज को समस्याओं की पीड़ा संवेदना से रूबरू कराना होता है वह वास्तविक तथ्यों की प्रस्तुति करने का जोखिम उठाता है किसी भी वास्तविक यथार्थ का प्रस्तुतिकरण करना सहज कार्य नहीं है क्योंकि ऐसा करने पर साहित्यकार के मन में यह चिंतन सदैव रहता है कि समाज पर इसका क्या प्रभाव पडेगा ? अतः वह अपने आपको सभी पूर्वाग्रहों से मुक्त रखकर अपनी चेतना के साथ समाज को भी जोड़ लेना चाहता है यथार्थ जीवन का कटु एवं तिक्त सत्य है और सत्य कल्पना से परे एक विशेष दृष्टिकोण है जिसने मानव को अंधकार से मुक्त करने का बीड़ा उठा रखा है।

### v. समस्या प्रधान उपन्यास

समस्या प्रधान उपन्यास में उपन्यासकार किसी समस्या का चयन कर उस पर अपने कल्पनागत भावों के द्वारा लेखनी चलाता हुआ उसका समाधान ढूँढने का प्रयास करता है। वह किसी पात्र को उन समस्याओं के साथ संघर्ष करते हुए दिखाता है। उपन्यासकार का लक्ष्य होता है कि वह उस समस्या का चित्रण कर उसका समाधान प्रस्तुत कर दे। लाला श्रीनिवास दास द्वारा लिखा गया 'परीक्षा गुरू' इसी श्रेणी का उपन्यास है।

समस्या प्रधान उपन्यास एक प्रकार की चिंतना को जन्म देता है। उपन्यास मानव को उन घटनाओं के पक्ष विपक्ष में मनन, मंथन करने का अवसर प्रदान करता है। समस्या क्या है? यह प्रश्न जीवन संदर्भों से ग्रहण किया जाता है। समस्या का स्वरूप समाज के व्यवहार को दर्शाता है। लेखक के लिए यह जानना आवश्यक है कि समाज पर समस्या कहाँ तक प्रभावशील है और इसका समाधान कैसे हो सकता है? उपन्यास मनोरंजकता एवं रोचकता के कार्य तक ही सीमित नहीं है। उपन्यास का वास्तविक उद्देश्य कर्म एवं जीवन की सार्थकता को प्रस्तुत करना है। समस्या प्रधान उपन्यासों ने इस भूमिका का निर्वाह पूर्ण निष्ठा के साथ किया है।

### vi. मनोवैज्ञानिक उपन्यास

मनोवैज्ञानिक उपन्यास में व्यक्तिवादी चेतना का अंकन किया जाता है। साहित्य जब पाश्चात्य विचारक फ्रायड, इडलर और तेन के सिद्धान्तों से प्रभावित हुआ तब साहित्य में मन की

उन प्रवृतियों का मूल्यांकन शुरू हुआ जिनका लेखन समाज में कुण्ठित एवं घृणित माना जाता था। परन्तु साहित्य अपने दायित्व से कब मुक्ति पा सकता था। अतः मानवीय मानसिक द्वन्द्वों एवं उनमें पनपने वाले सही– गलत, उचित–अनुचित, विचारों की उलझनों में सत्य का अन्वेषण होने लगा। तथा मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की आधार भूमि तैयार होने लगे। जैनेन्द्र, इलाचन्द्र जोशी जैसे उपन्यासकारो ने मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की रचना में भारतीय समाज का स्वरूप प्रकाशित करने का बीड़ा उठाया था।

मन की गुत्थियों को सुलझाने का प्रयास मनोविज्ञान का विषय है। परन्तु मानव मन की गहराइयों में जाकर पीड़ा संवेदना के सागर से तथ्यो रूपी मोतीयों का संकलन केवल साहित्य ही कर सकता है। मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की सृष्टि मानव मन की द्वन्द्वात्मक स्थिति का मूल्यांकन करती एवं मानव के अस्तित्व एवं व्यक्तित्व के प्रश्न को समाज की भूमिका के समक्ष प्रस्तुत करती है।

### vii. राजनीतिक उपन्यास

साहित्य में राजनितिज्ञों की विचारधारा का प्रभाव इस विधा में प्रारम्भ से ही रहा है। भारतीय राजनीतिज्ञ विचारकों में सबसे ज्यादा गाँधी वादी दर्शन की अभिव्यक्ति हमको उपन्यासों में देखने को मिलती है। उपन्यासों में स्वतंत्रता संग्राम, खादी का प्रयोग, अहिंसा, सत्याग्रह जैसी विचारधाराओं की सम्पृक्ति राजनीतिक उपन्यासों में देखने को मिलती है।

राजनीति का अपना इतिहास रहा है सत्ता का संघर्ष, अधिकारों का क्षरण, शोषण एवं गिरते जीवन मूल्यों ने मनुष्य के चिंतन को वाणी प्रदान की और यहाँ से एक विचार प्रवाह के साथ आगे बढ़ने लगा। लोगों ने इसे राजनीति से प्रेरित विचार धारा का नाम दिया है परन्तु वास्तव में मानव जीवन के अस्तित्व एवं उसकी आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित वातावरण तैयार करने का प्रयास था। जनता ने राज्य की नीतियों का पालन किया है जब शासक अन्याय एवं अत्याचार पर उतारू हो जाता है। तब मानव का संघर्ष सत्ता के विरूद्ध होता है। अंग्रेजों द्वारा किऐ गये शोषण के परिणाम स्वरूप बिट्रिश शासन को भारत में अपना शासन समाप्त करना पड़ा था। दशहत, नया मसीहा, रिवोल्ट जैसे राजनीतिक उपन्यासों की रचना करते हुए उपन्यासकार डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने राजनीतिक परिदृश्य पर पाठकीय संवेदना को जागृत करने का प्रयास किया है।

### viii. आँचलिक उपन्यास

आँचलिक उपन्यास किसी अंचल (प्रदेश) विशेष की लोक परम्परा, रिवाज, रीति, समाज, व्यवहार, बोली, आचार विचार आदि के साथ घनिष्ठता बनाते हुए जब किसी विषय को इन सबसे

सम्पृक्त कर लेखक उपन्यास लेखन करता है तो यह आँचलिक उपन्यास की श्रेणी में आता है। फणीश्वरनाथ रेणु द्वारा रचित 'मैला आँचल' उपन्यास इसी प्रकार का उपन्यास है।

साहित्य में उपन्यास विधा का खूब विकास हुआ है साहित्यकारों ने पाश्चात्य देश से आयी इस विधा में नित नवीन प्रयोग किये है आँचलिक उपन्यासों में किसी 'अंचल' विशेष से जुड़ी हुई तथ्यात्मक जानकारी के साथ वहाँ के परिवेश को भी प्रकाशित किया जाता है हर परिवेश का अपना महत्व होता है। बाबा नागार्जुन के उपन्यास साहित्य में भी आँचलिकता को विशेष रूप से स्थान दिया गया है। उपन्यासकारों ने इस प्रकार के उपन्यासों में ग्रामीण संस्कृति एवं लोक जीवन की मान्यताओं से पाठकों को रूबरू कराने का प्रयास किया है। साहित्य ने जीवन की विविधता में सर्वांगीण पक्षों का चित्रण करने का प्रयास किया है। उपन्यास में इस प्रकार आँचलिकता का वर्णन हमारी लोक जीवन शैली व्याख्या है।

### ix. तिलस्मी, जादुई एवं जासूसी उपन्यास

इस प्रकार के उपन्यासों में लेखक की कल्पनाशक्ति का अद्‌भुत प्रदर्शन दिखाई देता उपन्यासकार किसी ऐसे कथानक का चयन करता है जिसमें वह किन्हीं रहस्यों के साथ पात्रों, घटनाओं को इस प्रकार जोड़ता है कि पाठक उसके साथ घुलमिल जाता है। इस प्रकार के उपन्यासों का चलन फारसी कहानियों के प्रभाव स्वरूप हुआ है। उपन्यासकारों की महत्वपूर्ण उपलब्धि का पता इस तथ्य से चलता है कि बहुत से अहिन्दी भाषी लोगों ने बाबू देवकीनंदन के उपन्यास चंद्रकांता को पढ़ने के लिए हिन्दी भाषा सीखी थी। इनमें लेखक भूत–प्रेत, टोने–टोटके, परी, जिन्न, बेताल आदि का प्रयोग अपनी कल्पना शक्ति के बल पर करता है। इसी प्रकार जासूसी उपन्यास में किसी रहस्य, घटना या अपराध का रहस्य उद्‌घाटन करना उपन्यास का केन्द्रीय विषय होता है।

### x. सांस्कृतिक उपन्यास

भारत की संस्कृति के प्रति पाठक को गौरवपूर्ण अतीत से परिचय कराना उपन्यासकार का लक्ष्य रहता है। भारतीय संस्कृति की गौरवशाली व्याख्या इन उपन्यासों में देखने को मिलती है। इनमें ऐतिहासिक तथ्यों के साथ भारतीय सनातन संस्कृति के सुलभ दर्शन होते है। इतिहास के साथ संस्कृति को विविध दृष्टिकोणों के साथ प्रस्तुत करना उपन्यासकार का लक्ष्य रहता है। डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर का विवेकानंद उपन्यास सांस्कृतिक मूल्यों की प्रतिष्ठा करने में सफल रहा है।

## (ख) डॉ. भटनागर के उपन्यास : एक अध्ययन

आधुनिक हिन्दी उपन्यास में डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर जी का महत्वपूर्ण योगदान है। भटनागर जी ने गद्य साहित्य की सभी विधाओं पर लेखन कार्य किया है इनकी रचनाएँ अतीत को वर्तमान में प्रासंगिक रखते हुए सार्वकालिक मूल्यों की प्रतिष्ठा करती है इन्होंने सार्वकालिकता के साथ अतीत, वर्तमान एवं भविष्य का समन्वय करते हुए समाज के समक्ष उन शाश्वत मूल्यों की व्याख्या प्रस्तुत की जो अनादि काल से निरंतर गतिमान है।

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर जी का जन्म हरियाणा प्रांत के अम्बाला छावनी में 1938 (रोहतक) के सम्पन्न कृषक परिवार में हुआ इनके पिता का नाम ब्रजमोहन लाला एवं माता का नाम श्रीमती ब्रजरानी देवी था पिताजी पोस्टमास्टर के पद पर थे माँ धार्मिक स्वभाव की महिला थी राजेन्द्र मोहन जी घर के बड़े बेटे थे। भटनागर जी की बाल्यकाल से हिन्दी के प्रति स्वाभाविक रूचि रही परन्तु पिताजी को हिन्दी फूटी आँख नहीं सुहाती थी अतः इन्हें पिताजी के विरोध को झेलना पड़ा। भटनागर जी ना तो पिताजी का अधिक विरोध कर सकते थे ना ही अपनी रूचि एवं स्वभाव के विपरीत रहकर कोई कार्य कर सकते थे। अतः इस द्वन्द्व का परिणाम यह हुआ कि राजेन्द्र मोहन जी 18 वर्ष की अल्पायु में घर छोड़कर बीकानेर चले आये।

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर की प्रारंभिक शिक्षा घर पर हुई 1953 में आप ने मैट्रिक की परीक्षा मुफीद आम हायर सैकण्डरी स्कूल, आगरा से उत्तीर्ण की थी। 1957 में बी.ए. की डिग्री सेंट जोन्स कॉलेज आगरा से प्राप्त की थी 1964 में अपने एम.ए. की डिग्री राजस्थान विश्वविद्यालय से प्राप्त की थी साहित्य में रूचि ने आपको निरंतर शिक्षा से जोड़ा रखा था आपने आगरा से पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त की थी विश्वविद्यालय से प्राप्त की स्वभाव से साहित्येतिहास परम्परा से सम्पृक्त तो कर्म से शिक्षक होने का गौरव आपको प्राप्त हुआ अध्ययन अध्यापन की भूमिका का निर्वहन करते हुए आप 1996 में सरकार द्वारा प्रिंसिपल पद से सेवानिवृत हुए डॉ. भटनागर जी ने अपने सम्पूर्ण जीवन का लक्ष्य सदैव अतीत के पृष्ठों से ढूंढ कर वर्तमान के साथ प्रासंगिक कर समाज के समक्ष शाश्वत मूल्यों की व्याख्या करने का रहा है। अतः इन्होंने इसकी व्याख्या के लिए गद्य साहित्य की उपन्यास विधा को सर्वश्रेष्ठ माना है। अतीत ही वर्तमान एवं भावी जीवन की महत्वपूर्ण आधारशिला है डॉ. भटनागर जी ने अपने जीवन के प्रारम्भ में इस तथ्य से भली भांति परिचित हो गये थे अतः उपन्यास विधा में ऐतिहासिक पुरूषों के जीवन मूल्यों की सार्वकालिक चेतना को लेखनी द्वारा व्यक्त करने का स्तुत्य प्रयास किया।

आपके लेखन एवं साहित्य को संसार में पूर्ण प्रतिष्ठा प्राप्त हुई जिसके परिणामस्वरूप राजस्थान साहित्य अकादमी का सर्वोच्च 'मीरा पुरस्कार', विशिष्ट साहित्यकार सम्मान, घनश्यामदास सर्राफ सर्वोतम साहित्य पुरस्कार, नाहर सम्मान, महाराणा कुंभा पुरस्कार (महाराणा

मेवाड़ फाउण्डेशन), अखिल भारतीय अमर स्मृति पुरस्कार (मध्यप्रदेश) न गोपी न राधा' के लिए आपको राष्ट्रपति पुरस्कार, अखिल भारतीय साहित्य पुरस्कार और साहित्य सम्मान पुरस्कार से विभूषित किया गया है।

**प्रमुख ऐतिहासक उपन्यासों का परिचय**

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने इतिहास के महान व्यक्तियों के जीवन संघर्ष को अपने साहित्य का केन्द्रीय विषय बनाया है। इन्होंने साहित्य सर्जना में उपन्यास विधा में लेखन को समृद्ध किया है घटनाओं एवं प्रसंगों को आत्मसात् किया है ऐतिहासिक उपन्यास के लिए अनिवार्य शर्त यह है कि इतिहास की व्याख्या में तथ्यों का तालमेल, संतुलित होना चाहिए उपन्यास विधा ने मानव को चिंतन प्रदान किया है। जीवन के विविध पक्षों का अंकन सिर्फ इसी विधा में पूर्णरूपेण संभव है। काव्य में जहाँ महाकाव्य इस भूमिका का निर्वाह करने में सक्षम है वहीं गद्य में उपन्यास इस भूमिका का कुशलता से निर्वहन करता है। डॉ. भटनागर ने इतिहास से प्राप्त तथ्यों का आकलन किया है वे मानव और इतिहास के बीच एक सेतु का निर्माण कर भविष्य का मार्ग प्रशस्त करना चाहते है। मानव के मूल्यों में होने वाला ह्मस एवं पतन के लिए वे इतिहास बोध के अभाव को जिम्मेदार मानते है। जीवन की आवश्यकताओं के बीच परोपकार के स्थान पर स्वार्थ ने मूल्यों को निम्न स्तर की ओर धकेल दिया है। उपन्यासकार ने सूर्यवंश का प्रताप की भूमिका में लिखा है ''रोज के बिकने वालों के सिद्धान्तों और आदर्शों पर विश्वास कर लेने का ही यह परिणाम है कि हम निरन्तर ह्मसोन्मुखी और मूल्यहीनता की स्थिति से गुजरते जा रहे हैं।''[10] डॉ. राजेन्द्र मोहन जी ने मूल्यों को संरक्षण एवं संवर्द्धन प्रदान किया है। वे मानते है कि इतिहास बोध के अभाव में समाज श्रेष्ठता एवं निकृष्टता का मूल्यांकन नहीं कर पायेगा। अतः डॉ. भटनागर ने इतिहास से प्राप्त तथ्यों एवं निष्कर्षों को शब्दबद्ध कर मानव समाज को एक आदर्श प्रेरणा देने का प्रयास किया है।

डॉ. भटनागर चरित्रों को आत्मसात् करते है। इनकी औपन्यासिक कृतियों में चरित्र के साथ भावों की तादात्म्यता स्पष्ट दिखाई देती है किसी भी पात्र को जब शब्दबद्ध करने का प्रयास किया जाता है तो लेखक स्वयं को उसके साथ एकाकार कर लेता है परिणामस्वरूप भावों में कल्पना स्वतः प्रवेश कर जाती है। लेखक के समक्ष इतिहास से जुड़े सन्दर्भो की भावात्मक प्रस्तुति एक श्रृंखला दिखाई देती है। इतिहास के साथ भावों की सम्पृक्तता में उपन्यासकार के सामने सबसे बड़ी चुनौती इतिहास ही है क्योंकि वह किसी भी स्तर पर इतिहास की अवहेलना नहीं कर सकता है उसकी जिज्ञासा और चेतना का प्रवाह तथ्यों की प्रस्तुति पूर्व घटित प्रसंगो के आधार पर ही होती है वह अपने आपको समस्त पूर्वाग्रहों से मुक्त कर इतिहास को पाठक के समक्ष पुनर्जीवित करने का प्रयास करता है।

**महाराणा प्रताप**

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने महाराणा प्रताप के जीवन संघर्ष पर 'नीले घोड़े का सवार', 'अंतहीन युद्ध', 'सूर्यवंश का प्रताप' जैसे ऐतिहासिक उपन्यासों का सृजन किया है। महाराणा प्रताप के राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों के संदर्भ में जीवन मूल्यों की सम्पृक्ता को इन उपन्यासों में वर्णित किया गया है। 'प्रताप' एक उद्‌भट योद्धा थे। उनका प्रण जनता की सुरक्षा एवं स्वतंत्रता का था जिसे प्रताप ने प्राणपण से पूरा किया। जीवन की घनीभूत पीड़ा ने उन्हें प्रेरणा दी थी संघर्ष का मूल्य केवल संघर्षशील मानस ही समझ पाता है उन्होंने स्वतंत्रता प्राप्ति के संघर्ष को अक्षुण्ण एवं अमर बना दिया था डॉ. भटनागर द्वारा रचित उपन्यास राजस्थान ग्रंथ अकादमी द्वारा 'मीरा पुरस्कार' से नवाजा गया है। उपन्यास 'नीले घोड़े का सवार' में लेखक ने पाठक को जीवन परिस्थितियों के संदर्भ में मानवीय मूल्यों के प्रति निष्ठा का पाठ पढ़ाया है। महाराणा प्रताप के जीवन पर केन्द्रित इन उपन्यासों में स्वामीभक्ति, राष्ट्र भक्ति, प्रेम, संवेदना एवं जीवन मूल्यों की सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में व्याख्या की गई है। राजस्थान के इतिहास को सम्पूर्ण विश्व में अजेय एवं अमर बनाने का सामर्थ्य राजपूत राणा प्रताप में है। स्वतंत्रता के प्रति निष्ठा का प्राणप्रण से पालन करने वाला पुरोधा सदियों में कोई एक होता है डॉ. भटनागर जी ने ऐसे महान व्यक्तित्व के जीवन चरित्र को शब्दबद्ध करके एक से अधिक उपन्यासों की रचना की है। महाराणा प्रताप भारत के ही नहीं अपितु सम्पूर्ण वैश्विक धरातल पर स्वतंत्रता के लिए समर्पित व्यक्तित्व के रूप में जाने जाते है।

**मीरा**

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने राजस्थान की भक्त संत कवयित्रि मीरा पर जोगिन, गोपी न राधा, प्रेम दीवानी, प्रणय गाथा जैसे एकाधिक उपन्यासों की रचना की है। मीरा भगवान श्रीकृष्ण की अनन्य साधिका थी मीरा का व्यक्तित्व भारतीय समाज में ईश्वरीय चेतना का साक्षात् प्रतीक है मेवाड़ राजवंश की बहू होने के उपरांत उनमें जनसेवा की भावना के साथ भक्ति के स्वर मुखर थे मीरा का जीवन चरित्र जहाँ श्रीकृष्ण की साधना पर एकात्म भाव की व्याख्या करता है वहीं समाज में व्याप्त स्त्री चेतना पर उनकी आवाज धर्म एवं समाज की रूढ़िवादी परम्पराओं की सभी मान्यताओं पर कठोर प्रहार करती है।

डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों के द्वारा मीरा के माध्यम से सती प्रथा, छुआछूत, ऊँच–नीच, अंधविश्वास, पुनर्विवाह, विधवा–सधवा एवं अन्य कई कुरीतियों का रहस्योद्‌घाटन किया है। मीरा की भक्ति भावना मात्र को दिखाना केवल एक पक्षीय हो सकता है। अतः मीरा की भक्ति के साथ डॉ. भटनागर ने समाज सुधार के कार्यो का भी उल्लेख किया है। मीरा के समय का समाज स्त्रियों के प्रति अत्याचारों से भरा हुआ था ऐसे समय में मीरा ने स्त्री अधिकारों की माँग

उठायी और भक्ति के माध्यम जीवन मूल्यों के प्रति सचेत किया है। मीरा स्वयं अग्रगामी रही और स्त्री वर्ग का प्रतिनिधित्व किया धर्म में व्याप्त बुराईयों का पर्दाफाश किया। वह श्री कृष्ण की साधना में रत रहकर स्वयं श्रीकृष्ण बन गई थी उपन्यासकार ने भक्ति और शक्ति का समन्वित रूप प्रस्तुत करते हुए समाज को एक दिशा प्रदान की है डॉ. भटनागर ने स्त्री चेतना के स्वर के साथ भक्ति की लहर का जो समन्वय अपने उपन्यासों में किया है। वह सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में किया गया सार्थक प्रयास है।

**महाप्रभु चैतन्य**

'गौरांग' महाप्रभु चैतन्य की जीवनी पर आधारित उपन्यास है डॉ.भटनागर ने महाप्रभु चैतन्य के जीवन संदर्भो से सार्वकालिक सत्य की चेतना को एक मंच प्रदान किया है अध्यात्म एवं धर्म की भ्रांतियों को मथकर ईश्वरीय भक्ति का नवनीत प्रस्तुत किया है महाप्रभु चैतन्य की धार्मिक विचारधारा के माध्यम से समाज में व्याप्त जड़ता एवं रूढ़िवादी मान्यताओं को समाप्त करने का प्रयास किया है संन्यास और गृहस्थ के बीच पनपने वाली विषमता एवं विसंगतियों को दूर कर समन्वय करने का प्रयास किया है। एक सच्चे साधु एवं संन्यासी के लक्ष्य को प्रस्तुत किया है। भारतीय धर्म साधना के पथ पर पनपने वाले सम्प्रदायों की पोल खोली है इनके जीवन में धर्म, संस्कृति एवं समाज की जो संदर्भित व्याख्या की है वह सार्वकालिक चेतना का निर्वाह करती है।

समाज में व्याप्त भ्रांतियों एवं अंधविश्वासों का खण्डन करता इनका 'गौरांग' उपन्यास, भक्ति, अध्यात्म एवं संस्कृति की चेतना का वाहक है डॉ. भटनागर ने 'गौरांग' उपन्यास में वैष्णव सम्प्रदाय का प्रकाशन किया है। तत्कालीन धार्मिक व्यवस्था का वर्णन करते हुए कई सुधारात्मक संकेत दिये है। एक उपन्यासकार के रूप में इनकी औपन्यासिक कृति में रोचकता एवं पठनीय सामग्री की सरलता है वहीं समाज एवं धर्म की बुराइयों पर कठोर प्रहार किया गया है धर्म की साम्प्रदायिक भावना को टटोलकर एक समन्वयतात्मकता का संदेश उपन्यासकार ने दिया है।

**महर्षि अरविन्द योगी**

डॉ.राजेन्द्र मोहन भटनागर ने महर्षि अरविन्द योगी जी पर सनातन पुरूष, अन्तर्यात्रा, महर्षि अरविन्द उपन्यासों की रचना की है महर्षि अरविन्द के स्वतंत्रता एवं अध्यात्मवादी चिंतन को इन उपन्यासों में प्रस्तुत किया गया है महर्षि अरविन्द के चिंतन में राष्ट्रीय चेतना और स्वतंत्रता को नवीनता के साथ प्रस्तुत किया है महर्षि अरविन्द जी के अध्यात्म दर्शन का भारतीय समाज पर गहरा प्रभाव रहा है वह हमेशा हमें ज्ञान एवं भक्ति की प्रेरणा देता रहेगा डॉ. भटनागर ने इनके प्रारम्भिक जीवन और अध्यात्म जीवन का दर्शन प्रस्तुत किया है भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़े व्यक्तित्व में जहाँ राष्ट्रीय प्रेम एवं स्वतंत्रता के मूल्यों को अभिव्यक्ति मिली है वहीं आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त होने के बाद ईश्वरीय तत्व का चिंतन भी मानसिक चित्त के उद्वेलित प्रश्नों

को शांत करता है डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों के द्वारा इनके जीवन चरित्र को समाज एवं अध्यात्म के मूल्यों के साथ सम्पृक्ति दी। भारतीय जनमानस में इनका बड़ा प्रभाव रहा है इनका चिंतन सार्वकालिक चेतना को प्रस्तुत करता है इनके द्वारा प्रवर्तित दर्शन जहाँ चित्त के उलझते द्वन्द्वों का समाधान करता है वहीं इनके राष्ट्रीय विचारों ने भारत के स्वतत्रता वादी मूल्यों की रक्षा की है।

### सूरदास

महाकवि सूरदास के जीवन प्रसंगों को लेकर उपन्यासकार डॉ. भटनागर ने अमृतघट, सूरश्याम उपन्यासों की रचना की है सूरदास अंधे भक्त कवि थे उनके जीवन में ईश्वरीय साधना के अलावा किसी अन्य का महत्व नहीं था उपन्यासकार ने सूर की अंधी आँखों से देखे गए स्वप्न को साकार रूप देने का प्रयास अपने उपन्यासों में किया है सूर के जीवन की मधुरता और विरहात्मक अनुभूति को एक मंच दिया है सूरदास के जीवन में प्रणय पर्व की मधुर स्मृतियों के आधार पर प्रेम तत्व का विवेचन किया है श्रीकृष्ण की साधना पथ पर राग से वैराग्य की ओर बढ़ते कदमों का कम्पन उपन्यासकार ने उपन्यास में प्रस्तुत किया है समाज की मर्यादा, जीवन की गरिमा, बंधन, मोह, प्रेम, वैराग्य, संन्यास, गृहस्थ जैसे मानवीय मूल्यों का चिंतन इनके उपन्यासों में सूर के माध्यम से व्यक्त हुआ है। डॉ. भटनागर ने अपनी कल्पना शक्ति के बल पर उपन्यास को भावात्मक रूप से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। इनके उपन्यासों में प्रेम, एवं वैराग्य की गहरी अनुभूति व्यक्त हुई है।

### डॉ. भीमराव अम्बेडकर

दलितों के मसीहा डॉ.भीमराव अम्बेडकर के जीवन पर डॉ.भटनागर ने एकाधिक उपन्यासों की रचना की है भीमराव के जीवन और दलितों के अधिकारों के लिए किये गये संघर्ष को उपन्यासकार ने केन्द्रीय विषय बनाया है। इनके इन उपन्यासों में भारत के स्वतंत्रता संग्राम के साथ सामाजिक समता की स्थापना भी की गई है जीवन के नैतिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए दलितों को बहुत संघर्ष करना पड़ा था डॉ.भटनागर ने अपने उपन्यास 'युग पुरूष अम्बेडकर' में दलितों के ऊपर गहनता से विचार विमर्श किया है अम्बेडकर के जीवन संघर्ष और समाज में व्याप्त अशिक्षा, अज्ञानता, ऊँच–नीच, अस्पृश्यता, अंधविश्वास एवं बाह्यडम्बरों का खण्डन कर समाज में जीवन मूल्यों की स्थापना का प्रयास किया है। अस्पृश्यता के दोष से मुक्त करने का संकल्प लिए महानायक अम्बेडकर का संघर्ष स्वतंत्रता के साथ गतिमान रहा था।

उपन्यासकार ने भारत में दलित वर्ग की स्थिति को प्रदर्शित किया साथ ही मानवता के सिद्धान्तों की व्याख्या भी की है वे संघर्ष के साथ जीवन के विविध प्रसंगों की भावानुकूल प्रस्तुति भी देते है शोषण, अत्याचार एवं अस्पृश्यता के विरूद्ध अम्बेडकर के दलित दर्शन ने भारतीय

समाज की कलुषिता को मिटाने का भरसक प्रयास किया था आज भारत में अस्पृश्यता का अंत हो गया है समानता एवं भाइचारे की भावना देखने को मिलती है। यह अम्बेडकर के महान प्रयासों से ही संभव हुआ है अम्बेडकर ने जीवन के कटु एवं तिक्त विष को पीकर भी भारतीय सभ्यता एवं संस्कार का सदैव मानवीय आधारों पर समर्थन किया है।

**नेताजी सुभाष चंद्र बोस**

आजाद हिन्द सेना के नेतृत्व कर्त्ता नेताजी सुभाष चंद्र बोस के जीवन को अपनी साहित्य साधना का केन्द्र बनाकर डॉ.भटनागर ने दिल्ली चलो, सुभाष एक खोज उपन्यासों की रचना की है नेताजी बोस का जीवन एक यायावर की भांति विचरण करता रहा है। स्वतंत्रता की खोज में अपना सब कुछ समर्पित करने वाले इस नौजवान की विचार धारा ने भारतीय जनमानस को स्वतंत्रता का मार्ग सुझाया था भारत की भूमि पर स्वतंत्रता की अलख जगाने वाले इस स्वतंत्रता सैनानी की रहस्य कथा को शब्दबद्ध करने का प्रयास डॉ.राजेन्द्र मोहन भटनागर ने किया है इन्होंने इनके जीवन चरित्र के माध्यम समाज सेवा, शिक्षा, राजनीति एवं सैन्य अनुशासन एवं युद्ध की रणनीतियों का वर्णन किया है नेताजी का जीवन चरित्र युवावर्ग के लिए सदैव दिशा एवं प्रेरणा देने वाला रहा हैं।

**महात्मा गाँधी**

डॉ.भटनागर ने राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के महान व्यक्तित्व पर कुली बैरिस्टर, अंतिम सत्याग्रही उपन्यासों की रचना की है राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के विचारों से भारतीय जनमानस को एक जीवन्त दर्शन से परिचय कराने का उद्देश्य उपन्यासकार का रहा है डॉ.भटनागर ने महात्मा गाँधी के गाँधीवादी दर्शन को भावात्मक रूप में प्रस्तुत किया है जीवन के विविध प्रसंगो में उठने वाले मानसिक द्वन्द्व को कल्पना का सहारा लेकर प्रस्तुत किया है। एक बैरिस्टर के रूप में दक्षिण अफ्रीका में किए गये सत्याग्रह और उसके साथ जीवन मूल्यों की सार्वकालिक व्याख्या प्रस्तुत की है महात्मा गाँधी के जीवन पर यद्यपि बहुत सारा साहित्य उपलब्ध है डॉ. भटनागर गाँधीवाद की जो भावात्मक रूप में व्याख्या की है वह रोचक एवं नवीन है महात्मा गाँधी के द्वारा प्रवर्तित जीवन मूल्यों के प्रति निष्ठा ने मानव समाज को अहिंसा एवं सत्य का वास्तविक पाठ पढ़ाया है।

उपन्यासकार ने अपनी कल्पना शक्ति एवं मौलिक प्रतिभा के सामर्थ्य से मानसिक द्वन्द्व को सुलझाने का प्रयास किया है जीवन की भौतिक विचारधारा में सरल जीवन को प्रस्तुत करने का श्रम साहित्यकार ने किया है महात्मा गाँधी के विचारों के प्रभाव का मूल्यांकन करते हुए मानव जीवन को स्वतंत्रता एवं मानवीय मूल्यों की प्रेरणा इनके उपन्यासों में परिलक्षित होती है उपन्यासकार ने मानव को गाँधी दर्शन की चेतना से सम्पृक्त कर आदर्श समाजवाद की स्थापना पर बल दिया है वह आधुनिक युग में मानवीय मूल्यों की सार्वकालिक चेतना को गाँधी दर्शन के

माध्यम से जागृत करना चाहते है महात्मा गाँधी की अमर जीवन विचारधारा का प्रस्तुतिकरण इनके उपन्यासों में सहज एवं रोचक ढंग से हुआ है।

**स्वामी विवेकानंद**

स्वामी विवेकानंद, तरूण संन्यासी,उपन्यासों की रचना डॉ.राजेन्द्र मोहन भटनागर ने स्वामी विवेकानंद के जीवन प्रसंगों के ऊपर की है सम्पूर्ण विश्व में भारतीय संस्कृति एवं अध्यात्म को प्रकाशित एवं प्रचारित करने वाले पुरोधा की जीवन गाथा का प्रस्तुतिकरण उपन्यासकार ने किया है स्वामी विवेकानंद के माध्यम उपन्यासकार ने भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता की श्रेष्ठता का आकलन किया है। वे एक द्रष्टा की भांति समाज के उत्थान, पतन एवं विकास पर दृष्टि डालते है जीवन की आवश्यकता में मानवीय मूल्यों की व्याख्या करते है डॉ. भटनागर ने अपने सांस्कृतिक उपन्यासों में भारतीय संस्कृति एवं जीवन मूल्यों पर प्रकाश डाला है एक उपन्यासकार का लक्ष्य होता है कि वह अपने पाठकों को कुछ ऐसा उपलब्ध कराए जो मन की गुत्थियों को सुलझा सके स्वामी विवेकानंद का जीवन दर्शन वेदान्त के माध्यम मस्तिष्क की चेतना के समस्त बंद द्वारों को खोल देता है अध्यात्मवाद से सम्पृक्त जीवन की गहराई की सार्वकालिक व्याख्या इनके उपन्यासों की केन्द्रीय विषय वस्तु है। भारतीय जन मानस की पराजित मनोवृत्ति में आशा का संचार है। 'उठो और लक्ष्य प्राप्ति तक मत रूको' का संदेश देने वाले स्वामी विवेकानंद की जीवन संघर्ष की व्याख्या विविध प्रसंगो के माध्यम से उपन्यासकार ने की है अशिक्षा, अज्ञानता, धर्म, साम्प्रदायिकता, वेदान्त, अध्यात्म एवं भारतीय संस्कृति, दर्शन पर इनका चिंतन मानवतावादी मूल्यों की स्थापना का मार्ग प्रशस्त करता है डॉ. भटनागर उन पर अपनी कल्पना के द्वारा भावात्मक प्रस्तुति से विषयों की समझ को और भी सरल एवं रोचक बनाने का प्रयास किया है।

**सरदार**

लौह पुरूष सरदार पटेल की जीवनी पर आधारित सरदार उपन्यास भारतीय स्वतंत्रता एवं राजनीतिक मूल्यों की संयुक्त प्रस्तुति देता है डॉ.भटनागर ने अपने इस उपन्यास में भारतीय जीवन पद्धति एवं विचारधारा की लोक चेतना को भी प्रस्तुत किया है। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में किसानों का नेतृत्व और उनके जीवन से जुड़ी समस्याओं का चित्रण इस उपन्यास को विशेष बनाता है 'सरदार' उपन्यास में व्यक्त राजनीतिक चिंतन भारत की तात्कालीन परिस्थितियों के प्रति समझ उत्पन्न करने में सहायक है।

डॉ. भटनागर ने सरदार पटेल की जीवन शैली और उनके चिंतन में भारत निर्माण की भूमिका को प्रस्तुत किया है उपन्यास में व्यक्त चेतना ने मानवतावादी मूल्यों की स्थापना पर बल दिया है उपन्यासकार ने लौह पुरूष की भूमिका को समाज के समक्ष प्रस्तुत किया है महात्मा गाँधी के सहयोगी के रूप में और भारत की तत्कालीन स्थिति को संभालने के दायित्व का

मूल्यांकन डॉ. भटनागर ने अपने राजनीतिक उपन्यास में किया है सरदार पटेल एक बैरिस्टर के रूप में जितने दक्ष थे उतने ही कुशल वे राजनीतिक जीवन में भी रहे धैर्य, संयम, सत्य एवं अहिंसा के मार्ग पर चलते हुए उन्होंने सदा मानवतावादी मूल्यों की स्थापना पर बल दिया था। डॉ. भटनागर ने सरदार पटेल के त्याग, कर्तव्य, एवं दायित्व बोध की सार्वकालिक व्याख्या अपने उपन्यास में की है।

**ऐतिहासिक (जीवनीपरक उपन्यास)**

1. सूरश्याम (सूरदास पर), पूर्वोदय प्रकाशन, नई दिल्ली, 1978
2. महात्मा (कबीरदास पर), दी स्टूडेंटस बुक कम्पनी, जयपुर, 1979
3. नीले घोड़े पर सवार (महाराणा प्रताप पर), राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 1984
4. एक अंतहीन युद्ध (महाराणा प्रताप पर), किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली, 1985
5. गन्ना बेगम (भरतपुर के राजकुमार जवाहरसिंह और उनकी प्रेमिका पर), राजेश प्रकाशन, दिल्ली, 1986
6. महाबानों (रहीम और उसकी पत्नी पर), किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली और हिन्दी प्रचारक संस्थान, वाराणसी, 1986
7. वसुधा (भक्ति युग पर), सत्साहित्य प्रकाशन, दिल्ली, 1986
8. सिद्ध पुरूष (भक्ति युग पर), आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली, 1987
9. राज राजेश्वर (महाराणा कुम्भ पर), राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 1997
10. प्रेमदीवानी (मीरा बाई पर), आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली, 1994
11. युग पुरूष अम्बेडकर, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली, 1994
12. जोगिन (मीरा बाई पर), मार्डन बुक डिपो, जयपुर, 1997
13. दिल्ली चलो (सुभाष चन्द्र बोस), राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 1997
14. अंतिम सत्याग्रही (नमक आंदोलन पर), सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली, 1997
15. श्याम प्रिया (मीरा बाई पर), राजेश प्रकाशन, दिल्ली, 1998
16. न गोपी : न राधा (मीरा बाई पर), प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 1998
17. एकलिंग का दीवान (महाराणा प्रताप पर), सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली, 2001
18. तरूण संन्यासी (विवेकानन्द पर), विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2001

19. स्वराज्य (1942 की क्रांति पर), परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली, 2003

20. विवेकानन्द, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 2003

21. अमृत घट (सूरदास पर), इरावती प्रकाशन, दिल्ली, 2003

22. सूर्यवंश का प्रताप (महाराणा प्रताप पर), विश्वविद्यालय प्रकाशन चौक, वाराणसी, 2006

23. कायदे आजम (जिन्ना पर), नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2006

24. इन्दिरा प्रियदर्शिनी (इन्दिरा गाँधी पर), नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2006

25. परछाइयाँ (सोनिया गाँधी पर), नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2006

**राजनीतिक उपन्यास**

1. टूटे आकार, 1971, पुस्तक प्रकाशन, दिल्ली।
2. मंच नायक, 1978, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. दहशत, 1978, सुन्दर साहित्य सदन, नई दिल्ली।
4. नया मसीहा, 1978, सुन्दर साहित्य सदन, नई दिल्ली।
5. घंटिया गूँजती है, 1980, अरूण प्रकाशन, नई दिल्ली।
6. निर्णय, 1984, गोड़दिया प्रकाशन, बीकानेर।
7. रिवोल्ट, 1993, किरण पब्लिकेशन, अजमेर।

**सामाजिक उपन्यास**

1. अनंत आकाश, कृष्णा जनसेवी एण्ड कम्पनी, बीकानेर, 1979
2. एक ठहरी हुई रात, भारतीय ग्रंथ निकेतन, नई दिल्ली, 1981
3. मोनालिसा, अंकुर प्रकाशन, नई दिल्ली, 1981
4. देवलीना, किताबघर, नई दिल्ली, 1982
5. सन्नो, राजेश प्रकाशन, नई दिल्ली, 1986
6. जिन्दगी का एहसास, आत्माराम एण्ड सन्स, नई दिल्ली, 1990
7. परिधि, विनोद प्रकाशन, आगरा, 1990
8. वाग्देवी, कृष्ण ब्रदर्स, अजमेर, 1992
9. माटी की गंध, विनोद प्रकाशन मन्दिर, आगरा, 1992

10. माटी की गंध, गृहशोभा, नई दिल्ली, 1992

11. अन्दर की आग, रामानान्तर प्रकाशन, नई दिल्ली, 1996

12. कुहरा, संजीव प्रकाशन, नई दिल्ली, 1996

13. बह्मकमल, सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली, 1997

14. शुभ प्रभात, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली, 1997

15. माँग का सिन्दूर, राजभाषा प्रकाशन, दिल्ली, 1997

16. स्बक, सुयोग्य प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003

17. माटी की पुकार, पीताम्बर पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, 2004

18. वैलंटाइन डे, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2004

**शैक्षिक उपन्यास**

1. छात्रनेता, आरती पॉकेट बुक्स, मेरठ, 1974

2. अफसर का बेटा, भारतीय ग्रंथ निकेतन, नई दिल्ली, 1978

3. कागज की नाव, भारतीय ग्रंथ निकेतन, नई दिल्ली, 1981

4. विकल्प, अलंकार प्रकाशन, नई दिल्ली, 1984

5. सत्यमेव जयते, पीताम्बर पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1985

6. सर्वोदय, पीताम्बर पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1986, 88, 89

7. तमसो मा ज्योर्तिगमय, पीताम्बर पब्लिकेशन, नई दिल्ली

**समीक्षात्मक साहित्य**

1. केशवदास : एक अध्ययन, ज्ञान बुक डिपो, मेरठ, 1956

2. आचार्य केशवदास, विनोद प्रकाशन, आगरा, 1957

3. बाणभटट की आत्मकथा : एक अध्ययन, विनोद प्रकाशन, आगरा, 1964

4. जैनेन्द्र और उनका निबंध साहित्य, पूर्वोदय प्रकाशन, नई दिल्ली, 1978

5. जैनेन्द्र के निबंध साहित्य का नवमूल्यांकन, पूर्वोदय, नई दिल्ली, 1978

6. विनोद रस्तोगी के नाट्य साहित्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन, उमेश प्रकाशन,

7. जैनेन्द्र के निबंधों का साहित्यिक और तात्विक अध्ययन, उमेश प्रकाशन, आगरा, 1980

8. घनानन्द, ज्ञान बुक डिपो, मेरठ, 1985–85

9. आधुनिक हिन्दी कविता और विचार, भारतीय ग्रंथ निकेतन, नई दिल्ली, 1987

10. सूरकाव्य मधि, उमेश प्रकाशन, दिल्ली, 1990

11. घनानन्द : एक अध्ययन, भारतीय ग्रंथ निकेतन, नई दिल्ली, 1991

12. कबीर, भारतीय ग्रंथ निकेतन, नई दिल्ली, 1992

13. जयशंकर प्रसाद, भारतीय ग्रंथ निकेतन, नई दिल्ली, 1993

14. जैनेन्द्र ओर उनका समग्र अध्ययन, भारतीय ग्रंथ निकेतन, नई दिल्ली, 1994

15. सूरदास, भारतीय ग्रंथ निकेतन, नई दिल्ली, 1995

16. मीरा बाई, भारतीय ग्रंथ निकेतन, नई दिल्ली, 1996

**राजेन्द्र मोहन का विचार साहित्य**

1. व्यावहारिक लोकतंत्र

2. भारतीय कांग्रेस का इतिहास

3. समस्या और समाधान

4. छात्र आंदोलन विश्लेषधात्मक अध्ययन

5. दंगे क्यों

6. बहुऐं जल रही है।

7. अब बहुऐं जलेगी

8. गरीबी हटाओ

9. चुनौती

10. बलात्कार क्यों

11. साम्यवाद का भारतीय करण

12. दंगो का सच झूठ

13. सामव्येकी

14. शिक्षा और लोकतंत्र

15. भारतीय शिक्षा और साक्षरता

16. अनौपचारिक शिक्षा : सिद्वान्त और व्यवहार
17. बुनियादी शिक्षा की रूपरेखा
18. आधुनिक शिक्षा मनोविज्ञान चुनौती
19. राष्ट्र भाषा और हिन्दी

**काव्य साहित्य**

1. साक्षी है अरावली
2. अक्षर प्रिया
3. गीतायन
4. अंजली भर सुमन
5. सालगिरह पर रदद् किया गया वक्तव्य

**बाल साहित्य**

1. मंगतू का सपना
2. साक्षर सरपंच
3. सुल्तानी पंचायत
4. जब न होगा अछूत
5. हरा भरा हिन्दुस्तान
6. मानव धर्म
7. हरिया की डायरी
8. काला ताजमहल
9. चौरों की सरकार
10. नारद का मोह
11. भोर की किरण
12. लीला पाटिल
13. गौरा देवी
14. खुदीराम बोस

15. नहले पर दहला

16. कागज की नाव

## (ग) डॉ. भटनागर के उपन्यास : संवेदना और शिल्प

संवेदना के कई प्रकार एवं स्तर होते है यह कब ? कहाँ ? कैसे ? प्रकट होती है? इसका स्तर क्या है? यह किस परिवर्तन की क्षमता रखती है ? इन सब प्रश्नों का उत्तर केवल परिस्थितियों पर निर्भर होता है परिस्थितियाँ संवेदना के प्रकार एवं स्तर का निर्माण करती है संवेदना को मापने का कोई पैमाना नहीं है भावों की गति, प्रवाह, उत्पन्न होने की स्थिति आदि मानवीय हैं जिन्हें अनुभव एवं महसूस किया जा सकता है। उपन्यास या साहित्य में संवेदनाजन्य भावों का प्रस्तुतिकरण भी परिस्थितियों या प्रसंग एवं घटनाओं पर आधारित होती है जिस प्रकार की घटना या परिस्थिति होती है। उसी प्रकार की संवेदना होती है साहित्यकार अपनी साहित्य रचना में संवेदना को लक्ष्य करके उपन्यास नहीं लिखता है, अपितु संवेदना स्वतः प्रवेश करती है संवेदना विचारों, भावों, चिंतन, मनन, परिवर्तन में परिलक्षित होती है संवेदना का यह स्तर मानव के अनुसार अलग अलग होता है। डॉ. भटनागर के उपन्यासों में संवेदना के विविध स्तर देखने को मिलते है। यह स्तर अलग–अलग परिस्थितियों एवं संदर्भो में दिखाई देते है।

उपन्यासकार ने संवेदना के माध्यम से उपन्यासों में उपस्थित उलझनों और मानव के अन्तर्द्वन्द्व को समझने में सहायक बनाया है। जीवन के विविध प्रसंगों के साथ जुड़े संघर्षों को स्पष्ट करने में साहित्यकार ने एक मंच तैयार किया है। वे संवेदना की सार्वकालिकता को समझते है। फलस्वरूप भावों की प्रस्तुति के समय उन्होंने मानव मूल्यों के संदर्भ में जुड़ी भावनाओं का संवेदनात्मक चिंतन प्रस्तुत किया है। सुरेशचंद्र शर्मा लिखते है–''समाज और व्यक्ति के सापेक्ष सम्बन्ध को प्रभावित करने में युग विशेष की जीवन दृष्टि का योग रहता है। अतः सामाजिक अंतः प्रक्रियाओं के औचित्य–अनौचित्य का युग विशेष के संदर्भ में भी विश्लेषण किया जा सकता है। जो सामाजिक नैतिकता, मनुष्य–मनुष्य के बीच विषमता को दूर करके मानव सत्य की प्रतिष्ठा करती है। वह सर्वकालिक नैतिकता है।''[20] एक उपन्यासकार समाज के समक्ष अपने चिंतन को प्रस्तुत करता है उपन्यास में वर्णित हर घटना संवेदना की मानसिक ईकाई है संवेदना ने मानव मूल्यों के प्रति चेतना जागृत की है उपन्यासकार द्वारा वर्णित प्रसंगों से एक संदेश मानव समाज को प्राप्त होता है परिणामतः समाज में मूल्यों की स्थिति का परीक्षण एवं मूल्यांकन होता है।

डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों का विषय इतिहास से ग्रहण किया है। इतिहास मानव की पहचान एवं मूल्यों का वाहक होता है वह कौन है? उसके पूर्वज कैसे थे? उसके मूल्य क्या थे? इन सब प्रश्नों का उत्तर इतिहास से ही प्राप्त होता है जब कभी भी मानव अपने दायित्व, कर्तव्यों से विमुख होने लगता है तो उसे जो प्रेरणा प्राप्त होती है वह इतिहास से ही सम्बद्ध

होती है डॉ. भटनागर ने एक उपन्यासकार के दायित्व को समझा है उनका साहित्य केवल मनोरंजकता का ही अहसास नहीं कराता है अपितु मनुष्य को जीवन काल के संघर्ष में प्रेरणा भी प्रदान करता है इनके उपन्यासों में इतिहास के महान चरित्रों की जीवन व्याख्या प्रस्तुत की गई है इतिहास से प्राप्त निष्कर्षो ने आने वाली पीढ़ियों के लिए मूल्यों के प्रति चेतना को संरक्षित किया है एक उपन्यासकार के रूप में इनके उपन्यासों में वर्णित चेतना सार्वकालिक संदर्भो से सम्पृक्त है संवेदना सार्वकालिक होती है संवेदना काल, देश, की सीमाओं से परे हर युग एवं काल में न्यूनाधिक रूप में उपस्थित रहती है। डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों की विषय वस्तु के साथ संवेदना को भी व्यक्त करते हुए इतिहास से जुड़े सन्दर्भ एवं प्रसंगों से मानव समाज को प्रेरणा देने वाले सार्वकालिक साहित्य का सृजन किया है।

'युग पुरुष अम्बेडकर' उपन्यास में डॉ. भटनागर ने माँ पुत्र के अमर प्रेम एवं वात्सल्य को भीमराव अम्बेडकर और माँ भीमाबाई के संवेदनात्मक व्यवहार के द्वारा अंकित किया है। माँ भीमाबाई की मृत्युपरांत अम्बेडकर अत्यधिक अकेलापन महसूस करते है। ''भीमराव अम्बेडकर का दिल टूट गया। वह गुमसुम हो गया। अब उसका पढ़ाई में भी मन कम लगता था। वह घर से बाहर अधिक रहता था। उसे हर समय अपनी माँ की याद सताती रहती थी। कई बार उसे लगता था कि माँ उसके सिरहाने बैठकर उसके बाल सहला रही है। उसे माँ का बाल सहलाना बहुत अच्छा लगता था। वह थोड़ी देर कुछ नहीं कहता। उसके कोमल कोमल हाथों का जादुई असर अनुभव करता रहता। जब वह पलटकर देखता तब उसका बाल मन तड़प उठता, क्योंकि न पीछे माँ होती और न उसके कोमल कोमल गोरे हाथ। वह तुरंत ठूंठ बन जाता। उसकी संवेदनशीलता हिमानी आकाश सी उस पर आच्छादित हो जाती और वह जोर से आँखे मींचकर अपने को अपने आप से ही ऐसे ओझल कर देना चाहता जैसे कोई योद्धा अपनी एक टाँग को अपने शरीर से इसलिए अलग कर देना चाहता है जैसे उसे उसी के कारण अपमानित होना पड़ा था।''[21]

डॉ. भटनागर भावों की गहरी समझ रखते हैं इसी कारण इनकी औपन्यासिक कृतियों में संवेदना का सूक्ष्मातिसूक्ष्म अंकन हुआ है संवेदना की अवस्था भिन्न भिन्न होती है मानव मन की अनुभूतियों से प्राप्त होने वाले निष्कर्षों की चेतना होती है मनुष्य में संवेदना चिंतन को जन्म देती है वह चिंतन में अपने अनुभव को टटोलता हुआ समाज के नियमों पर अपनी जिज्ञासा को शांति देना चाहता है। संवेदना का यह रूप डॉ.भटनागर के उपन्यासों की विशेषता है 'अमृत घट' उपन्यास में सूरदास के जीवन में सारंगी का आगमन बसंत का ऋतु जैसा था। परन्तु सूरदास अपने आपको उसके योग्य नहीं मानता है। सूरदास का चिंतन उस संवेदनात्मक भावों को प्रस्तुत करता है जिनमें त्याग एवं परोपकार के साथ जीवन भर का विरह भोगने का सामर्थ्य है सारंगी के प्रणय निवेदन ठुकराने के बाद उनका चिंतन प्रारम्भ होता है।

''वह किसी से प्यार नहीं करता। कर भी नहीं सकता। जो अपने से डरता हो वो किसी से कभी प्यार नहीं कर सकता। सारंगी पगला गई है। उसे सारंगी से दूर रहना चाहिए। वह तो दूर ही रहता है। उसके पास तो सारंगी ही आती है। वह अपने को रोक सकता है। पर उसे कौन रोके?''[22]

संवेदना के कई प्रकार में एक प्रकार समाज एवं राष्ट्र प्रति संवेदनात्मक विचारों सें भी जुड़ा हुआ है एक देशभक्त नागरिक के महान् विचारों को जब प्रेरणा मिलती है तो वह राष्ट्र के प्रति अपने दायित्व एवं कर्तव्यों का अनुभव करता है समाज में व्याप्त बुराइयों पर उसकी चिंतना नव सृजन की ओर उन्मुख होना चाहती है वह समस्त बंधनों से मुक्त होकर नव राष्ट्र सृजन का स्वप्न देखता है डॉ. भटनागर ने राष्ट्र के प्रति विचारों से सम्पृक्त राष्ट्रीय संवेदना को भी उपन्यासों में वर्णित किया है। महर्षि अरविन्द योगी के ऐसे ही विचारों के माध्यम संवेदना की सृजनात्मक एवं राष्ट्रीय भावना को बल मिलता है।'' मेरे सामने बेड़ियों में जकड़ी भारत माँ है। उसे स्वतंत्र कराना सहज कार्य नहीं है।, क्योंकि उसे बाहर वालों ने ही नहीं, अपने राजा महाराजा, ठाकुर जमींदार, ठिकानेदारों आदि ने भी तो परतंत्र बनाया हुआ है। परतंत्र चाहे अपनों से हो या बाहर की शक्तियों के कारण है तो वह परतंत्रता। इस प्रश्न ने मुझे हिलाकर रख दिया है। यदि एक दो बड़ौदा जैसी स्टेट को छोड़ दे तो शेष स्टेट अपनो पर अत्याचार और अन्याय ही कर रही है। हम न जाने कितनी श्रेणियों में विभक्त है। हम आपस में समान कहाँ है? हम जातियों में बँटे हुए है? धर्म में बँटे हुए है। अमीरी—गरीबी में बँटे हुए है। आदि! ऊँच—नीच....... छुआछूत........ उनमें भी विभेदीकरण! ओह! हमारा समाज पराजय के कितने नीचे वाले धरातल में धँसा हुआ है। फिर हमारी स्वतंत्रता का अर्थ क्या है? मैं अभी तक इस द्वन्द्व से मुक्त नहीं हो सका हूँ।''[23]

राष्ट्र के प्रति जब व्यक्ति में चेतना जागृत होती है तब मनुष्य के जीवन में राष्ट्र के प्रति समर्पण एवं त्याग की भावना का विकास होता है मानव की यह चेतना सार्वकालिक है भारत में ऐसी स्थिति चाणक्य से लेकर अद्यतन बनी हुई है। सुभाष चन्द्र बोस को जब पारिवारिक बंधनों में बाँधने का प्रयास किया तो उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन राष्ट्र निर्माण के लिए अर्पित करने का दृढ़ निश्चय किया था वह कहते है—''नहीं भाभी, देश की स्वाधीनता ही मेरा व्रत है। मैं नहीं चाहता...... मैं गौतम हूँ भी नहीं..... वे महान् थे..... लेकिन मैं नहीं चाहता कि संतृप्त यशोधरा का कारण बनूं।......... चुपके से पत्नी पुत्र को छोड़कर परम सत्य के अनुसंधान में अर्द्धरात्रि को निकल जाऊँ।..... मेरे में ऐसे महानिष्क्रमण की शक्ति नहीं है, पूजनीया भाभी।.... पत्नी के परित्याग से परम ज्ञान मिलता हो, एवं पुत्र छोड़ने से मुक्ति मिलती हो..... तो वह मुक्ति शक्ति परम ज्ञान मुझे नहीं चाहिए।......... कदापि नहीं। किसी तरह भी नहीं।........ मेरे में गौतम जैसी शक्ति नहीं है। भाभी मैं हजारों हजार की तरह सामान्य जन हूँ, उनके साथ अभिशापों से ग्रस्त हूँ।.... मुझे परम ज्ञान नहीं अपने देश की स्वाधीनता चाहिए।''[24] लेखक ने सुभाष बोस के विचारों में स्त्री वर्ग के

प्रति सम्मान एवं देश के प्रति त्याग की संवेदनात्मक अनुभूति को केन्द्रित किया है राष्ट्र निर्माण की पृष्ठभूमि में न जाने कितने देश भक्तों का मूक बलिदान एवं समर्पण जो गुमनाम ही रह गया था परन्तु भारत के इतिहास को इन नेतृत्वों ने अनुभुति कराई उन संवेदनात्मक भावों से जिन्होंने भारत को अपना सच्चा परिवार माना था राष्ट्र के प्रति कर्तव्यनिष्ठा की इस प्रेरणादायी संवेदनाओं का श्रवण ही रोमांचित कर देता है वीरता का भाव धारणकर देश के लिए अपने निजि स्वार्थों की बलि देना ही सच्ची देश भक्ति है। डॉ.भटनागर ने अपने उपन्यासों में राष्ट्र के प्रति इस प्रकार त्याग एवं समर्पण से जुड़े संवेदनात्मक भावों की प्रस्तुति विभिन्न संदर्भों के माध्यम से की है।

डॉ. भटनागर जी ने सदैव इतिहास को महत्व दिया है क्योंकि इनका मानना है कि अतीत वर्तमान मूल्यों में आदर्श स्थापित करने का उद्देश्यपूर्ण कार्य करता है भटनागर जी का उपन्यास इतिहास की पुनर्व्याख्या के उद्देश्य से प्रेरित हैं समाज एक आदर्श दिशा में अग्रसर हो इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु इन्होंने ऐतिहासिक उपन्यासों का लेखन कार्य सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में किया है इनके उपन्यासों को पढ़ने के बाद पाठक सार्वकालिक चेतना से प्रेरित होकर एक आदर्श नागरिक के गुणों से अभिभूत हो जाता है। यही इनके साहित्य लेखन का महत्वपूर्ण कार्य है।

साहित्यकार चूंकि सहृदय एवं सामाजिक होता है। यही कारण है कि वह अपने आस पास के वातावरण से ही विषय वस्तु का चयन कर लेता है साहित्यकार का लक्ष्य सदैव साहित्य एवं समाज के विविध पक्षों को रेखांकित करना है इस परम्परा में वह समाज एवं जीवन की सभी घटनाओं, परिस्थितियों का पुनर्मूल्यांकन करता है उपन्यासकार अपने संवेदशील मन में उन समस्त परिस्थितियों एवं प्रवृत्तियों का अध्ययन करता है जिनमें साहित्य और संवेदना एक दूसरे से जुड़ी हुई हैं समाज की गतिविधियाँ संवेदना से प्रस्फुटित होकर साहित्य में परिवर्तित होती है। साहित्यकार समाज से विलग नहीं हो सकता है वह सदैव अपनी रचना के पात्र, कथानक, वातावरण, भाषा, शैली, उद्देश्य सभी तत्वों को इसी समाज में खोजने का प्रयास करता है यह ध्रुव सत्य है कि साहित्यकार अपने युग के प्रति संवेदनशील रहकर साहित्य रचना में प्रवृत्त होता है ''साहित्यकारों की संवेदना युग विशेष की समकालीन परिस्थितियों का प्रतिनिधित्व करती है।''[25] साहित्यकार का दायित्व होता है कि वह समाज से प्राप्त तथ्यों एवं यथार्थ का पुनर्निरीक्षण कर उन्हें सत्यापित करता हुआ अपनी कल्पना एवं मौलिक प्रतिभा के साथ उन्हें आदर्श रूप में व्याख्यायित करे मुकुन्द द्विवेदी ने इस संदर्भ में कहा है–''जब साहित्यकार किसी यथार्थ को अभिव्यक्त करता है तो उस यथार्थ को एक विशेष सृजनात्मक प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। और इस प्रक्रिया से गुजरने के बाद साहित्यकार उस यथार्थ को एक विशिष्ट अर्थ प्रदान करता है जो किन्हीं अंशों में वस्तुगत यथार्थ से भिन्न होता है। इस भिन्नता में ही साहित्य का अपना सत्य अनुस्यूत होता है।''[26]

मानव समाज की गतिविधियों से प्रभावित होता है मन की अनुभूत संवेदना के द्वारा किसी घटना के सुख, दुख, भावों, द्वन्द्व से सम्पृक्त होता है आनंद, दुख, निराशा, क्रोध, प्रेम, हर्ष लज्जा,

घृणा, जैसे अनेक विकारों से स्पर्श करता हुआ उसका मन कभी कोमल तो कभी कठोर होता है डॉ. ऊषा यादव ने संवेदना टिप्पणी करते हुए कहा है कि –''संवेदना ही मानव के अर्न्तमन की सर्वाधिक पवित्र भावना है। सहानुभूति के दो शब्द किसी के दुख कष्ट का निवारण भले ही ना कर सके, उसके दिल को तसल्ली तो दे ही सकते है। दुखी मनुष्य जब किसी की परदुख कातरता को देखता है, उसका हृदय अधिक भाव विह्वल, नयन, अधिक अश्रुमंडित तथा मुखाकृति और भी अधिक करूणा विहसित हो उठती है। निश्चय ही संवेदना हमें आत्मीयता के प्रगाढ़ बंधन में बाँधती है।''[27]

साहित्य मानवीय संवेदना की अभिव्यक्ति का वाहक है साहित्य रचना के लिए साहित्यकार जिन संदर्भों से प्रेरणा ग्रहण करता है वह किसी न किसी रूप में संवेदना है संवेदना मानव होने का प्रमाण है क्योंकि मानव होने पर हम किसी भाव के प्रति अपनी अभिव्यक्ति प्रकट करेंगे और यही संवेदना मानव के सम्बन्धों की आधारशिला है। साहित्य रचना का आधार मानव की संवेदना से प्रेरित है मानव के मन मस्तिष्क में चल रह द्वन्द्व की अनुभूति ही संवेदना है मानव समाज में रहकर अपने समाज, राष्ट्र, देश के लिए अपना महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करता है वह समाज के हर पहलू पर अपना चिंतन प्रकट करता है कई बार यह चिंतन क्षणिक एवं मूक होता है मौन एवं क्षणिकता भावों का प्रवाह रोक देती है परन्तु जब कभी किसी विषय पर मानव का चिंतन मौन मूक व क्षणिक न होकर किसी भी अन्य रूप चाहे वो क्रांति हो या आंदोलन हो, परिवर्तन एवं बदलाव की चाह अवश्य रखता है भारत का इतिहास इस बात का साक्षी है कि जब कभी मानव की संवेदना ने उग्र रूप धारण किया है तब नवीन चेतना के साथ कई परिवर्तन हुए है संवेदना मानव मन की अनुभूत भावों की परिचालक है। ''साहित्य में इस शब्द का प्रयोग सीमित अर्थ में नहीं किया गया है। विशेषतः जब हम मानवीय संवेदना की बात करते है तो उसका आशय मात्र ज्ञानेन्द्रियों का अनुभव न रहकर मानव मन की अतल गहराइयों में छिपी करूणा, दया एवं संवेदना अनुभूति का भी व्यजंक है।''[28]

मनुष्य के भाव विचार को किसी भी सीमा में बाँधना सम्भव नहीं है यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो मानव को जन्म से स्वभाव के रूप में प्राप्त हुई है मानव का मन विचारों के द्वन्द्व में पक्ष–विपक्ष, सकारात्मक–नकारात्मक, प्रभावों के साथ उलझता सुलझता रहता है। मानव एक ऐसा प्राणी है जिसका चिन्तन, मंथन, विश्लेषण और अनुसंधान संवेदना की सार्वकालिक चेतना का संचालक है।

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ऐसे कुशल शिल्पकार है जिन्होंने अपनी साहित्य सृजन में संवेदना के विविध पक्षों पर दृष्टि डाली है एक सफल साहित्यकार में संवेदनाओं को पहचानने की अद्‌भुत क्षमता होती है डॉ. भटनागर ने अपनी इस अद्‌भुत क्षमता का प्रयोग अपने उपन्यासों की रचना में प्रमुखता से किया है। डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में जिन ऐतिहासिक पात्रों के

जीवन चरित्र को व्याख्यायित किया है वे सब पात्र संवेदनाओं की भाव भूमि पर अपने विचारों की प्रस्तुति देते हुए परिलक्षित होते है एक साहित्यकार को किसी पात्र का चित्रण करने से पहले उस चरित्र से सम्पृक्त समस्त भावों का संवेदनात्मक स्तर पर अध्ययन करना अनिवार्य है। डॉ. रामदरश मिश्र लिखते है–''साहित्य का मूल सम्बन्ध मानव की संवेदना से है। संवेदना के बिना साहित्य नहीं बनता। बुद्धि, दर्शन ,ज्ञान विज्ञान सबको पहले जीवन में आत्मसात् होना पड़ता है। आत्मसात् होकर मानव संवेदना का अंत करना पड़ता है। तभी शक्तिशाली साहित्य की सृष्टि होती है। साहित्य सृष्टि की जटिल प्रक्रिया है जिसमें सौन्दर्य, चेतना, भाव–बोध, मूल्य–बोध, जीवन चिंतन, संशिष्ट रूप में प्रस्तुत होते है।''[29]

डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में इतिहास के महान् उन व्यक्तित्वों का अंकन किया है जो अपने युग के महानायक है। इन्होंने उन सभी पात्रों के जीवन को आत्मसात् किया है। उन परिस्थितियों के साथ अनुभूत की गई हर स्तर की संवेदना को परखा है। साहित्य रचना केवल कल्पनागत भावों का नाम ही नहीं अपितु उस शाश्वत सत्य की अभिव्यक्ति है जो अमर भावों एवं मूल्यों की पवित्र धारा है। संवेदना गुण, काल, देश की सीमाओं से परे मानव के ह्दय से जुड़ी रहती है उसका उत्थान, विकास, एवं परिवर्तन मानव की चेतना के साथ ही सम्बद्ध रहता है। डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक महानायकों के माध्यम से अपने साहित्य रचना संसार में संवेदना का सूक्ष्मातिसूक्ष्म अवलोकन किया है। उन्होंने संवेदना के उस स्तर को भी पहचाना है जिसने महानायक को दायित्व बोध कराया है प्रेरणा रूप में प्राप्त उस संवेदना को समझा जिसने युग परिवर्तन कार्य किया है साहित्यकार ने संवेदना के विविध स्तरों को पहचान कर अपने उपन्यास साहित्य में प्रस्तुतीकरण करने का अद्वितीय कार्य किया है। भारत एक अखण्ड राष्ट्र है जिसमें अनेकता में एकता का सूत्र हमारी संवेदना से ही आता है विविध रूप रंग, वेश, रीति, परम्परा आदि होने पर भी सम्पूर्ण भारत की एकता अखण्डित रही है इसके पीछे सबसे बड़ा कारण संवेदनात्मक स्तर पर हमारा भारत एवं भारतीयता के साथ लगाव होना है। राष्ट्र की अस्मिता एवं गौरव के प्रति हम सदैव जागरूक रहे है और रहेगें क्योंकि राष्ट्रीयता के प्रति हमारा विश्वास अमरता को प्राप्त कर सार्वकालिक बन गया है।

डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में इतिहास के महानायकों के साथ उनके संवेदनाजन्य विचारों का प्रस्तुतीकरण भी किया है अतीत वर्तमान को दिशा प्रदान करता है अतः हमें अतीत के उन भाव, विचार एवं संवेदनाओं का ज्ञान होना चाहिए जिसने युगीन परिस्थितियों में संघर्ष किया है संवेदना मूल्यों को जन्म देती है। अतः मूल्यों को समझने के लिए संवेदना को समझना अत्यंत आवश्यक है। डॉ. भटनागर के उपन्यासों में वर्णित इतिहास की घटनाओं, मूल्यों में व्यक्त चिंतन हमें उस काल के संवेदनात्मक विषयों की अनुभूति करता है।

डॉ. भटनागर के उपन्यासों में धर्म, राष्ट्र, मानव, दाम्पत्य, प्रजा, समाज, स्त्री–पुरूष, दलित दाम्पत्य, परिवार, अर्थ, ग्रामीण, संस्कृति, साहित्य, पशु, प्रेम, कर्तव्य आदि के विविध संवेदनात्मक स्तर को उभारने का प्रयास किया है। इनके उपन्यासों में चरित्रों के संवेदना के स्तर को मानव के साथ सम्पृक्ति दी है। महर्षि अरविन्द योगी को दार्शनिक, संवेदना की, स्वामी विवेकानन्द ने भारतीय सांस्कृतिक संवेदना, महात्मा गाँधी की सामाजिक संवेदना, सरदार पटेल की राजनीतिक संवेदना, सुभाष चंद बोस की सुरक्षात्मक संवेदना के साथ कई अन्य विविध स्तरों पर भी संवेदना को परखने समझने का अवसर डॉ. भटनागर ने ऐतिहासिक उपन्यासों में पाठकों को दिया है।

डॉ. भटनागर द्वारा जिन ऐतिहासिक उपन्यासों का सृजन किया गया है वे सब संवेदना के हर स्तर को समझने का अवसर पाठक को देते हैं अपने उपन्यासों जिन तथ्यों मूल्यों एवं भाषा का प्रस्तुतीकरण करते है उन सब का लक्ष्य युगीन संवेदना एवं परिस्थितियों को सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में व्याख्यायित करना है साहित्य और संवेदना का शाश्वत संयोग ही है कि दोनों एक दूसरे के पूरक है। डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में संवेदना का सूक्ष्मातिसूक्ष्म मूल्यांकन कर आत्मसात् किया है। साहित्यकार का साहित्य रचना का उद्देश्य तभी सफल हो पाता है जब वह संवेदनात्मक रूप से हर भाव को अनुभूत कर श्रोता दर्शक पाठक तक पहुँचा सके। डॉ. भटनागर निश्चित रूप ऐसे उपन्यासकार है। जिन्होंने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में संवेदनात्मक स्वरूप को युगीन परिस्थितियों में समझकर सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में प्रस्तुत करने का अद्वितीय कार्य किया है।

किसी विचार, भाव, मूल्य या तथ्य की अभिव्यक्ति के लिए हम किसी साहित्यिक विधा का चयन करते हैं साहित्य में अनेक विधाओं के द्वारा भावों को अभिव्यक्त करने का प्रचलन है। प्रत्येक विधा का अपना एक ढंग या तरीका होता है। जिसे हम विधा की तकनीक या शिल्प कहते है अर्थात् यहाँ शिल्प से तात्पर्य होगा किसी भी साहित्यिक विधा में विचारों, भावों या मूल्यों को प्रस्तुत करने का ढंग साहित्य में हर विधा ने अपनी एक अलग तकनीक एवं शिल्प के सहारे साहित्य जगत् में अपना अस्तित्व बनाते हुए साहित्य का विकास किया है साहित्यकार के समक्ष जब कोई विषय उपस्थित होता है तो वह किसी ऐसी विधा का चयन करता है जिससे उसके विचारों एवं तथ्यों का प्राकट्य सही तरीके से हो सके अतः साहित्य की विधाओं में शिल्प का बहुत महत्व है। शिल्प के माध्यम से ही साहित्यकार अपनी भावना, अनुभूति, संवेदना को प्रस्तुत करने का प्रयास करता है। श्री मिश्र जी ने शिल्प के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि "साहित्य में वस्तुतः की भाँति कला और शिल्प का भी अपना विशिष्ट महत्व होता है। कोई साहित्यिक कृति वस्तु तथा विचार तत्व की वाहिका होते हुए भी एक कलात्मक ईकाई भी होती है। मूलतः वह एक कलात्मक सृष्टि ही है। जो कलाकार की अपनी संवेदनाओं, अनुभवों तथा चिंतन को इस रूप में पाठकों तक संप्रेषित करती है कि पाठक सहज ही उससे एक तादात्म्य

का अनुभव करता हुआ इच्छित आनंद तथा संतोष प्राप्त करता है। कहने की आवश्यकता नहीं कि कला के आवरण में प्रस्तुत की गई संवेदनाएँ तथा विचारकण ही साहित्य को साहित्य बनाते है। और उसे स्थायी महत्व भी प्रदान करते है। साहित्य के अंतर्गत कला और शिल्प दोनों की अपनी महत्वपूर्ण भूमिका होती है।''[30]

हिन्दी में साहित्य के दोनों पक्षों गद्य एवं पद्य में अनेक विधाओं के माध्यम से मानवीय संवेदना एवं उनके पक्षों पर प्रकाश डाला गया है। साहित्यकार को अपने विषय की अभिव्यक्ति के लिए किसी भी साहित्यिक विधा का चयन करने की पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त होती है। डॉ.राजेन्द्र मोहन भटनागर राजस्थान के प्रसिद्ध उपन्यासकार है उन्होंने साहित्य के लेखन में उपन्यास विधा का चयन करते हुए अनेक ऐतिहासिक बोध से सम्पृक्त उपन्यास लिखे है भावों की विविधता और क्रमबद्ध प्रस्तुतीकरण के लिए उपन्यास वृहद् साहित्यिक विधा है इसकी विशेषता इसके आकार में ही है किसी भी पात्र, घटना या यथार्थ का सूक्ष्मतिसूक्ष्म मूल्यांकन के लिए यह विधा अपने आप सर्वविदित है।

1. **डॉ. भटनागर के उपन्यास : कथा शिल्प** – डॉ. भटनागर जी ने अब तक कई उपन्यासों की रचनाएँ की है उनमें ऐतिहासिक, सामाजिक जीवन के विविध पक्षों, सामाजिक सन्दर्भों, धर्म, संस्कृति एवं अन्य कई महत्वपूर्ण प्रसंगों का वर्णन किया गया है। उपन्यासों की दृष्टि से इनके कथानक में इतिहास के प्रसंग एवं संदर्भो का चिंतन अधिक है इनके उपन्यास इतिहास जुड़ी घटनाओं का प्रस्तुतिकरण इतनी सहजता से करते है कि पाठक के चित्त को इतिहास का बोध सरलता से हो जाता है इन्होंने इतिहास से जुड़े तथ्यों को बिना छेड़े उनके साथ भावों की सम्पृक्ति देने में सफलता प्राप्त की है इनके उपन्यासों में इतिहास के महान व्यक्तित्व के जीवन चरित्र को प्रस्तुत किया है। विवेकानंद, महाप्रभु चैतन्य, सूरदास, मीरा, महर्षि अरविन्द योगी, सरदार पटेल, महात्मा गाँधी, सुभाष बोस, महाराणा प्रताप व अन्य कई ऐतिहासिक महापुरूषों की जीवन संघर्ष गाथा को इन्होंने अपने उपन्यासों का विषय बनाया है इन ऐतिहासिक महापुरूषो के जीवन से जुड़े संघर्ष को भावात्मक रूप से प्रस्तुत कर पाठक की चेतना को जागृत करने का सार्थक प्रयास किया है। उपन्यासकार ने कहीं भी कथा को बोझिल नहीं होने दिया है। अपितु उपन्यास पाठक की मनोस्थिति को प्रसंगानुकूल भावों के साथ सम्पृक्त कर कथात्मक प्रस्तुति देने में सफल रहा है। मानवीय मूल्यों की पतनोन्मुख अवस्था ने इनको इतिहास बोध को नवीनता के साथ प्रस्तुत करने की प्रेरणा दी है। मानवीय मूल्यों के साथ इतिहास के गौरव की सुन्दर प्रस्तुति से इनके उपन्यास सत्य, शिवम, सुन्दरम् का प्रतिरूप लगते है।

2. **डॉ. भटनागर के उपन्यास : पात्र योजना** – कथानक के उपरांत औपन्यासिक कृतियों का दूसरा सबसे महत्वपूर्ण भाग पात्र योजना या चरित्र है कोई भी उपन्यास पात्र योजना के बिना अधूरा होता है पात्र या चरित्र के माध्यम से ही उपन्यासकार किसी आदर्श या संघर्ष को समाज या पाठक के समक्ष प्रस्तुत करता है चरित्र के साथ लेखक का चिंतन नवीन प्रेरणाओं के साथ सामंजस्य को प्रस्तुत करने का कार्य केवल पात्र योजना के साथ ही किया जा सकता है डॉ.भटनागर ने अपने उपन्यासों का कथानक इतिहास के महापुरूषों की जीवन गाथा से ग्रहण किया है इतिहास से प्राप्त निष्कर्षों में चरित्र की सृष्टि पूर्व संचित निधि है अतः यहाँ लेखक के समक्ष ऐतिहासिक पात्रों की प्रधानता के मध्य नवीन पात्र योजना बहुत ही कठिन कार्य था ऐसे में कल्पना का प्रयोग उपन्यास की प्रामाणिकता के लिए आत्मघाती सिद्ध हो सकता था परन्तु डॉ. भटनागर ने ऐसी स्थिति का समाधान ढूँढ निकाला है इनके उपन्यासों में पात्रों की सृष्टि में ऐसे पात्रों की नवीन योजना है जो किसी नाम या परिचय के मोहताज नहीं है उपन्यासों में ऐसे पात्र या तो गौण रूप में या अलौकिक दिव्य दृष्टि के रूप में उपस्थित हुए है उपन्यासों में इस तरह का प्रयोग ऊर्जा एवं रोचकता के साथ प्रस्तुत हुआ है डॉ. भटनागर ने इतिहास से छेड़छाड़ किए बिना पात्रों को उपन्यास में स्थान दिया है इनके द्वारा नवीन तथ्यों से रूबरू कराने का प्रयास उपन्यासकार ने किया है।

डॉ.भटनागर ने अपनी कल्पना एवं मौलिक प्रतिभा के सामर्थ्य से इतिहास से जुड़े संदर्भो में उलझे हुए अन्तर्द्वन्द्व को सुलझाने का प्रयास किया है वह अपने आप में अद्‌भुत है ऐसा लगता है लेखक ने आज ही मानव सभ्यता के पीछे की कहानी को दोहराया है वह चरित्रों के माध्यम से समाज की यथार्थ अनुभूति को प्रस्तुत करते है डॉ.भटनागर ने ऐतिहासिक चरित्रों के साथ नवीन चिंतन का सृजन किया है जो समाज को युगों तक प्रेरणा देता रहेगा।

3. **डॉ. भटनागर के उपन्यास : कथनोपकथन** – कथानक एवं पात्र योजना के बाद कथा साहित्य का सबसे महत्वपूर्ण अंग कथनोपकथन या संवाद योजना है संवाद किसी कथा की रोचकता को नवीनता के साथ प्रस्तुत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में संवादों की भावात्मक प्रस्तुति दी है। उपन्यासकार की पात्रानुकूल विचारधारा के साथ संवाद गति प्राप्त करता है डॉ. भटनागर के उपन्यासों का वर्ण्य विषय इतिहास से जुड़ा हुआ है इस कारण उन्होंने इतिहास के संघर्ष को प्रस्तुत करने में संवादों का सहारा लिया है कथनोपकथन इसी बात में है कि वह भावों की संवेदना को प्रकट कर सके और पाठक के चित्त में एक चिंतन को स्थान दे सके अतः डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों की ऐतिहासिकता को सुरक्षित रखा है वे कथनोपकथन की गरिमा को समझते है परिणामतः वे तथ्यों से सम्बद्धता बनाए रखते है संवाद में रोचकता के लिए भावों की संवेदना की मार्मिकता को पाठक के समक्ष अभिव्यक्त करते है।

डॉ. भटनागर ने कथनोपकथन में विषयानुकूल चिंतन, मनन को स्थान दिया है। अतः इनके संवाद पाठक की मानसिक चेतना की निरन्तरता को बनाए रखते है। हर प्रसंग में इनका संवाद समस्त चेतनागत प्रवाह को एक सूत्र में पिरोकर एक श्रृंखलाबद्ध तरीके से पाठक के समक्ष प्रस्तुत करता है। पाठक को संदर्भो के साथ द्वन्द्वात्मक स्थिति से सम्बद्ध करने में कथनोपकथन की महत्वपूर्ण भूमिका है इनके उपन्यासों में ऐतिहासिकता का विशेष ध्यान रखते हुए संवाद योजना को प्रस्तुत किया गया है संवाद योजना के द्वारा इन्होंने चरित्रों में जीवन्तता को संजोया है हर संवाद के साथ एक नवीन सकारात्मक ऊर्जा का संचार पाठक को सरसता प्रदान करता है। लेखक ने मनोवैज्ञानिकता, प्रभावोत्पादकता, संक्षिप्तता एवं रोचकता के द्वारा अपने उपन्यासों में संवाद योजना को जीवन्तता प्रदान की है संवादों ने कथानक की रूकावट एवं बाधा को दूर करके पूर्णता तक पहुँचाने में सहयोग किया है भावों की संवेदनात्मक अनुभूति के द्वारा उत्पन्न करने का सामर्थ्य कथा साहित्य में संवादों को जाता है भावों की संवेदना के लिए संवादों  का प्रसंगानुसार प्रयोग करने की दक्षता डॉ. भटनागर में अद्भुत हैं परिणामतः उनके उपन्यासों में संवाद पाठक के चित्त में नवीन एवं प्राचीन में समन्वय स्थापित करने में सफल रहे है।

4. **डॉ. भटनागर के उपन्यास : देशकाल एवं वातावरण –** देशकाल एवं वातावरण उपन्यास साहित्य का एक महत्वपूर्ण अंग है उपन्यासकार घटना, संदर्भ एवं प्रसंगों के द्वारा राष्ट्र, धर्म, संस्कृति, रीति–रिवाज, परम्परा, प्रकृति एवं क्षेत्र विशेष से जुड़े तथ्यों एवं मूल्यों पर प्रकाश डालता है किसी भी क्षेत्र को समझने के लिए उसके परिवेश एवं वातावरण से जुड़े भूगोल, धर्म, इतिहास, संस्कृति, परम्परा एवं मान्यताओं को जानना बेहद आवश्यक है। डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में देशकाल एवं वातावरण के द्वारा भौगोलिक, राष्ट्रीय, राजनैतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक जैसे अन्य कई तथ्यों का समावेश किया है।

उपन्यासकार ने देशकाल एवं वातावरण को माध्यम बनाकर भारतीय लोक संस्कृति को समझने का अवसर पाठक को दिया है पाठक के समक्ष तत्कालीन समाज एवं संस्कृति से जुड़ी परम्परा एवं मान्यताओं के द्वारा महान व्यक्तित्व के संघर्ष की अनुभवनात्मक संवेदना को स्पर्श किया है कोई भी समय अपनी वर्तमान परिस्थितियों में कठिन होता है भविष्य में प्राप्त होने वाली सुविधाएँ उन्हीं कठिन परिस्थितियों में किये गये संधर्ष की देन है डॉ.भटनागर ने अपने उपन्यासों में वर्तमान समय की गतिविधियों में समाज के परिवेश को अंकित किया है उस समय की प्रचलित मान्यताओं एवं परम्पराओं के द्वारा समाज के मूल्यों को परिभाषित किया है मानव की संवेदना को आहत करने वाले तथ्यों पर प्रकाश डाला है कोई भी कृति बिना देशकाल वातावरण के संभव नहीं है यह साहित्य का एक अनिवार्य तत्व है। लेखक ने पाठक के समक्ष तत्कालीन परिवेश का चित्रात्मक वर्णन कर उसकी रूचि एवं जागृति को चिंतन के लिए अवकाश दिया है। डॉ.

भटनागर ने अपने उपन्यासों में देशकाल एवं वातावरण की प्रस्तुति कथानक के समयानुसार प्रस्तुत की है उपन्यास में चित्रित वातावरण के द्वारा लेखक ने पाठक की समझ एवं संवेदना की स्पर्शात्मक अनुभूति को सम्पृक्त किया है। इनके उपन्यासों में वर्णित घटनाओं एवं प्रसंगों में वातावरण कथा को रोचकता एवं गति प्रदान करता है।

5. **डॉ. भटनागर के उपन्यास : भाषा शैली** – डॉ. भटनागर ने ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना की है इनकी औपन्यासिक रचनाओं में भाषा एवं शैली के कई रूप एवं प्रयोग देखने को मिलते है। इनके उपन्यासों में प्रसंगानुसार भाषा एवं शैली का प्रयोग किया गया है भाषा मानव की विचारात्मक चेतना की अभिव्यक्ति का साधन है भाषा के प्रयोग से अर्थ एवं विषय को सरलता से स्पष्ट किया जाता है डॉ. भटनागर ने अपनी औपन्यासिक रचनाओं में इस तत्व पर विशेष ध्यान दिया है। कहा जाता है कि वाणी में ही रस एवं विष की अभिव्यक्ति होती है अतः यह आप पर निर्भर करता है कि आप क्या अभिव्यक्त करने में सफल रहे है डॉ. भटनागर ने इस तथ्य पर विशेष ध्यान दिया है कि प्रसंग एवं इतिहास की घटनाओं का वर्णन करते समय भाषा कहीं क्लिष्ट एवं अर्थहीन न हो जाए उपन्यास की सफलता में भाषा का महत्वपूर्ण योगदान है भाषा का सही प्रवाह ही प्रसंग को रोचक बनाता है उपन्यासकार ने भाषा के साथ शैली का भी बहुत कुशलता से प्रयोग किया है प्रसंग एवं संदर्भों के अनुसार चित्रात्मक, प्रतीकात्मक, ध्वन्यात्मक, व्यंग्यात्मक आदि शब्दों का प्रयोग किया है। इनकी भाषा में उर्दू, फारसी, अरबी, संस्कृत, देशज, अंग्रेजी के शब्द प्रसंगानुसार प्रयोग हुए है। इनकी रचनाओं में शब्दों की बुनावट ने घटनाओं का प्रस्तुतिकरण सहजता से प्रस्तुत किया है शैली की दृष्टि से भी इनके उपन्यासों में उत्कृष्टता विद्यमान है पत्रात्मक, कलात्मक, आत्मपरक, वर्णात्मक, विवरणात्मक रूप से विषयों का प्रस्तुतिकरण किया है। इनकी शैली प्रसंग एवं संदर्भों के अनुसार परिवर्तित होती रहती है। डॉ.भटनागर के उपन्यासों की भाषा–शैली रोचकता एवं सरलता के साथ पाठक के समक्ष अर्थ को सरल करने की अद्भुत क्षमता रखती है।
6. **डॉ. भटनागर के उपन्यास : उद्देश्य** – डॉ.भटनागर ने इतिहास से जुड़े संदर्भो का प्रस्तुतिकरण किया है इनका लक्ष्य मानवीय मूल्यों से हीन होती जा रही युवा पीढ़ी को चेतना प्रदान करना है इनके उपन्यासों में महापुरूषों की जीवन गाथा एवं संघर्ष को व्याख्यायित किया गया है जीवन की विकट परिस्थितियों में अल्प संसाधनों के साथ जीवन मूल्यों की रक्षा हेतु संकल्पित मानव की महान कार्यात्मक गतिविधियों का प्रस्तुतिकरण हुआ है। साहित्य ने सदैव मनुष्य को आदर्श एवं प्रेरणा ही प्रदान की है।

डॉ. भटनागर को कथा साहित्य का उद्‌देश्य मानव समाज को मानव मूल्यों के प्रति सचेत करना है उपन्यासकार ने वर्तमान पीढ़ी की अवस्था को समझा है। वे मानते की युवा पीढ़ी का संघर्ष का तनाव उन्हें मानवीय मूल्यों से दूर ले जाने की ओर बाध्य कर रहा है अतः उन्होंने

इतिहास से जुड़े संदर्भो को मानवीय मूल्यों के साथ सम्पृक्त कर प्रस्तुत किया है। उद्देश्य की सार्थकता भी यही है कि साहित्य मानव को दिशा देने में समर्थ हो। डॉ. भटनागर द्वारा रचित उपन्यासों ने भूत वर्तमान एवं भविष्य से जुड़ी सार्वकालिक चेतना को प्रस्तुत किया है मानव समाज को इन्होंने मानवीय संवेदना और मूल्यों का बोध इतिहास के माध्यम से कराया है। इनका उद्देश्य मानव समाज में आदर्श एवं मूल्यों की पुर्नस्थापना करना है।

### (घ) डॉ. भटनागर के उपन्यास : समसामयिक संदर्भ

''समसामयिकता का बोध समय का बोध है, अपने वर्तमान का बोध उस क्षण का बोध जिसमें हम जी रहे है। अतएव समसामयिकता वर्तमान बोध है। वर्तमान बोध उस आधुनिकता का ही एक अंग है जिसका प्रारम्भ कुछ वर्ष पूर्व हो चुका है। आधुनिक युग में उत्पन्न होकर और आधुनिक युग की उपलब्धियों एवं असंगतियों पर विचार करके ही हम समसामयिकता बोध को समझ सकते है। क्योंकि समसामयिकता के बोध में आधुनिक युग के वे तत्व शामिल है जिन्होंने समसामयिकता को जन्म दिया है।''[31]

साहित्य सदैव अपने युग का प्रतिनिधित्व करता है अपने समय में घटित घटनाओं की व्याख्या विश्लेषण एवं समाधान प्रस्तुत करता है यह साहित्य का नैतिक दायित्व ही नहीं अपितु इसका साहित्यिक कर्तव्य भी है समय का चक्र निरंतर गतिशील है साहित्यकार की समय की गतिशीलता पर दृष्टि अधिक पैनी होती है साहित्य के माध्यम से युगीन घटनाओं का अध्ययन एवं विश्लेषण निरंतर उसी गति के साथ करता रहता है जिस गति के साथ समय का चक्र चलता रहता है साहित्यकार सदैव मानव से जुड़ी हुई संवेदना को अभिव्यक्ति देने का प्रयास करता है इसी संदर्भ में वह उन तथ्यों की खोज करता है जो वर्तमान समय की सटीक एवं यथार्थ व्याख्या करने में सक्षम है इसी संदर्भ में डॉ.वर्मा लिखते है–''आधुनिकता एक ऐतिहासिक विश्लेषण है जो हमें देश काल का बोध देती है समसामयिकता देश काल के बोध के साथ सक्रियता की भी पुष्टि करती है। जिस भी देश काल में हम है। उसकी सीमाएँ और विस्तार को हम समसामयिकता के यथार्थ द्वारा अनुभव करते है।''[32]

कोई भी युग हो वह साहित्यकार के लिए महत्वपूर्ण होता है देशकाल में घटित हर घटना उसकी लेखनी की कसौटी पर कसी जाना स्वाभाविक है। मुंशी प्रेमचंद कहते है–''साहित्यकार बहुधा अपने देशकाल से प्रभावित होता है जब कोई लहर देश में उठती है तो साहित्यकार के लिए उससे अविचलित रहना असंभव रह जाता है। उसकी विशाल आत्मा अपने देश बंधुओं के कष्टों से विकल है। और इस तीव्र विकलता में वह रो उठता है पर उसके रूदन में व्यापकता होती है। वह स्वदेश का होकर भी सार्वभौमिक होता है।''[33]

साहित्य लेखन सदैव सार्वकालिक मूल्यों को प्रस्तुत करने का प्रयास करता है साहित्य अपने इस दायित्व की पूर्ति आदिकाल से करता आ रहा है डॉ. नगेन्द्र का मानना है—"साहित्य अपने व्यक्त या मूर्त रूप में रचना अथवा कृति है। किन्तु अव्यक्त रूप में कृति के पीछे कृतिकार का व्यक्तित्व और कृतिकार के व्यक्तित्व के पीछे उसका सामाजिक परिवेश रहता है। अतः साहित्य का एक छोर सामाजिक परिवेश के साथ अनिवार्य रूप से जुड़ा हुआ है।"[34]

डॉ. भटनागर एक ऐसे साहित्यकार है जिन्होंने अपने युग की विचारधारा के प्राप्य तथ्यों का तालमेल स्थापित कर सार्वकालिक मूल्यों की व्याख्या समाज के सम्मुख प्रस्तुत की है। इनके लेखन की उपलब्धि यह है कि यह तत्कालीन स्थिति परिस्थितियों का अध्ययन करना चाहते है उपन्यासकार ने अतीत के संदर्भ में जीवन मूल्यों की सार्वकालिक, सार्वभौमिक एवं सर्वव्यापक निष्कर्ष के साथ व्याख्या की है डॉ. भटनागर इतिहास बोध को समसामयिक विचारधारा की स्थापना के लिए आवश्यक ही नहीं अपितु अनिवार्यगत बोध के रूप में स्वीकार करते है।

डॉ. भटनागर समय की नब्ज पर गहरी पकड़ रखते हैं वे अतीत के तथ्यों, मूल्यों एवं वर्तमान युग के साथ सम्पृक्ति सिद्ध करने का स्तुत्य प्रयास करते है इसी कारण उन्होंने अपने साहित्य लेखन में इतिहास के साथ वर्तमान को संदर्भित करने का प्रयास किया है समसामयिक संदर्भों की पहचान कर यथार्थ मूल्यांकन कर एक आदर्शवादी व्यवस्था की स्थापना करना उनका लक्ष्य रहा है मूल्यों की धारा में अनगिनत रूप बदले किन्तु अतीत ने सदैव समसामयिक संदर्भों को सही मार्ग दिखलाने का साहसिक प्रयास किया है इतिहास की रक्षा का दायित्व साहित्यकार अपनी लेखनी पर उठाए तत्कालीन परिस्थितियों पर दृष्टि डालता है तो वह सब परिस्थितियाँ अतीत के साथ परिलक्षित होती है विषय चाहे राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक या कोई अन्य हो केन्द्र में मानव ही होता है मानव को धुरी मानकर समय की घटनाओं का चक्र निरंतर क्रियाशील रहता है।

डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में मानव को केन्द्र में रखकर पूर्णरूपेण अतीत से समसामयिक विषयों का मूल्यांकन करते हुए मानव को दिशा प्रदान करने का प्रयास किया है डॉ. भटनागर अपने साहित्य में समसामयिक मूल्यों की प्रस्तुति करने में सक्षम रहे है इनके उपन्यासों के पात्र समय के साथ सार्वकालिक मूल्यों की व्याख्या करते हुए दिखाई देते है।

डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में समसामयिकता का विशेष ध्यान में रखा है इनका लक्ष्य समाज को दिशा प्रदान करना है अतीत के संदर्भ से तत्कालीन समाज को नवीनता एवं आधुनिकता के साथ जोड़ने का कार्य इन्होंने बड़ी कुशलता से किया है आज के दौर में मनुष्य आधुनिकता की होड़ में पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति का अंधानुकरण करने लग गया है ऐसे समय में जब भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता पर चारों तरफ से हमला हो रहा है तब भारतीय

साहित्यकारों ने अपने दायित्व बोध को समझकर समाज के समसामयिक विषयों को सार्वकालिक चेतना से जोड़कर अपनी रचना धर्मिता का परिचय दिया है। मानव परिस्थितियों से दिशा प्राप्त करता है परिस्थितियाँ समसामयिक प्रसंगों की आधार भूमि तैयार करती है समसामयिक प्रसंग, घटना या मूल्य होते है जो उस समय की परिस्थिति के अनुकूल मानव के व्यवहार में परिलक्षित होते है साहित्य ने हमेशा समसामयिक विषयों पर अपने चिंतन को व्यक्त करने का प्रयास किया है।

समसामयिकता के अध्ययन के संदर्भ में जब हम मानव व्यवहार का अध्ययन करते है तो देखते है कि प्रायः सामयिक विषय सार्वकालिक चेतना के वाहक होते है स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए किया गया संघर्ष वैदिक युग से लेकर आधुनिक युग तक समसामयिक एवं सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्त रहा है मानव प्रारम्भ से स्वतंत्रता प्रिय रहा है जब कभी भी उसकी स्वतंत्रता का अतिक्रमण हुआ है उसने सदैव संघर्ष का सहारा लिया है युग चाहे जो भी रहा स्वतंत्रता एक सार्वकालिक एवं समसामयिक विषय के रूप में उपस्थित रही है हर काल एवं देश की परिस्थितियाँ समय अनुसार परिवर्तित अवश्य रही परन्तु विषय वही रहा है मानव ने हमेशा अपने अधिकारों के लिए संघर्ष किया है। मानव कभी भी अपनी स्वतंत्रता के भाव के साथ समझौता नहीं करता है वह स्वतंत्र है अपने अस्तित्व, अपनी पहचान के लिए और सदैव रहेगा क्योंकि स्वतंत्रता का विषय हर युग में सार्वकालिक एवं सामसामयिक है डॉ.भटनागर ने अपने उपन्यासों में महाराणा प्रताप, महात्मा गाँधी, भीमराव अम्बेडकर, विवेकानन्द, महर्षि योगी, सरदार पटेल आदि महानायकों के जीवन संदर्भों में इस सामयिक विषय की महत्ता पर चिंतन करते हुए मानव के लिए सार्वकालिक चेतना को प्राण तत्व घोषित किया है। महाराणा प्रताप जहाँ अपनी स्वतंत्रता के लिए आजीवन कष्टों से जूझते हुए संघर्ष करते है वहीं महात्मा गाँधी ने अपने अधिकारों की स्वतंत्रता के लिए सम्पूर्ण भारत में आंदोलन किये यद्यपि दोनों महानायकों के समय में सेंकडों वर्षों का अंतराल होते हुए भी विषय समसामयिक एवं सार्वकालिक बना हुआ है। मानव समाज में रहने वाला प्राणी है अतः समाज के क्रिया कलापों में सहयोग एवं व्यवस्था करना उसका परम कर्तव्य है मनुष्य का समाज में हर कार्य के साथ विशेष जुड़ाव रहता वह उसके दैनिक कर्तव्य से जुड़ा होने के साथ साथ उसके परिवार के प्रति विशेष रूप से जुड़ा हुआ है।

हमारे भारत देश की सम्पूर्ण अर्थ व्यवस्था कृषि पर आधारित है अतः मनुष्य के विकास में कृषि का विशेष महत्व रहा है साहित्यकारों ने इन सब के प्रति भी अपने साहित्य में भाव व्यक्त किये है प्रत्येक व्यक्ति अपने परिवार पालन के लिए कोई न कोई कार्य करता है पशुपालन, कृषि, चमड़ा, लकड़ी, सिलाई, बुनाई, वास्तु शिल्प, सैन्य, औषध और भी अन्य कार्य ऐसे है जिनसे उनके परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है मनुष्य का यह नैतिक दायित्व भी है कि वह अपने कार्य के साथ समाज के अर्थचक्र की निरंतरता में सहयोग करता है अर्थचक्र जब तक आदर्श

रूप में संचालित है तब तक मनुष्य संतुष्ट रहता है प्रत्येक काल में चाहे वैदिक हो मध्यकालीन हो, आधुनिक हो आर्थिक विषय समसामयिक के साथ सार्वकालिक भी रहा है युगों से चले आ रही अर्थ व्यवस्था को लेकर कई बार संकट आये परन्तु सदी के महानायकों ने इस संकट का समाधान प्रस्तुत करने का प्रयास किया। युग चाहे कोई भी हो अर्थ एवं श्रम का समन्वय बना रहना चाहिए अर्थ के आधार वैभव एवं प्रतिष्ठा का भाव जाग्रत होता है मनुष्य का स्वाभाविक गुण है कि वह अपनी संग्रह वृत्ति के कारण अर्थ का संग्रह विपत्ति काल के लिए करता है यह प्रवृत्ति मनुष्य की रक्षा के लिए है परन्तु जब यह वृत्ति दूसरे के आर्थिक उपादानों का अतिक्रमण करती है तो शोषित मानव इस के प्रति सजग हो जाता है और क्रांति का सहारा लेता है।

डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में आर्थिक विषय की समसामयिकता एवं सार्वकालिकता पर प्रकाश डाला है उन्होंने अपने उपन्यासों में अर्थ की समस्या एवं समाधान को समाज के लिए प्रस्तुत किया है वो राष्ट्र के निर्माण के लिए अर्थ का महत्व प्रतिपादन ही नहीं करते अपितु उत्पादन एवं अर्थ के विस्तार पर भी बल देते है अर्थ की समस्या राष्ट्र निर्माण की गति में बाधक है क्योंकि किसी राष्ट्र की आवश्यकताओं की पूर्ति में अर्थ का बड़ा योगदान है उपन्यासकार ने अपने उपन्यासों में महाराणा प्रताप, विवेकानन्द, महात्मा गाँधी, सुभाष चंद बोस, सरदार भाई पटेल आदि महानायकों के वक्तव्य से इस समसामयिक एवं सार्वकालिक विषय पर प्रकाश डाला है। महात्मा गाँधी, सरदार वल्लभ पटेल, अम्बेडकर, सुभाष बोस आदि महापुरूषों द्वारा दिये गये अर्थ सन्बन्धी विचारों का प्रस्तुतीकरण अपने उपन्यासों में किया है उपन्यासकार ने जहाँ अर्थ के विषय पर समसामयिक टिप्पणी की वहीं इस विषय की सार्वकालिक चेतना के महत्व को भी प्रतिपादित किया है।

स्वतंत्रता मनुष्य को बहुत प्रिय है मानव अपने आप को बंधनों से मुक्त रखना चाहता है डॉ.भटनागर ने इस सार्वकालिक चेतना को अपने उपन्यासों में बड़ी गम्भीरता के साथ व्यक्त किया है महाराणा प्रताप के स्वतंत्रता संबन्धी भावों की प्रस्तुति जन सहभागिता के साथ की है प्रताप ने अपनी प्रजा का पूर्ण समर्थन पाकर मेवाड़ को परतंत्रता से मुक्त रखा था क्योंकि स्वतंत्रता की लौ सम्पूर्ण मेवाड़ में हर मनुष्य में धधकने लगी थी प्रताप अपनी प्रजा को सम्बोधित करते हुए कहते है–''साथियों, स्वतंत्रता का रास्ता खतरों से भरा और अंतहीन है। वह हमारी जहत्स्वार्थी का प्रतीक है। परन्तु हमें उस तक पहुँच पायेगें अथवा नहीं पहुँच पायेगें। ये दोनों तथ्य उसमें सन्निहित है। स्वतंत्रता को गिरवी रखकर हम सुख वैभव से रह सकते है। स्वतंत्रता से जीवित रहने का अर्थ है। कि हमें अपने प्राणों की आहुति के लिए हर क्षण तत्पर रहना होगा। उसमें हमारी माँ, बहनों, बहुओं को जौहर भी करना पड़ सकता है। और हमें इस अवशेष राज्य से भी वंचित होना पड़ सकता है। वस्तुतया आजादी संकटपूर्ण मार्ग है। इसमें आहुति ही आहुति

है।''[35] डॉ.भटनागर के उपन्यासों में संकटों की स्थिति से सामना करने के लिए अपनी प्रजा को उत्साहित करते हुए स्वतंत्रता की मूल्य चेतना को जागृत किया है।

स्वतंत्रता का कोई विकल्प नहीं है यह हर युग में अपनी ऊर्जा से स्वयं प्रज्ज्वलित होती है 'दिल्ली चलो उपन्यास में  सुभाष ने अपने साथियों का मनोबल बढ़ाते हुए स्वतंत्रता के यज्ञ में प्राणों की आहुति के लिए सभी को सकारात्मक ऊर्जा से ऊर्जस्वित किया था—'' दोस्तों आजादी के लिए सशस्त्र संघर्ष करने का वक्त आ गया है........... सभी तत्वों को संगठित करने तथा शक्ति संचय करने के लिए मैंने अस्थायी आजाद हिन्द सरकार की स्थापना करने का निर्णय लिया है। इस आजाद सरकार का उद्देश्य होगा कि वह भारत की क्रांति को सफल बनाए। इस सरकार का यह दायित्व भी होगा कि वह भारत के भीतर और भारतीयों को शस्त्रों से सुसज्जित करे तथा शस्त्रों के द्वारा ही आजादी अपनी प्रबल महत्वकांक्षा को पूरा करे। भारत पर से अंग्रेजो का प्रभाव समाप्त होते ही अपनी अस्थाई सरकार का कार्यपूर्ण हो जाएगा और उसके बाद भारतवासी अपने लिए एक राष्ट्रीय सरकार की स्थापना करने में सक्षम हो सकेगें।

दोस्तो यह मत भूलो कि हमारा दुश्मन न केवल सबल और सुदृढ़ है अपितु वह निर्दयी तथा अत्याचारी भी है। सन्देह हमारा उसके साथ भयावह और विकराल युद्ध होगा। लेकिन आप इस इम्तहान में डगमगाये नहीं तो आप गरीब और पद दलित देश को आजादी व समृद्धि के मार्ग पर ला खड़ा करेगें।''[36] उपन्यासकार के रूप में डॉ. भटनागर ने देश की इस समसामयिक समस्या का गहन परीक्षण किया है वह राष्ट्र निर्माण की संकल्पना में इस विषय की सार्वकालिकता को प्रस्तुत करते हुए देश को सदैव अपनी स्वतंत्रता एवं सुरक्षा को लेकर एक श्रेष्ठ नेतृत्व का सम्बल प्रदान करते है। वह नेतृत्व कभी चाणक्य, महाराणा प्रताप, सरदार पटेल, महात्मा गाँधी , सुभाष बोस तो कभी कोई और परन्तु अंतिम लक्ष्य सभी का यही था कि जीवन संघर्ष चाहे कितना कठिन क्यों न हो स्वतंत्रता एवं अस्तित्व की रक्षा सदैव होनी चाहिए। डॉ. भटनागर ने इस मूल्य की समसामयिकता एवं सार्वकालिकता को चेतना प्रदान की है।

अर्थ जीवन का महत्वपूर्ण पक्ष है वह जीवन का साध्य है उसी के सहारे मानव अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है अर्थ पर नियंत्रण करना और अपने खजाने भरना शासक एवं शासन को खूब अच्छे से आता है मनुष्य का चिंतन इस समस्या पर सदैव पूर्वगामी रहा है युग चाहे कोई भी हो मानव के इस चिंतन में कभी कोई कमी नहीं आयी है जनता सदैव शासन के चक्र में पिसती हुई शोषण का शिकार रही है। डॉ. भटनागर ने इस विषय को समसामयिक एवं सार्वकालिक माना है। 'नीले घोड़े का सवार' उपन्यास में भी यह चिंतन प्रकट हुआ है जो शासन के नीति एवं नीयत को स्पष्ट करता है ?

''क्यों? यह धमकी किसलिए?

'इसलिए कि महाराणा की आय समाप्त हो चली थी। उन्हें धन दौलत चाहिए।.......... लगान कहाँ से आए? कौन दे? यहाँ था कौन तब.....? ........... जानते हो तेजा की लहलहाती फसल क्यों उजाड़ी गई थी? मेघा की फसल क्यों काट ली गई थी?......... रत्तीदान को मार मार कर पेड़ पर क्यों टांगा गया था?''

''क्यों?''

सबनमें आतंक फैल जाए।....... जान माल तो सबको प्यारी है। ......... राणा का हुक्म सिर माथे.........सबके सब तबाही से बचने के लिए मैदान छोड़कर यहाँ आ बसे। यह कैसा तमाशा है। ..... अब वे हमारी जान माल की रक्षा का दावा कर रहे है।, जो हमारी जान माल के शत्रु बने हुए थे।..... जब हारते है तो सिर पर पाँव रखकर भाग खड़े होते है। तब इन्हें याद नहीं आती जिनकी रक्षा का दावा करके कर वसूलते थे। विजयी भी प्रजा पर ही अत्याचार करता है।........ मतलब यह हुआ कि कोई भी हारे जीते पर असली हार जीत तो प्रजा की ही होती है।''[37] उपन्यासकार ने प्रजा को वह पात्र माना है जिस पर सरकार द्वारा किये गए कार्यो का सीधा असर पड़ता है लगान एवं कर तो प्रजा से वसूला जाता है परन्तु उन्हें दी जाने वाली सुविधा एवं सुरक्षा पर सरकार का कोई ध्यान नहीं होता है उनके ऊपर अर्थ दंड का संकट सदैव मंडराता रहता है लेखक ने इस समस्या को सार्वकालिक एवं समसामयिक मानते हुए इसकी उपस्थिति को अपने लेखन में अभिव्यक्त किया है 'सरदार' उपन्यास में किसानों के ऊपर मनमाने लगान को अनुचित एवं अन्याय पूर्ण बताया है।

''सुना है हाल ही में तालुके का रिविजन सेंटलमेंट हुआ, उसमें ज्यादती हुई है।''

पंखा झलते हुए रतना बाई ने कहा।

'' 22 प्रतिशत की भारी वृद्धि किसको कहते है।''

'' इतनी अधिक वृद्धि क्यों? क्या और तालुकों में भी............। कहते कहते रतना बाई रूक गई।

''नहीं अपने बारंडोली तालुके में।.........प्रतिशोध।...... उलटा सीधा जोड़कर तालुके के जमीन महसूल में 22 प्रतिशत की वृद्धि।''[38] उपन्यासकार ने अपने चिंतन को अर्थ की समस्या तक ही केन्द्रित नहीं किया बल्कि इसके साथ उस समय की राजनीतिक परिस्थितियों का भी मूल्यांकन किया है उपन्यासों में समसामयिक विषय सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्त दिखाई देते है।

डॉ. भटनागर एक ऐसे उपन्यासकार है जिनके उपन्यास लेखन में समस्त विषयों की समसामयिकता सार्वकालिक चेतना से पूर्णतयाः सम्पृक्त है इनके द्वारा जिन मुद्दों को केन्द्र बनाया है वे सब मानवीय मूल्यों से जुड़े हुए है जीवन के संघर्ष में हर काल, युग की गति एक जैसी है

युग की सभ्यता में आवश्यक परिवर्तन हुआ परन्तु उसकी मानसिकता में आज भी वर्णित विषयों की समसामयिकता पूर्व जैसी हैं। डॉ.भटनागर ने ऐसे कई विषयों पर चिंतन समाज के समक्ष प्रस्तुत किया है उपन्यासकार के रूप में समाज से जुड़े मूल्यों को वर्णित करते हुए उसकी सार्वकालिक चेतना को जागृत करने का प्रयास किया है।

स्त्री मानव समुदाय का एक पक्ष है ठीक वैसे ही जैसे पुरुष परन्तु हर काल, हर देश, हर युग में उसको पुरुष की अपेक्षा अधिक संघर्ष करना पड़ा है स्त्री पर अत्याचार की दोहरी मार है स्त्री को त्याग, ममता, समर्पण, प्रेम, सहानुभूति, आदर, सत्कार एवं सहिष्णुता का प्रतीक माना जाता है स्त्री के गुणों का मूल्यांकन पुरूष वर्ग करता है रूप लावण्य पर लार टपकता हुआ मानव उसके बाह्य रूप का ही मूल्यांकन कर पाता है आंतरिक रूप का नहीं डॉ.भटनागर ने अपने लेखन में स्त्री के दोहरे संघर्ष को व्याख्यायित करने का श्रम किया है इनके उपन्यासों में नारी चिंतन समसामयिक एवं सार्वकालिक चेतना का प्रतिरूप है। 'अन्तर्यात्रा' उपन्यास में 'नारी' की सामाजिक एवं मानसिक स्थिति का मूल्यांकन हुआ है मृणालिनी का प्रेम, त्याग, समर्पण सब निराधार हो जाता है उसके स्वप्न बिखरने लगते है वह ह्रदय में उठते भावों के लावा को समेटते हुए अपने चित्त को शांत रखने का प्रयास करती है माँ के समझाने पर वह तलाक जैसे शब्द के तूफान के आगे अपने आप को बेदम महसूस करती हुई कहती है।

'' उससे आगे क्या फिर कोई दूसरा होगा माँ! स्त्री की ओर कितनी परीक्षा! कितना दंड और कितनी अवमानना!''

''हाँ मेरी लाडो, तू सच कहती है। सीता का संपूर्ण सतीत्व अग्नि परीक्षा के बाद भी उसे नहीं संभाल पाया!........ उसकी अग्नि परीक्षा क्यों? पुरूष की क्यों नहीं? कौन होता है। यह पुरूष समाज द्रोपदी को भरी सभा में नंगा करले वाला! ताल ठोंक कर अपनी जंघा पर उसे बैठाने वाला! मेरा सिर चकराने लगता है।''[39]

डॉ. भटनागर ने सभी पक्षों चिंतन एवं विचार करते हुए समाज की व्यवस्था में स्त्री अधिकारों की आवाज उठायी है स्त्री को सदा ही पुरूष वर्ग की भोग लिप्सा का शिकार होना पड़ा है स्त्री के जीवन का यह एक ऐसा पक्ष है जो हमारे समाज को आज भी दूषित किए हुए है प्रश्न की गंभीरता और समसामयिकता हर युग एवं काल में एक जैसी है 'विवेकानंद' उपन्यास में इसी प्रकार के स्वर को चेतना प्रदान की है। राजा अजीत सिंह की सभा में स्वामी विवेकानंद के समक्ष नर्तकी ऐसे ही प्रश्नों का उत्तर माँगती है और स्वामी जी अपने आपको निरूत्तर पाते है।

''क्यों स्वामी जी! क्या इसलिए कि मैं एक मुजरे करने वाली की बेटी हूँ?.........वैश्या हूँ। एक वैश्या को अपने अस्तित्व की रक्षा करने का अधिकार नहीं है।''

नर्तकी के कंटीले तेवरों में व्यंग्य था। वह आगे कह रही थी, ''क्या बता सकते है आप कि स्त्री को दोयम दर्जे का नागरिक क्यों बनाया गया? किसने बनाया?

आप उनका साथ दे सकते है पर एक वैश्या की लड़की का नहीं?...... क्या आप इसी तरह एक उन्नत और स्वस्थ समाज की नींव रख सकेंगें?''

वह मैं नहीं जानता।''

''वह मैं जानती हूँ, संन्यासी!........ दर्द मुझे हो रहा है और मैं अकेली उन भेड़ियों का कुछ नहीं कर सकती।.......... भेड़ियों को समाज की उन्नति का दायित्व सौंपकर आप कुछ अच्छा नहीं कर रहे है।''

''मुझे चलना चाहिए।''

''जाइएगा , पर मेरी पूरी बात सुने बिना नहीं, स्वामी जी, यह मेरी आपसे करबद्ध विनती है।''

उसने हाथ जोड़कर कहा।

स्वामी विवेकानंदजी का मन पसीजने लगा। कौन है उसका? क्या वह हमारे समाज का जीता जागता कोढ़ नहीं है।,

''कौन मुक्ति दिलाएगा उसे? राजा अजीतसिंह सोच रहा था। इस समस्या का किसी के पास हल नहीं है और न कभी होगा। स्वामी जी भी निरूत्तर है।''[40] डॉ भटनागर ने स्त्री चेतना के साथ जिस विषय को उठाया है उसने समाज के दोहरे चरित्र को प्रस्तुत किया है। स्त्री को उसके अस्तित्व को सुरक्षित रखने का प्रयास ही उसका अपना संघर्ष है अपने स्वत्व को खोकर वह मूक समर्पण की मूर्ति बनी हुई है। उसे भोग्या का उपकरण मानने वाले पुरूष समाज से मुक्ति आज तक नहीं मिल पाई है। वर्षो से चला आ रहा यह संघर्ष समसामयिक एवं सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्त है।

धर्म ऐसा विषय है जो हर युग, हर काल, में समसामयिक एवं सार्वकालिक रहा है मानव समाज का जीवन व्यवहार इसी से व्यवहृत होता है डॉ. भटनागर को विषयों को बारीकी से समझने में महारत हासिल है इसी कारण वह उन पक्षों पर भी विचार करते है जो मानव जीवन की सार्थकता एवं समय बोध को परिभाषित करती है धर्म से जुड़े तथ्यों पर विचार करते हुए मानव पर इसके प्रभाव एवं परिणाम की समीक्षा उपन्यासकार ने अपने उपन्यासों में की है धर्म शासन के स्थायित्व का आवश्यक तत्व बन गया था कारण स्वरूप धर्म के साथ जनता का जुड़ाव होना सत्ता के लिए आवश्यक था स्वार्थी लोगों की स्वार्थ सिद्धि ने धर्म की मानवीयता को समाप्त कर उसे शासकीय बनाने का प्रयास किया डॉ. भटनागर ने इसकी समीक्षा की और धर्म प्रचार की

अपेक्षा धर्म परिवर्तन करने वाले तत्वों को वर्णित किया है। वे जानते है धर्म के मानवीय मूल्य सभी धर्मो में एक जैसे है। परन्तु कुछ लोग धर्म प्रचार न करके धर्म परिवर्तन की चाल चल रहे है जिससे उनके स्वार्थो की सिद्धि हो सके। डॉ. भटनागर ने ऐसे विषयों पर प्रकाश डाला है। 'गौरांग' उपन्यास में एक चिंतन है।

''मेरी भोली पंडिताइन, बात इतनी सी नहीं है। हमारे धर्म पर आक्रमण हो रहे है।

अपने हिन्दु भाइयों को धन,बल और छल से मुसलमान बनाया जा रहा है।''

'' बनाने दो, हम तो नहीं बन रहे है। और न मरते दम तक बनेगें। जो बन रहे है, उनकी वे जाने।''

''नहीं री, पंडिताइन, इस वक्त अपना देश खतरे में है।, गाँव के गाँव मुसलमान हुए जा रहे है।

''अपने यहाँ तो कोई मुसलमान नहीं हुआ ना'' शची देवी ने सोचते हुए कहा

''ये बात बहुत गहरी है।''

''होगी, तुम तो अपने निमाई की सोचो।''

'' और क्या सोंचू, उसने अपने कहे से टोल जाना बंद कर दिया।''

''यह अच्छा नहीं हुआ जी।''

'' कौन कहता है वह बाबा''

''तू बाबा बाबाओं के चक्कर में न आ। आजकल इस्लाम मजहब के खैर ख्वाह मुल्ला मौलवियों ने बहुरूपिया बाबाओं की फौज मैदान में उतार दी है ताकि वे अपने भाइयों को गुमराह कर उन्हें इस्लाम की और खींच लाए।''[41]

धर्म से जुड़ा यह मुद्दा हर युग की समस्या है जिससे मानव समाज आज भी उससे मुक्त नहीं हो सका है डॉ. भटनागर ने इस समस्या की गहराई का परीक्षण किया है। वे अपने धर्म की वास्तविकता से परिचय करने के लिए मानव को प्रेरित करते है। 'विवेकानंद' उपन्यास में वे इस तथ्य प्रकाश डालते है यही तो हमारे देश का दुर्भाग्य है कि यहाँ छद्म तथा मिथ्या प्रचार से यह फैलाया जा रहा है कि उनकी दुर्गति और अधःपतन का कारण हिन्दू धर्म है यह सोचा समझा धिनौना कुत्सित और निर्मम प्रचार है ताकि व्यक्ति अपने आप से धृणा कर उठे और मजबूरन या लोभवश अन्य धर्म की शरण में आ जाए।........... धर्मान्तरण के लिए विवश करना करवाना उस धर्म के पतन का लक्षण है।....... तत्व को व्यावहारिक आचरण नहीं बनने देना ही इस दुर्गति का मूल कारण है।'' विवेकानंद का स्वर मध्यम था परन्तु उनका चिंतन उग्र और

गहरा था जो भारत में चलाए जा रहे ईसाई संस्थाओं के षडयंत्र की ओर सीधा इशारा था।''[42] उपन्यासकार ने धर्म की स्थिति पर गम्भीरता से विचार किया है वे मानव को अपने धर्म की बुराइयों को नष्ट करने के लिए प्रेरित करते है। वे धर्म परिवर्तन के विचार को पूर्णतयाः निकृष्ट कोटी का विचार स्वीकार करते है क्योंकि धर्म मानव की आस्था का विषय है और उसकी सार्वकालिकता स्वतः सिद्ध है। डॉ. भटनागर ने इस विषय की सार्वकालिक चेतना एवं समसामयिकता को लेकर अभिव्यक्ति अपने उपन्यासों में दी है।

## (ङ) डॉ. भटनागर के उपन्यास : चरित्रगत विविध स्वरूप

भारतीय दर्शन सत्य, अहिंसा एवं सर्वे भवन्तु सुखिन, एवं वसुधैव कुटुम्बकम् की महान् विचार धारा का पालक है समस्त विश्व में अपने दार्शनिक विचारों के द्वारा ख्याति प्राप्त कर विश्व गुरू की उपाधि के पीछे हमारी महान आध्यात्मिक एवं दार्शनिक विचार धारा का ही मूल में रही है भारत का दर्शन वेद,उपनिषद, पुराण, श्रीमद्भागवतगीता जैसे महान ग्रंथों से निकलकर पूरे विश्व को अध्यात्म एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण को प्रदान करने वाला है मानव को महानायक बनाने वाले गुणों का प्रकाशन इन्हीं दार्शनिक तत्वों का प्रभाव है हमारे ऋषि मुनियों ने जिन तत्वों को अपने दर्शन में शामिल किया वे किसी एक युग में ही मान्य नहीं रहे अपितु वे हर युग में सार्वकालिक चेतना के रूप में उपस्थित रहे।

डॉ भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों के पात्रों में दार्शनिक चिंतन एवं चरित्र को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है इनके उपन्यासों के महानायक सार्वकालिक चेतना के स्परूप को दार्शनिक भावों के साथ प्रस्तुत करने में सफल हुए है। उपन्यासकार ने महर्षि अरविन्द और नंदिनी के संवाद में दार्शनिकता का परिचय दिया है ''यह आपकी दार्शनिकता है, अरविन्द।''

''दर्शन सत्य का स्वभाव है, नंदिनी।'' इस बार अरविन्द के मुख मंडल पर सहज मुस्कान उभर आई। उनकी आंखों में ज्योति गहराई और खखार कहने लगे, ''एक बात तो स्पष्ट है कि तुम मुझसे लड़ने के लिए पूरी तैयारी से भेजी गई हो, बेटी।''

नंदिनी अय्यर कुछ सकपकायी। उसने तुरंत अपने को संभाला। वह कुछ कहने को हुई कि अरविन्द बोल पड़े, ''हर प्रश्न उत्तर के लिए नहीं होते।......देखा जाए तो अधिकांश प्रश्न इसी कोटि में आते हैं। इन्हीं से भेदाभेद, गैर बराबरी और असमानता के प्रश्न उठते हैं और ये परस्पर भी लड़ते हैं......जानती हो प्यार तकरार नहीं चाहता। वह तो सुगंध है, अशरीरी है। उसके होने का मतलब है मिस्री। मिस्री को तोड़ते जाओ, तोड़ते जाओ और इतना तोड़ो कि वह चूरा हो जाए। फिर भी चखो तो वह वही मधुर मिठास लिए होगी जो वह पहहले लिए थी–तनिक सी भी उसममें कूटने–पिसने की कड़ुवाहट नहीं होगी, बेटी।''

नंदिनी को बेटी ने घेर लिया। संबंधों की आंतरिक जजीर ऐसे जकड़ने लगती है कि फिर कोई उससे बाहर निकलना चाहे तो संभव नहीं है, मात्र छटपटाहट के।''[43]

भारतीय सनातन धर्म संस्कृति, एवं सभ्यता से प्रेरित दार्शनिक विचारों की भाव भूमि में सार्वकालिक चेतना का इतिहास साक्षी रहा है। प्रामाणिक रूप से ऐतिहासिक महानायकों को दार्शनिक तत्वों ने प्रभावित किया है। डॉ भटनागर ने अपने उपन्यासों में किसी पात्र को काल्पनिक आधार पर प्रस्तुत करने का प्रयास नहीं किया अपितु पूर्ण इतिहास बोध एवं दार्शनिक तत्वों के आधार पर प्रस्तुत किया है। इनके पात्र जिस सार्वकालिक चेतना के वाहक है वह कहीं ओर से नहीं आयी है वह अपनी ऊर्जा भारतीय दर्शन से ही प्राप्त कर रही है।

डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में महापुरूषों का दार्शनिक पृष्ठभूमि के आधार प्रस्तुतिकरण किया है उपन्यासकार ने महापुरूषों के चरित्र में भारतीय दार्शनिक चेतना के तथ्यों को सार्वकालिक चेतना के संदर्भ प्रस्तुत किया है। महर्षि अरविन्द योगी, विवेकानन्द, मीरा, चैतन्य महाप्रभु, महात्मा गाँधी, सरदार पटेल, सुभाष चन्द बोस, अम्बेडकर, आदि पात्र विशुद्ध दार्शनिक स्वरूप एवं विचारधारा को प्रस्तुत करते हुए परिलक्षित होते है। सत्य, अहिंसा, योग, शिक्षा, समाज, संस्कृति, भक्ति, आध्यात्म, प्रेम, सहिष्णुता, सद्भाव, भाईचारा, नैतिक दायित्व एवं कर्तव्य आदि तत्व भारतीय दर्शन की विचारधारा से ही प्रसूत होते है जिनसे आधार ग्रहण कर मानव महानायक बनता है।

डॉ भटनागर के उपन्यासों में ऐतिहासिक पात्रों का विविध चरित्रगत स्वरूप देखने को मिलता है इनके उपन्यासों में समाज से जुड़े कई संदर्भों में पात्रों का जीवन चरित्र व्याख्यायित किया गया है उपन्यासकार ने समाज में रहकर किये गये संघर्ष का विरोध समर्थन, चेतना, सफलता, असफलता, परिस्थिति आदि के युग्म अंर्तद्वन्द्वों में उलझते सुलझते विचारों की श्रृंखला में गुथे हुए चरित्र को समाज के विभिन्न स्तरों पर रूपायित करने का स्तुत्य प्रयास किया है समाज में रहकर व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का निर्माण समाज के नियमों से प्रेरित होकर करता है भारतीय समाज जीवन के विविध स्तरों पर अलग अलग स्थिति को दर्शाने का प्रयास करते है।

डॉ. भटनागर के उपन्यासों के पात्र अपने युग के संघर्षशील नायक है इन पात्रों ने अपने सामाजिक जीवन में विविध स्तरों पर विविधता से संघर्ष किया एवं दायित्व का निर्वाह करते हुए समाज के विकास ,उत्थान एवं परिवर्तन के लिए कार्य किया है। डॉ. भटनागर ने 'युग पुरूष अंबेडकर' उपन्यास में भारतीय समाज पर चिन्तन व्यक्त किया है ''भीमराव सामाजिक और धार्मिक अन्याय और अत्याचार के कारण खोजते रहते। आज़ादी चाहने वाले अपनों के प्रति कितना जुल्म ढा रहे हैं, वह किसी से छिपा नहीं था। दो हजार वर्ष से चले आ रहे सवर्ण हिन्दुओं के छल–प्रपंच की पोल खोलकर उपेक्षित और अछूतों को उनका सामाजिक सम्मान दिलाकर समान

धरातल पर लाना चाहते थे। इसके लिए निरन्तर प्रयत्न करते और अपंग समाज को सामर्थ्यवान् बनाना चाहते थे।''[44] हमारा समाज भारतीय सनातन संस्कृति एवं सभ्यता का अनुसरण करने वाला रहा है हमारे नैतिक गुणों को बाहरी आक्रान्ताओं ने हमारी कायरता समझा और लगातार हमारे ऊपर आक्रमण हुए हमारी सामाजिक व्यवस्था को नष्ट भ्रष्ट करने का प्रयास किया गया। हमारे समाज के मूल आदर्शो के साथ छेड़छाड़ की गई परिणाम स्वरूप हमारे समाज में विभिन्न बुराइयाँ भी प्रवेश कर गई उपन्यासकार ने हमारे समाज की विभिन्न अवस्थाओं से गुजरने वाले महापुरूषों के जीवन चरित्र को पुनर्व्याख्यायित करने का प्रयास किया है।

डॉ. भटनागर समाज की स्थिति का अवलोकन ही नहीं अपितु संघर्ष के दौरान आने वाले विचारों के द्वन्द्व को भी अभिव्यक्त करने का प्रयास करते हैं समाज में व्याप्त बुराइयों जैसे छूआछूत, सती प्रथा, बाल विवाह, ऊँच नीच, साम्प्रदायिकता, विलासिता, शराब, जुआ, परस्त्रीगमन, पर्दाप्रथा, अंधविश्वास, अकर्मण्यता आदि पर उपन्यासकार ने पात्रों के विविध स्तरों को परिलक्षित करने का प्रयास किया है। ऐतिहासिक उपन्यासों के नायक अपने युग के युग पुरूष हैं उनके जीवन चरित्र में विभिन्न सामाजिक स्थितियों के उतार चढ़ाव के साथ चरित्र को प्रस्तुत करने का कार्य उपन्यासकार ने किया है।

भारत एक ऐसा देश है जहाँ विभिन्न प्रकार की जीवन संस्कृति के कई रंग अपने अलग–अलग स्वरूप में दिखाई देते है इन सब में अलग अलग जीवन संस्कृति के प्रति जिस आस्था एवं श्रद्धा का भाव है वह भाव हमारे राष्ट्रीय प्रेम का प्रतीक है। हम भारत के नागरिक है और भारत के लिए एकता और अखण्डता के सभी सिद्धान्तों का पालन मन कर्म वचन से करते रहे है। हमारा भारतवर्ष एक सम्प्रभु राष्ट्र है राष्ट्र निर्माण के संकल्प का भाव किसी नवीन रूप में हमारे समक्ष अचानक से प्रकट नहीं हुआ है यह युगों–युगों से चली आ रही उस सार्वकालिक चेतना की जीवन्त धारा है जिसने क्रांति से शांति की स्थापना में सहयोग दिया है।

डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में वर्णित राष्ट्रीय विचार एवं चिंतन को महापुरुषों के जीवन चरित्र के साथ सम्पृक्त किया है। राष्ट्र निर्माण की भूमिका में उन महान नायकों के जीवन संदर्भ में आने वाले संघर्ष एवं परिस्थितियों का चित्रण कर पाठक चित्त में राष्ट्रीय विचारधारा की सार्वकालिक चेतना को स्पष्ट करने का प्रयास किया है राष्ट्र निर्माण के पीछे की जो कहानी, त्याग, बलिदान और सर्वस्व समर्पण की है उस कहानी के विभिन्न पहलुओं को दिखाने का कार्य उपन्यासकार ने किया है मानव की सामान्यतः धारणा है कि मानव का आकलन परिणाम के आधार पर तय होता है। उसके व्यक्तित्व का निर्णय सद्‌गुणों के साथ ही होता है। विचारों की श्रेष्ठता का और इन सबके पीछे उनके संघर्ष, त्याग, बलिदान, समर्पण, कर्तव्य, दायित्व एवं विभिन्न परिस्थितियों में आने वाले भावों की व्याख्या करने का कार्य महान उपन्यासकार ने किया है। डॉ भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में राष्ट्र निर्माण के साथ

उन सपनों की भूमिका को भी प्रस्तुत करने का प्रयास किया है जो महापुरूषों ने अपने मन में संजोए थे कोई भी चरित्र महान होने के लिए कतई प्रयास नहीं करता है महानता प्राप्त होती राष्ट्र निर्माण के लिए किये गये प्रयासों से मानव को महानायक बनने का अवसर उसके दायित्वों से प्राप्त होता है।

डॉ. भटनागर ने अपने पात्रों के ऐतिहासिक बोध के साथ उनके राष्ट्रीय विचारों को भी प्रस्तुत किया है वे अपने उपन्यासों में कई प्रकार से राष्ट्रीय प्रेम की अभिव्यक्ति करने में सफल रहे है उन्होंने अपने पात्रों के राष्ट्रवादी विचारों के साथ भारतीय जनमानस को भी जोड़ा है। महाराणा प्रताप के साथ उनकी प्रजा का भी स्वतन्त्रता के महायज्ञ में अतुलनिय योगदान है ''उसे याद है यह भीलिनी.....। वह मुखिया की इकलौती लड़की थी। पानी भरकर लाट रही थी। उसे शाही सेना पकड़कर ले आयी थी शाहबाज खान के सामने।

प्रताप के परिवार का उसके साथ पारिवारिक सम्बन्ध हो गया था। प्रताप को मालूम पड़ा तो उसका खून खौल उठा। परन्तु वह क्या करें ?

धन्य है, भीलों का वह मुखिया, जिसने उससे कहा था—महाराणा, आप चिन्ता नहीं करें। मुझे इसकी चिन्ता नहीं है कि मैंने अपनी लड़की खोई है। आप जिस प्रतिष्ठा तथा उद्देश्य के लिए इतनी बड़ी कुर्बानी कर रहे हैं उसके सामने तो यह कुछ भी नहीं है। यह तो मेरा अहोभाग्य है कि मुझे आपकी सेवा करने का एक मौका मिला। मैं जानता हूँ कि मेवाड़ की इस पवित्र भूमि के लिए मेरी लड़की शहीद हो गई। उसका शहीद हो जाना क्या उसके जीवन की सार्थकता के लिए पर्याप्त नहीं है। यह तो अवसर उन लोगों के जीवन में आया है, जिन्होंने पिछले जन्म में बहुत पुण्य किये हों। मृत्यु का इससे बड़ा क्या सम्मान हो सकता है।......आशा है, आप इस ओर अब कतई नहीं सोचेंगे।''[45] डॉ भटनागर ने अपने उपन्यासों में राष्ट्र निर्माण की भावना को प्रस्तुत करने के लिए ऐतिहासिक महापुरूषों के जीवन चरित्र को माध्यम बनाया है भारत जैसे विशाल भू—भाग को एक राष्ट्र के रूप में सुरक्षित रखने की सार्वकालिक चेतना को प्रस्तुत करने का सार्थक प्रयास किया है राष्ट्र एक संकल्प है जो प्रत्येक मानव को अपने पवित्र कर्तव्य एवं दायित्व का बोध कराता है।

भारतीय जनमानस में धर्म का विशेष महत्त्व है यह प्रत्येक काल में सर्वसम्मत भी रहा है समाज की नीति नियमों की पालना के लिए आवश्यक है कि धर्म के प्रति मानव सजग रहे है। जब कभी समाज के नैतिक आदर्शों की बात आती है तो धर्म की भूमिका से आधार ग्रहण कर चर्चा होती है। धर्म ने हमारे चरित्र में अपना स्थान बना लिया है और हमारे जीवन चरित्र पर भी इसका प्रभाव पूर्ण रूप से दृष्टिगत होता है। डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में जिन महापुरूषों के जीवन चरित्र को प्रस्तुत किया है। उन सभी महान व्यक्तित्वों ने अपने धर्म से

आधार ग्रहण किया है। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक महान व्यक्तित्वों की सफलता के पीछे धर्म पालन की विचारधारा ही मूल में रही है। भारतीय वेद एवं अध्यात्म से मानव को एक सार्वकालिक चेतना प्राप्त होती है जो उसे सही गलत का निर्णय करने का विवेक प्रदान करती है उचित अनुचित का निर्णय में हमेशा मानव ने धर्म का ही आश्रय लिया है धर्म करणीय एवं अकरणीय दायित्व का बोध कराता है। 'गौरांग' उपन्यास में उपन्यासकार ने धर्म पर चर्चा करत हुए सन्यास और गृहस्थ में भक्ति, दर्शन पर दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है "तू अवधूत है। सद्गृहस्थ रहकर भी तू अवधूत ही रहेगा, रे नित्य। स्मरण रखना निष्काम कर्म वासना शून्य होती है। यह भी एक प्रकार का तप है, जिसकी परीक्षा गृहस्थ बनकर ही दी जा सकती है। क्या तू यह सोचता है कि हरि भगत होने के लिए सब सिर मुड़ा–मुड़ाकर संन्यासी बन जाएं !......नहीं रे, नहीं। फिर घर कहाँ रहेंगे ? घर नहीं रहेंगे तो फिर सत्समाज क्या होगा ? तू सोचता है कि समाज व्यवस्था को तले में बैठा दें ? फिर तेरा–मेरा कृष्ण–कान्हा क्या करेगा ? जा, रे, इस द्वन्द्व चक्र को लाँघ जा, ये तेरे कृष्ण का आदेश है। वह जो चाहता है, वही तो करना होगा। भक्ति में स्त्री–पुरूष का द्वैत नहीं रहता। घर–निर्जन एकमएक हो जाते हैं। तू तरकश से तर्क के बाण खोज–खोजकर ना चला। तू जाने की तैयारी कर और अपनी मण्डली को साथ ले जा। बीस–पच्चीस दिन में तू यहाँ से नवद्वीप पहुँच जाएगा।"[46]

डॉ. भटनागर ने उपन्यासों में ऐतिहासिक व्यक्तियो को धार्मिकता से जोड़ते हुए इसकी आवश्यकता एवं सार्वकालिकता को चित्रित करने का पूर्ण प्रयास किया है। विश्व धर्म संसद हो चाहे भारत के किसी गाँव शहर का चौराहा या गली मानव समुदाय धर्म के अनुसार व्यवहार करता हुआ ही अभिप्रेत होता है। मानव का अपने समाज, देश, राष्ट्र के प्रति क्या कर्तव्य एवं दायित्व है ? उसे किस प्रकार किन परिस्थितियों में उनका पालन करना है ? उसके आदर्श उसे किस प्रकार प्रेरणा देते हुए आज भी प्रासंगिक एवं सार्वकालिक बने हुए है यह उसका धार्मिक चरित्र ही प्रस्तुत करता है डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों के पात्रों में जिस धार्मिक चरित्र को प्रस्तुत किया है वे उच्च एवं श्रेष्ठ धार्मिक चरित्र की व्याख्या को प्रस्तुत करते है। सत्य, अहिंसा, वचनबद्धता, 'सर्वेभवन्तु सुखिन' आदि भावों के साथ चरित्रगत स्वरूप दिखाने का सफल प्रयास उपन्यासकार ने किया है धर्म के प्रति आस्था ही मानव के स्वरूप एवं चरित्र को व्याख्यायित करती है। एक महानायक का अपने देश एवं राष्ट्र के प्रति जो दायित्व भाव हमें देखने को मिलता है वह धार्मिक चरित्र का ही प्रस्तुतीकरण है। अतः डॉ.भटनागर ने उपन्यासों के पात्रों में धार्मिक चरित्रगत स्वरूप को भी दिखाकर मानव के संघर्ष को विभिन्न परिस्थितियों में अजेय रहने का मार्ग प्रशस्त कर समाज को नवीन दिशा दी है।

डॉ. भटनागर हिन्दी भाषा में एक ऐसे उपन्यासकार है जिन्होने अपने पात्रों में प्रत्येक भाव की गहराइयों को समझकर चरित्र में उसकी सृष्टि करने में सफलता प्राप्त की है भारतीय

संस्कृति में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को पुरूषार्थ माना है। 'अर्थ' मानव के लिए उतना ही आवश्यक है जितना धर्म है। उपन्यासकार ने अर्थ की समस्या का चित्रण करते हुए मानव के जीवन संदर्भ में उसके महत्व एवं प्रभावों का भी कुशलता से प्रस्तुत किया है कोई भी मानव अपने जीवन में बिना अर्थ के अपने दायित्वों का पालन करने में असहज रहता है भारत प्राचीन काल से धन धान्य से पूर्ण एक वैभवशाली देश रहा है यहाँ की सभ्यता एवं सम्पदा अन्य देशों के आकर्षण का केन्द्र रही है 'सोने की चिड़िया' और 'विश्व गुरू' की उपाधि से विभूषित इस देश को कालान्तर में आर्थिक समस्या का सामना भी करना पड़ेगा इसकी संभावना भी नहीं थी परन्तु इस देश की भव्यता एवं वैभव को विदेशी आक्रांताओं की ऐसी नजर लगी की लगातार होने वाले कुठाराघात से हमारी अर्थव्यवस्था एवं सामाजिक व्यवस्था चरमरा गई। भारत एक कृषि प्रधान देश है कृषि हमारे जीवन चक्र का आधार है प्रकृति का प्रदत्त उपहार है संयमित उपभोग हमारी संस्कृति है अतः एक कृषक प्रधान देश की सम्पूर्ण अर्थ व्यवस्था का आधार कृषि ही है।

डॉ.भटनागर ने उपन्यासों के ऐतिहासिक महानायको के साथ जिस आर्थिक समस्या का चरित्र और चित्र प्रस्तुत किया है वह आज भी सार्वकालिक चेतना की जीवन्त विचारधारा को अभिव्यक्त करता है। डॉ.भटनागर ने उपन्यासों के माध्यम से भारत के आम आदमी, किसान, मजदूर, कर्मचारी आदि से सम्बन्धित समस्याओं का चित्रण अपने उपन्यासों के पात्रों के चरित्र के साथ सम्बद्ध किया है। इनके उपन्यासों में जिन महानायकों के जीवन चरित्र को आधार बनाया गया है वे अपने चिंतन में इनकी आर्थिक समस्या के विभिन्न स्वरूपों की व्याख्या करते है इनके पात्रों ने अपने जीवन काल में अर्थ का प्रभाव, अनुभव, मूल्यांकन एवं समाधान प्रस्तुत करते हुए प्रगतिशील राष्ट्र  की कल्पना को साकार करने का सफल प्रयास किया है हमारे कुटीर लघु उद्योग, हस्तकला, कारीगरी, कृषि आदि से जुड़ी हर समस्या को चरित्रांकन करने में सफलता प्राप्त की है। विवेकानन्द, महात्मा गाँधी, महाराणा प्रताप, सरदार पटेल, अम्बेडकर आदि महापुरूषों के चरित्रों में आर्थिक पक्ष का प्रस्तुतीकरण बड़े सहज एवं सरलता से किया है।

♦♦♦♦

## सन्दर्भ सूची


1. समकालीन हिन्दी उपन्यास कथा विश्लेषण– प्रेमकुमार, इन्दु प्रकाशन (1983), पृ. 24
2. उपन्यास की स्थिति एवं गति – चंद्रकांत बांदिवडेकर, पूर्वोदय प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 02
3. हिन्दी उपन्यास और यर्थाथवाद–डॉ. त्रिभुवन सिंह, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय वाराणसी, (1960), पृ. 81
4. आधुनिक हिन्दी गद्य शैली का विकास–डॉ. श्याम वर्मा, ग्रंथम रामबाग कानपुर, (1971), पृ. 213
5. साहित्यिक निबंध–गणपति चंद्र गुप्त, लोक भारती प्रकाशन, (1999), पृ. 414
6. मानक हिन्दी कोश पहला खण्ड सं.रामचंद्र वर्मा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, पृ. 363
7. हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन–डॉ. गणेशन राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, पृ. 30
8. काव्य के रूप बाबू गुलाब राय पृ. 162
9. हिन्दी उपन्यास : उद्भव और विकास हेतु भारद्वाज पंचशील प्रकाशन जयपुर (2005), पृ. 24
10. साहित्य संदेश – आधुनिक उपन्यास, पृ. 05
11. आलोचना – सं. मधुरेश, पृ. 17
12. हिन्दी उपन्यास –सं सुषमा प्रियदर्शनी, राधाकृष्णन प्रकाशन, (1998) पृ. 13
13. हिन्दी उपन्यास सिद्वान्त और समीक्षा, डॉ. मक्खन लाल वर्मा, प्रभात प्रकाशन , दिल्ली, पृ. 263–264
14. अमृतलाल नागर की कथादुष्टि से समाजशास्त्री आयाम – डॉ. सरोज सिंह, राका प्रकाशन, इलाहबाद, (2007), पृ. 77–78
15. हिन्दी उपन्यास का इतिहास – डॉ. गोपाल रॉय, राजकमल प्रकाशन, पृ. 24
16. साहित्य विधाएँ –डॉ. शशीभूषण सिंहल, आधुनिक प्रकाशन दिल्ली, (2002), पृ. 76
17. हिन्दी उपन्यास और यर्थाथवाद–डॉ. त्रिभुवन सिंह, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय वाराणसी, (1960), पृ. 06
18. हिन्दी उपन्यास : उपलब्धियाँ–डझ्ॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय राधाकृष्णन प्रकाशन दरियागंज नई दिल्ली 1970, पृ. 11
19. हिन्दी उपन्यास : प्रेमचंदोत्तर काल ऋषभचरण जैन एवं संतति नई दिल्ली 1981
20. निराला के साहित्य में सामाजिक चेतना–डॉ. सुरेश शर्मा, पृ. 16 / 17
21. युग पुरूष अम्बेडकर – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड संस, (2011), पृ. 29
22. अमृतघट– राजेन्द्र मोहन भटनागर, इरावदी प्रकाशन, दिल्ली (2000), पृ. 60

23. अर्न्तयात्रा – राजेन्द्र मोहन भटनागर, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृ. 86
24. दिल्ली चलो – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2009), पृ. 138–139
25. समकालीन संवेदना और हिन्दी नाटक – शेखर शर्मा, भावना प्रकाशन दिल्ली, पृ. 26
26. हिन्दी उपन्यास युग चेतना और पाठकीय संवेदना– मुकुन्द द्विवेदी, लोक भारती प्रकाशन, पृ. 5
27. हिन्दी महिला उपन्यासकारों की मानवीय संवेदना – डॉ. ऊषा यादव, राधाकृष्णन,नई दिल्ली, (1999), पृ. 168
28. हिन्दी महिला उपन्यासकारों की मानवीय संवेदना – डॉ. ऊषा यादव, राधाकृष्णन,नई दिल्ली, (1999), पृ. 197
29. आज का हिन्दी साहित्य : डॉ. रामदरश मिश्र, अभिनय प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 63
30. अमृतलाल नागर का उपन्यास साहित्य –प्रकाश चंद्र मिश्र, साहित्य प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 32
31. वृहत गुजराती कोश खण्ड–2 सं. केशव राम शास्त्री, पृ. 2173
32. आधुनिकता– दुर्गाप्रसाद गुप्ता, आकाशदीप प्रकाशन, मैहरोली, नई दिल्ली, (1995), पृ. 30
33. साहित्य का उद्देश्य–मुंशी प्रेमचन्द्र, हंस प्रकाशन, इलाहबाद, (1954), पृ. 75
34. साहित्य का समाजशास्त्र– डॉ. नगेन्द्र, नेशनल ,नई दिल्ली, (1982), पृ. 04
35. सूर्य वंश का प्रताप – राजेन्द्र माोहन भटनागर, अनुराग प्रकाशन (2005), पृ. 66
36. दिल्ली चलो – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2009), पृ. 371–72
37. नीले घोड़े का सवार– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ.51
38. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ. 56
39. अर्न्तयात्रा – राजेन्द्र मोहन भटनागर, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृ. 136–137
40. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 76
41. गौरांग – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2009), पृ. 36
42. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 183
43. अर्न्तयात्रा – राजेन्द्र मोहन भटनागर, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृ. 301
44. युग पुरूष अम्बेडकर – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड संस, (2011), पृ. 253
45. सूर्य वंश का प्रताप – राजेन्द्र मोहन भटनागर, अनुराग प्रकाशन (2005), पृ. 198
46. गौरांग – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2009), पृ. 228

# तृतीय – अध्याय

# तृतीय अध्याय

# डॉ. भटनागर के उपन्यास : सार्वकालिक चेतना

## (क) ऐतिहासिक चेतना

मानव जीवन का अनुभव, घटना, पात्र, प्रवृत्तियाँ, मूल्य, परम्परा आदि का चिरकाल से चला आ रहा यह चक्र समाज की धुरी पर निरंतर निर्बाध गति से धूम रहा है। मनुष्य का जीवन एक प्रयोगशाला है जिसमें विभिन्न परिस्थितियों, संदर्भों का परीक्षण एवं निरीक्षण किया जाता है मानव जीवन में होने वाले परिवर्तनों का अंकन करने का कार्य इतिहास करता है इतिहास हमारे मानव जीवन के सभी तथ्यों एवं निष्कर्षों का लेखा रखता है इतिहास का मानव जीवन से जुड़े हर पहलू से सरोकार होता है चाहे वह सामाजिक, सांस्कृतिक, पारिवारिक, राजनीतिक, धार्मिक या ऐतिहासिक हो। ''इतिहास ही वह प्रयोगशाला है जिसमें मानव कृतियों का लेखा जोखा सुरक्षित है, और उसी आधार पर सामाजिक परिवर्तन के वस्तुगत नियम समझे जा सकते है। उसी के आधार पर अतीत को समझा जा सकता है। वर्तमान को पहचाना और भविष्य को सँवारा जा सकता है।''[1] इतिहास मानव जीवन को एक दिशा का बोध कराता है जिससे मनुष्य अपने कर्तव्य एवं दायित्वों का विवेकानुसार पालन कर सके समाज में रहकर मनुष्य को इतिहास से अनुभव प्राप्त कर उनके साथ वर्तमान जीवन में तालमेल स्थापित करना होता है।

इतिहास ने सदैव वर्तमान को संवारते हुए भविष्य को एक स्वर्णिम अवसर प्रदान किया है मानव जीवन को समझने का मानव अपने वर्तमान जीवन में जहाँ से आधार ग्रहण करता है वह इतिहास है इतिहास अपने अनुभवों को वर्तमान के साथ साझा करता है वर्तमान को प्रेरणा देता है सुनहरे भविष्य के निर्माण की दिशा में कदम बढ़ाता है मानव जीवन को जीने का सलीका और विभिन्न परिस्थितियों में संघर्ष करना केवल इतिहास के द्वारा ही प्राप्त हो सकता है अतः मानव के लिए इतिहास उतना ही आवश्यक है जितना की भविष्य है इतिहास का बोध होना मानव के लिए अत्यंत आवश्यक है। ''इतिहास बोध व्यक्ति को मुक्त भविष्योन्मुखी, उदार, आशावान, समष्टिवादी, और प्रगतिशील बनाता है। अतीत कितना प्रासंगिक है। कितना प्रवाहीत है, कितना जीवंत है, और इसलिए कितना आवश्यक और उपयोगी है यह जानना और चरितार्थ करना ही इतिहास बोध है।''[2]

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर इतिहास को मानव जीवन  के लिए अत्यंत उपयोगी एवं आवश्यक मानते है इनके द्वारा रचित ऐतिहासिक उपन्यासों में इतिहास से जुड़े तथ्यों, निष्कर्षों एवं जीवन मूल्यों का विवेचन सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में बड़े ही सरल, सहज एवं रोचकता

के साथ किया गया है एक उपन्यासकार के रुप में डॉ.भटनागर ने जहाँ भावों का प्रस्तुतीकरण किया है वहीं मानव की चेतना को इतिहास की सार्वकालिकता के साथ भी जोड़ा है। डॉ. जगदीश गुप्त कहते है–''इतिहासकार केवल द्रष्टा है। उपन्यासकार द्रष्टा और सृष्टा है। दोनों अपने व्यक्तित्व को आरोपित करने का अधिकार स्रष्टा का मौलिक स्वत्व है। ऐतिहासिक उपन्यास लिखते समय भी इस अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता।''[3]

डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में जिन ऐतिहासिक तत्वों की सार्वकालिक चेतना को व्यक्त किया है वह मानव जीवन के विविध पक्षों से जुडी हुई है इतिहास में घटित घटनाओं का लेखन करना सरल कार्य है परन्तु जब इन घटनाओं से जुड़े किसी चरित्र के माध्यम से भावपूर्ण स्थिति परिस्थितियों का मूल्यांकन करना हो तब इतिहास से जुड़ा हर तथ्य महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि इतिहासकार का कार्य इतिहास को सही एवं सत्य रुप में प्रस्तुत करना है परन्तु ऐतिहासिक उपन्यासकार को सत्य को प्रस्तुत भी करना है और उसका अन्वेषण भी करना है डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में जिन महापुरुषों को केन्द्र में नायक के तौर पर प्रस्तुत करने का प्रयास किया है वे अपने सामान्य जीवन से अलौकिक परन्तु मानवीय चेतना को जागृत करने में सफल रहें है एक सामान्य व्यक्ति को असाधारण कार्य करने की प्रेरणा इतिहास से ही प्राप्त होती है इतिहास से प्राप्त मूल्यों को ही आधार बनाकर मनुष्य ने अपने जीवन के संघर्ष को सरल बना लिया है।

डॉ. भटनागर के उपन्यासों में जिस ऐतिहासिक चेतना को सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में सम्पृक्त किया गया है वह देशकाल की सीमाओं से परे एक स्वर्णिम आभा है जिसने संसार को सदैव आशा की रश्मि से प्रकाशित किया है कोई भी उपन्यासकार अपने उपन्यासों में जब इतिहास से वर्तमान को जोड़कर एक स्वर्णिम भविष्य की कल्पना को साकार करने का प्रयास करता है तो उसे ऐतिहासिक चेतना का ही आधार ग्रहण करते है डॉ.भटनागर ने उससे भी आगे जाकर शाश्वत, सत्य एवं सार्वकालिक जीवन मूल्यों की चेतना को अपने उपन्यासों में वर्णित करने का प्रयास किया है सत्य, अहिंसा, मूल्य, स्वतंत्रता, संस्कृति, धर्म, समाज आदि के माध्यम से सार्वकालिक चेतना की प्रस्तुति दी है।

डॉ. भटनागर ऐतिहासिक उपन्यासों के कुशल शिल्पी है उन्होंने उपन्यासों मे ऐतिहासिक चेतना को सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में प्रस्तुत किया है इनके उपन्यासों में वर्णित, पात्र, घटना, मूल्य, समाज, संस्कृति आदि सभी सार्वकालिक चेतना के वाहक है इनके द्वारा जिन मूल्यों को भाव भूमि पर प्रस्तुत किया है वे सभी मूल्य देशकाल के बंधनों को तोड़ इतिहास से वर्तमान में प्रवेश कर समस्त संसार को नवीन दिशा प्रदान करते है कोई भी उपन्यासकार जब इतिहास को अपने लेखन के अपने साथ जोड़ता है तो उसका यह दायित्व बन जाता है कि वह इतिहास से जुड़े सभी तथ्यों का भली भाँति अध्ययन कर ले। डॉ. मनोरमा मिश्र ने कहा है ''इतिहास और

उपन्यास दोनों की अपनी अलग अलग सीमाएँ है। इतिहास में सर्वाधिक प्रमुखता तथ्यों की रहती है तथ्यों की उपेक्षा वह किसी भी स्थिति में नहीं कर सकता। बल्कि इसके विपरीत ऐतिहासिक उपन्यास इतिहास के तथ्यों को ग्रहण करता हुआ भी उपन्यास की सरसता को अक्षुण्ण बनाए रखता है। ऐतिहासिक उपन्यासकार अपनी इस प्रवृत्ति को उपन्यास के ऐतिहासिक संदर्भ में मानवीय सत्य की प्रतिष्ठा करते है।''[4]

डॉ. भटनागर ने उपन्यास में भारतीय इतिहास को विविध पक्षों द्वारा मानवीय चेतना से सम्पृक्त किया है भारतीय इतिहास प्राचीनता की अमूल्य धरोहर है। इतिहास ने जो भोगा है, अनुभव किया है उसी की व्याख्या करने का कार्य डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में वर्णित ऐतिहासिक चेतना के माध्यम से किया है भारत को एक राष्ट्र के रुप में परिभाषित करने का स्वप्न सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में ऐतिहासिक है भारत एक शांति प्रिय राष्ट्र है हमारी संस्कृति वसुधैव कुटुम्बकम् की रही है कारणतः हमारे व्यवहार में सत्य, अहिंसा, शांति, धर्म, पुण्य, दया, क्षमा, सहानुभूति आदि गुणों का प्राधान्य रहा है हमारी सभ्यता को इतिहास में भरपूर सहयोग मिला है हमारे आर्यावर्त की समूची दिशाओं में मानव समाज के विविध रुपों में इसका विकास देखा जा सकता है विभिन्न बोली, भाषा, रंग रुप, आकार प्रकार, संस्कृति, खान–पान, रीति–रिवाज आदि में अंतर होते हुए भी हमारी राष्ट्रवादी भावना में किसी प्रकार का कोई अंतर नहीं होना हमारी सर्वप्रमुख विशेषता है। किसी भी राष्ट्र को समझने के लिए उसके इतिहास को समझना आवश्यक है इतिहास का निर्माण मानव समाज के व्यवहार का अंकन है इन सबके साथ अपनी राष्ट्रीय अस्मिता, गौरव की व्याख्या करना ऐतिहासिक चेतना है किसी साहित्य की कृति का मूल्यांकन का आधार उसकी ऐतिहासिक चेतना को भी माना जाता है क्योंकि बिना ऐतिहासिक तथ्यों के यदि कोई कृति की रचना होती है तो वह केवल उस तत्कालीन समय की घटनाओं का सूचना मात्र होती है जब कि इतिहास चेतना से सम्पृक्त रचना में तत्कालीन समाज, परम्परा, सभ्यता, आदि के उल्लेख के साथ वर्तमान संदर्भों को भी जोड़ने का प्रयास रहता है। मैनेजर पाण्डेय के अनुसार ''साहित्य की विशाल परम्परा में किसी रचना की महत्ता और मूल्यवत्ता का निर्धारण ऐतिहासिक चेतना के सहारे ही हो सकता है रचना की विशिष्टता और मौलिकता का विश्लेषण आलोचनात्मक विवेक ही होता है। लेकिन परम्परा और परिवेश के संदर्भ में किसी रचना की सार्थक नवीनता की पहचान ऐतिहासिक चेतना ही होती है।''[5]

ऐतिहासिक चेतना से तात्पर्य मानव की इतिहास के प्रति आस्था और विश्वास है यह आस्था जितनी अधिक होगी ऐतिहासिक चेतना की सार्वकालिकता उसी स्वरुप में बनी रहेगी इतिहास के प्रति मानव का ज्ञान जितना अधिक होगा उतना ही अधिक उसमें अपनी राष्ट्रीयता एवं जातीय गौरव के प्रति भाव रहेगा अपने राष्ट्र, देश, राज्य, समाज, परिवार आदि के प्रति जिस दायित्व एवं कर्तव्य का भाव होता है वह इतिहास से जुड़ी घटनाओं, पात्रों से संदर्भित रहता है

इतिहास साक्षी है ऐसा अनवरत काल से चला आ रहा है भगवान श्रीराम अलौकिक होते हुए भी लौकिकता के संघर्ष को साकार करते है आज भी वचन बद्धता में श्रीराम के द्वारा कही गई तुलसीकृत 'रामचरित मानस' की चौपाई 'रधु कुल रीत सदा चली आई, प्राण जाए पर वचन न जाई' की सार्वकालिकता वैसी ही बनी हुई है। राम और कृष्ण भारतीय इतिहास के महानायक है जिन्होंने अलौकिक स्वरुप को छोडकर मानव रुप में लौकिक कार्य के द्वारा मानव को संघर्ष की प्रेरणा प्रदान की। डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में इतिहास के गौरव एवं अस्मिता की व्याख्या सरल एवं रोचक ढंग से की है इनके उपन्यासों में वर्णित ऐतिहासिक चेतना ने मानव समुदाय को इतिहास से ही नहीं जोड़ा अपितु तथ्यों की सार्वकालिक चेतना की भी व्याख्या की है जो इतिहास में धूमिल थी किसी भी इतिहास में घटनाओं, पात्रों का चित्रण तो बड़ी आसानी से हो जाता है। परन्तु उसमें व्यक्त चेतना को ऐतिहासिक चेतना में प्रस्तुत करना कठिन कार्य है। किसी ऐतिहासिक घटना के समय की तात्कालिक परिस्थितियों का अनुभव कर उसके भावों को भावात्मक रुप से प्रस्तुत कर वर्तमान संदर्भों के साथ जोड़कर भविष्य को दिशा प्रदान करना ही ऐतिहासिक चेतना कहलाती है।

साहित्य की परम्परा रही है कि जब कभी भी मानव को संघर्ष करते हुए सम्बल चाहिए तब साहित्य ने अपने राष्ट्र, देश, राज्य की शाश्वत, सत्य एवं मानवीय परम्परा को मानव को सुलभ कराया है उनके आदर्श नायक के संघर्ष के साथ भविष्योन्मुखी कल्पना को साकार करने में सहायता प्रदान की है। एक उपन्यासकार के रुप में डॉ.भटनागर ने अपने उपन्यासों में ऐतिहासिक चेतना को जागृत करने के लिए हमारे इतिहास से जुड़े संघर्ष एवं घटनाओं को आधार बनाया है।

डॉ. भटनागर ने अपने इतिहास को धर्म एवं अध्यात्म के ज्ञान को मानव के लिए बेहद आवश्यक माना है वे मानते है कि हमारे आध्यात्मिक तत्वों में जागरण के सूत्र उपस्थित है जो इतिहास में मानव को सम्बल प्रदान करते रहे है आवश्यकता है उनका महत्व समझने की उनको क्रियान्वन करने की है वे 'विवेकानन्द' उपन्यास में कर्म करने की प्रेरणा पर बल देते है। ''आश्चर्य करने की आवश्यकता नहीं है। नरेन हम अपनी धुरी से दूर जा पड़े है हमारे अंदर धोर, निराशा, उपेक्षा, अपमान, कुण्ठा आदि जल कुम्भी बेतरह से फैल चुकी है। और वह हमारे जीवन रस को चूस रही है। आत्मविश्वास, आत्मगौरव का संकल्प बल आदि हमारा साथ छोड़ चुके है। जब व्यक्ति समाज अपने पुरखों के इतिहास को पौरुषहीन, कमजोर, घटिया, संदिग्ध और निकम्मा मानने के लिए तैयार होने लगता है तब वह आत्महत्या के कगार पर जा पहुँचता है। यह हमारे सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, सामाजिक, आर्थिक पतन का दौर चल रहा है। इसके लिए इस देश से बाहर जाना जरुरी है। क्योंकि इसे जिन्होंने जर्जरित, खोखला, निर्बल बनाया है, तुम्हें उनसे लड़कर इस देश को खड़ा करना है।''[6] डॉ. भटनागर ने भारत की श्रेष्ठता का प्रतिपादन करने के लिए धर्म दर्शन एवं संस्कृति से जुड़े उदाहरण एवं उनके सूत्रों सहारे भारतीय जनमानस में

भारतीय अस्मिता एवं गौरव का भाव जागृत किया है। इनके उपन्यास मानव समुदाय को शिक्षा, नैतिकता, पवित्रता, शुद्धता, आचरण आदि की शिक्षा देते है।

राजस्थान के गौरव महाराणा प्रताप की वीरता, शौर्य एवं स्वतंत्रता के प्रति समर्पण इतिहास में अमर है इस अमरता के पीछे इतिहास की महान परम्परा 'स्वतंत्रता' के दर्शन उपन्यास में यत्र–तत्र मिलते है–''आप अपने शहंशाह से कह दीजीएगा कि प्रताप सब कुछ कर सकता है। परन्तु वह अपनी आजादी को न गिरवी रख सकता है और न बेच सकता है। उसे प्राणों व राजगद्दी का मोह पराभवता की वैभवता की ओर नहीं ढकेल सकता है।''[7] प्रताप ने आजीवन इस प्रण को निभाया था युद्ध का निर्णय अंतहीन रहा इसके पीछे जो कारण था वह महाराणा प्रताप का अंतहीन सघंर्ष था जो चेतना प्रताप ने भारतीय जनता को प्रेरणा स्वरुप प्रदान की वह ऐतिहासिक होने के साथ सार्वकालिक भी है। महाराणा प्रताप स्वतंत्रता की वह ज्वाला है जिसने भारतीय जनता के संघर्ष में अपनी उपस्थिति को सदा बनाए रखा है।–''प्रताप .......तुम....... स्वतंत्रता की लौ है तुझे जीवित रखने का अर्थ है कि स्वतंत्रता को अजर बनाए रखना। ......तू प्रकाश है। तू पश्चाताप मत कर। तू तो दूसरों की प्रेरणा का दीपक है। तू वही बना रहें। तू वहीं कर जो वे आकांक्षा रखते है।''[8] भारत परम्परा संस्कृति एवं सभ्यता का देश है। ज्ञान–विज्ञान, तकनीक, कला, साहित्य, वास्तु आदि विविध विधाओं का जन्मदाता एवं विशेषज्ञ रहा है भारत की परम्परा में जो ऐतिहासिक चेतना दिखाई पड़ती वह भी शाश्वत एवं सार्वकालिक है हर युग में इतिहास ने भारतीय जनता को शिक्षा प्रदान कर नवीन दिशा दी है।

डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में धर्म एवं अध्यात्म के प्रति आस्था को मजबूत करते हुए ऐतिहासिक चेतना से सम्पृक्त किया है। विदेशी शासक एवं अंग्रेजों की कुत्सित नीतियों के कारण भारतीय अपने धर्म के प्रति बहुत सी गलत भ्रांतियों का शिकार हो रहे थे ''धर्म पाप नहीं है। धर्म पतन का कारण भी नहीं है। नहीं नहीं यह असत्य है। समाज सुधारकों ने धर्माचार्यो पुरोहितों के अन्याय अत्याचारों से पीड़ित जगत् की ओर उससे मिली अवनति और पराजय को जी भर कर धर्म के नाम पर लांछित किया गया है उन सबने धर्म के दुर्भेद्य दुर्ग को ध्वस्त करना चाहा है धर्म को जाति से जोड़ा है समाज के पतन का मूल कारण धर्म को माना यही सबसे बड़ी उनकी भूल थी। जाति भेद एक सामाजिक विज्ञान है यही कारण है कि धर्म सबके आक्रमण को सहता हुआ आज भी समाज का सिरताज बना हुआ है धर्म जाति नहीं देता और न वर्ग बनाता है अपितु वह उनको तोड़ता है और मानव मन को मानव मन से जोड़ता है।''[9] पूरे विश्व में भारत को विश्व गुरु का दर्जा उसके अध्यात्मवादी दर्शन के फलस्वरुप मिला है। हमारा धर्म संस्कृति एवं सभ्यता को पूरे विश्व ने शिरोधार्य किया था। हम शांति मार्ग के अनुयायी थे कर्मवाद के पुरोहित थे हमारी चेतना में शांति की स्थापना का चक्र निरंतर घूम रहा था विवेकानंद विश्व धर्म पर बोलते है कि –''अमर पुत्रों इस विश्व धर्म सम्मेलन से हमें जो सीखने को मिला है। वह है

कि आध्यात्मिकता, पवित्रता और उदारता किसी धर्म की सम्पत्ति नहीं है। वह सब धर्म में यथा शक्ति विद्यमान है। अंत में मैं कहूँगा कि सहयोग करो, संघर्ष या प्रतिस्पर्द्धा नहीं। हमें विनाश नहीं शांति चाहिए।''[10] विवेकानंद भारतीय दर्शन की श्रेष्ठता के महत्व को प्रतिपादित कर जनमानस में स्वतंत्रता का बीज बोना चाहते है–''वेद मानव जाति का सम्पूर्ण चरित्र है। उसकी घटनाएँ अमृत रस है। वह मनुष्य की नियति पर रुकी इतिहास की पैनी कीलों की प्रहार पीड़ा से मुक्ति दिलाता है। ज्योतिर्गमय की गहरी अनुभूति कराता है।''[11] डॉ. भटनागर के उपन्यासों में ऐतिहासिक चेतना को दर्शन, अध्यात्म, राजनीति, समाज, संस्कृति से जोड़कर भारत की संस्कृति एवं सार्वकालिक मूल्यों की भूमिका प्रस्तुत की गई है मानव के लिए इतिहास ही उसे प्रेरणा शक्ति प्रदान करता है।

## (ख) सांस्कृतिक चेतना

मानव ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ रचना है यह संभवतः इसलिए कहा गया है कि मनुष्य में भावों को समझने की बुद्धि है मनुष्य समूह में रहना और उस समूह की व्यवस्था में सहयोग करने का भाव रखता है वह अपने जन्म से लेकर मृत्यु तक जीवन जीने के लिए कुछ नियम, सिद्धान्त बनाता है उनका पालन करता है ये नियम उसकी आवश्यकता एवं हितों की पूर्ति करते है मानव सदैव अपने अस्तित्व एवं सुरक्षा को लेकर गम्भीर रहता है और अपने कर्मो से संचित व्यवहार को नियमों के साथ जोड़कर आने वाली पीढ़ी को हस्तान्तरित भी करता है। मानव के द्वारा जो भी जीवन व्यवहार के लिए आवश्यक था उसकी स्थापना के लिए बल दिया गया वातावरण परिस्थितियों को समझकर मानव ने अपने जीवन परिवेश की कल्पना को साकार रुप प्रदान किया यह लगातार चिरकाल से अपना व अपने समूह का विकास करने की दिशा में अग्रसर रहा है और आज भी उसका यह अनुसंधान जारी है। मानव के जन्म से लेकर मृत्यु तक के व्यवहार और जीवन यापन का तरीका ही संस्कृति है ''संस्कृति जीवन का एक तरीका है और यह तरीका सदियों से जमा होकर उस समाज में छाया रहता है जिसमें हम जन्म लेते है इसलिए जिस समाज में हम पैदा हुए है अथवा जिस समाज में मिलकर हम जी रहे है। उसकी संस्कृति हमारी है। यद्यपि अपने जीवन में हम जो संस्कार जमा करते है वह भी हमारी संस्कृति का अंग बन जाता है। और मरने के बाद हम अन्य वस्तुओं के साथ अपनी संस्कृति की विरासत भी अपनी संतानों के लिए छोड़ जाते है।''[12] मनुष्य अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए जिन सिद्धान्तों का निर्माण करता है वह उसके जीवन का संतुलन बनाये रखने में सहायक होते है वह अपनी स्वेच्छा से इन नियमों का पालन करता है संस्कृति शब्द मानव के व्यवहार की सम्पूर्ण व्याख्या करने में सक्षम है क्योंकि किसी मानव या समाज की पृष्ठभूमि या उसके व्यवहार का मूल्यांकन उसकी संस्कृति के आधार पर ही किया जाता है।

मानव के विकास के साथ उसकी संस्कृति का भी निरंतर विकास हो रहा है। ''संस्कृति विरासत जीवन का प्रतीक है क्योंकि मानव को यह पूर्वजों द्वारा प्राप्त होती है परन्तु मानव अपनी विकास की परम्परा से प्रेरित हो संस्कृति में नवीनता को सम्पृक्त करता है। उसकी शिक्षा दीक्षा, व्यवहार और संचित कर्म संस्कृति की अमूल्य निधि में सम्मिलित हो जाते है।'' संस्कृति एक सामाजिक विरासत है और वह संचय से विकसित होती है।''[13] मनुष्य ने अपनी बुद्धि चातुर्य से नवीन अविष्कार एवं अनुसंधान किए है वह लगातार प्रगति के पथ पर अग्रसर है साहित्य, नृत्य, वास्तु, गायन, वादन, शिल्प, विज्ञान, तकनीक, के क्षेत्र में लगातार प्रयासों के द्वारा मानव हितों की पूर्ति करने का कार्य कर रहा है इन सब के लिए वह विभिन्न कार्य क्षेत्र में सहयोग कर रहा है ''मनुष्य ने धर्म का जो विकास किया दर्शन शास्त्र के रुप में जो चिंतन किया साहित्य, कला और संगीत का जो सृजन किया, सामूहिक जीवन को हितकर और सुखी बनाने के लिए जिन प्रथाओं व संस्थाओं को विकसित किया उन सबका समावेश हम संस्कृति में करते है।''[14]

भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति सम्पूर्ण विश्व में सबसे प्राचीन है इसकी प्राचीनता के साथ ही इसके विश्व प्रसिद्धी का कारण संस्कृति के विविध पक्ष है संस्कृति समाज का सम्यक् परीक्षण करने में सहायक होती है अतः मानव समाज की समस्त जानकारी और उसकी चेतना का अध्ययन संस्कृति के विविध पक्षों का मूल्यांकन करके किया जा सकता है मानव का रहन–सहन, बोली, भाषा, परिवार, खान–पान, आचार–विचार, संस्कार, व्रत, नियम, त्योहार, पर्व, आदि सभी तत्व उसकी संस्कृति की धरोहर माने जाते है हमारी संस्कृति के अनुसार ही हमारा जीवन व्यवहार होता है हम कभी भी अपनी संस्कृति से विलग नहीं रह सकते है क्योंकि हमारे भाव और विचारों में एक सकारात्मक ऊर्जा के रुप में संस्कृति विद्यमान रहती है। ''भारत में जो विविधता है, मात्र उसी से देश की प्राचीन सभ्यता का वैशिष्ट्य लक्षित नहीं होता। अफ्रीका अथवा चीन के केवल एक प्रांत युन्नान में भी इतनी विविधता मौजूद है परन्तु मिस्र की महान् अफ्रीकी संस्कृति में वैसी निरन्तरता नहीं देखने को मिलती, जैसी कि हम भारत में पिछले तीन हजार या इससे भी अधिक वर्षों में देखते है।''[15] एक मानव विभिन्न रुपों में दायित्व और कर्तव्यों से बँधा होता है फलस्वरुप उसके जीवन में विविध पक्ष देखने को मिलते है ये सब मिलकर संस्कृति को विभिन्न रंगों में रुपायित करते है भारतीय संस्कृति के विविध रुप में हमें भारत जैसे विशाल, सुसंस्कृत एवं सभ्य देश में परिलक्षित होते है इसकी प्राचीनता इसका प्रमुख गुण है क्योंकि जब सम्पूर्ण विश्व कला साहित्य और संस्कृति से अनजान था उस समय हमारी सनातन संस्कृति स्वर्णकाल के सुनहरे अक्षरों में सजायी जा रही थी संस्कृति का सीधा सम्बन्ध हमारी चेतना और हमारे ज्ञान, हमारी तकनीक, कला एवं शिल्प से है हमारे भारत देश का ज्ञान–विज्ञान, अध्यात्म, तकनीक एवं दर्शन इतना उत्कृष्ट है कि हमें सम्पूर्ण विश्व ने विश्व गुरु की उपाधि से विभूषित किया है।

आज विज्ञान ने काफी प्रगति कर ली है। वह नवीन तकनीकों का प्रयोग कर प्रकृति के रहस्यों को सुलझाने का प्रयास करता है अपनी प्रत्येक खोज को जब वह देखता है तो उसका अनुभव संस्कृति के प्रभाव को स्वीकार कर लेता है उसे आश्चर्य होता है कि जिस ज्ञान व तकनीक सहारे वह जिन निष्कर्षों तक पहुँचा भारतीय संस्कृति में वह बहुत सरल एवं स्पष्ट रुप से वर्णित है इसका सबसे छोटा उदाहरण सूर्य एवं चन्द्रमा की दूरी की (युग सहस्त्र योजन पर भानु) व्याख्या द्वारा आसानी से समझा जा सकता है अंतरिक्ष में होने वाली खगोलीय घटनाओं का सटीक विश्लेषण और पूर्वानुमान हमारी संस्कृति को स्वर्णिम बनाता है विद्यानिवास मिश्र जी कहते है–''यह आकस्मिक संयोग मात्र नहीं है कि भारतीय ज्योतिष गणना निरयन गणना है, जिसमें सृष्टि के आरम्भ के क्षण की स्थिति आज की दृष्य स्थिति से अधिक महत्व रखती है, क्योंकि जीवन का सृष्टि के प्रथम क्षण के साथ अनिवार्य सम्बन्ध है।''[16] और भी ऐसे कई उदाहरण है जिनके माध्यम से संस्कृति की सार्वकालिकता का बोध होता है।

संस्कृति निरंतर गतिशील होकर भी स्थिर है क्योंकि गतिशीलता क्षणिक है परन्तु इसकी स्थिरता सार्वकालिक है। किसी भी संस्कृति की सार्वकालिकता का बोध हमें उसकी तत्वगत विशेषताओं से प्राप्त हो जाता है भारतीय संस्कृति की प्राचीनता और सार्वकालिकता सम्पूर्ण विश्व विख्यात है ''भारतीय संस्कृति की संभवतः सबसे विशेषता है–अपने संदेश में इसकी निरंतरता भारतीय संस्कृति ने दूसरे देशों को किस प्रकार प्रभावित किया, यह अन्य ग्रंथों का विषय है। यहाँ हमारा उद्देश्य भारतीय संस्कृति के उद्गमों और इसके विकास के प्रमुख लक्षणों का अन्वेषण करना है।''[17] संस्कृति में मानव जीवन के अनुभवों को सम्मिलित किया जाता है मानव जब कोई नवीन अनुभव प्राप्त करता है तो वह उसे अपनी संस्कृति के साथ जोड़ने का भाव रखता है यही अनुभव मानव हित के दूरगामी परिणामों की व्याख्या करते है वह निश्चित रुप से हमारी संस्कृति का अभिन्न अंग बन जाता है। ''मानव समाज के वह संस्कार जो लौकिक और पारलौकिक उन्नति के मार्ग को प्रशस्त करते हुए उसके सर्वागींण जीवन का निर्माण करते है उसकी संस्कृति के हो जाते है।''[18] हमारी संस्कृति की उन्नतशील परम्परा रही है। हम विज्ञान की दिशा में सदैव अग्रसर रहे है अतः हमारी संस्कृति अमर है भारत एक शांतिप्रिय देश है हमारी संस्कृति, अहिंसा, त्याग, समर्पण, चरित्र, दया, सहानुभूति एवं सहिष्णुता की रही है हम अतिथि देवों भवः की परम्परा के वाहक है हम शांति के अग्रदूत है। परन्तु हमारी इस शांति प्रियता पर बाह्य आक्रांताओं ने अनेक प्रकार से प्रहार किये। लेकिन हमारी संस्कृति ने हमारी सकारात्मक ऊर्जा को बनाये रखा जिसके कारण जहाँ कई देशों का नामों निशान मिट गया हमारी संस्कृति आज भी अक्षुण्ण एवं सार्वकालिक बनी हुई है।

मानव ने अपने विचारों से समाज को अवगत कराने के साथ ही उन महत्वपूर्ण तथ्यों को भी अपनी संस्कृति में शामिल किया जो उसकी सकारात्मक ऊर्जा को उष्मा एवं प्रकाश प्रदान

करते है। भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति प्रारम्भ से ही समृद्ध एवं विकसित रही है यह दैवीय कृपा और मनुष्य के संचित कर्मों का प्रतिफल है। बाबू गुलाब रॉय के अनुसार ''संस्कृति का सम्बन्ध संस्कार से है जिसका अर्थ है संशोधन करना, उत्तम बनाना, परिष्कार करना, जातीय संस्कारों को ही संस्कृति कहते हैं।''[19] भारत भूमि पर जिन मूल्य एवं भावों को प्रस्तुत किया वे सम्पूर्ण विश्व को वसुधैव कुटुम्बकम् की प्रेरणा देने वाले है ''हमने जीओ और जीने दो''। 'सर्वे भवन्तु सुखिन्' की भावना को सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में प्रस्तुत किया है। सम्पूर्ण विश्व में सर्वधर्म समभाव की व्याख्या प्रस्तुत की प्रत्येक मनुष्य को स्वतंत्रता दी है मानवीय संवेदना ही परिभाषित नहीं किया अपितु पशु, पक्षी, प्रकृति, वातावरण, अंतरिक्ष आदि के प्रति भी अपने कर्तव्य एवं दायित्व बोध का भी अनुभव कराया संयम अनुशासन के साथ उपभोग एवं ''अतिथि देवो भवः'' की परम्परा का भी पालन किया है। आज सम्पूर्ण विश्व में जब पाश्चात्य देशों में पर्यावरण का खतरा मंडराने लगा तो पाश्चात्य देशों ने विश्व में इसके दूरगाामी परिणामों का ढिढोंरा पीटने लगे है परन्तु भारतीय मनीषियों ने अपने धर्म ग्रंथों में  इस खतरे को वर्षों पूर्व स्पष्ट कर दिया था। असंयमित दिनचर्या एवं असंयमित उपयोग मनुष्य के साथ प्रकृति के लिए भी घातक है भारतीय संस्कृति ने प्रदत्त संस्कारों के द्वारा स्वास्थ्य एवं सभ्यता के साथ प्रकृति के साथ संतुलन स्थापित करने में सहयोग प्रदान किया।

डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में सांस्कृतिक मूल्यों की सार्वकालिक व्याख्या को प्रस्तुत किया है संस्कृति के विविध पक्षों को अपने उपन्यासों में सरल एवं सहज एवं रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है उपन्यासकार ने मूल्यों के साथ संस्कृति के चिंतन को स्पष्ट करने का प्रयास किया है क्योंकि विचारों के साथ ही संस्कृति की सर्वाधिक प्रामाणिक व्याख्या सम्भव है विचारों एवं भावों से मनुष्य के व्यवहार का मूल्यांकन होने के साथ ही उसकी संस्कृति का भी बोध होता है इनके उपन्यासों में संस्कृति को ऐतिहासिक व्यक्तित्व के महान् विचारों के द्वारा प्रकट करने का प्रयास किया है भारतीय महानायकों ने जिन विचारों सिद्धान्तों एवं कर्तव्यों एवं दायित्वों का प्रकाशन किया है वे सब भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठता एवं चेतना को स्पष्ट करते है।

डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में सांस्कृतिक पक्ष को मानव व्यवहार के साथ जोड़कर सार्वकालिक चेतना की सुन्दर, रोचक प्रस्तुति दी है एक राजा के कर्तव्य, सम्बन्ध एवं दायित्व का अनुभव महाराणा प्रताप की राज्य नीति के साथ बडे ही सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया गया है एक राजा के रुप में महाराणा का भीलों के साथ व्यवहार मानवीय चेतना की उच्चतम अभिव्यक्ति होने के साथ उन लोगों को करारा जबाब है। जो जाति और ऊँच नीच के नाम पर हमारी संस्कृति को अल्पज्ञान के सहारे दोषी ठहराते है स्वामी विवेकानंद द्वारा शिकागो की विश्व धर्म संसद में भाषण 'अमेरिका के भाई बहनों' का सम्बोधन सम्पूर्ण विश्व में हमारी वसुधैव कुटुम्बकम की संस्कृति का परिचायक है महर्षि अरविन्द योगी द्वारा भारतीय जनता को दिया गया योग एवं

कर्मवाद का संदेश, महात्मा गाँधी द्वारा किया गया सत्य, अहिंसा का प्रयोग, अम्बेडकर द्वारा किये गये अछूतोद्वार के कार्यों को महानायकों का समर्थन एवं सहयोग, चैतन्य महाप्रभु की भक्ति साधना, मीरा का प्रेम एवं सूर की अंधी आँखों से भगवान कृष्ण के विराट स्वरुप का वर्णन हमारी संस्कृति को उच्चतम, श्रेष्ठ एवं महान् बनाते है।

डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों का विषय ऐतिहासिक महापुरुषों के जीवन चरित्र को बनाया है इतिहास हमारे पूर्व के घटनाक्रम की व्याख्या है मानव के व्यवहार को समझने और उन परिस्थितियों को अनुभव करने का माध्यम है। हमारे इतिहास में वर्णित चेतना को प्रस्तुत करने का कार्य डॉ. भटनागर ने किया है हमारी संस्कृति की महानता एवं श्रेष्ठता को मानवीय तत्वों एवं पक्षों के साथ समन्वित किया है। जब हमारी संस्कृति को अंधविश्वास, ढोंग, पाखण्ड, कुरीतियाँ, ऊँच–नीच, जाति सम्प्रदाय आदि तत्वों के साथ जोड़ने का प्रयास किया तब–तब महान् व्यक्तित्व इतिहास में सांस्कृतिक चेतना के माध्यम से इन दूषित तत्वों का खण्डन करते है। और हमारी स्वस्थ्य विश्व बन्धुत्व की संस्कृति की व्याख्या को लोगों के समक्ष प्रस्तुत करते है।

डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में हमारी संस्कृति के अभिन्न अंग हमारे त्योहार, रीति, रिवाजों की भी सुन्दर अभिव्यंजना प्रस्तुत की है। हमारे उत्सवों का उल्लास हमारे मन को प्रसन्नता की अनुभूति कराता है। साथ ही उन मूल्यों का स्मरण भी दिलाता है जो सार्वकालिक चेतना से सम्बद्ध है। जो भारतीय संस्कृति की अमूल्य निधि है।–''ब्रज की होली तो दूर दूर प्रसिद्ध थी। बरसाने और नंदगांव की होली का तो कहना ही क्या। राधिका बरसाने की थी और कृष्ण नंदगांव के दोनों में गहरे आत्मीय सम्बन्ध थे होली की निराली हुडदंग इसलिए वहाँ आज भी है।

अभी होलिका दहन बहुत दूर था। परन्तु ब्रज में तो एक माह पूर्व से होली भरी जाने लगती थी। जिधर देखो सुनो उधर ही होली के गीत.............. काम की मस्ती और हँसी ठ्ठ्ठा। देवर भाभी ओर नंद भोजाई की छेड़छाड़। चारों और आनंद और धूम धमाल थी।''[20] उपन्यास साहित्य का सार्वकालिक महत्वपूर्ण पक्ष उसकी वर्णनात्मक क्षमता है। क्योंकि भावों के प्रस्फुटन का उचित मूल्यांकन व्याख्या के द्वारा ही सहज एवं सरल हो सकता है। भारत देश की सम्पूर्ण संस्कृति का टिकाव बिन्दु धर्म पर आधारित है। परन्तु कालांतर में हमारे धर्म को तोड़ने के इतने प्रयास किये गये जितने आज तक किसी भी संस्कृति को नष्ट करने के लिए नहीं किये गये हैं। भारत की संस्कृति के विराट वैभव को अक्षुण्ण एवं सार्वकालिक बनाए रखने में हमारे दार्शनिकों, विचारकों एवं महापुरुषों का विशेष योगदान है। इन सब ने अपनी चेतना शक्ति के द्वारा समस्त मानव व्यवहार को नियंत्रित कर धर्म को दूषित एवं खंडित होने से बचाया है और हमेशा मानववादी धर्म की व्याख्या की जो मानव में चेतना, सहिष्णुता, जीवदया जैसे मानवीय गुणों का विकास करता है।–'' धर्म न लालच है, न आतंक। धर्म में नर बलि के लिए कोई स्थान नहीं है।

और न धृणा, द्वेष, भेदभाव, छुआछूत, अमीर–गरीब, देश, जाति आदि के लिए उसमें रत्ती भर जगह है।''[21] डॉ. भटनागर ने अपने महानायकों द्वारा सांस्कृतिक चेतना को जागृत किया और समाज एवं उसकी प्राचीन सनातन संस्कृति को विश्रृंखलित होने से बचाया है।

स्वामी विवेकानंद एक युग के नायक थे वे भारत की संस्कृति के प्रसार में छुआछूत को बाधक मानते थे। वे मानव धर्म साधना के पथ के साधक थे। डॉ. भटनागर ने उनकी इस चेतना को उपन्यास में व्यक्त किया है।–''सिंह, मैं साधु सन्यासियों की टोह में खूब धूमा अनेक संन्यासियों से मिला परन्तु मन को संतोष नहीं मिला बाबा मत्स्यनाथ से एक बार और मिला तो.... ....।''

''तो क्या हुआ?''

''मैंने प्रसाद लिया। फिर बाल्टी उठायी। बाल्टी दूध से आधी भरी हुई थी। मैं चलने लगा तो बाबा ने टोक दिया ''तू जानता है तू किसके यहाँ जाकर बाल्टी देगा।?''

''नहीं''

'' तो तू जान ले। मैं तेरा धर्म भ्रष्ट नहीं करुँगा। वह हरिजन की झोपड़ी है। उसमें वृद्ध हरिजन और उसकी धर्मपत्नी रहती है। अब तू सोच ले कि अब तुझे क्या करना है?''

'' आप की आज्ञा का पालन बाबा''

''तेरा धर्म''

''मेरा धर्म वहाँ दूध पहुँचाना है।''

''तू छुआछूत.................... ।''

''मैं छूआछूत, बड़ा–छोटा, अमीर गरीब, ऊँच नीच आदि नहीं मानता। मनुष्य बस मनुष्य है।''[22] भारतीय संस्कृति की पावन परम्परा में जो जातीय विषमता प्रवेश कर मानव को मानव का शत्रु बनाकर प्रतिस्पर्धा और अशांति का निरंतर विस्तार कर रही थी। विवेकानंद के विचारों में डॉ. भटनागर ने सार्वकालिक तथ्यों का सुन्दर विवेचन संस्कृति के माध्यम से किया है।–''अमर पुत्रों इस विश्व धर्म सम्मेलन से हमें जो सीखने को मिला है वह है कि आध्यात्मिकता, पवित्रता और उदारता किसी धर्म की सम्पति नहीं है। वह सब धर्म में यथा शक्ति विद्यमान है। अंत में, मैं कहूँगा कि सहयोग करो संघर्ष या प्रतिस्पर्धा नहीं। हमें विनाश नहीं शांति चाहिए।''[23] 'विवेकानंद' उपन्यास में डॉ. भटनागर ने भारत के दार्शनिक महत्व एवं संस्कृति को आध्यात्मिक तत्वों की सार्वकालिक व्याख्या से जीव एवं परमात्मा के सम्बन्ध को स्पष्ट किया है।–''जॉन डॉ.रॉकफेलर पहली बार शांत चित्त हुए निष्काम व निस्पृह महापुरुष से साक्षात्कार कर रहे थे। विवेकानंद कह रहे थे'' जॉन डॉ. रॉकफेलर अपार समृद्धि और अनंत वैभव सम्पदा को तब तक चैन नहीं मिल

सकता जब तक वह अध्यात्म जगत् की सौम्य, सात्विक और सहज अनुभूतियों से न जुड़ जाए। उत्तम वत्स अब तुम अपनी दुनिया के बेताज बादशाह बनने की डगर पर निरंतर आगे बढते जाओ, परन्तु निस्वार्थ त्याग वृत्ति की उच्च महत्वाकांक्षा के शिखर पुरुष बनो। यह जीवन परमात्मा का अमूल्य उपहार है।''[24]

भारत के महान विचारकों ने भारतीय संस्कृति एवं धर्म का प्रचार प्रसार किया। परन्तु धर्म परिवर्तन की चेष्टा को नकारा था वे भारतीय मूल्यों का विकास मानव की विचारधारा में देखना चाहते थे इन महापुरुषों ने धर्म परिवर्तन एवं उसकी आड़ में की जा रही राजनीति को भी स्पष्ट किया धर्म परिवर्तन का चमत्कार बंद हो जो जिस धर्म में जन्मा है इस जन्म में वह उसी धर्म में रहे उस धर्म में यदि बेढंगी परम्पराएँ हो तो उनके लिए प्राणप्रण से अंत तक संघर्ष करे।''[25] स्वामी विवेकानंद के माध्यम से भारतीय संस्कृति का परिचय कराने में वेदान्त दर्शन की महत्वपूर्ण भूमिका रही। वेदान्त की व्याख्या का सार्वकालिक पक्ष लोगों के समक्ष एक नवीन अवधारणा के साथ प्रस्तुत हुआ जिसने भारतीय संस्कृति गौरव की ध्वज पताका सम्पूर्ण विश्व में फहरा दी।

''स्वामी विवेकानंद के चित्रों से शिकागो शहर सज गया। विश्व सर्वधर्म महासभा का उत्सव समाप्त हुआ। उनको जगह–जगह से व्याख्यान के लिए निमंत्रण आने शुरु हो गए। वे अमेरिका के नगर–नगर गए। जहाँ व्याख्यान दिए, वहाँ वेदान्त की स्वर लहरियाँ गूँज उठी। उनकी अमृतवाणी की अनूगूँज चित्त से हटाए नहीं, हटती थी। वह कह रहे थे'' तुम सभी अमृत के पुत्र हो, तुम अपने की दीन हीन पापी क्यों समझते हो? तुम लोग वास्तव में परमेश्वर ही हो। अपने इस दिव्य स्मरण को अभिव्यक्त करना ही तुम्हारा ध्येय है।'' अमेरिका से इंग्लैण्ड पहुँचे । वहाँ भी उनकी माँग का मेला लगा। वह विश्व सर्वधर्म महासभा के अकेले, अखण्ड और तेजस्वी दिव्य पुरुष सिद्ध हुए। जर्मनी आए। वहाँ भी वेदान्त की अनूगूँज उठी।''[26] स्वामी विवेकानंद हो या मीरा, महर्षि अरविन्द हो या चैतन्य महाप्रंभु सभी महापुरुषों ने भारत की सांस्कृतिक चेतना को बनाए रखा जीवन के संघर्ष में हमारी आस्था का दीप बनकर हमारी संस्कृति विरासत एवं गौरव ने हमें श्रेष्ठ विचारों का अर्ध्य दिया हमने हर उस गलत परम्परा एवं मान्यता को नकारने का प्रयास किया जो समाज और संस्कृति को नष्ट भ्रष्ट करने का प्रयास कर रही थी भारतीय वेद दर्शन धर्म के उच्च कोटि के सिद्धान्तों के द्वारा सम्पूर्ण विश्व के समक्ष अपनी विचारधारा में सम्प्रेषित करते हुए मानवीय धर्म की स्थापना में सहयोग हमारी उपलब्धि है भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता इसका मानवतावादी चिंतन है। भारत मानव के हितों की साधना का तटस्थ तपस्वी है। हमारी संस्कृति ने मानव को सभ्य होने से पहले मानव बनाया जो अपने गुणों से सम्पूर्ण सृष्टि को अपना परिवार मानकर चले हमारी विरासत ने हमें जो अनुभव साक्ष्य के आधारों पर कराये वे हर काल में सार्वकालिक चेतना से सम्बद्ध है हमारी चेतना को मनुष्यता के संदर्भ में सम्पूर्ण विश्व देखता है यही कारण है कि जहाँ सम्पूर्ण विश्व में धर्म के नाम पर सत्ता प्राप्त करने

का संघर्ष दिखाई दे रहा था वहीं भारत में सत्ता के संघर्ष में धर्म के नैतिक गुणों को नीतिगत आधार बनाया हमने राजनीति में भी शुद्धता, संयम, अनुशासन, प्रजा हित को सर्वोपरि रखा है।

हमारे साहित्य का भी हमारे जीवन पर काफी गहरा प्रभाव पडा है हम जब कभी विचारों के द्वन्द्व में गहरे तक आंदोलित होते है तो हमारे ग्रंथों से हमें जीवन की समस्या का हल प्राप्त हो जाता है हमारी मानवता की विचारधारा के पीछे जो आधार है। वह हमारे पूर्वजों की चेतना का ही अनुभव है, जो साकार हो सार्वकालिक बन गया है। जीवन के संघर्ष से पीड़ित हो जब मानव की अंतरात्मा पुकारने लगती है। तो उसकी महायात्रा प्रारम्भ हो जाती है इस यात्रा के पड़ाव में सफलता, असफलता के भंवर से गुजरता हुआ मनुष्य बार–बार अपने इतिहास की गौरवशाली परम्पराओं का आह्वान करता है।

भारतीय संस्कृति के तत्वों ने हमारी परम्परा और मान्यताओं को आज तक सुरक्षित बनाए रखा है हम चाहे विश्व में कहीं भी रहे हमनें अपनी संस्कृति के प्रभाव को वहाँ की आवोहवा में खुशबू बनाकर बिखेर दिया। हम मानवतावादी संस्कृति के पुरोधा है जो मानव कल्याण के लिए विष को भी अमृत समान धारण कर लेते है। जहाँ विश्व में सत्ता एवं शासन के संघर्ष में संस्कृतियों को विलुप्त करने का कुत्सित प्रयास किया जा रहा था ऐसे समय में हमारे संघर्ष में हमारी विराट संस्कृति ने अपने पुरातन वैभव से हमें चेतना मय प्रकाश से आलोकित किया है।

## (ग) सामाजिक चेतना

मनुष्य एक संघ या समूह में रहने वाला संवेदनशील प्राणी है 'मनुष्य की बुद्धि एवं विवेक उसे अपने अस्तित्व को सुरक्षित रखने की प्रेरणा प्रदान करता है संभवतः उसके अंदर संगठित रहने की भावना को सर्वप्रथम बल सुरक्षा के हेतु प्राप्त हुआ था। सुरक्षा का प्रश्न उपस्थित होने पर मानव समुदाय एवं संगठन की विचार धारा को साकार रुप देने लगा मानव ने जैसे–जैसे अपना विकास करना प्रारम्भ किया वैसे–वैसे उसमें अपने संचित कार्यों के स्थायित्व एवं सुरक्षा की भावना का बीज प्रसूत हुआ। समाज मानव संगठन है जिसमें उसको सुरक्षित एवं विकासशील रहने अवसर प्रदान होता है समाज में रहकर ही मनुष्य अपना जन्म, विकास, उत्थान, पतन और मृत्यु प्राप्त करता है उसके व्यवहार पर समाज का नियमन होता है मानव में समाज के प्रति कर्तव्य बोध एवं दायित्व का बोध इन्हीं नियमों के पालन करने से आता है।'' समाज स्वयं एक संघ है, संगठन है, व्यावहारिक सम्बन्धों का योग है, जिसमें भाग लेने वाले व्यक्ति एक दूसरे से बँधे रहते हैं।''[27] मानव का एक दूसरे में विश्वास, सहयोग, एवं प्रेम ही समाज की रचना का मूल है। ''समाज मनुष्यों का एक समूह है तथा कई समूहों का यह वृहद् समुदाय है। यह मनुष्यों के आपसी सम्बन्धों का पुंज है। इसमें प्रत्येक मानव अपने आत्मविस्तार, आत्म संरक्षण और आत्मोपलब्धि का प्रयास करता हुआ भी एक व्यवस्था में रहता है।''[28] वह अपने हित एवं भविष्य

के लिए चिन्तित रहा है उसकी चिन्ता ने उसे संगठित रहने को प्रेरित किया था और समाज का निर्माण होने लगा। समाज ने मानव को उसके विकास का अवसर प्रदान करते हुए उसे नियंत्रण एवं अनुशासन का भी महत्व समझाया है। ''समाज व्यवहारों एवं प्रक्रियाओं की अधिकार एवं परस्पर सहयोग की अनेक समूहों और भागों की, मानव के व्यवहार के नियंत्रणों एवं स्वाधीनताओं की व्यवस्था है।''[29]

भारतीय समाज एवं सभ्यता सम्पूर्ण विश्व में सबसे प्राचीन है। इसकी प्राचीनता के साथ इसके ज्ञान, विज्ञान, धर्म, संस्कृति, मूल्य, तकनीक, अध्यात्म, दर्शन, आदि का भी महत्व सम्पूर्ण विश्व में शिरोधार्य है भारतीय मनीषियों ने जिन भावों के साथ समाज की परिकल्पना को प्रस्तुत किया वे सब मानव के हित एवं संरक्षण की पोषक थी। समाज का सबसे बड़ा गुण एक सबके लिए और सब एक लिए है हमारे महान पूर्वजों ने जिस परम्परा को समाज के रुप में पुष्पित एवं पल्लवित किया वे सभी मानवीय सद्व्यवहारों का लेखा है मानव समाज की धुरी है जिस पर समाज का चक्र निरंतर गतिशील है।

भारतीय समाज पर हम दृष्टि डालते है तो हमें मानव सम्बन्धों की जानकारी प्राप्त होती है मानव के दो पक्ष है स्त्री और पुरुष, स्त्री और पुरुष के सम्बंध, व्यवहार, त्याग, समर्पण, दायित्व, कर्तव्य, शोषण, आदि का मूल्यांकन समाज की व्यावहारिक भूमि पर किया जाता है समाज में रहकर जब मनुष्य अपने समाज की परम्परा के साथ जुड़ी हुई कुरीतियों और शोषण प्रवृत्ति का विरोध कर समाज को नवीन रुप से सुसंगठित करना चाहता है तो यह उसकी सामाजिक चेतना कहलाती है। समाज के प्रति मानव व्यवहार का सही विश्लेषण करना ही सामाजिक चेतना है। भगवतीचरण वर्मा ने कहा है ''साहित्य, सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है, जो युगीन परिवर्तनों को आत्मसात् करता हुआ शाश्वत प्रवाहमान् है।''[30] डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में मानवीय पक्ष को समाज के धरातल पर विविध रुपों में व्याख्यायित करने का प्रयास किया है समाज का आधार है मानव और मानव के दो रुप है स्त्री और पुरुष अतः डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर जी ने अपने उपन्यासों में इन दोनों के व्यवहार को सरल एवं सहज ढंग से प्रस्तुत करने में सफलता प्राप्त की है इन्होंने अपने उपन्यासों में समाज को आदर्श रुप माना है। उसके आदर्श स्वरुप को बना रहने में मानवीय चेतना के योगदान को भी आवश्यक माना है इनके पात्र समाज की व्यवस्था का पालन हीं नहीं करते अपितु उन परम्परा की सार्वकालिकता का भी बोध कराते है। समाज में व्याप्त असंगत तत्वों की ओर समाज का ध्यान आकर्षित करते है नारी के संघर्ष की कहानी को सामाजिक जीवन के साथ प्रस्तुत करने का श्रम डॉ. भटनागर ने किया है। ''गाँधी जी ने पर्दा प्रथा, बाल विवाह और देवदासी प्रथा आदि स्त्री जीवन से सम्बन्धित बुराईयों का डटकर विरोध किया और इस बात का प्रतिपादन किया कि स्त्रियों को कानून तथा व्यवहार में पुरुषों के समान ही अधिकार प्राप्त होने

चाहिए।''[31] बाल विवाह, जौहर, पर्दाप्रथा, अनमेल विवाह, शोषण, घरेलू हिंसा को प्रस्तुत कर जहाँ नारी के संघर्ष को उद्घाटित किया है वहीं नारी के त्याग, समर्पण, संस्कार, संस्कृति, सहानुभूति, राष्ट्रप्रेम आदि गुणों के साथ उसकी सामाजिक चेतना को भी उभारने का स्तुत्य प्रयास किया डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में जिस सामाजिक चेतना को परिभाषित किया है। वह मानवीय सम्बन्धों की यथार्थ व्याख्या है।

डॉ. भटनागर जी अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में राजा प्रजा के सम्बन्धों के साथ ऊँच नीच, छुआछूत, गरीबी, नशा, विलासिता, शोषण, अत्याचार, कायरता, परतंत्रता आदि पक्षों के प्रति चिंतन महानायकों के जीवन चरित्र के साथ सम्पृक्त कर सार्वकालिक व्याख्या प्रस्तुत करने में सफल रहे है इनके उपन्यासों में अछूतोंद्वार की समस्या को उठाया है। इस समस्या का गहन चिंतन इनके उपन्यास युग पुरुष अम्बेडकर में व्यक्त हुआ है।–'' मलाबार के अछूतों की दशा से वे बिलख पड़ते थे। क्योंकि उन्होनें स्वयं देखा था कि मलाबार के ब्राह्मण बहुत कट्टर थे। वे अपनी स्त्रियों को शूद्र मानते थे। वहाँ अछूत ऊँचे मकान नहीं बना सकते थे। दूध घी नहीं खा सकते थे। घुटनों के नीचे कपड़े नहीं पहन सकते थे। सिर पर बाल नहीं रख सकते थे। सुबह 11 बजे से पहले बाजार नहीं जा सकते थे।''[32]

डॉ. भटनागर ने समाज की ऊँच–नीच की भावना से ग्रसित मानसिकता को भी यथार्थ के साथ प्रस्तुत किया है। वे ऐसे वर्णन से समाज के संघर्ष की पीड़ा से व्यथित अम्बेडकर की पीड़ा के सहारे उपन्यास में स्थान दिया है।

''सर वह अछूत लड़का है।'' एक लड़के ने साहस से उत्तर दिया''

''हमें अपने टिफिन उठा लेने दीजिए।''

''वह श्यामपट्ट छुएगा तो.....''

''टिफिन में रखा खाना हमारे काम का नहीं रहेगा''

''सर मेंरी माँ मुझे नहलाएगी। गंगाजल छिड़केगी और बरतन को आग में डालकर तपाएगी। धोएगी''

''सर हमें भूखा रह जाना पड़ेगा।''

''ठीक है।.........अपने–अपने टिफिन श्यामपट्ट के पीछे से उठा लो।'' अध्यापक ने आदेश के स्वर में कहा और स्वयं एक ओर खड़ा हो गया।

विद्यार्थियों ने देखते ही देखते अपने टिफिन श्यामपट्ट के पीछे से उठा लिए। कक्षा के अधिकांश विद्यार्थी मन ही मन मुस्करा रहे थे। अम्बेडकर के मन में उनकी मुस्कराहट काँटे सी चुभ रही थी। लेकिन वह विवश था।''[33]

डॉ. भटनागर ने समाज की पीड़ा को समझा और उसका समाधान खोजने का प्रयास किया है। वे चाहते है कि समाज का स्वरुप ऐसा हो जैसा पूर्व में था सभी लोग समान भाव से एक दूसरे का सहयोग करते हुए भाइचारे के साथ रहे। ''जाति व्यवस्था अत्याचार और शोषण का मूर्त रुप है। जब तक जाति, धर्म और लिंग के भेदभाव को मिटाकर सभी व्यक्तियों को समान महत्व देने के सिद्धान्त के आधार पर नवीन व्यवस्था का ढाँचा नहीं खड़ा किया जाता तब तक जाति प्रथा में सुधार करने से कोई लाभ नहीं हो सकता।''[34] उपन्यासकार ने समाज की व्यवस्था को जाँचा परखा और उसके स्वरुप को चेतनागत भावों के साथ सम्पृक्त किया। 'जोगिन' उपन्यास में मीरा के माध्यम से सती प्रथा को समाज की कुप्रथा बताते हुए उसका खण्डन किया है। '' 'मैं' जानती थी कि विधवा नारी की स्थिति हमारे समाज में मृतजीव से बुरी है। परन्तु मैंने जीने का निर्णय किया और चाहर दीवारी में घुट घुटकर मरने की अपेक्षा यह यह समझा कि समाज का सहारा लेकर जीने की अनुभूति को बनाए रखा जाए। मैं सती का नहीं, जीने का उदाहरण बनूँ और दूसरों को जीने की प्रेरणा दे सकूँ।''[35]

डॉ. भटनागर ने मीरा के व्यक्तित्व में सामाजिक व्यवस्था की अवधारणा में स्त्री पक्ष का नेतृत्व करते हुए उसे स्वतंत्रता प्रदान की है वह सम्पूर्ण स्त्री जगत् के अधिकारों की आवाज बन गई थी'' मेरी यह लड़ाई न केवल राजघराने से है अपितु उन सबसे है जो स्त्री से उसके जीने के निर्णय को छीनती है। और अपने निर्णयों पर जीने के लिए विवश करती है।''[36]

स्त्री जीवन को समाज के रंगमंच पर सार्वकालिक मूल्यों के साथ प्रस्तुत करते हुए डॉ. भटनागर ने उसके स्त्री जीवन के संघर्ष को चेतना प्रदान की स्त्री का जीवन प्रारब्ध के भरोसे छोड़ना कायरता है उसे अपने जीवन का नेतृत्व स्वयं करना होगा। स्त्री को स्वयं अपने अस्तित्व को संवारना होगा। क्योंकि पुरुष से कहीं ज्यादा उसकी प्रतिद्वन्द्वी स्त्री ही है ''नारी नारी की शत्रु क्यों वह अपने पाँव पर कुल्हाड़ी मारना चाहती है।''[37]

उपन्यासों में वर्णित स्त्री पक्ष को बहुविवाह की समस्या से पीड़ित दिखाया है तो उसके प्रति चेतनामय भावो की भी अभिव्यक्ति मिलती है ''उसे लगता है कि स्त्री जाति के लिए विवाह एक बंधन है, परतंत्रता है वह पूर्ण रुपेण पुरुष पर आधृत है और जिसमें बहुविवाह वासी नारी के लिए दो जख से भी भयावह और कष्टदायक है। वह पुरुष परम्परा से किस दृष्टि से कमजोर है। ...........किसी से भी नहीं फिर क्यों वह पुरुषाधृत है एकदम? ....... अस्वस्थ परम्पराओं के लिए नारी जीवन को बलि क्यों चढ़ाया जा रहा है? यदा कदा उसमें पुरुष की उच्छृंखलता और अधिनायकवादी प्रवृत्ति के प्रति विद्रोह की काली आँधी उठती थी। वह समाधिकार के लिए तड़प उठती थी।''[38]

डॉ. भटनागर के 'ना गोपी न राधा' उपन्यास में समाज में फैली बुराइयों को उजागर करते हुए उनके कारण, प्रभाव, परिणाम एवं समाधान को व्यक्त किया है। इन्होंने समाज से जुड़ी हर बुराई, कुप्रथा, कुरीति, अंधविश्वास, ढोंग, अधर्म व अन्य कई समस्याओं पर प्रकाश डालते हुए एक स्वस्थ समाज की साधना का लक्ष्य प्रस्तुत किया है। 'ना गोपी ना राधा' उपन्यास का पात्र समाज में कुछ असामाजिक तत्वों की उपस्थिति पर समाज की चुप्पी पर निशाना साधता हुआ समाज के सामने प्रश्न और समाधान प्रस्तुत करता हुआ कहता है।–'' ये गुंडे किसने पैदा किये है? हमने। हमने। हमने अपनी मर्दाई खूंटी पर टांग दीनी है। न भला, दस पाँच गुंडे होते है। वह समाज निखट्टुओं, नपुसंको और कायरों का, असभ्य और अशिष्ट तथा हिंजड़ों का होता है।''[39] समाज में व्याप्त विषमता का चित्रण करते हुए उनका निराकरण करना साहित्य को शिवमय बना देता है जाति के बंधनों को स्वयं से मुक्त रखते हुए मानवता को स्थापित किया जाना है। साहित्य को सार्वकालिक चेतना से सम्बद्ध करता है 'न गोपी न राधा' में मीरा का चिंतन स्पष्ट करता है।–''छूत अछूत क्या होता है, भाई? मनुष्य सब मनुष्य है। बराबर है वहीं रक्त ,वहीं हाड मॉस वहीं हाथ पाँव फिर भेद क्यों और कैसा?''[40]

समाज में संकीर्णता का प्रभाव इतना बढ़ गया है कि वह बुराइयों को ही अपनी प्रथा ,परम्परा एवं प्रतिष्ठा का प्रतीक मान बैठा था और इसका प्रचलन तेजी से बढ़ने लगा। डॉ. भटनागर ने समाज की इस पीड़ा दायक कुप्रथा के पीछे के सत्य को उजागर करने का प्रयास किया। सती प्रथा पर प्रकाश डालते है ''रमाबाई को सहारा देकर चिता की सेज पर ला बिठलाया गया। उसकी पीठ को चंदन की लकड़ी का सहारा दे दिया गया कहीं वह नशे में गिर न पड़े या अग्नि की ज्वाला के भय से बाहर कूद न पड़े इसलिए उसे फूलों की डोरी से बाँधा जा रहा था। ताकि दर्शक इस व्यवस्था को सती का सम्मान और प्रतिष्ठा समझे मुख्य रहस्य को न जान सके।''[41]

मीरा अपने को तो इस कुप्रथा से मुक्त करती है साथ ही वह स्त्री के पक्ष में एक सशक्त आवाज बनकर भी प्रकट हुई है। वह समाज के समक्ष इसका पुरजोर विरोध करती है वह कहती– ''क्या कोई पति अपनी पत्नी की मृत्यु हो जाने पर उसकी चिता के साथ सती हुआ है? नहीं, नहीं कभी नहीं! बहनों और भाइयों यह शुभ कार्य नहीं है। मनुष्य को मारने की कोई धर्म, कोई समाज और कोई शास्त्र आज्ञा नहीं देता है।''[42] भारतीय समाज की सनातन संस्कृति में तत्कालीन कारणों ने रुढ़ियों का स्वरुप प्राप्त कर लिया तब समाज में भेदभाव, छुआछूत, ऊँच–नीच, अमीर–गरीब, सती प्रथा, बाल विवाह, अनमेल विवाह, अज्ञानता, अंधविश्वास ढोंग, पाखण्ड, भ्रष्टाचार, कालाबाजारी, और भी अन्य कई समस्याओं ने अपने पैर जमा लिये। अज्ञानता मनुष्य की सबसे बड़ी शत्रु है हमारे यहाँ शिक्षा, सभ्यता एवं संस्कार प्रदान करती है शिक्षा के द्वारा मनुष्य अपने हित अहित, उचित–अनुचित, का विवेक प्राप्त करता है। शिक्षा का तात्पर्य यहाँ

मात्र किताबी ज्ञान से ही नहीं अपितु सांसारिक ज्ञान से है। हमारे देश का वैभव का आधार हमारा ज्ञान ही है। जिसने हमें सम्पूर्ण विश्व में विश्व गुरु की गरिमा तक पहुँचाया है।

शिक्षा ही मनुष्य को निर्णय शक्ति प्रदान करती है। मनुष्य के जीवन में शिक्षा निरंतर चलने वाली मृत्यु पर्यन्त प्रक्रिया है।'' सत्य जानना चाहते हो और जिन्दगी को समझना चाहते हो तो पढ़ो और सोचो।............... पढ़ाई कभी ना खत्म होने वाला एकाकी पथ है। इस पर आजीवन चलते रहो तो भी रास्ते का अंत आने वाला नहीं है।''[43] डॉ. भटनागर ने शिक्षा के महत्व पर अपने विचारों को उपन्यास के माध्यम से व्यक्त किया है वे मानते है कि इस देश को शिक्षा ही आगे बढ़ा सकती है वे मानते है शिक्षक और संत की भूमिका इस देश के भविष्य निर्माण में सहायक है चंद्रगुप्त को सम्राट बनाने की प्रक्रिया के लिए चाणक्य जैसे गुरुओं की आवश्यकता है जो इस संसार में शांति स्थापित करने के लिए सदैव प्रयासरत रहे।'' संत और अध्यापक किसी देश की दृष्टि है उसका वर्तमान है और उसका भविष्य।......... जब ये दोनों या दोनों में से एक अन्याय या अत्याचार के प्रति आँखें मूंद लेता है। तब वह समाज ऐसी नौका में बैठा हुआ अनुभूत होता है। जो भंवर में फँस चुकी हो और डूबने की प्रतीक्षा कर रही हो।....... जिस देश का संत और अध्यापक अपने तप से गिर गया, अपने सामाजिक गुणों से मुक्त हो गया और अन्याय तथा अत्याचार की अँधड़–आँधी में बह गया, वह देश उसी दिन से चरित्र की अक्षय संपत्ति से हाथ धोने लगेगा।....... इस देश के पतन और विदेशी आक्रांताओं का एक कारण वह भी है।........... अन्याय और अत्याचार सरकार और उसके कानून से नहीं संत और अध्यापक के उदात्त चरित्र, चट्टानी मनोबल और बलिदानी कार्यों से रुकते है। उनके शिष्य रोकते है।.... हर अध्यापक के अन्दर यदि एक चाणक्य विराजता हो तो उससे अनेक चंप्द्रगुप्त खड़े किये जा सकते है।''[44] शिक्षा से ही मानव में समाज के प्रति दायित्व बोध आता है और वह अपने कर्तव्यों को पूरा करता है। डॉ. राधाकृष्णन के अनुसार ''शिक्षा में ज्ञान प्राप्ति और कुशलता के विकास के साथ–साथ सांस्कृतिक मूल्यों, सामुदायिक और सामाजिक उत्तरदायित्व से सम्बन्धित कार्यक्रमों का भी समावेश होना चाहिए जिससे विभिन्न वैज्ञानिक और तकनीकी प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले व्यक्ति भी अपने दायों व उत्तरदायित्वों से परिचित हो सके।''[45] मनुष्य के लिए यह सब आसान नहीं था हमारे विचारकों ने इसे प्रकार अपने को सरल रुप में स्पष्ट किया कि समस्त मानव जाति का कल्याण संभव हो हमारे देश में जिन कुप्रथाओं ने समाज को संस्कृति विहिन किया हमारे महापुरुषों ने अपने चिंतन से उन्हें दूर करने का प्रयास किया है। 'जोगिन' उपन्यास में डॉ. भटनागर ने दलितों के प्रति अमानवीय व्यवहार को गलत ठहराते हुए उनके कर्तव्य को सराहा है। ''समाज की सारी गंदगी वे उठाते है समाज को वे साफ रखते है यह कार्य तो ईश्वर का है यह तो गंगा जमुना का है। गंगा जमुना हर जगह कहाँ है?.......................... लेकिन ये लोग हर जगह है। खुद गंदे रहते है, गंदगी में रहते है। चिथड़ों में लिपटे रहते है।......... सबकी खरी खोटी सुनते है। परन्तु वे

फिर भी आशीष बाँटते है।''[46] इसी समाज में व्याप्त बुराइयों का अंत करने का प्रण किये हमारी संस्कृति एवं समाज के पुरोधाओं अनेक संकल्पों के द्वारा समाज का हित निस्वार्थ भाव से किया है। हमारे समाज में स्त्री पर अनेक प्रकार के प्रतिबंध थे नारी का शोषण विविध कुप्रथाओं के माध्यम से किया जा रहा था मीरा ने अपने भक्ति साधना के पथ पर चलते हुए ऐसी अनेक परम्पराओं का स्वयं खण्डन किया और समाज को एक नयी दिशा प्रदान की थी। वह निडर होकर धर्म ठेकेदारों के कलुषित विचारों से निष्कलंकित रही मीरा पर आरोप लगाए परन्तु वह अंत तक निडर बनी रही।

''मीरा विधवा है।

''मीरा पैदा होने के बाद माँ को खा गई और विवाह होने के कुछ वर्षों बाद अपने धणी कुँवर भोजराज को निगल गई।''

''वह कुलंकनी है।

''वह विधवा होकर सधवा का वेश बनाए हुए घूमती है। उसने लोक मर्यादा को ताक पर रख दिया है। और धर्मोचार्यो को साफ बता दिया है।''[47] जीवन की सफलता व असफलता से परे डॉ. भटनागर का चिंतन सार्वकालिक तत्वों की व्याख्या करता रहा उनका मोह लोकप्रियता से दूर मानव मन की गहराईयों और उनके अंतर्द्वन्द्व को टटोलने लगता है उपन्यासकार हर पल लेखन का विषय बिना सोचे सिर्फ मानवीय आलोक में लिखते है इनकी सोच वर्तमान को भविष्य की तरफ ले जाने वाले उस साधक की जो अपने अतीत से आशीर्वाद प्राप्त करता है समाज की दशा का चिंतन करते हुए वह उन प्रासंगिक तथ्यों की सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्ति दर्शाते हुए मानव को नवीन दिशा प्रदान करते है।

हमारे समाज में दहेज प्रथा एक ऐसी समस्या है जिसका चिंतन प्रासंगिक एवं सार्वकालिक है। यह भीतर ही भीतर समाज को खोखला करता है इसकी पीड़ा से समाज में टूटन एवं बिखराव आता है दाम्पत्य के सुखी संसार में जब इसका जहर घुलता है तो यह संसार की मानवता को शर्मसार कर देता है डॉ. भटनागर ने इस समस्या को स्पष्ट करते हुए इसे पीछे के कारणों को भी संदर्भित किया है 'तरुण संन्यासी' उपन्यास में ऐसे ही संदर्भ को प्रस्तुत किया है।

''बेटे, एक सुशील लड़की है।''

नरेन्द्र मौन।''

''कन्या पक्ष धनाढ्य है।''

''नरेन्द्र फिर मौन''

''वह स्वेच्छा से दहेज में दस हजार रुपये देने को तैयार है।''[48]

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने समाज की इस कुप्रथा की तटस्थता से विरोध करते हुए इसके संदर्भो का चित्रण उपन्यासों में किया है। समाज के समक्ष इसके दुष्परिणामों की भावात्मक अभिव्यंजना प्रस्तुत की स्त्री का संघर्ष पुरुष की तुलना में कई सौ गुना अधिक है। उसका संघर्ष एवं उसकी चेतना को तोड़ने मरोड़ने का प्रयास हर पल चलता रहता है। उसकी अवस्था एवं अस्तित्व को लेकर चिंतन आज भी सार्वकालिक है लड़की को पराया मानते हुए अपने घर से विदा करने का सौभाग्य प्राप्त करने के लिए समाज बाल विवाह जैसी कुप्रथा को संरक्षण प्रदान करता है। समाज में प्रचलित इस परम्परा का राजेन्द्र मोहन भटनागर ने मंथन किया और सामाजिक सरोकार को प्रस्तुत किया। भीमराव को जीवन इस कुप्रथा को समझने का अवसर प्राप्त हुआ है।

''तेरी शादी मेरी आँखो के सामने हो जाए, यह मेरी दिली तमन्ना है।'' ''मुझे आगे पढ़ने दीजिए।''

''शादी उसमें रुकावट सिद्ध नहीं होएगी। ''रामजी कहते है।''

''बाल विवाह!'' भीमराव अति मंदिम स्वर में इतना ही कह पाते है।''

''तू नहीं जानता।'' रामजी का स्वर था।

''परन्तु जानना अवश्य चाहता हूँ।''

''क्या?''राम जी उससे पूछते है।

''यही कि'' अभी से गृहस्थी का झंझट क्यों?''

''तेरे कहने से एक दफे तो मंगनी तोड़ दी थी और महारों की पंचायत से मिला दण्ड भी पाया था'' राम जी ने सहजता से कहा।

''वह भी कल ही की घटना है।''

''लेकिन इस बार मैंने उन्हें वचन दिया है।''[49]

डॉ. भटनागर ने 'कुली बेरिस्टर' उपन्यास में नारी चेतना को अभिव्यक्त किया है वह अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष की आवाज बुलन्द करना जानती है स्त्री अपने अधिकारों के प्रति जागृत होने लगी है।–''तुम क्या जानो औरत क्या होती है। मर्द सब एक से है चाहे पढ़े तो या बेपढ़े उन्हें तो सवारी करनी आती है हुक्म चलाना ये अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानते है उन्हें इस बात की चिन्ता नहीं कि दूसरे में भी जान है। उसका भी दिल है वह भी कुछ चाहती है वह मर्द की जूती नहीं, जब चाहा पहना, जब चाहा उतारा और जहाँ चाहा उतारा। वह औरत है,

धर्मपत्नी नहीं।''[50] स्त्री की चेतना के पीछे एक लम्बा संघर्ष है हमारे समाज सुधारकों में नारी को लेकर समाज में विरोधाभास था समाज परतंत्रता की पीड़ा भोग रहा था और परतंत्रता की पीड़ा रुपी कोढ़ में खाज रुपी छूत–अछूत का होना समाज को दो भागों में बाँट रहा था अम्बेडकर ने सत्याग्रह का ही रास्ता चुना और परतंत्रता से मुक्ति के साथ सामाजिक समानता का आंदोलन भी गति पकड़ने लगा–'' भीमराव अम्बेडकर ने उसी सत्य के आग्रह का सहारा लिया जिसका गाँधी जी ने दांडी यात्रा शुरु करते हुए लिया था। दोनों के लक्ष्य भी समान थे। गाँधी जी देश को अंग्रेजी हूकूमत से आजाद कराना चाहते थे और भीमराव अम्बेडकर सवर्ण हिन्दूओं से असवर्ण हिन्दूओं को मुक्त कराना चाहते थे। दो सत्याग्रह आंदोलन एक साथ एक ही लक्ष्य के लिए देश में प्रारम्भ हुए।''[51] भारत मुक्ति चाहता था उन समस्त बंधनों से जो समाज को जकड़े हुए थी जनता की पीड़ा चीत्कार करने लगी और मन की चिंगारी आक्रोश रुपी ज्वाला बनने लगी। अब मुक्ति का संघर्ष पथ तैयार था जनता अग्रसर थी पीड़ा, आक्रोश, कुंठा, संत्रास को अहिंसा और सत्याग्रह का साथ मिला तथा राष्ट्र पुननिर्माण की ओर बढ़ने लगा समाज के स्वरुप का वर्णन करते हुए मानव के व्यवहार का मूल्यांकन करना ही उपन्यासकार का लक्ष्य है।

मनुष्य के जीवन में जब मूल्यों ने जन्म लिया और वह समूह भावना के विकास में सहयोगी बनने लगे तो स्वतः ही मनुष्य ने परम्परा के साथ अपने को सम्पृक्त कर लिया। डॉ. शशिभूषण सिंहल लिखते है– मानव के विकास क्रम में समाज की स्थापना हुई है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है व्यक्ति ने अपनी रीति सम्बन्धी एवं पैतृक मूल वृत्तियों के कारण अपना अकेलापन त्याग कर पारिवारिक जीवन अपनाया है उसके उपरांत उसकी सामाजिक भावना उत्तरोत्तर विकसित होती रही है। अतः समाज सोद्देश्य व्यक्तियों का गतिशील गठन है समाज अपने सदस्यों को बाह्य घातक तत्वों द्वारा नष्ट होने से बचाता है रक्षा कर उनके व्यक्तित्व का विकास करता है और कुछ जीवन मूल्यों की प्रतिष्ठा कर उन्हें पाने के लिए प्रयत्नशील होता है।''[52]

मानव ने सदैव अपने आप को समाज का प्रधान अंग मानते हुए इसके प्रति अपने दायित्वों का निर्वाह भी किया है मानव की चिंता अपने समाज को संगठित, अनुशासित एवं सुरक्षित रखने की रही है डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में समाज की भावना एवं संस्कार को रेखांकित करने में पूर्ण सफलता प्राप्त की है समाज तथा उसके प्रति मानवीय चेतना की सार्वकालिक व्याख्या को प्रस्तुत करने में डॉ. भटनागर ने जिन मूल्यों का विवेचन एवं विश्लेषण किया है वे सामान्य होकर भी दिव्यता एवं दैवीय होने का आभास कराते है अपने समाज के प्रति कर्तव्यों का भाव समाज की एकता एवं अखण्डता को परिभाषित करता है इनके ऐतिहासिक उपन्यास में जिस समाज को प्रस्तुत किया है वह हमारी संस्कृति, सभ्यता, सहजता, संस्कार, और हमारी चेतना का परिचायक है। डॉ. सोमनाथ शुक्ल कहते है–''सामाजिक चेतना

की सार्थकता, प्रत्येक माननीय समस्या पर सामूहिक दृष्टि से विचार करना हैं, सामाजिक चेतना से आधुनिक युग में अधिकाधिक विस्तार प्राप्त किया है। व्यक्ति, उसका मन और महत्वाकांक्षा, परिविार और परिवेश, समाज, सामाजिक नीति और अनीति, धर्म और अध्यात्म, राज्य और राजनीति शांति और समर आदि सभी सामाजिक चेतना के अंतर्गत विचार योग्य है।"[53] डॉ. भटनागर ने समाज का मूल्यांकन अवस्था का भी भावात्मक रुप भी प्रस्तुत किया भारत के विशाल भू भाग पर जो सामाजिक ताना बाना हमारे पूर्वजों ने स्थापित किया उसे सत्ता के लोभी शासकों और विदेशी आक्रमणकारियों ने छिन्न भिन्न कर दिया। हमारी संस्कृति और सभ्यता को दूषित कर दिया हमारे मूल्यों को अवनति की ओर ढकेल दिया समाज में स्थापित स्वस्थ्य परम्परा एवं रीति रिवाजों को भ्रष्ट कर हमारी सामाजिक श्रृंखला को तोड़ने का प्रयास किया। मानव जीवन की समरसता का क्षरण होना यही से प्रारम्भ हुआ। पर्दा प्रथा, दहेज प्रथा, छूआछूत, ऊँच नीच,शोषण, अन्याय, कुण्ठित परम्पराएँ, कुरीतियाँ, आडम्बर, अंधविश्वास, ढोंग, पाखण्ड, आदि विषमता समाज में व्याप्त होने लगी धीरे धीरे समाज के मूल्यों का पतन होने लगा था समाज में ऐसे तत्वों के कारण रुढ़ियाँ पनपने लगी जो मानव के जीवन को नष्ट करने लगी डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में भारतीय जनमानस की पीड़ा को मार्मिक अभिव्यक्ति प्रदान की मानव जीवन के विविध दृष्टिकोण इस संदर्भ में प्रस्तुत किये है।

## (घ) आर्थिक चेतना

मानव एक विकासशील प्राणी है निरंतर गतिमान रहकर वह अपने संसाधनों को जुटाकर भौतिक सम्पन्नता को आवश्यक मानता है। यद्यपि मानव की प्रथम आवश्यकता भोजन है तथापि भोजन और उससे भी अधिक सामाजिक जीवन में स्थापित परम्परा, रीति–रिवाजों का भी निर्वाह उसकी प्रतिष्ठा का प्रतीक है अतः मानव जीवन में सामाजिक जीवन की गतिविधियों में सहभागिता उसे सम्पन्न एवं समृद्ध होने का भाव जागृत करती है। मनुष्य का संघजीवी होने की सबसे बड़ी उपलब्धि दूसरों के लिए भी कार्य करना है वह अपने परिवार, समाज के लिए भी अपने कर्तव्यों का पालन करता है भारत एक कृषि प्रधान देश है कृषि, पशुपालन, लघु एवं कुटीर उद्योग, हस्तकला, वास्तु शिल्प आदि यहाँ की अर्थव्यवसथा के प्रधान अंग है मानव जीवन के विकास के साथ इनका भी निरंतर विकास होता रहा है प्राचीनकाल से मानव इन्हीं के सहारे अपने जीवन की सम्पन्नता अर्जित करना मानव का उद्देश्य है।

अर्थव्यवस्था का सम्पूर्ण चक्र कृषि पर आधारित है कृषि प्रकृति पर आधारित है कृषि का सम्बन्ध वर्षा से है वर्षा की अनियमितता के कारण कृषि को जुआँ कहा जाता है जब तक फसल कट कर घर नहीं आ जाती तब तक किसान की चिंता सदैव बनी रहती है कृषि के आधार पर हमारी भावी योजनाओं को मूर्त रुप मिलता है। मानव की सभी आवश्यकताएँ, रोटी, कपड़ा,

मकान, स्वास्थ्य, शिक्षा, रीति–रिवाज, धर्म, परम्परा आदि का कृषि के साथ गहरा सम्बन्ध है अतः हमारे यहाँ संस्कृति को कृषि प्रधान संस्कृति माना जाता है।

भारत जैसे विशाल देश में कृषि हमारी सभ्यता एवं संस्कृति को भी परिभाषित करती है हमारी सम्पन्नता का अंदाजा हमारे कृषि कर्म से लगाया जाने लगा था मूल्यों के साथ अर्थ की सम्पृक्ति ने मानव को संग्रह करने की प्रेरणा दी है मनुष्य ने अपने वैभव को अस्तित्व के साथ जोड़कर अर्थ के नवीन अर्थ स्थापित किये। ''अर्थ शब्द धन सम्पत्ति या मुद्रा का पर्यायवाची नहीं है, यह भौतिक सुखों की सभी आवश्कताओं और साधनों का द्योतक है।''[54] मानव धीरे–धीरे अपनी आवश्यकता से अधिक संग्रह करने लगा उसको जीवन की विपदा एवं आपातकाल का अनुभव होने लगा था मानव अपने को सुरक्षित एवं सवंर्द्धित रखने के लिए अर्थ से जुड़ी हर समस्या का समाधान चाहता है इसी क्रम में वह औरों के अधिकार का भी अतिक्रमण कर अपनी सीमाएँ लाँधता है, तो संघर्ष होता है। मानव जीवन का अर्थ आधारित संघर्ष जिसे विचारकों एवं समाजशास्त्रीयों ने आर्थिक चेतना का नाम से अभिहित किया है।

उपन्यासों का वृहद् कलेवर मानव जीवन के विविध पक्षों का उद्घाटन करता रहा है मानव के चिंतन को व्यक्त करना, विश्लेषण करना और उसका समाधान प्रस्तुत करना उपन्यासकार का प्रमुख उद्देश्य रहता है भारत एक विशाल देश है यहाँ का सम्पूर्ण जीवन कृषि पर आधारित है अतः उपन्यासों में कृषि और उससे जुड़े सभी परम्परा एवं रीति–रिवाजों की संस्कृति को भी साहित्यकारों ने व्यंजित किया है आर्थिक चिंतन पक्ष को सामाजिक जीवन के संघर्ष के साथ साहित्य में प्रस्तुत करने का श्रेय साहित्यकारों को प्राप्त है क्योंकि इन्होंने अपनी साहित्यिक विधाओं से मानव जीवन की विषमता को दिखाने का पूर्ण प्रयास किया है।

भारत में प्रारम्भ से ही किसान को अपने आर्थिक संकटों का सामना करना पड़ा है वह कभी प्रकृति का प्रकोप झेलता तो कभी शासन की लगान प्रणाली का शिकार हुआ था किसान जीवन की आर्थिक समस्या से आज तक मुक्ति न पा सका का है। डॉ. भटनागर ने 'सरदार' उपन्यास में किसान की पीड़ा को दर्शाया है ''अतिवृष्टि से खेड़ा भयंकर अकाल की चपेट में बात साधारण थी और स्पष्ट कानून की व्यवस्था थी कि यदि फसल चार आने हो या उससे कम हो तो लगान मुआफ या स्थगित करना चाहिए। लड़ाई का मुद्दा था सरकार की मनमानी या रौद्र रुप। सरकार कह रही थी कि फसल चार आने से ज्यादा पकी है। उसने पूरे जमीन का लगान वसूल करने की आज्ञा जारी कर दी।''[55] किसान निरंतर शोषण किया जा रहा है। शोषण उसके जीवन को झनकझोरता रहा है किसान की आर्थिक समस्या को वर्तमान में भी उसी रुप में देखा जा सकता है। जैसा कि प्रारम्भ में थी उसके अधिकारों को आज भी संघर्ष की पीड़ा निशानों के रुप में देखा जा सकता है। भारत की आम जनता और किसान के संकटों का वर्णन हमारे साहित्यकारों ने अपने साहित्य में किया है। डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में

भारतीय जनता की आर्थिक समस्याओं का चित्रण किया है शोषण की पीड़ा से व्यथित कृषक एवं आम आदमी की पीड़ा की प्रस्तुति इन्होंने अपने उपन्यासों में वर्णित की है संसार की इस पीड़ा को सार्वकालिकता के साथ प्रस्तुत करने के साथ तथ्यों, भावों का भी प्रस्तुतिकरण किया है जिन्होंने मानव जीवन के संघर्ष को प्रेरणा दी है। मानव के आर्थिक संकटों के साथ उसके जीवन के विविध संदर्भों का प्रस्तुतीकरण करना एवं उसके प्रति चेतनागत भावों की अभिव्यक्ति करना डॉ. भटनागर का उद्देश्य रहा है उपन्यासकार ने आर्थिक पक्ष पर चिंतन करते हुए 'अन्तिम सत्याग्रही' उपन्यास में आर्थिक समस्या का चित्रण अभिव्यक्त किया है ''इन्सान को तन्त्र नहीं, जीवित रहने की सामूहिक व्यवस्था चाहिए। भरपूर साझेदारी के अवसर चाहिए और चाहिए आपसी पहचान। आपसी पहचान तो आज रही कहाँ है ? होती तो जीवित इन्सान को रोज–रोज झुग्गी–झोंपड़ी और घूरे के अन्दर नहीं ढकेल दिया जाता। बदबूदार कब्रगाह यों तो नहीं पनपते !.......आज का कथित समझदार इंसान कितना निर्ल्लज और निर्मम है कि अपने लिए यहाँ भी भीख माँगने में संकोच नहीं करता। यह जानते हुए कि वह उनके लिए कुछ नहीं कर पाएगा।''[56]

इन्होंने भारत के सैकड़ों वर्षों के ऐतिहासिक जीवन की व्याख्या को सार्वकालिक चेतना के सन्दर्भ में प्रस्तुत करते हुए मानव जीवन के आर्थिक पक्षों का अध्ययन विश्लेषण एवं समाधान प्रस्तुत किया है। इनके साहित्य में जिन महापुरुषों के जीवन चरित्र को रुपायित किया गया है वे सब भारतीय तथ्यों एवं तत्वों से पूर्णतया सम्पृक्त है भारत की संस्कृति में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की अवधारणा में अर्थ को द्वितीय स्थान पर स्थापित करना ही अर्थ की महत्ता को प्रकट करता है। भारतीय शासन व्यवस्था का संचालन और जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति बिना आर्थिक उपकरणों के संभव नहीं है अतः भारतीय राज्य नीति के कुशल एवं प्रतिष्ठित आचार्य चाणक्य ने अर्थ को महत्व प्रदान करते हुए अपने ग्रंथ में आर्थिक पक्ष पर विचार प्रस्तुत किए है।

डॉ. भटनागर ने अर्थ और उसके विविध पक्षों पर अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में प्रकाश डाला है भारतीय साहित्यकारों ने अपनी सत्य शिव एवं सुन्दरम् की भावना से आगे जाकर मानवीय मूल्यों का चिंतन करना सीख लिया है इसी कारण से साहित्य में चेतना तत्व का समावेश हुआ है। मानव के भावों की प्रस्तुति यथार्थ के धरातल पर करना उसकी चेतना को इंगित करता है मानव को जीवन यापन में किन कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है? वह किन परिस्थितियों से संघर्ष करता है वह कब? कैसे? कहाँ? अपने आपको स्थापित करने का प्रयास करता है इन सब के साथ मूल्यों का चिंतन करना और साहित्य की रचना के माध्यम से जीवन को साकार स्वरुप प्रदान करना ही उपन्यासकार का लक्ष्य है। भारत जैसे विशाल भू भाग वाले देश को कभी इतनी विपन्नता का सामना करना पड़ेगा यह कभी कल्पना भी नहीं कि जा सकती थी परन्तु समय चक्र एक सा नहीं रहता है निरंतर गतिमान समय ने परिस्थितियों के परिवर्तन को झकझोरा तो वैभव और सम्पन्नता से झूमने वाला देश क्षुधित, तृषित, विपन्नता का

प्रतीक कब बन गया पता ही नहीं चला हमारी विरासत को ध्वस्त किया, संस्कृति को नष्ट किया, हमारे संसाधनों को लूटा, हमारे धर्म, समाज, संस्कृति के साथ हमारी स्वतंत्रता का भी हरण कर हमें हमारे देश में ही गुलाम बना लिया गया यह सब एक बुरा सपना था। भारतीयों ने स्वप्न की हकीकत को भोगा एवं संघर्ष किया। जीवन की परिस्थितियाँ चाहे कितनी भी विपरीत हो हमारे चिंतन में जो दर्शन है वह हमारी अतीत की परम्पराओं से गृहीत है हमारा अतीत स्वर्णिम व मानवीय था हमने अपनी चेतना को शक्ति के रुप में प्रयोग करना प्रारम्भ किया जिसने संघर्ष को सम्बल प्रदान किया।

भारतीय समाज की सारी व्यवस्था का आधार कृषि है हमने उन्नत कृषि के ज्ञान व तकनीक के साथ ही इसके संयमित उपभोग की साधना पर बल दिया प्रकृति के साथ हमारा व्यवहार एक परिवार के संकल्प को परिभाषित करता है हवा, पेड़,–पौधे, झरने, नदी, सागर, पृथ्वी आदि सभी प्राकृतिक तत्वों के साथ हमने अपने दायित्व एवं कर्तव्यों का निर्वाह किया। हमारी सबसे बड़ी विशेषता हमारा संयम एवं अनुशासन है जब कालांतर में विदेशी आक्रांताओं के पोंव पवित्र भूमि पर पड़े तो उनका लक्ष्य लूटना था लूट का कोई आदर्श नहीं होता है उसका कोई चरित्र नहीं होता है परन्तु जो इस लूट से आहत और पीड़ित होता है वह मानव मन की समस्त चेतना झंकृत कर जाता है। इतिहास की घटना का स्मरण होने पर जख्मों के निशान फिर हरे हो जाते है कसक फिर कडक हो उठती है और चिंतन पुनः चैतन्य होने लगता है।

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने भारत की आर्थिक समस्या को अपने उपन्यासों में विविध रुपो में वर्णित किया है इन्होंने इतिहास के सभी पक्षों के साथ आर्थिक समस्या को भी दर्शाया है। डॉ. भटनागर ने भारत की आर्थिक विपन्नता का बड़ा कारण लगातार होने वाले युद्ध एवं स्थानीय कर प्रणाली को माना है इन्होंने अपने उपन्यासों में इस समस्या को वर्णित करते हुए इसको जनता के हितों के साथ जोड़ा है इनके उपन्यास 'नीले घोड़े का सवार' उपन्यास में महाराणा प्रताप ने जो संघर्ष स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए किया वह जनता पर आर्थिक संकट भी उपस्थित करता है वे आर्थिक पीड़ा भी भोगते है और प्रजा की आर्थिक पीड़ा से भी व्यथित भी होते है वे जनता की आर्थिक पीड़ा को कम करना चाहते है हर स्तर पर उसके लिए भी प्रयास भी करते है–''महाराणा वायदा करते है कि उनके व्यापारियों से कर वसूल नहीं करेगा।....... परन्तु ध्यान रहे कि ऐसा महाराणा इसलिए नहीं कर रहा है कि वह डरता है बल्कि इसलिए यह ऐसा कर रहा है कि वह जानता है कि मेवाड़ की गरीब जनता पर वह युद्ध का कमर तोड़ बोझ नहीं डालना चाहता है। वह नहीं चाहता कि यहाँ की सुख शांति तहस नहस हो। यह भी माना की युद्ध का पलड़ा शहंशाह की ओर झुकेगा। वह जीतेगा भी परन्तु उसकी यह जीत उसे हार से भी ज्यादा महँगी पड़ेगी और फिर भी इस इलाके से भयभीत बना रहेगा। इससे इस इलाके में उसके प्रति

नफरत बढ़ेगी और यहाँ की जनता सतत् स्वाधीनता के लिए संघर्ष करती रहेगी। यही संघर्ष की चिंगारी आपके सम्राट के लिए बैचेनी का कारण सिद्ध होगी।''[57]

डॉ. भटनागर ने युद्ध की आवश्यकता पर गहरा चिंतन किया साथ ही प्रजा के हितों की भी प्रस्तुति भी की है युद्ध के कारण जनता पर अनावश्यक बोझ पड़ता है जनता की यह पीड़ा उसके सामाजिक जीवन स्तर पर भी गहरा असर डालती है भारत में युद्ध के भार ने आर्थिक बोझ जनता पर हर बार उत्तरोत्तर भारी होता गया है लगातार होने वाले युद्धों ने महँगाई को बहुत हद तक बढ़ा दिया है जिसके कारण जनता चीत्कार कर उठी। अंग्रेजों ने भी युद्ध के आर्थिक भार को भारतीय जनता से मनमाने रुप से वसूला था भारतीय जनता ने इसका विरोध भी किया परन्तु परतंत्रता और कठोर शासन प्रणाली ने उनके विरोध को महत्व नहीं दिया। देशी राजाओं, जमींदारों ने भी स्थानीय जनता को करों के बोझ तले और दबाया फलस्वरुप किसान और अधिक निर्धन होता गया अंग्रेजी शासन ने अपनी अन्याय पूर्ण कर प्रणाली से भारतीय जनता को शोषण के चक्र मे ऐसे घुमाया कि आज तक किसान अपनी आर्थिक समस्याओ से मुक्ति नहीं पा सका है 'सरदार' उपन्यास में डॉ. भटनागर ने इस अन्याय प्रणाली के विरुद्व आंदोलन की रुपरेखा प्रस्तुत की है उन्होंने किसानों को इस शोषण चक्र से मुक्ति दिलाने के लिए उन्हें उनके अधिकारों के प्रति जागृत किया।

''उस वृद्ध के कानों में वल्लभ भाई पटेल की आवाज गूँज रही थी। वह कह रहे थे किसान भाइयों तुम जीवन भर कर देने, आधा पेटभर कर चुप बने रहने और औलाद की तरह पेड़ पौधो को पाल पोसकर बड़े करने में न घूप की चिंता करते हो , न कड़कड़ाती ठंड की और न मूसलाधार बरसात की। किसान कुँआ खोदकर पानी निकाले तो उस पर सरकार पैसा लेती है। व्यापारी गद्‌दी पर विराजता है। उसकी 20,000 की वार्षिक आमदनी पर कोई कर नहीं। किसान की बीघा भर जमीन पर कर यह कहाँ का न्याय है?''[58]

भारत की जनता में अंग्रेज सरकार की नीतियों के प्रति गहरा अक्रोश व्याप्त था 'सरदार' उपन्यास में डॉ. भटनागर ऐसे अन्याय एवं अत्याचार के प्रति चेतना पूर्ण भाव को प्रस्तुत करते है।'' सरकार विदेशी है। उसे खेडावासियों के दुख दर्द से क्या लेना देना? कभी न कभी तो अन्याय और अत्याचार के विरुद्व आवाज उठानी पडेगी। क्योंकि मनुष्य आजन्म गुलाम नहीं रह सकता।''[59] भारतीय साहित्यकारों ने समय समय अपनी साहित्यिक कृतियों के माध्यम से भारत की जनता को जागृत किया है डॉ. भटनागर उसी कोटी के प्रखर उपन्यासकार है जिन्होंने अपनी कल्पना को इतिहास के वज्र स्वरुप के साथ परखा है इनका मानना है कि अतीत वर्तमान के स्वरुप का निर्धारण करता है सत्य सार्वकालिक होता है।

अतः सार्वकालिक चेतना की प्रस्तुति उपन्यास साहित्य का प्रमुख लक्ष्य होना चाहिए इनके द्वारा जिन मूल्यों का सम्पृक्ति उपन्यासों में की है वे सार्वकालिक चेतना से संदर्भित है किसान की समस्याओं का चित्रण यद्यपि विविध रुपों में साहित्यकारों ने किया है डॉ. भटनागर का उद्देश्य किसान की पीड़ा दुख एवं उसकी मानवीय भावनाओं से जुड़े हर तथ्य, तत्व, एवं भाव की प्रस्तुति करना है वे भारत की विविधता का परीक्षण और मूल्यांकन ही नहीं करते बल्कि उन्होंने इसके कारणों की भी समीक्षा की है। वे भारत की निर्धनता का एक बड़ा कारण अशिक्षा को भी मानते है और इसके स्वरुप पर भी प्रकाश डालते है–'' वल्लभ भाई पटेल ने लंदन में भी भारत के पिछड़ेपन उसकी असभ्यता उसके अंधविश्वास आदि पर चित्रों की प्रदर्शनी देखी थी और पुस्तकें भी पढ़ी थी''[60] निर्धनता एक अभिशाप है मानव के लिए जितने मायने स्वतंत्रता के है। उतने ही आर्थिक मुक्ति के है विवेकानन्द के विचारों से इस बात की सत्य अनुभूति होती है। ''माँ तेरे करोडों पुत्रहीन दीन हीन स्थिति में जीते हुए मर रहे है दारिद्रय सबसे बड़ा अभिशाप है। मेरा देश दारिद्रयविहीन रहा था। लेकिन आज वह अज्ञान निर्बल निर्धन और असहाय होकर हीन दीन रह गया है।''[61] डॉ. भटनागर ने अपने 'सरदार' उपन्यास में अर्थ की समस्या से पीड़ित मनुष्य की पीड़ा को देश काल की सीमा से परे बताया है।–'' गरीब सारी दुनिया में है पटेल। मैं भी अमीर नहीं हूँ लेकिन ठीक ठाक रहने लायक मिल जाता है। इंग्लैण्ड के बारे में दुनिया यही जानती है कि यहाँ हर आदमी अमीर है और खुश है। पर ऐसा नहीं है। मैं जानता हूँ , मजदूर नेता हूँ कि खुशियाँ कौन छीनता है। कैसे छीनता है?''[62] भारत जैसे देश में जहाँ वैभवता एवं स्वतंत्रता की लहर ने सबको आकर्षित किया उस भारत की तस्वीर ऐसी होगी इसकी कल्पना तक नहीं की जा सकती थी सभ्य देश सुसस्कृत एवं सम्पन्न देश की जो स्थिति आज हो गई है इस पर भी डॉ. भटनागर का गहरा चिंतन है ''उसकी गरीबी उसका गूंगापन उसकी नग्नता......... उसका पिछड़ापन....... उसकी कमजोरी....... की भारत ऐसा देश है।.... यही न सेफ्रानिया।''[63] किसान की निर्धनता उसका भाग्य बन चुकी है जो चाहे कर उसका पीछा नहीं छोड़ पा रही है उसके सारे प्रयास निष्फल हो जाते है किसान की इस मार्मिक पीड़ा की अभिव्यक्ति उन्होंने अंतिम सत्याग्रही उपन्यास में की है–'' किसान गरीब होता है और हमेशा गरीब रहेगा।''[64]

डॉ. भटनागर ने निर्धनता को भ्रष्टाचार से भी जोड़ा है क्योंकि भ्रष्टाचार ने गरीब को और गरीब किया उसके अधिकारों का अतिक्रमण किया है भ्रष्टाचार शोषण का नुकीला हथियार है जो धीरे–धीरे जनता को आर्थिक विषमता की गहरी खाई में ढकेल देता है 'नीले घोडे का सवार' उपन्यास में महाराणा प्रताप की चिंता अपनी प्रजा के हित में सदैव बनी रही है–''ओह! हमें पता ही नहीं कि हमारी हमारे अधिकारी शोषण कर रहे है। उन पर अत्याचार कर रहे है। मनमाना कर वसूल रहे है। रिश्वत ले रहे है ...........महाराणा प्रताप का स्वर आवेश से थर्रा उठा मन नहीं मन सोचने लगे कि हारे या जीते परन्तु जब तक राजा है। तब तक अपनी इस भोली भाली प्रजा

के साथ यह सब होने नहीं देगें।''[65] अन्याय एवं भ्रष्टाचार का विरोध करने के लिए संगठित होना बहुत आवश्यक होता है क्योंकि यह लड़ाई किसी एक की नहीं बल्कि पूरे समाज ओर देश की थी अतः भटनागर जी ने किसानों को संगठित कर एक साथ लड़ने के भाव को वल्लभ भाई पटेल के द्वारा किये गये प्रयासों के संदर्भ में प्रस्तुत किया है –''वल्लभ भाई पटेल खड़े हुए और खखार कर उस मसाविदे को पढने लगें जिनमें फसल चार आने से कम होने के कारण लगाान वसूली का काम अगले साल तक मुतलबी रखने को कहा गया था। यदि ऐसा नहीं हुआ तो लगाान नहीं दिया जाए। सरकार जो कार्यवाही करना चाहेगी उसे धैर्य से स्वीकार करेगें। यहाँ तक की हमारी जमीन खालसा की गई तो वह भी जाने देगें। लेकिन अपने हाथों पैसा जमा कर हम असत्यवादी नहीं ठहरेगें। और स्वाभिमान भी नहीं खोयेगें। यदि सामर्थ्यवान लगान जमा कर देगें तो गरीब को घबराहट में चीजें गिरवी रख कर उधार रुपये से लगान जमा करवाना पड़ेगा और दुख उठाना पडेगा।''[66] भारत की आम जनता किसान है जिसका शोषण लगातार होता रहा है वह हर बार हर जगह ठगा जाता है वह भोला है उसे राजनीति की चालाकियाँ समझ नहीं आती है वह हर वादे व आश्वासन को सही समझ बैठता है किसान आर्थिक पीड़ा से मुक्ति आज तक नहीं पा सका है भारत में किसान अन्नदाता माना जाता था परन्तु उसकी निर्धनता ने उसे दाता से याचक की भूमिका में खड़ा कर दिया लगान एवं कर के बोझ से दबा हुआ व्यक्ति सेठ साहूकार के ब्याज के चक्र में फँसकर अपना सब कुछ दांव पर लगा बैठता है डॉ. भटनागर ने इस भाव को भी व्यक्त किया है–''गरीब काश्तकार को सम्पन्न काश्तकार या सेठ साहूकार से ही उधारी लेने जाना पडता है वह चाहे तो कभी कभी घर या खेत अथवा दोनों गिरवी रखवा लेता है। शोषण तो वह भी करता है। अन्याय भी करता है।''[67] डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में भारत की आम जनता की पीड़ा को उभारने के साथ ही उसकी मानवीय चेतना को भी व्याख्यायित करने का प्रयास किया है जो उसके अधिकारों के साथ जुड़ी हुई है इनके नायक सदी के महानायक है इनके विचारों साथ जुड़ी हुई परिस्थितियों एवं प्रवृत्तियों का संघर्ष इनके ऐतिहासिक उपन्यासों में व्यक्त किया गया है।

## (ङ) डॉ. भटनागर के उपन्यासों में राजनैतिक चेतना

भारत की मानव सम्यता का इतिहास हजारों वर्षो से निरंतर मानव को प्रेरणा देता आ रहा है मानव के विकास की व्याख्या करता है उसके संचित कर्मो का विश्लेषण करता है मानव ने इतिहास से प्राप्त निष्कर्षों को अपने अनुभवों के साथ सम्पृक्त कर भविष्य की पीढ़ी को एक नवीन अनुसंधान के लिए प्रेरित किया है मानव एक विकासशील प्राणी है उसकी विकासशीलता नित नवीन एवं चेतनापूर्ण है मनुष्य की इसी चेतना शक्ति को समाज एवं राज्य के सम्बन्ध में परिभाषित किया जाता है, तो वह राजनीतिक चेतना का रुप प्राप्त करती है। राज्य के निर्माण, संगठन, व्यवस्था, नीतियाँ, व्यवहार, अनुशासन, कर्तव्य, दायित्व आदि के प्रति निष्ठा राजनीतिक

चेतना की सार्वकालिक चेतना के सन्दर्भ में व्याख्या है मनुष्य ने आदि मानव से सभ्य नागरिक बनने का सफर एक दिन में तय नहीं किया है इसके पीछे वर्षों की मेहनत, समर्पण, त्याग, अनुसंधान, चेतना, कर्तव्य एवं दायित्व का लम्बा इतिहास रहा है।

सृष्टि के विकास के साथ ही मनुष्य को अपने आप को सुरक्षित एवं संरक्षित रखने की भावना ने परिवार, समाज, समुदाय एवं राज्य की भावना को प्रस्तुत किया। मानव ने यह अनुभव किया कि उसे समूह में रहकर ही सुरक्षा प्राप्त होगी तो वह इसके निर्माण एवं व्यवस्था में सहयोग प्राप्त करने लगा उसका चिंतन जब मानव हितों के संवर्द्धन की ओर था तब वह एक सुदृढ़ राज्य की नींव का पत्थर बनता चला गया उसका यह बलिदान मूक परन्तु इतिहास में अमरता को प्राप्त हो सार्वकालिक हो गया है। योगी अरविन्द उपन्यास में डॉ. भटनागर ने राष्ट्र के प्रति निष्ठा को स्पष्ट किया है ''अरविन्द 'वन्दे मातरम्' के सम्पादक हाथ जोड़कर जनता का अभिवादन स्वीकार करते हुए सोचते रह जाते थे किन्तु उन्हें स्वराज्य इन करोड़ों जनता के लिए चाहिये, जो आजादी की दीवानी हो उठी है और उसके लिये अपना सर्वस्व न्यौछावर करने के लिये कृत संकल्प हो चली है। वह यह नहीं जानती कि स्वराज्य अंग्रेजी शासन से कितना बेहतर होगा और उसके सामने नेताओं द्वारा परोसे गये सुख व समृद्धि के स्वप्न कहाँ तक पूर्ण हो पाऐंगे। अरविन्द डंके की चोट पर जनता को यह बता रहे थे कि किसी देश के जिन्दा होने की पहचान है स्वराज्य। उनकी अंग्रेजों और अंग्रेजी शासन से कोई शिकायत नहीं है। उनकी शिकायत मात्र यह है कि किसी देश पर किसी दूसरे का शासन नहीं होना चाहिये, यह उसे देश की अस्मिता, उसकी सार्वभौमिक सत्ता ओर उसके अस्तित्व की आजादी का प्रश्न है।''[68]

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने उपन्यासों में ऐतिहासिक महापुरुषों के जीवन चरित्र को आधार बनाया है उनके उपन्यासों में वर्णित विषय देश, समाज, धर्म, राज्य, राष्ट्र एवं मानव मूल्यों इत्यादि से सम्पृक्ति रखते है इनके द्वारा जिन महापुरुषों का चरित्रांकन किया गया है वह भारत की परम्परा, संस्कृति एवं संवेदना के सारथी है इनके द्वारा समाज एवं देश को नेतृत्व एवं प्रेरणा प्राप्त हुई देश का इतिहास मानव की संवेदना को व्यक्त करता है यह संवेदना विभिन्न रुपों में हमें दिखाई देती है। कभी सामाजिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, स्त्री–पुरुष, राजनीति के रुप में हम इन्हीं संवेदनाओं की अनुभूति अपने इतिहास से प्राप्त करते है।

इतिहासकार अपने आपको सभी पूर्वाग्रहों से मुक्त कर इतिहास का लेखन प्रस्तुत कर देता है परन्तु साहित्येतिहासकार का लक्ष्य साहित्य के अनुभूत सत्य को तत्कालीन भावों के साथ प्रस्तुत करना है मानव का जीवन संघर्ष बहुत लम्बा है। इसका लक्ष्य मानव हितों के लिए संघर्ष करना रहा है एक चिंगारी के ज्वाला बनने को सफर को व्याख्यायित करना साहित्येतिहासकार का लक्ष्य रहता है। 'सरदार' उपन्यास में महात्मा गांधी ने नमक आंदोलन को सफल बनाते हुए भारतीय जनता की राजनीतिक चेतना को जागृत किया ''स्वरक्षा के लिए शस्त्र रखने की जनता

को छूट, सैनिक व्यवस्था आधा करना, विदेशी कपड़ों पर संरक्षण कर लगाना, नमक कर समाप्त करना। गाँधी जी ठहर गए। सोचने लगे कि नमक का प्रयोग हर एक करता है। गाँधी जी बोल पड़े, ''सरदार, नमक का विरोध ! नमक सबके लिए जरुरी है।''[69]

''तब ?''

''नमक बनाओ ! नमक बेचो। कर नहीं। यह बात जमीन महसूल के प्रश्न से अधिक महत्त्वपूर्ण है।......क्या कहते हो, सरदार ?''

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में राजनीति के विषय को इतिहास बोध के साथ प्रस्तुत किया है इनका उद्देश्य उपन्यासों के द्वारा मनोरंजन करना नहीं है अपितु इतिहास के सार्वकालिक मूल्यों को मानव हितार्थ प्रस्तुत करना रहा है इनके उपन्यासों में वर्णित पात्र युगों की सीमा को पार करते हुए विकास की सीढ़ी पर चढ़ते हुए निरंतर प्रगतिशील है इनकी प्रगतिशीलता एवं निरंतरता ही शाश्वत एवं सार्वकालिक चेतना का प्रतीक है राजनीति जैसे गम्भीर विषय पर चिंतन करते हुए डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में चेतनागत भावों की सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में व्याख्या की है। डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर लिखते है ''मानना पड़ता है कि आज की राजनीति वर्तमान का नेतृत्व कर रही है। लोकतंत्र और स्वतन्त्रता आज उसकी कैद में हैं। हर क्षेत्र पर उसका एकसाथ हावी हो जाना ही वह कारण है, जिससे आज भी व्यक्ति असन्तोष तथा शोषण की यातना भोग रहा है। कहना यह चाहिए कि हर व्यक्ति अपने में पंगु–अहसास लिये जी रहा है।''[70] इन्होंने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में राजनीति के जटिल एवं गूढ़ सिद्धान्तों को ही नहीं समझाया अपितु उनकी प्रस्तुति सरल, रोचक एवं मनोरंजक ढंग से की है राजनीति के सिद्धान्तों का ही विवेचन करना इनका लक्ष्य नहीं था बल्कि राजनीति के प्रभाव का मूल्यांकन करना उसके परिणामों से जनमानस में चेतनापूर्ण भावों की अभिव्यक्ति को प्रस्तुत करना है।

डॉ. भटनागर को अपने उपन्यासों में राजनीति के विषय की व्याख्या सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में प्रस्तुत करने में पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है राजनीति एक ऐसा विषय है जो हर काल में मानव जीवन को एक लक्ष्य की ओर प्रेरित करता है मानव की स्थिति को परिभाषित करता है राजनीति एकाकी विषय नहीं है बल्कि समस्त मानवीय मूल्यों एवं जीवन संदर्भों का विश्लेषण है। डॉ. सरोज यादव ने कहा है कि–''वह चेतना जो मनुष्य में अपने हक, अधिकार और कर्तव्यों का निर्धारण करे। राजनीतिक चेतना द्वारा ही मनुष्य समाज, राज्य, राष्ट्र यहाँ तक कि विश्व में अपना ईचिछत स्थान निरुपित करता है। चेतना ही राजनीति को संयमित, अनुशासित और कल्याणकारी बनाती है।''[71] डॉ. भटनागर ने राजनीति के माध्यम से तत्कालीन परिस्थितियों एवं प्रवृत्तियों को भी स्पष्ट किया है उन्होंने राजनीति की व्याख्या करते हुए इसे जीवन संघर्ष से जोड़ दिया है डॉ.

भटनागर के ऐतिहासिक उपन्यासों के विविध पक्षों को परिलक्षित किया गया है डॉ. भटनागर के ऐतिहासिक उपन्यासों में राजनीति को महाराणा प्रताप, विवेकानंद, अम्बेडकर, महात्मा गाँधी, सरदार पटेल, सुभाष चन्द्र बोस, महर्षि अरविन्द योगी आदि महान व्यक्तित्वों के साथ प्रस्तुत किया गया है उपरोक्त व्यक्तित्व वे है जिन्होंने भारतीय जनमानस को नेतृत्व प्रदान किया और राष्ट्रीय अस्मिता एवं गौरव को पुनः स्थापित करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। डॉ. भटनागर के उपन्यासों में वर्णित राजनीतिक चेतना कोरे यथार्थ की प्रस्तुति नहीं अपितु उसके अंतर्गत सम्पूर्ण मानव जीवन दर्शन का प्रस्तुतिकरण है विश्व पटल पर राजनीति को सार्वकालिक चेतना के संदर्भ को सरल एवं रोचक ढंग से समझाने का प्रयास इनके उपन्यासों को कालजयी बनाता है।

डॉ. भटनागर ने उपन्यासों में राजनीति के नैतिक आदर्शों को प्रस्तुत किया तो दूषित एवं भ्रष्ट राजनीति का भी यथार्थ मूल्यांकन प्रस्तुत किया है। 'नीले घोड़े का सवार' उपन्यास में राजनीति के आदर्श को रेखांकित करते हुए कहते है –छल नीति विरुद्ध है। राजनीति नीति से परे नहीं है। ....... छलता भी मनुष्य दूसरे को नहीं है। अपने को ही छलता है फिर अगर याद रखो, हम जो कुछ करते है, उसका मूल्यांकन आने वाली पीढ़ी करेगी वह हमारे कर्मों तथा चरित्र का निर्णय करेगी सोचने वाले भी है और आगे भी हो सकते है। जो हमारे इस प्रयास को जातीय व राष्ट्रीय सिरफिरा प्रयास मानेगें।''[72]

डॉ. भटनागर ने महाराणा प्रताप की राजनीति में भारतीय दर्शन को व्यक्त किया है। कुली बैरिस्टर उपन्यास में भी इसी राजनीति आदर्श की बात महात्मा गाँधी कहते है–''राजनीति काव्याभ्यास नहीं है। उसमें हृदय के स्थान पर बुद्धि विवेक केन्द्र में है।''[73] महात्मा गाँधी ने राजनीति को धर्म को जोड़कर एक दार्शनिकता को प्रस्तुत किया है। राज्य को मानव की निष्ठा इसके कर्तव्य एवं आत्मा की अनुभूति को राजनीति से  पृथक नहीं किया जा सकता है राजनीति को 'अहिंसात्मक समाज' का रुप देने का प्रयास महात्मा गाँधी ने किया है वे समाज में व्यवस्था एवं कानून को अहिंसक रुप में परिभाषित करना चाहते है मानव का भाव सेवा से जुड़ जाने पर ऐसा संभव है–''गाँधी जी अपने आदर्श राज्य को अहिंसात्मक समाज के नाम से पुकारते है। गाँधी जी के इस आदर्श समाज में राज्य संस्था का अस्तित्व रहेगा और पुलिस, जेल, सेना तथा न्यायालय आदि शासन की बाध्यकारी सत्ताएँ होगी फिर भी यह इस दृष्टि से अहिंसक समाज है कि इसमें इन सत्ताओं का प्रयोग जनता को आतंकित और उत्पीड़ित करने के लिए नहीं वरन् उसकी सेवा करने के लिए किया जाएगा।''[74]

डॉ. भटनागर ने राजनीति में धैर्य एवं संयम को आवश्यक मानते है क्योंकि बिना धैर्य एवं संयम के राजनीतिक अस्थिरता बनी रहने की अतिसंभावना रहती है। जो कि राजनीतिक पतन

का कारण है– ''राजनीति को संयम चाहिए। संयमहीन राजनीति भस्मासुर की याद दिला सकती है। राजनीतिक चरित्र पहले दिवालिया होता है। राज और समाज का पतन बाद में।''[75]

राजनीति के व्यवहार में भ्रष्ट तत्वों का आगमन तत्कालीन परिस्थितियों की देन है समाज का रुप बिगड़ने में इसकी महती भूमिका है सत्ता के लालच में किए गये स्वार्थपरक समझौतों ने देश की जनता को शोषण और पराधीनता के भंवर में फँसा दिया ऐसे समय में भारतीय जनता की दुर्दशा पर चिंतन को डॉ.भटनागर नें 'दिल्ली चलो' उपन्यास में सुभाष चन्द्र बोस के विचारों में व्यक्त किया–'' सोने से पूर्व वह देश की आजादी के सम्पूर्ण चित्रफलक पर विचार कर गये। हर बार अपने लोगों की क्षुद्रता, तंगदिली, स्वार्थपरता और ईर्ष्या से क्षुब्ध हो जाया करते थे। जब देश के कर्णधार इस विकट समय में एक होकर काम नहीं कर पाते है तब आजादी के बाद साथ बैठकर खुले मन से कैसे काम कर सकेगें? इस कारण कहीं उनके देश को खंडित आजादी का अभिशाप नहीं भोगना पड़ जाए।''[76]

राजनीति चेतना को डॉ. भटनागर के उपन्यासों में मुगल सत्ता और बिट्रीश सत्ता के स्वरुप के साथ अभिव्यक्त किया है शासन के साथ जनता के हितों की रक्षा शासक का नैतिक कर्तव्य है भारत की सनातन संस्कृति को नष्ट करने का जो प्रयास इन विदेशी शासकों ने किया उसके प्रति आक्रोश की चेतना को डॉ. भटनागर ने प्रस्तुत किया है शासन का आधार धर्म से जोड़ा जाता रहा है और इसकी आड़ में धर्मान्तरण का धिनौना खेल भी देश की भोली भाली जनता के साथ खेला जाता रहा है धर्म नैतिक आदर्शों के स्थान पर सत्ता के स्थायित्व का बिन्दु बन जाता है तब वह निन्दा का विषय बन जाता है। धर्म की सर्वोच्चता, ईश्वर के स्वरुप का व्यवहार में प्रयोग शासन के लिए किया जाने लगा तब से मानव के मूल्यों का पतन प्रारम्भ हो गया धर्मान्तरण के साथ राजनीति के विभिन्न पक्षों का मूल्यांकन डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में किया है इस्लाम एवं क्रिश्चियन धर्म के अनुयायियों द्वारा भारत में धर्म प्रचार करना प्रारम्भ किया जाने लगा तब इसके पीछे धर्म स्थापना कम और शासन स्थापना का भाव अधिक था सत्ता के स्थायित्व के लिए इसके प्रयोग में धांधली ओर हिंसा का प्रयोग मानव की चेतना को झंकृत कर गया इस विकट परिस्थिति में भी भारत की जनता ने धैर्य नहीं खोया और साथ ही अपनी संस्कृति एवं धर्म को बचाने का पुरजोर प्रयास किया था। जनता ने शासन के साथ सहयोग किया और बदले में अपने हितों एवं अधिकार का संरक्षण चाहा था जब रक्षक ही भक्षक का भूमिका का निर्वाह करे तो मानव का विरोधात्मक स्वर मुखर हो उठता है भारतीय सनानत संस्कृति को नष्ट करने के पीछे सर्वप्रमुख ध्येय शासन को स्थापित करना रहा है।

डॉ. भटनागर ने उस समय की तत्कालीन परिस्थितियों के संदर्भ इस प्रकार के राजनीतिक चिंतन को विविध रुपों में व्याख्यायित किया है अकबर ने शासन की बागडोर हाथ में लेते ही यह समझ लिया था कि अगर यहाँ शासन को स्थापित माना है। लोगों के हृदय में सत्ता

के प्रति आस्था एवं विश्वास को जमाना होगा–'' सम्राट अकबर ने सारे भारत को रौंद डाला था। चतुर्दिक उसकी विजय पताखा फहरा रही थी। वह बराबर विजय पर विजय प्राप्त करता जा रहा था। वह साहसी भी है। जीवन का धनी और पराक्रमी है। समय की नब्ज को पहचानता है। वह साम्राज्यवादी भी है। वह समझता है कि यहाँ रहना है और इस पवित्र भूमि को अपना घर बनाना है। तो उसे यहाँ के लोगों से प्यार करना होगा और जितनी जातियाँ है वह उन सबका है। इससे वह अपने सामाज्य को दृढ़ता दे सकेगा और सबका प्यार पा सकेगा। जो उसके शत्रु है उसके संबंधी व पक्के दोस्त बन चुके है। फिर उसे यहाँ से भगाने वाला कौन है। कोई नहीं। इस तरह से वह अजातशत्रु को दोहरा लेना चाहता था।''[77]

डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में व्यक्तित्व के चरित्रांकन के साथ उस समय का घटनाओं के साथ भावों की भी प्रस्तुति दी है मानव के आस्था एवं विश्वास के साथ हुए छल कपट और शोषण के चित्र को जीवन्त रुप में स्पष्ट किया है उपन्यासों की वृहद्‌ता के साथ भावों की प्रगााढ़ता का अद्‌भुत सम्मिश्रण इनके उपन्यास साहित्य लेखन की विशेषता रही है।

डॉ. भटनागर ने इतिहास के महापुरुषों के चिंतन को राजनीति दर्शन के स्वरुप में व्यक्त किया है राजनीति जहाँ विदेशी आक्रांताओं एवं शासकों के लिए सत्ता प्राप्ति एवं स्थायित्व का साधन थी वहीं भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति में इसे धर्म एवं कर्तव्य परायणता के रुप में प्रतिष्ठित किया गया है मुगल सत्ता के प्रभाव में आते ही भारतीय राजनीति के आदर्शों की धज्जियाँ उड़ा दी गई युद्ध के नियम कायदे आदर्शों से परे हो गये सत्ता के लिए रक्तपात आवश्यक हो गया राजनीति विलासिता और वैभव का प्रतीक बनने लगी थी तत्कालीन परिस्थिति भारत के विरोधियों एवं स्वार्थी लोगों के लिए सहायक सि़द्ध हुई भारत के पतन से पूर्व लोगों में व्याप्त भारतीयता को समाप्त करना आवश्यक था। अतः शासकों ने धर्म का सहारा लिया और साम्राज्य विस्तार में आने वाली हर बाधा को धार्मिक उन्माद के साथ जोड़ दिया गया। राजपूत जैसी वीर जाति की वीरता एवं शौर्य के सामने धार्मिक उन्माद घातक सिद्ध हुआ। प्रत्येक युद्ध के साथ मानव मूल्यों का ह्रास होने लगा। भारत की पवित्र भूमि पर धार्मिकता की आड़ में क्षुद्र मानव स्वार्थों की पूर्ति का नंगा नाच इतिहास ने अपनी खुली आँखों से देखा था।

ऐसे समय में जब भारतीय राजनीति के सिद्धान्तों के मायने भ्रष्ट होने लगे तब इतिहास के तथ्यों ने भारतीय जनता में आशा का संचार किया धर्म के विश्रृंखलित होने और धर्म की पुर्नस्थापना के सिद्धान्त को समझाते हुए धर्म संस्थापक के आगमन की प्रतीक्षा ने जनता को आश्वस्त किया इसे संयोग कहे कि जब–जब व्यवस्था डगमगाई तब–तब भारतीय जन मानस को किसी चिन्तक विचारक का नेतृत्व किसी न किसी रुप में प्राप्त हो ही गया। जब समस्त राजपूत राजा अपनी स्वतंत्रता को खोकर अधीनता स्वीकार कर रहे थे ऐसे समय में महाराणा प्रताप के

महान् व्यक्तित्व के रुप में उनकी स्वतंत्रता को संरक्षक प्राप्त हो गया महाराणा प्रताप ने इस्लाम की आड़ में खड़े विशाल मुगल साम्राज्य को अपनी स्वतंत्रता से विचलित कर दिया। इसी कारण अकबर की आँख में महाराणा प्रताप काँटे की तरह चुभता था'' — महाराणा प्रताप की वीरता के चर्चे हमारे को काँटे से चुभते है। उसकी इतनी हिम्मत कि वह हमारे प्रस्ताव को ठुकरा दे। सारा राजपूताना हमारे सामने हाथ जोड़े खड़ा है। सुनता था कि राजपूत बड़े आन मान वाले होते है। देखा तो ......। अकबर ने बहकते हुए कहा मल्लिका हमारा कलेजा उस दिन ठंडा होगा, जिस दिन महाराणा हमारे सामने हाथ जोड़े खड़ा होगा। हम उस दिन की बडी बेसब्री से प्रतीक्षा कर रहे है।''[78] अकबर की सहधर्मिणी जोधाबाई राजपूत थी उसे अपनी जाति की वीरता शौर्य एवं परम्परा पर गर्व था। वह महाराणा प्रताप के वंश की परम्परा की प्रशंसा करते हुए बड़ी निर्भीकता से अकबर से कहती है—'' महाराणा राणा कुम्भा की परम्परा से है। वह दूसरे राजपूतों की तरह नहीं है। वह मर सकता है। पर जीते जी समर्पण नहीं करेगा।''[79]

डॉ. भटनागर साहित्य में इतिहास की राजनीतिक व्यवस्था के तथ्यों पर प्रकाश डालते हुए जनता के अनुभूत भावों का भी प्रस्तुतिकरण किया है। साहित्य में राजनीति का चिंतन का यथार्थ मूल्यांकन करना ही साहित्य रचना को महत्वपूर्ण बनाता है भारतीय इतिहास के महापुरुषों ने जो योगदान समाज को दिया उसका तत्कालीन परिस्थितियों के संदर्भ में विवेचन डॉ. भटनागर अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में किया है। इतिहास के साक्ष्यों के आधार पर यदि एक राजनीति को परखने का प्रयास करे तो राजनीति विशुद्ध रुप से स्वतंत्रता—परतंत्रता का युग्म रुप ही है। इसकी विवेचना का प्रत्यक्ष सम्बन्ध राजनीति से है जब जब मानव की स्वतंत्रता के हरण का प्रयास हुआ मानव की राजनैतिक चेतना ने प्रबल होकर सत्ता पक्ष के प्रति आक्रोश व्यक्त किया आक्रोश और विरोध का तरीका अवश्य परिवर्तित रहा परन्तु मूल रुप में मानव स्वतंत्रता के प्रति मोहित रहा है।

डॉ. भटनागर ने अपने न्याक नायकों की विचार धारा को सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में समझाने का प्रयास किया है वह राजनीति के मूल सिद्धान्त और आधार को समझकर उसकी नीति एवं व्यवहार का मूल्यांकन करते है इनका मानना था कि भारतीय राजनीति का धर्म के साथ, आध्यात्मिकता के साथ गहरा संम्बंध है इस सम्बन्ध को चैतन्य कर देने पर जनता स्वतंत्रता की ओर बढ़ते हुए अपनी आध्यात्मिक उन्नति के साथ राजनीतिक भविष्य भी सुरक्षित कर पायेगी'' अरविन्द की राजनीति एक योगी की राजनीति थी एक राजनीतिज्ञ की नहीं उनके राजनीतिक चिन्तन का सुदृढ़ आधार उनके गहरे आध्यात्मिक विश्वासों में निहित था अरविन्द को यह अनुभूति हो चुकी थी कि आध्यात्मिक शक्ति और योग साधना द्वारा एक ऐसे आध्यात्मिक वातावरण का निर्माण सम्भव है जिसके द्वारा भारत अपने अभीष्ट लक्ष्य की प्राप्ति कर सके।[80]

राजनीति का दर्शन मानव के जीवन मूल्यों के प्रभाव को स्पष्ट करता है मानव की स्थिति एवं परिस्थिति को प्रकाशित करता है इन सबके साथ उसके जीवन के लक्ष्य को भी प्रकट करता है भारतीय सनातन संस्कृति आध्यात्मिक एवं वैज्ञानिक है इसके गुणों ने इसे विश्व में सर्वाधिक ख्याति प्राप्त करवाने में सहायता दी है। भारत देश एक विशाल भू–भाग पर बसा विभिन्न संस्कृति एवं सभ्यताओं का देश है। यहाँ की सम्पन्नता एवं वैभव लोगों के आकर्षण का केन्द्र रही है हमने मानव मूल्यों की रक्षा के लिए जो नियम बनाए वे सात्विक एवं पवित्रता के पर्याय थे हमारी संस्कृति, ज्ञान, विज्ञान, तकनीक, कला, शिल्प, वास्तु, अध्यात्म आदि का सम्पूर्ण विश्व में कोई सानी नहीं था इन सब कारणों से भारत के लोगों में अपनी प्रगतिशील परम्परा के प्रति श्रद्धा एवं विश्वास था जब कोई व्यक्ति भारत आता था चाहे वह कारण पर्यटन हो या व्यापार यहाँ की सम्पन्नता एवं वैभव से चकित हो जाता था हमारे मानवीय मूल्यों से प्रभावित हो जाता था परन्तु कालांतर में विदेशी लुटेरों की दृष्टि हमारे देश की सम्पन्नता एवं वैभव को लूटना चाहती थी। हमें अपने राज्य की सीमाओं पर इन्हें रोकने में सफल भी हुए जब विदेशी आक्रांता हमें आमने सामने के युद्ध में नहीं हरा सके तो उन्होनें षडयंत्र का सहारा लेकर छल कपट से हमें पराजित करने का प्रयास किया। दुर्भाग्य  से हमारे कुछ स्वार्थी लोगों ने सत्ता के लालच में आकर देशद्रोह किया और हमारा पतन होने लगा विदेशी शासकों ने जब देखा कि भारतीय संस्कृति इतनी सम्पन्न है कि यदि इसे नष्ट नहीं किया गया तो वह यहाँ शासक की भूमिका में अधिक समय तक नहीं रह पायेगें और यहीं से हमारे देश को लूटने के साथ ही प्रारम्भ हुआ राज्य की नीतियों के साथ खिलवाड़ हमारे राज्य की समस्त नीतियाँ मानवीय मूल्यों से प्रेरित थी विदेशी सत्ता के प्रभाव ने इसे केवल भ्रष्ट हीं नहीं किया अपितु इसमें ऐसे तत्वों को शामिल कर दिया जो हमारी राजनीति के दर्शन के लिए घातक सिद्ध हुए। सत्ता प्राप्ति का संघर्ष एक सार्वकालिक तथ्य है यह जन्म से मानव में अपने अस्तित्व के प्रति आने वाला भाव है इसके प्रभाव को राजनीति में स्पष्ट देखा जा सकता है राजनीति में जो भी प्रयोग किये गये वह मानव के अस्तित्ववादी चिंतन के प्रभाव से परे नहीं है अपने अस्तित्व एवं पहचान के प्रश्न ने मानव को महामानव बनने की प्रेरणा दी है संघर्ष का प्रारम्भ किसी प्रेरणा से प्राप्त होता है परन्तु यह प्रेरणा मानव को कैसे? कहाँ? कब प्राप्त होगी? यह प्रश्न रहस्य ही है।

♦♦♦♦

## सन्दर्भ सूची


1. इतिहास के बारे में डॉ. लाल बहादुर वर्मा इतिहास बोध प्रकाशन, इलाहबाद, (2010), पृ. 48
2. इतिहास के बारे में डॉ. लाल बहादुर वर्मा इतिहास बोध प्रकाशन, इलाहबाद, (2010), पृ. 46–47
3. अमृत लाल नागर की कथा दृष्टि के समाज शास्त्रीय आयाम– डॉ. सरोज सिंह, राका प्रकाशन, इलाहबाद, पृ. 108
4. मिथकीय चेतना समकालीन संदर्भ – मनोरमा मिश्र, वाली प्रकाशन, पृ. 22
5. साहित्य और इतिहास दृष्टि– मैनेजर पाण्डेय, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, (2013), पृ. 75
6. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 99
7. एक अंतहीन युद्व– राजेन्द्र मोोहन भटनागर, अनन्य प्रकाशन (2018), पृ. 114
8. नीले घोड़े का सवार– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ. 182
9. तरुण संन्यासी– राजेन्द्र मोहन भटनागर, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, (2001), पृ. 14–15
10. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 214
11. तरुण संन्यासी– राजेन्द्र मोहन भटनागर, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, (2001), पृ. 15
12. संस्कृति के चार अध्याय–रामधारी सिंह दिनकर, राजपाल एण्ड संस सं 1956 दिल्ली, पृ. 653
13. भारतीय संस्कृति और कला– गैरोला वाचरपति उ.प्रा. हिन्दी संस्थान लखनऊ, सं. 1985, पृ. 44
14. भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास डॉ समकेतु विद्याशंकर मंसुरी सरस्वती सदन
15. प्राचीन भारत की संस्कृति और सभ्यता–दामोदर धर्मानंद कोसंबी, पृ. 20
16. इतिहास परम्परा और आधुनिकता–विद्यानिवास मिश्र वाणी प्रकाशन नई दिल्ली 2017, पृ.16
17. प्राचीन भारत की संस्कृति और सभ्यता–दामोदर धर्मानंद कोसंबी राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली 2009, पृ. 20
18. छायावादी काव्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन–प्रभुदयाल, नीरजबुक सेन्टर सं. (2007) दिल्ली, पृ. 300

19. भारतीय संस्कृति की रुप रेखा–बाबू गुलाब रॉय 1952, पृ. 01
20. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी (2008), पृ. 110
21. 'न गोपी न राधा'– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, प्रभात प्रकाशन दिल्ली (2008), पृ. 49
22. तरुण संन्यासी– राजेन्द्र मोहन भटनागर, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, (2001), पृ. 37–38
23. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 214
24. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 99
25. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 214
26. तरुण संन्यासी– राजेन्द्र मोहन भटनागर, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, (2001), पृ. 146
27. समाजशास्त्र–प्रो. मुंशी लाल तथा धीरेन्द्र प्रसाद जौहरी, मोतीलाल, बनारसी दास, पटना, (1963), पृ. 02
28. अमृत लाल नागर के उपन्यासों में सामाजिक चेतना–डॉ. सिद्धि जोशी, नागररिक पब्लिकेशन, जयपुर, (1998), पृ. 02
29. Maclver Rom & C.H Page. Society P-05
30. भगवती चरण वर्मा के उपन्यासों में युग चेतना–डॉ. बैजनाथ शुक्ल, प्रेम प्रकाशन दिल्ली, पृ. 401
31. प्रतिनिधि भारतीय राजनीतिक विचारक–डॉ. पुखराज जैन, पृ. 160
32. युग पुरुष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ. 208
33. युग पुरुष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ. 35
34. युग पुरुष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ. 58
35. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी (2008), पृ. 52
36. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी (2008), पृ. 53
37. 'न गोपी न राधा'– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, प्रभात प्रकाशन दिल्ली (2008), पृ. 25
38. 'न गोपी न राधा'– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, प्रभात प्रकाशन दिल्ली (2008), पृ. 33
39. 'न गोपी न राधा'– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, प्रभात प्रकाशन दिल्ली (2008), पृ. 111
40. 'न गोपी न राधा'– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, प्रभात प्रकाशन दिल्ली (2008), पृ. 184

41. 'न गोपी न राधा'– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, प्रभात प्रकाशन दिल्ली (2008), पृ. 187
42. युग पुरुष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ. 31
43. युग पुरुष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ. 37
44. भारतीय शिक्षा के विविध आयाम, डॉ. आर.एस. पाण्डेय
45. नीले घोड़े का सवार है, डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड संस (2011)
46. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी (2008), पृ. 106
47. 'न गोपी न राधा'– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, प्रभात प्रकाशन दिल्ली (2008), पृ. 425
48. तरुण संन्यासी– राजेन्द्र मोहन भटनागर, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, (2001), पृ. 23
49. युग पुरुष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ. 47
50. कुली बैरिस्टर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2008), पृ. 180
51. युग पुरुष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ. 140
52. हिन्दी उपन्यास की प्रवृत्तियाँ–डॉ. शशीभूषण सिंहल, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा (1970), पृ. 13
53. सामाजिक चेतना–डॉ. सोमनाथ शुक्ल, आशीष प्रकाशन, कानुपर
54. भारतीय सामाजिक संस्थाएँ–डॉ. रवीन्द्र नाथ मुखर्जी, पृ. 94
55. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013)
56. अंतिम सत्याग्रही–डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अरु प्रकाशन
57. नीले घोड़े का सवार–डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ. 95
58. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ. 209
59. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ. 148
60. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ.148
61. तरुण संन्यासी–राजेन्द्र मोहन भटनागर, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी (2001), पृ. 111
62. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ.93
63. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ.36
64. अंतिम सत्याग्रही–राजेन्द्र मोहन भटनागर, अरु पब्लिकेशन, प्रा.लि., (2008), पृ.43

65. नीले घोड़े का सवार–डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ.70

66. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ.148

67. योगी अरविन्द राजेन्द्र मोहन भटनागर

68. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ.151

69. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013)

70. सूर्यवंश का प्रताप, डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अनुराग प्रकाशन (2013), पृ. 04

71. हिन्दी के आँचलिक उपन्यासों में राजनीतिक चेतना–डॉ. सरोज यादव, पृ. 30

72. नीले घोड़े का सवार– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ. 234

73. कुली बैरिस्टर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2008), पृ. 245

74. प्रतिनिधि भारतीय राजनीतिक विचारक–डॉ. पुखराज जैन, साहित्य भवन, पब्लिकेशन, (2017) पृ. 155

75. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ. 227

76. दिल्ली चलो – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2009), पृ. 108

77. नीले घोड़े का सवार– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ. 85

78. नीले घोड़े का सवार– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ. 83

79. नीले घोड़े का सवार– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ. 83

80. प्रतिनिधि भारतीय राजनीतिक विचारक–डॉ. पुखराज जैन, साहित्य भवन, पब्लिकेशन, पृ. 294

# चतुर्थ – अध्याय

# चतुर्थ अध्याय

# डॉ. भटनागर के उपन्यास : सार्वकालिकता के विविध आयाम

## (क) धर्म और सम्प्रदाय

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में धर्म एवं सम्प्रदाय के विषय में गहन चिंतन मनन और मंथन किया गया है धर्म एवं सम्प्रदाय से जुड़े भ्रामक तथ्यों का विश्लेषण किया है धर्म एवं सम्प्रदाय की अवधारणा के साथ जुड़ी हुई परम्परा मान्यता, रीति रिवाजों एवं सनातन संस्कृति के मूल्यों को भी स्थापित करने का प्रयास किया है। भारतीय साहित्य में यद्यपि इन दोनों विषयों पर चर्चा बहुत प्राचीन समय से चलती आ रही है लोगों में यह विषय सदैव उत्सुकता एवं जिज्ञासा का भी रहा है धर्म एवं सम्प्रदाय के विभिन्न सिद्धान्तों के पीछे की अवधारणा एवं विचार को जानने की इच्छा मानव में प्रारम्भ से ही बलवती रही है मानव को धर्म एवं सम्प्रदाय के साथ जीवन की भविष्योन्मुखी अवधारणा को जानना आवश्यक था अतः वह इसका चिंतन, मनन प्रारम्भ से ही करता रहा है डॉ. भटनागर ने अपने साहित्य सृजन में उपन्यास विधा के माध्यम से इतिहास का बोध पाठक को कराया है इतिहास से प्राप्त प्रेरणा को जनता तक पहुँचाने का श्रम किया है जीवन की स्पर्शात्मक अनुभूतियों के माध्यम से धर्म एवं कर्म की व्याख्या की है धर्म एवं सम्प्रदाय से जुड़ी सार्वकालिक चेतना विषय से स्वतः ही सम्पृक्ति रही है।

डॉ. भटनागर की महती उपलब्धि यह है कि विषय की स्पष्टता के साथ आदर्श और यथार्थ का समन्वय करने में वे सफल रहे डॉ. भटनागर भावों के कुशल शिल्पी है। उनका लेखन मानव जीवन से जुड़े हर विषय का सूक्ष्मातिसूक्ष्म निरीक्षण करता है मानव जीवन वर्तमान एवं भविष्य के स्वर्णिम पलों की प्रेरणा इतिहास से प्राप्त करता है। अतः उन्होंने इतिहास से इसी का समाधान प्राप्त करने का प्रयास किया है भारत की सनातन संस्कृति धर्म से जुड़ी हुई है और हमारा सनातन धर्म प्राचीन होने के साथ आध्यात्मिक गौरव की अनुभूति कराता है अध्यात्मवादी होने साथ ही हमारा दृष्टिकोण मानवतावादी रहा है मानव जीवन मूल्यों के साथ इनकी सम्पृक्ति हर युग एवं हर काल में रही है ''मानवीय अनुभव ही इस संसार में चिंतन का विषय है और मानव ही समस्त मूल्यों का मानदण्ड है।''[1] जीवन की व्याख्या हो या परिभाषा मानव के साथ धर्म एवं सम्प्रदाय की सम्बद्धता हर परिस्थिति में रही है। भारतीय ऋषि मुनियों से लेकर आज तक धर्म एवं सम्प्रदायों पर चिंतन मनन होता आ रहा है सभी लोग इसकी समीक्षा एवं मीमांसा में मानव मूल्यों को भी स्थान देता हैं ''मूल्य स्पष्ट तथा अस्पष्ट रूप से व्यक्तिगत परिधियों में अथवा

सामुदायिक विशेषता के नाते एक ऐसी वांछित संकल्पना है जो उपलब्ध लक्ष्यों, साधनों एवं साध्यों के चुनाव को प्रभावित करती है।"[2] डॉ. भटनागर इतिहास को बहुत महत्व देते है साथ ही इससे जुड़े हर विषय को भी महत्वपूर्ण मानते है। उनका मानना है कि इतिहास बोध के साथ मानव के भविष्य एवं वर्तमान का स्वप्न सुरक्षित रखता है अतः प्रत्येक व्यक्ति अपने इतिहास से परिचित होना आवश्यक है। धर्म एवं सम्प्रदाय को समझने के लिए हमें इतिहास का सम्पूर्ण दर्शन करना अति आवश्यक है।

भारतीय साहित्य में धर्म एवं सम्प्रदायों का चिंतन समाज में जागृति लाना एवं मानव को संघर्ष की प्रेरणा देना है हजारों वर्षो से चली आ रही यह परम्परा पृथ्वी पर न जाने कितने आघात प्रतिघातों को सहते हुए भी आज भी संघर्षशील है। पं. परशुराम चतुर्वेदी के अनुसार–"मध्ययुग में संतों की इस भावना ने आध्यात्मिक, दार्शनिक, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों में पतनोन्मुख समाज को नैतिक एवं क्रियात्मक संबल देकर, एक बार फिर अपने पैरों पर खड़ा होने का साहस प्रदान किया। इन संतों की सबसे बड़ी देन यही है कि इन्होंने इस भावना की ऐसी अविछिन्न एवं सशक्त परम्परा प्रदान की, जो आज तक अबाध गति से प्रवाहमान है, और सच पूछा जाए तो रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद, महात्मा गाँधी, श्री अरविन्द तथा विनोवा भावे इसी परम्परा के आधुनिकतम फल है।"[3] धर्म एवं सम्प्रदाय का चिंतन करते हुए उपन्यासकार ने उनसे जुड़ी भ्रामक स्थिति परिस्थितियों का भी गहन अध्ययन किया है धर्म मूल रूप में मानव हितों की व्याख्या करता है उसके जीवन के नैतिक नियम, दायित्व एवं कर्तव्यों को परिलक्षित करता है धर्म के आधार पर ही मानव जीवन की संस्कृति, सभ्यता और संस्कारों का ज्ञान होता है अतः धर्म की अवधारणा पर ही समाज, राज्य और राष्ट्र की परिकल्पना का संकल्प पारित होता है धर्म की मूलावस्था के आदर्श को प्रेरणा स्वरूप मानकर मनुष्य इसकी तात्विक व्याख्या का स्पर्श करता है तथा अपने से परे एक अलौकिक सत्ता का आभास पाता है जो इसकी रक्षा, प्रेरणा और कर्म के मूल्यांकन का परीक्षण कर न्याय करने वाला होता है उसे मनुष्य ईश्वर के नाम से सम्बोधित करता है।

ईश्वर के विभिन्न स्वरूपों की व्याख्या मानव ने अपनी चेतना के आधार पर की है मानव इस व्याख्या में कहाँ तक सत्य का अन्वेषण कर पाया है इस बारे में विभिन्न विषयों के साथ विवाद उपस्थित हुआ सर्वप्रथम चर्चा का विषय ईश्वर का स्वरूप बना था ईश्वर है या नहीं का प्रश्न आज भी मस्तिष्क की चेतना को शंकित कर जाता है। मानव के लिए यह प्रश्न संभवतः पृथ्वी के रहने तक ज्यों का त्यों बना रहेगा इसके प्रति जिज्ञासा भी वैसी बनी रहेगी जैसा कि यह प्रश्न है। ईश्वर का स्वरूप कैसा है? वह द्वैत है या अद्वैत, वह निराकार या आकारवान वह निर्गुण है या सगुण आदि प्रश्नों में उलझी हुई संरचना के जाल में मानव को एक भूल, भूलैया का अनुभव होता है और हर उत्तर प्रश्न में परिवर्तित होता हुआ किसी निष्कर्ष तक पहुँच ही जाता

है। ईश्वर के स्वरूप का सबसे सटीक विश्लेषण हमें हिन्दी के प्रसिद्ध रामभक्त कवि बाबा तुलसी की पंक्तियों में मिलता है जिन्होंने मानव मन की उस समस्त प्रश्नावली को एक पंक्ति में सरल रूप प्रस्तुत करते हुए उत्तर दिया है। ''जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखी तहाँ वैसी।'' अर्थात् ईश्वर का स्वरूप आपकी भावना पर निर्भर करता है। आप जैसा देखना चाहते है ईश्वर आपको वैसा ही दिखाई देंगें आपको तर्क की आवश्यकता नहीं है चिंतन, मनन, मंथन, संशोधन, विश्लेषण, अध्ययन की आवश्यकता नहीं है केवल भावना की सूक्ष्म अनुभूति एवं तुलसी द्वारा किया समाधान वैयक्तिक एवं अध्ययन परक है परन्तु मानव का जिज्ञासु मन तर्कों की कठोर शिला पर अपने चित्त की परीक्षा लगातार आज भी कर रहा है।

धर्म एवं सम्प्रदाय को लेकर भारत जैसे विशाल देश में अनेक मत एवं पंथ धर्म की व्याख्या एवं प्रचार के लिए बने है इनमें अपने मत को मानने वाले अनुयायियों को बनाने की होड़ लगी थी फलतः धर्म प्रचार का मूल उद्देश्य खो गया और अपने पंथ या सम्प्रदाय की श्रेष्ठता सिद्ध करने का प्रयास किया जाने लगा था ''साम्प्रदायिकता का जन्म मुख्यतः अपने सम्प्रदाय के लोगों की धार्मिक भावनाओं के दोहन के माध्यम से राजनीतिक या आर्थिक शक्ति को नियंत्रित करने जैसे धर्म निरपेक्ष मुद्दों से हुआ साम्प्रदायिकता को आमतौर पर धार्मिक संगठनों और मान्यताओं ने प्रोत्साहित नहीं किया, बल्कि राजनीतिक पार्टियों के धर्म निरपेक्ष नेताओं ने किया।''[4] धर्म की सैद्धान्तिक व्याख्या करने के लिए अनेक मत एवं सम्प्रदायों का जन्म होने लगा यद्यपि इन सबका प्रारम्भिक उद्देश्य धर्म प्रचार एवं भक्ति सिद्धान्त ही था तथापि कालांतर में धर्म के नाम पर ये सब पतित होते चले गये थे धार्मिक क्षीणता इनमें आने लगी ओर धर्म के मूल आदर्शों का हनन होने लगा था धीरे–धीरे धर्म गौण और सम्प्रदाय एवं उसकी शाखाएँ प्रधान हो गई ऐसी स्थिति में मानव मन की गुत्थियाँ सुलझने की जगह और उलझने लगी तनाव, चिंता बढ़ने लगी, धर्म उसकी प्रगति में उसके सामाजिक जीवन में बाधा बनने लगा था मानव को गुमराह कर पाखण्ड और बाह्याडम्बरों के नाम पर मानसिक चेतना शून्य किया जाने लगा निर्गुण, सगुण, द्वैत, अद्वैत, से जुड़े सभी सम्प्रदायों के नाम पर मानसिक एवं धार्मिक शोषण बढ़ने लगा था धर्म की सरलता, कठोरता में बढ़ने लगी मानव मन की अनुभूतियां मस्तिष्क में उन्हें उपस्थित कर रही थी धर्म के नाम पर चारों तरफ पाखण्ड, ढोंग, अंधविश्वास एवं बाह्याडम्बरों का बोल–बाला था। शैव, वैष्णव, शाक्त, सगुण, निर्गुण व अन्य मतावलम्बी अपनी धार्मिक मान्यताओं की श्रेष्ठता को सिद्ध करने के प्रयास में मनमानी व्याख्या करने लगे। ''भारतीय समाज को परिभाषित करने वाली सबसे महत्वपूर्ण शक्ति है धर्म। लेकिन विदेशीयों के राजनीतिक आक्रमणों के बाद, उनके मजहष संबंधी अत्याचारों ने एक बार तो इस धर्म को ही विचलित कर दिया था। ऐसे समय पर राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक अत्याचारों को सहन करने में असमर्थ जनमानस धर्म विमुख होता जा रहा था। भारतीय धर्म के ठेकेदारों ने भी बाह्याडम्बर, आवरण

तथा अनावश्यक आचारों एवं क्रिया—कलापों के द्वारा, धर्म के प्राणतत्व को निष्क्रिय सा कर दिया था।''[5] मानव के लिए धर्म के स्थान पर धर्म के लिए मानव की अवधारणा समाज में स्थापित होने लगी भारत की भोली भाली एवं अनपढ़ जनता पर इसका गहरा प्रभाव बढ़ने लगा धर्म के नाम पर गंडा, ताबीज, टोने, टोटके, जादू की प्रतिष्ठा होने लगी। गौरांश उपन्यास का उदाहरण द्रष्ट्रव्य है ''सोते समय सिंदुर और चावल कुछ बूंद पानी की मिलाकर उनके ऊपर से सात बार—केवल सिर के ऊपर से—गोलाकार घुमाकर मुख्य दरवाजे की दहलीज पर रखकर जूती या जूते से उस पर सात दफ़े वार करना और उसे कूड़े पर डाल आना।''[6] इन्हीं चमत्कारों के साथ मानव को धर्म के नाम पर गुमराह किया जाने लगा धर्म एवं समाज एक दूसरे से सम्बद्ध है फलस्वरूप समाज की व्यवस्था अब भंग होने लगी समाज में नरबलि, पशुबलि एवं शिशुबलि जैसे घृणित मान्यताओं की श्रेष्ठता प्रमाणित की जाने लगी थी धर्म की मानवीय संवेदनाओ को समाज समाप्त कर कठोरता से लागू करने में इनकी भूमिका अहम् रही थी बड़े बड़े धर्म के ठेकेदारों ने धर्म की स्वस्थ परम्पराओं के स्थान पर स्वेच्छा से बनायी गई कुरीतियों को फैलाने में योगदान दिया ऐसे समय में जब धर्म अपने मूल आदर्शो से भटक गया था राजनीति में भी विभिन्न परिवर्तनों ने जनता की मानसिक स्थिति को चिंतन शून्य कर दिया सहारा कहीं नहीं था चारों तरफ शोषण होने लगा जनता के जीवन को मूल्यों का पतन होने लगा था विदेशी आक्रांताओं के साथ ही इस्लाम धर्म ने भारत में प्रवेश किया धर्म ने मानव को राज धर्म और सत्ता धर्म के साथ जोड़ दिया राजनीतिक लाभ के लिए स्वार्थी पाखण्डियों का समूह धर्म के नाम पर अपने स्वार्थों को सिद्ध करने में लगा था धर्म का मानवीय एवं आदर्श रूप धूमिल होने लगा था धर्म की वास्तविकता उस समय यही थी।

डॉ. भटनागर के उपन्यासों में धर्म एवं सम्प्रदाय से संबंधित महत्वपूर्ण पहलुओं पर भी अत्यंत गंभीरता के साथ प्रकाश डाला गया है वे उपन्यासों के पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व एवं चिंतन व आत्म संवाद के माध्यम से इन पर विचार प्रस्तुत करते है धर्म के विषय पर उनका चिंतन यथार्थ के धरातल पर प्रस्तुत होता है 'विवेकानंद' उपन्यास में ऐसे अवसरों पर उपन्यासकार ने धार्मिक व्यवस्था का विश्लेषण किया है—''माँ! जब धर्म डराने का काम करने लगता है तब व्यक्ति आत्मभीरू हो जाता है अर्थात् अपने आप से डरने लगा है........ ऐसा व्यक्ति पल—पल मरता है वह न तब धार्मिक रह जाता है न अधार्मिक!...........''[7] धर्म मनुष्य में निर्भीकता को जन्म देता हैं परन्तु धर्म के नाम किये जा रहे अनैतिक कार्यो ने धर्म को भय से जोड़ दिया है। विवेकानंद का अन्तर्द्वन्द्व इस धर्म भीरूता पर चोट करता है वह माँ गंगा की भावात्मक अनुभूति को आत्मसात् करते है विवेकानंद धर्म की वास्तविक स्थिति का यथार्थ मूल्यांकन करते है—''मैंने गंगासागर से हिमालय और हिमालय से गंगासागर तक यात्रा की है। यानि मैं, माँ आपके साथ साथ चलता रहा हूँ अमृतपान करता रहा हूँ मुझे लगातार ये तीव्र अनुभूति होती गई कि मनुष्य अपने धर्म गुणों

से वंचित होकर अंधवासनाओं के पीछे दौड़–दौड़ कर और मनुष्य के प्रति उपेक्षा भावना के अहम को पोषित कर मनुष्य होने की गरिमा से पदच्युत हो चुका है जिसके लिए स्वयं इस पावनधारा पर विश्व ब्रहमांड का सृजन हार बार बार जन्म लेती है मेरे मन को यही दुख साल रहा है पाटलीपुत्र, काशी, इलाहबाद, कानपुर, गढ़भुवनेश्वर, और हरिद्वार, ऋषिकेश, श्रीनगर में अलकनंदा का तट, टिहरी में गंगा तट–ऋषिकेश में चण्डेश्वर महादेव में मेरा मन डूबा है। .............. प्रायः हर हर गंगे, शिवोऽम की अमियवाणी सुनता–सुनता जहाँ मेरा हृदय ईश्वरीय अननुज्ञात अनुभुति से आनंदमग्न होता गया। माँ, वहीं जन जन में असहनीय पीड़ा के दृश्यों को देखकर मेरा मन उद्वेलित हो उठा।''[8] विवेकानंद ईश्वर के भेद में विश्वास नहीं करते थे वे स्वयं को उस सृष्टि का अंश मानते थे उनकी सभी धर्मों के प्रति श्रद्धा थी क्योंकि सभी धर्म इंसानियत और मानवता की बात करते थे हैं। उपन्यासकार ने उपन्यासों में ऐसी सामान्य स्थितियों में धर्म और सम्प्रदाय के नाम पर फैलती हुई भ्रांतियों पर रोक लगाई है विवेकानंद को यात्रा के दौरान मिलने वाले अनुभवों में साम्प्रदायिक जड़ता को  निर्मूल साबित होती है एक उदाहरण दृष्टव्य है।

'' सलाम अलैकुम, दरवेश साहिब?''

''वालैकुमस्सलाम''

''मुझे डाक्टर साहिब ने भेजा है।....... मैं मुश्लमान हूँ। मौलवी।''

'' मैं भी, आलिम साहिब।''

''आप भी!,'' साचरज मौलवी ने उनकी ओर देखा डाक्टर ने तो उन्हें बंगाली संन्यासी बतलाया था हाँ, मुश्लमान तो बंगाल में भी है।

''अचरज मत कीजिए मौलवी साहब। आप अरबी, फारसी, उर्दू, पढ़ाते है। (उस्ताद हुए) मैं आपके चरणों में बैठकर जो कुछ जान पाया हूँ। उसे दुआओं के रूप में बाँटता हूँ। ........ कहीं से तो खून एक है। उसका रंग एक है–फिर हम दो कहाँ .......... मौलवी– दरवेश हिन्दू मुस्लमान हम आप बाद में है पहले तो इंसान है।''[9]

डॉ. भटनागर ने धर्म एवं सम्प्रदाय विषयक जो भ्रांतियाँ थी उन पर विचार ही नहीं किया है अपितु अपने उपन्यासों में इनके बारे स्थापित सोच को  भी दरकिनार कर मानवता की स्थापना में सहयोग किया है। हिन्दू–'मुस्लिमों के आपसी मतभेद में धर्म की सही व्याख्या नहीं हो पाई थी और स्वार्थी लोगों ने इसका फायदा उठाया। इन दोनों के बीच खाई को और गहरा किया तथा अपने स्वार्थ सिद्धी के अभियान को जारी रखा। परन्तु स्वामी विवेकानंद तथा मौलवी के धार्मिक विषय के संवाद ने जो धर्म के स्वरूप का मूल्यांकन किया है। वह सौ फीसदी मानवतावाद की प्रतिष्ठा करता है।

''स्वामी जी मुस्कराए और बोले; ग्यारह सौ वर्ष पहले कुरआन शरीफ का जो स्वरूप था आज भी वहीं है।''

''खुदा का संदेश जो है स्वामी जी।''

''हाँ..... इलहाम है। काश, कोई उससे जुड़ सके।......... जो पाक है, वहीं मुश्लमान, वही हिन्दू, वही क्रिश्चियन, वही पारसी.......और.........। परन्तु सबसे आलादरजा है।—इंसान।''

''हाँ स्वामी जी, आप ठीक फरमाते है।''

''जो बाँटे, फर्क दर्ज कराए, वह न मजहब है न धर्म। हम......................... इंसान बने, वही धर्म है। वही ईमान है।''[10]

डॉ. भटनागर धर्म का चिंतन करते हुए प्रश्नोत्तर शैली का प्रयोग करते है उनके प्रश्न और उत्तर में धर्म की भ्रांतियों एवं उससे जुड़ी अवधारणा को समझाने का प्रयास किया गया है धर्म की शाखा के रूप में विभिन्न मत मतांतर और सम्प्रदाय प्रचलित हुए इन सभी का उद्देश्य भक्ति एवं धर्म के आधार पर मोक्ष प्राप्ति की ओर बढ़ना था परन्तु कालांतर में इनका स्वरूप परिवर्तन होने लगा था धार्मिक आस्था अब केवल बाह्य रूप में रही आंतरिक शून्यता बढ़ने लगी उपन्यासकार ने वैष्णव सम्प्रदाय पर इस प्रकार का चिंतन स्पष्ट किया है।

''वैष्णव बंधु, उर्ध्व पुण्डेन किम स्यात् (अर्द्धपुण्ड लगाने से क्या होता है?)''

यहाँ कौन वैष्णव है? वैष्णव के घर में जन्म लेने से क्या कोई वैष्णव हो जाता है? और मानों हो भी जाता है, तो क्या वह वैष्णवता का आशय जानता है?

यह कैसा अनर्थ है?''[11]

उपन्यासकार ने जन्म के आधार में वैष्णव होने की धारणा का खण्डन किया है वे मानते है कि धर्म और मर्म का ज्ञान मंथन मनन आदि की हृदय की स्पर्शात्मक अनुभूति से होता है अज्ञानता भय को जन्म देती है भय पाप को जन्म देता है। अतः व्यक्ति को निडर होकर ईश्वर का सच्चे मन से ध्यान करना चाहिए जिससे उसकी आत्मिक शुद्धि हो सके तभी उसकी लगन ईश्वर के स्वरूप का साक्षात्कार कराने में सफल हो सकती है।

''जो भय से मुक्त होना चाहता है अर्थात् निडर बना रहना चाहता है उसका यह कर्तव्य बनता है कि वह श्री हरि का श्रवण, कीर्तन और स्मरण करे।

यह जरूरी है कि श्री कृष्ण का स्मरण हर पल होता रहे श्री कृष्ण ही सारे विधि सिद्धान्तों का सार सर्वस्व है।''[12]

डॉ. भटनागर ने वैष्णव सम्प्रदाय का चिंतन ''गौरांग'' उपन्यास में महाप्रभु चैतन्य के जीवन के विविध प्रसंगों एवं संदर्भों से ग्रहण किया है वे धर्म की अवस्था पर चिंतन करते है तथा उसके प्रति चेतनागत भावों का भी सम्पादन करते है वे सार्वकालिक सत्य का परीक्षण करते है वे जानते है कि युगों से चली आ रही जय–पराजय, धर्म–अधर्म, सत्य–असत्य का युद्ध, संघर्ष हर बार हर नायक की कठोर परीक्षा लेता रहा है उसके धैर्य और प्रतीक्षारत संघर्ष को निरंतर बनाए रखना आवश्यक है यह सार्वकालिक चेतना का मुखर स्वर है कि जब कभी भी धर्म की व्यवस्था भंग होने लगती है। उसे किसी न किसी माध्यम से चेतना प्राप्त होती है। 'गौरांग' उपन्यास में इस चेतना के दर्शन होते है।

''आज धर्म को जरूरत है। आज उसकी अपने समाज को जरूरत है और समूची मानवता को उसकी जरूरत है म्लेच्छों के वार सहने के लिए उसे सुरक्षा कवच मिले माना कि हमारे शासक हमारी रक्षा करने में समर्थ नहीं है परन्तु क्या शस्त्र और शास्त्रों का गूढ़ अध्ययन मनन इसका उत्तर दे सकने में सक्षम है?''[13] भटनागर जी के उपन्यासों में सार्वकालिक चेतना सबसे गंभीर एवं सशक्त पक्ष है इन्होंने अपने साहित्य सृजन में इसको प्रकाशित करने का सार्थक प्रयास किया है ''गौरांग समय आह्वान दे रहा है। दिशाएँ उसे प्रति ध्वनित कर रही है और आकाश उसका साक्षी है धरिणि बारम्बार पुकार रही है कि हे शास्त्र जयी जय के प्रणेता महाबली गौरांग की तुम असली वैष्णव होने की ध्वजा हाथ में थामों और मृत प्रायः पड़ी जनता जनार्दन को अमृतपान कराओ। बन सको तो उसके लिए उदात्त वैष्णव बनो और अपने समय का मार्ग प्रशस्त करो।''[14] धर्म मनुष्य को विवेक प्रदान करता है वह विवेकानुसार ही अपने जीवन कौशल को व्यक्त करता है धर्म बंधन नहीं है। सर्वजन हिताय है सार्वकालिक, सार्वजनिक एवं सार्वभौमिक है समस्त भेदों को भुलाकर मानव के सत्य स्वरूप का दिव्य दर्शन कराने वाला है ईश्वर के नाम पर की जा रही समस्त क्रियाओं का नियंत्रण है यह मनुष्य को मनुष्यता के सच्चे स्वरूप से साक्षात्कार कराता है–''कीर्तन सर्वधर्मीय और सार्वजनिक है इसमें कोई धर्म रूकावट नहीं बनता है इसमें कोई छोटा बड़ा नहीं है यह ईश्वर अल्लाह का  सार्वजनिक स्मरण है उसके महान नाम का हृदय से जाप है उसका चिंतन, मनन है उसे पा लेने और अनुभव करने का माध्यम है इसके जाप से मानव तीनों तापों से बचता है यह प्रेम का महोत्सव है।''[15]

डॉ. भटनागर ने 'गौरांग' उपन्यास में महाप्रभु चैतन्य के जीवन संदर्भो से प्रेरणा ग्रहण करते हुए जीवन की दो विपरीत अवस्थाओं पर चिंतन प्रकट किया है। जीवन का संघर्ष तब कठिन लगता है जब अध्यात्म और भक्ति की ओर उन्मुख होकर घर छोड़कर संन्यास लेना हो भक्ति के साथ संन्यास और गृहस्थ का जो सम्बन्ध है वह विवेक पर निर्भर करता है गृहस्थ एवं संन्यासी के चिंतन में उपन्यासकार का भक्ति दर्शन उच्च कोटि का है गौरांग और नित्यानंद का

यह संवाद भक्ति मार्ग में गृहस्थ तथा संन्यास के बीच का मार्ग उपस्थित करते हुए समाज के आदर्शात्मक स्वरूप की स्थापना पर बल देता है।

''गौरांग ने एकांत में नित्यानंद से कहा ''नित्य तुम अब अनित्य होकर भगवान भजन करो विवाह कर लो।''

''महाप्रभु! विवाह और मैं एक संन्यासी!''

''हाँ रे, नित्य यह भी जरूरी है, वरना लोक यह मान लेगा कि गृहस्थ में रहकर हरिकीर्तन हरि गायन और परोपकार संभव नहीं है।''[16] धर्म मनुष्य के संघर्ष में आशान्वित संचार करता है मनुष्य जब कभी भी संघर्ष से व्यथित होकर कुंठा एवं छटपटाहट का अनुभव करता है तब ईश्वर के प्रति आस्था एवं श्रद्धा उसे संघर्ष मार्ग पर चलने की प्रेरणा देती है यह सार्वकालिक चेतना का ही रूप है कि मानव में उस अज्ञात अलौकिक सत्ता के प्रति आस्था के प्रति भाव उत्पन्न होते है वह सहज दर्शन कर लेता है उस परमतत्व शक्ति की जिसकी उसे आवश्यकता है धर्म के साथ कर्म का निष्काम संकल्प मानव को संघर्ष की चरम अवस्था तक धैर्य बनाए रखने की प्रेरणा देती है 'एक अंतहीन युद्ध' उपन्यास में महाराणा प्रताप के समक्ष ऐसी स्थिति आने पर उसका सहज निराकरण सार्वकालिक चेतना की प्रस्तुति है।

– ''ऐसा ही होगा।''

– भगवान एकलिंग और माँ की इच्छा सर्वोपरि है।

– मनुष्य स्वयं अपना भगवान है।

– क्या मतलब?

– मनुष्य को अपने पर आस्था नहीं खोनी चाहिए। आस्था से भगवान है

– आस्था.........।

– सत्कर्म की क्रियान्वित का ही दूसरा नाम आस्था है। आप अपने पर भरोसा कीजिए।

वही भगवान की प्रेरणा है वह स्वयं है– महाराणी ने प्रताप का ध्यान अपनी और आकृष्ट किया। प्रताप स्वयं भगवान के बारे में विचार कर रहे थे। वह आगे कह रही थी जब कभी मन में अनास्था उठती है। तब समझ लेना चाहिए कि ध्यान कर्मच्युत है और करणीय सूझ नहीं पा रहा है। मनुष्य की मुठ्ठी में उसके कर्म से, भगवान और प्रारब्ध दोनों है। कुछ मत सोचो जो होगा वह इसलिए श्रेष्ठ होगा कि आपके कर्म श्रेष्ठ है। आपका हृदय विशुद्ध है। आपका मार्ग न्याय और मानवता का है।

– महाराणी! प्रताप ने गद्गद् होकर कहा और अपलक दृष्टि से उसे देखा ।

—कर्म करते रहे, मनुष्य के लिए इतना ही पर्याप्त है। सत्कर्म का फल भी सामने आये,

यह आवश्यक नहीं है कि आप कर्म कीजिए उसी से मन को शांति मिलेगी।''[17] डॉ. भटनागर ने 'सूर्यवंश का प्रताप' शीर्षक से लिखे उपन्यास में भी प्रताप के माध्यम से विचारों को प्रस्तुत किया है वह स्वतंत्रता के प्रतीक महाराणा प्रताप के युद्ध सम्बन्धी विचारों में भी धर्म के नाम पर किये जा रहे छल प्रपंच को अनैतिक घोषित करते है और सत्ता के मद एवं स्वार्थ में जीवन के क्रूरतम, हिंसक और घृणित कार्यों की भर्त्सना करते है वे मानवतावाद के पोषक है। वे धर्म के नाम पर किये जा रहे युद्ध का विरोध करते है।

''मानव संस्कृति और सभ्यता के विकास के साथ क्यों इतना हिंसक और क्रूर होता जा रहा है? क्यों परस्पर द्वेष, घृणा और उपेक्षा से लबालब है? उसके यह प्रयत्न शांति और मानवता के लिए है, यह सोचकर भी आश्चर्य होता है। कि उसने निरंतर अपनी आत्मा की अनसुनी करने और भूलने का ही निरंतर प्रयास किया है। धर्म बनाए उसने शांति के लिए धर्म के स्थान चुने और उन्हें तीर्थ नाम से पुकारा, आत्मा की शुद्धि और प्रगति के लिए लेकिन धर्म के नाम पर युद्ध हो रहे तीर्थों को अनैतिक तथा अनाचार का अड्डा बनाया गया है। ऐसा क्यों?''[18] डॉ. भटनागर ने प्रताप के माध्यम से जीवन की संकटकालीन परिस्थितियों में आस्था एवं श्रद्धा के द्वारा संघर्ष को प्राणवान व आशान्वित बनाने का संदेश जनमानस तक पहुँचाया है धर्म की नैतिक एवं आदर्शात्मक स्वरूप की व्याख्या की है वह उन क्षणों की अनुभूति का साक्षात्कार करते है। जब प्रताप की मनोस्थिति किसी निर्णय पर पहुँचने में समर्थ नहीं हो पा रही थी। लेखक ने उन पलों की द्वन्द्वात्मक अवस्था में सार्वकालिक चेतना को प्रस्तुत किया है जो हर काल व युग में मानव के संकटकालीन क्षणों में प्रेरणा मार्ग प्रशस्त करती रही है।

माँ, शक्ति रूपा माँ, मेरा मार्ग प्रशस्त करो। मेरे चारों ओर घन तिमिर आच्छादित हो चुका है मुझे सत्प्रेरणा से भरो माँ अपनी शक्ति माँ, ताकि मैं तिमिराच्छादित वातावरण को पुनः प्रकाश में भर सकूँ प्रताप को लगा जैसे वह माँ के चरणों में शीश झुका कर बैठ गया है।

''सत्प्ररणाएँ मनुष्य में स्वयं फूटती है जैसे धरती से पेड़ पौधे उगते है शक्ति हर व्यक्ति में है क्योंकि हरेक में मेरा निवास है जो उसे पहचान लेता है, वह निर्भीक हो जाता है और तदनुरूप कार्य करता है।''[19]

व्यक्ति को जीवन में कर्म की भावना निष्काम होनी चाहिए उसमें अपने संचित कर्मो का पुण्य फल मातृभूमि के लिए अर्पित करने की भावना का बना रहना आवश्यक है उसे निडर होकर अपने जीवन लक्ष्य की तरफ बढ़ना चाहिए परिणाम की चिंता किये बिना सफलता असफलता के द्वन्द्व से परे होकर कर्म करते रहना चाहिए ''जय पराजय कुछ नहीं होती व्यक्ति कभी हारता भी नहीं कर्मोन्मुखी निरंतर बने रहो, इसी से जीवन की अर्थ शक्ति है अर्थतः तुम श्रेष्ठ हो।''[20] प्रताप

को यह दिव्य चेतना प्राप्त हुई और वह नवीनता एवं स्फूर्ति के साथ पुनः अपने कर्म पथ पर बढ़ने की प्रेरणा प्राप्त करता है यह अवस्था सार्वकालिक चेतना की है क्योंकि मानव को जब कभी भी परिस्थितियां घेर लेती है निराशा के बादल मंडराने लगते है तभी वह अपनी आंतरिक शक्तियों को पहचानने का अनुभव करता है, जो मानव को प्रेरित करती है एवं लक्ष्य की ओर बढ़ने की सकारात्मक ऊर्जा प्रदान करती है। ''प्रताप उठो और आदेश का पालन करो। विपत्तियों में भी हँस सकने की क्षमता मानव में पैदा करो उसका आदर्श बनो।......... चलो, उठो....... उठो.......।''[21]

डॉ.भटनागर हिन्दी उपन्यास विधा के ऐसे उपन्यासकार है जिनके उपन्यास सार्वकालिक भावों की अभिव्यक्ति प्रस्तुत करते है लेखक ने अपने उपन्यासों के माध्यम से जिन विषयों की सम्पृक्ति बनायी है वे सब भारतीय जीवन मूल्यों एवं चेतना की सार्वकालिक व्याख्या प्रस्तुत करते है धर्म एवं सम्प्रदाय जैसे विवादित विषय पर भी उनकी चेतना सार्वकालिक मूल्यों से सम्पृक्त होते हुए मानवीयता को प्रतिष्ठित करती है जीवन के जिन पक्षों को लेकर मानव अपनी आपसी अच्छाई को भूलता जा रहा है। डॉ.भटनागर ने उन पक्षों का गहन अध्ययन किया जीवन के लिए इन्सानियत का मार्ग प्रशस्त किया है धर्म मानव के लिए अतः उसमें मानवीय मूल्यों का आदर्श रूप में उपस्थित होना अनिवार्य है धर्म का विषय जितना सीधा सरल है उतना ही जटिल एवं क्लिष्ट भी है। भावों का विषय सरल होता है परन्तु तर्क सिद्धान्तों को जन्म देता है जिससे धर्म की क्लिष्टता बढ़ती है धर्म की कठोरता का एक बड़ा कारण है। एक बड़े वर्ग का इस पर प्रतिनिधित्व होना है अज्ञानता का अंधकार मनुष्य धर्म के मार्ग से दूर ही नहीं करता अपितु जीवन मूल्यों की नैतिक गिरावट का कारण भी बनता है।

धर्म की विषयगत सार्वकालिक चेतना का सर्वाधिक बेहतर पक्ष यह है कि धर्म को खंडित करने का प्रयास हर युग, हर काल में होता रहा है साथ ही धर्म की स्थापना का प्रयास भी हर युग, हर काल होता है इन दोनों पहलुओं को ध्यान से देखने पर विदित होता है कि यह एक चक्र की भाँति घूमता है जो सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्त है धर्म का विषय जितना गम्भीर माना गया है उतना है नहीं यह स्थिति धर्म के नाम पर प्रचलित सम्प्रदायों के जटिल सिद्धान्तों एवं पद्धति के कारण उत्पन्न हुई है ध्यान से देखने पर ज्ञात होता है विश्व में सर्वाधिक प्राचीन संस्कृति होने पर भी इनमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं दिखाई देता है।

डॉ. भटनागर ने सम्प्रदायों पर अपनी सूक्ष्मतिसूक्ष्म दृष्टि से कुछ ऐसे तथ्यों का अनुसंधान किया है जो पृथ्वी पर इस भावना को सशक्त बनाने मे प्रयासरत रहे है। साम्प्रदायिकता एवं सम्प्रदाय को समझने के लिए धर्म से जुड़ी हुई समस्त राजनीति व सामाजिक एवं धार्मिक पृष्ठभूमि को भी समझना आवश्यक है धर्म मानव के व्यवहार में शुचिता एवं मानवीय मूल्यों का निरंतर परिष्कार कर मानव के हितों का संवर्द्धन करता है धर्म के आदर्शों का योगदान समाज निर्माण की भूमिका में अहम् है धर्म के साथ ही कालांतर में धार्मिक श्रेष्ठता का विवाद एवं

आचार्यत्व की होड़ ने विभिन्न सम्प्रदायों में आपसी कलह होने लगी फलस्वरूप सनातन धर्म, बौद्ध धर्म, वैदिक धर्म, द्वैत, अद्वैत, वैष्णव, शाक्त एवं शैव जैसे विभिन्न सम्प्रदायों की अवधारणा को लेकर प्रस्तुत हुआ। सम्प्रदायों की पूजा पद्धति मान्यता एवं परम्पराओं की तकनीक अलग थी परन्तु लक्ष्य एक ही था जन्म मरण के चक्र से मुक्ति पाना अर्थात् मोक्ष मोक्ष प्राप्ति के लिए किए गये अनुसंधान में सत्य असत्य के चक्र में मानव को ऐसे भँवर में फँसा दिया जहाँ उसका विवेक चिंतन शून्य होने लगा उस की स्थिति ऐसी थी कि या तो व्याख्यायित सत्य को अंगीकार करे या फिर उसके मन में इन सबके प्रति विद्रोह 'नास्तिक' प्रवृत्ति को जन्म दे रहा था। इन सबके बीच वह निर्णय नहीं कर पा रहा था। सम्प्रदाय की अवधारणा में धर्म गौण और विचारधारा श्रेष्ठ साबित होने लगी मानव का आंतरिक मन छटपटाहट और बैचेनी का अनुभव करने लगा था।

अतः डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों के माध्यम से धर्म की नैतिकता, आदर्शात्मक, मानवीय मूल्यों के साथ सार्वकालिक चेतना की तत्वगत व्याख्या प्रस्तुत की है। समाज में धर्म के आदर्शात्मक व्यवहार का मूल्यांकन प्रस्तुत किया है।

## (ख) प्रेम विषयक स्थापनाएँ

जीवन की अनुभूत भावनात्मक गतिविधियों के साथ जब प्रणय की सुखद स्मृतियों की उर्म्मियां उन्मत्त हो उठती है तब व्यक्ति का मन उन पलों का स्मरण कर तरोताजा हो जाता है यह ताजगी यह ऊर्जा केवल मनुष्यों को प्रेम तत्व से ही प्राप्त हो सकती है प्रेम सरलता एवं सहजता का नाम है निस्वार्थ भाव एवं समर्पण की भूमिका पर प्रेम का अंकुर फूटता है जिसे भावों के जल से सींचा जाता है। डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में इस प्रकार के सुखद प्रणय स्मृतियों के सहारे प्रेम तत्व का वर्णन कल्पना के आश्रय में किया है। डॉ. गणपति चंद गुप्त ने कहा है–''प्रेम ऐसी भावात्मक अनुभूति है जिसे शब्दों के माध्यम से समझना सम्भव नहीं है।''[22] जीवन की विसंगतियों से परे ह्रदय की शुद्ध गहराईयों को भावात्मक रूप में वर्णित करना उपन्यासकार के लिए सहज सरल कार्य नहीं है डॉ. भटनागर को प्रेम विषय की सार्वकालिक चेतना का अनुभूत सत्य ज्ञात था अतः इनकी औपन्यासिक कृतियों में ऐसे कई अवसरों पर प्रेम विषयक स्थापना को प्रतिष्ठित किया गया है प्रेम सार्वकालिक चेतना का प्रतीक है। इसकी प्रवाहशीलता में जीवन की विविध झाँकियाँ परिलक्षित होती है।

डॉ. भटनागर के जीवनी परक उपन्यासों में इतिहास बोध के साथ प्रेम सम्पृक्ति सोने पे सुहागा है साहित्यकार के लिए प्रेम को वर्णित करना संभव एवं रूचिकर होता है। डॉ. भटनागर ने जब पात्रों की ऐतिहासिकता को परखा तो यह कार्य कल्पना के भँवर में उलझता सुलझता रहा। उपन्यासकार ने अपनी मौलिक कल्पना शक्ति के बल पर प्रेम के विविध चित्रों में रंग भर दिये। प्रेम के साहित्यिक एवं पवित्र रूप को यथार्थ एवं आदर्श की अनुभूतियों से सम्पृक्त कर

मनोदशा, अभिलाषा, अभिसार, प्रणय, स्मरण आदि के सुन्दर चित्र खींचे है साहित्य में विरह को प्रेम की कसौटी माना जाता है प्रेम के दो पक्षों में संयोग सुखद अवस्था का तथा वियोग दुखद अवस्था का परिचायक है साहित्य में सर्वश्रेष्ठता की बात हो तो सभी ने प्रेम की वियोग की अवस्था में अनुभव पीड़ा, कष्ट, कसक, आह को प्रेम का सात्विक एवं सर्वश्रेष्ठ रूप घोषित किया है। कबीर ने विरह की भावना को व्यक्त करते हुए कहा है कि –''विरहा विरहा मत कहे, विरहा है। सुलतान, जा घट विरह न संचरे। वा घट जा न मसान'' कबीर जैसे महान अक्खड कवि को भी जब विरह का अनुभव होता है तो सामान्य मनुष्य इसकी अवहेलना कैसे कर सकता है? वियोग की चरम अवस्था संयोग की ओर बढ़ती है जिससे साधक की साधना पूर्ण होती है साहित्य में कविता की उत्पत्ति में भी विरह को ही महत्व दिया गया है ''वियोगी होगा पहला कवि हृदय से उपजा होगा गान, निकल कर आँखों से चुपचाप बही होगी कविता अनजान'' कवि की उक्त पंक्ति सार्वकालिक चेतना के सत्य का अनुभव कराती है। प्रेम मानसिक विकारों से विरक्त हो दैवीय हो जाता है इसकी अलौकिकता का आभास विरह की साधनावस्था है जीवन के पलों की शाश्वतता का ज्ञान हमें जब होता है जब हमें प्रेम के सागर में डूब कर तैर जाते है डूब कर तैरना यद्यपि विरोधी है परन्तु प्रेम का यही पथ जीवन की परम्परा है जो डूबेगा वही तैरेगा भावों में यह सौदा हर पक्ष के लिए घाटे का हैयह हानि सुखकर लगती है जो हमेशा स्मृतियों के भँवर में चक्कर काटती हुई मानव को एक सकारात्मक ऊर्जा प्रदान करती है।

डॉ. भटनागर के उपन्यासों में प्रेम विषय से जुड़े विविध प्रसंगों एवं संदर्भों का उल्लेख किया गया है 'प्रेम' मानव के मन को भावात्मक संतोष प्रदान करता है मानव का संघर्ष जब पथ से विचलित होने लगता है, तो प्रेम उसके संघर्ष को नवीन ऊर्जा प्रदान करता है साहित्य में प्रेम की विविध स्वरूपों में व्याख्या की गई है प्रेम से जुड़े सभी विषयों पर डॉ. भटनागर ने अपनी लेखनी चलाते हुए इसके प्रसंगों का वर्णन अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में किया है उपन्यासों में प्रेम के विविध प्रसंगों में दाम्पत्य जीवन की सुखद स्मृतियों एवं रमणीय क्षणों से उपन्यास में एक प्रसंगाानुकूल कम्पन्न उत्पन्न होता है पति पत्नी के एकांतिक क्षणों की वार्ता में उपन्यासकार ने भावों के अनेक रंग मंडित कर दिए है। 'गौरांग' उपन्यास में ऐसे कई प्रसंग है जहाँ उपन्यासकार ने प्रेम के क्षणों को संवाद के रूप में प्रस्तुत किया है ''जरा ठहरो।'' कहकर गौरांग ने उसके कंधों को छुआ। उसकी आँखों में आँख डालकर पूछा, ''तुम्हें मालूम है कि इस जगत् में सबसे सुंदर कौन है?''

विष्णुप्रिया ने पुनः सिर हिलाया।

''तो सुनो उसका नाम किसी को मत बताना।''

विष्णुप्रिया शांत बनी रही।

''उसका नाम है ......।'' उसके कान के पास अपना मुँह लाकर कहा, ''राधा।''

विष्णुप्रिया के पाँव तले से धरती खिसक गई। तो क्या ! ....वह किसी और से फिर विवाह।

''क्या तुम उसको देखना चाहोगी ?''

विष्णुप्रिया क्या कहे !

''अच्छा, अपनी आँखे बंद करो।''

विष्णुप्रिया ने आँखे बन्द कर ली।

गौरांग उसे कुछ दूर तक लेकर चला। वह पूछ रही थी, ''यह क्या है, नाथ ?''

''विश्वास, प्रिया।''

''विश्वास !''

''हाँ विश्वास, प्रिया, अपने ऊपर विश्वास।......प्रिया, विश्वास ही जीवन है।''[23] प्रेम से ग्रहण प्रेरणा का अर्ध्य पाकर मनुष्य की दृढ़ इच्छा शक्ति के व्यवहार को भी उपन्यासकार ने प्रस्तुत किया है प्रेम ने मानव को संघर्ष की शक्ति प्रदान की है।

मानव एक सहृदय प्राणी है उसकी सहृदयता के कारण उसे संसार के भौतिक सुखों के साथ हृदयगत अनुभूति के सुखद क्षणों की आवश्यकता है 'प्रेम' जीवन की उबाऊ यात्रा को रोचक बनाता है 'प्रेम' का शुद्ध सात्विक रूप अपने प्रबल वेग से बड़े से बड़े संकट को निष्कंटक बना देता है प्रेम का एक रूप विवाह के पूर्व एवं दूसरा विवाह के पश्चात् दाम्पत्य भाव की सहज, सरल प्रस्तुति देता है प्रेम की सात्विकता के पवित्र एवं आचरण योग्य व्यवहार का प्रस्तुतिकरण डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में किया है।

गौरांग कहा उठा, ''प्रीति की भाषा मौन है। वह मौन जो इस समय हमारी तुम्हारी स्पंदनों में बह उठा है बरसाती नदी–सा।....शुचिभूर्तता की ओर बहना यही होता है। यही अस्तित्व है, प्रेम है और सत्य है।''

वह बोलता रहा। प्रयोजन के अवगुण्ठन खोलते रहे। मेघ बोलते हैं, रसधारा अनुगूँज उठती है, धरती भीगने लगती है। विष्णुप्रिया सुनती हुई भी अनसुनी–सी बनी रही।

''हब आँखे खोलो भी, प्रिया।''

विष्णुप्रिया ने पलकें धीरे–धीरे उठाईं, आँखे खुल गईं। वहाँ और कोई नहीं था, सिर्फ वह थी और उसके सामने दर्पण था, जिसमें वह अपने आपको देख रही थी–पिछले दिनों से एक अलग विष्णुप्रिया के रूप में। अति मद्धिम स्वर में पूछ बैठती, ''कहाँ हो ?''

''तुम्हारे पास।''

''वह चारों ओर देखती। पूछती, ''किधर?''

''अपने ह्रदय में ढूँढ़ो।.....राधा से मिल ली, प्रिया। तुम्हीं मेरी राधा हो, तुम्हीं मेरी लक्ष्मी, विष्णुप्रिया।''[24]

प्रेम तत्व की सार्वकालिकता स्वयं सिद्ध है इसे किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं है प्रेम की पवित्रता एवं मधुरता ने मानव जीवन को रूचिकर एवं दायित्व बोध से सम्पृक्त किया है ''समाज में जो स्नेह, सहानुभूति, विश्वास, कोमलता, सुकुमारता, दयालुता, शिष्टता तथा सहयोग आदि की भावनाएँ पाई जाती है उनका मूल तत्व प्रेम है।''[25] डॉ. भटनागर साहित्यिक भावों के ऐसे मर्मज्ञ उपन्यासकार है जिन्होनें भावों के प्रवाह में प्रेम के अस्तित्व की स्थापना में शिल्प का सहारा लेकर कल्पनागत भावों को सत्यामृत स्वरूप प्रदान किया है इनके उपन्यास में प्रेम के शुद्ध व्यवहार की सरल एवं रोचक व्याख्या की गई है प्रेम अजस्त्र ऊर्जा का स्त्रोत है जो मानव को सदैव अपने लक्ष्य की और प्रेरित रखता है दाम्पत्य के साथ प्रजा के प्रति वात्सल्य भाव की अभिव्यक्ति डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर के उपन्यासों मुख्य रूप से हुई है।

ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ रचनाओं में से एक है, माँ का स्वरूप एवं व्यक्तित्व। ''माँ'' शब्द का स्मरण आते ही मन श्रद्धा एवं प्रेम भाव से नत हो जाता है अतीत का बाल्यकाल स्वर्णकाल की संज्ञा सा परिभाषित होने लगता है जीवन की विगत स्मृतियों के भँवर मस्तिष्क की समस्त वेदना को समेट लेता है पीड़ा और जीवन की कठोरता का नर्म अहसास कराने लगती है और मन फिर से बालक बनने की हठ पकड़ बैठता है। यह अनुभव केवल माँ के दुलार और लाड़ का ही है कि संसार का सबसे सामर्थ्यवान मानव भी माँ के सानिध्य को स्मरण कर श्रद्धा से भाव विभोर हो उठता है ''भोली माँ, वह तो तू ही दे सकती है। माँ से बड़ा आशीर्वाद इस जगत् में कोई दूसरा नहीं दे सकता। अपने इस माधव, जगत् के रचयिता को भी जसोदा के आशीर्वाद की जरूरत पड़ी थी न, माँ। फिर तू अपने लाडले के लिए किसका आशीर्वाद चाहती है ? न माँ, न। तेरी ममता की जिसे हवा मिले, स्नेह मिले, अंक मिले उसे माँ, किसी दूसरे के आशीर्वाद की जरूरत नहीं।''[26] माँ के स्वरूप के साथ ही पिता का स्नेह भी मनुष्य को कर्तव्य पथ की ओर अग्रसर करने में सहायता प्रदान करता है पिता के कठोर व्यक्तित्व के पीछे छिपे हुए प्रेम का सामना केवल परिस्थितियों के मध्य ही होता है पिता के कर्तव्य एवं दायित्व का मूल्यांकन मानव स्वयं करने लगता है। 'युग पुरूष अंबेड़कर' उपन्यास में ऐसे तथ्यों का सहज प्रकाशन किया गया है ''रामजी कह रहे थे, ''अंबे, गरीबों के वेद, उसकी गीता, उसकी बाइबिल और उसकी कुरान मात्र रोटी है।......व्यवस्था का अर्थ भी यही है कि वह गरीबी मिटने नहीं दे। वह मिट गई तो फिर व्यवस्था की आवश्यकता कहाँ रहेगी ?.......मैंने कितनी बार भूखे रहकर अनुभव किया कि गरीबी

कितनी गरीब है, कितनी विवश है और कितनी निर्लज्ज है।.....इसलिए तो, अंबे, मैं चाहता हूँ, तू खूब पढ़, समझ और मनन कर ऐसा रास्ता तलाश कर जिससे अस्सी प्रतिशत से अधिक जनता को सुकून मिल सके।"[27] इसी प्रकार परिवार के सभी सदस्य आपस में प्रेम रूपी तत्व से ही आपस में सम्बद्व है।

परिवार से बाहर जब मनुष्य समाज के साथ जुड़ता है तो उसकी किशोर वय उसके आकर्षण का पता ढूंढ़ती नजर आती है वह जीवन की उमंगों के ज्वार में बहता हुआ कब किनारे पर अपनी ही दृष्टि में उलझ कर रह जाता है उसे यह पता तब चलता है जब वह गहरी नींद में अपने स्वप्न लोक में आगंतुक को निहारता है प्रेम का यह पक्ष जीवन का एक अप्रकाशित आलेख है जिसका प्रकाशन करने में डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर को सिद्धि प्राप्त है इन्होंने कल्पना के सागर में डुबकी मार कर प्रेम के मोती खोज लाने का स्तुत्य प्रयास किया है जब इनके उपन्यासों में प्रेम स्परूप देखते है तो इनका लेखक एक कवि के हृदय का अनुभव कराता है।

डॉ. भटनागर ने हृदय की शुद्व अनुभूतियों के सहारे जीवन की गहराइयों की संवेदना से प्रसूत भावों की अभिव्यंजना के प्रस्तुत की है इनके उपन्यासों में हृदय के भावों की शुद्ध एवं सरल स्मृतियों के सहारे प्रेम विषयों की स्थापना की गई है प्रेम मानव हृदय का एक सत्य है इसमें कपट, छल, लोभ, स्वार्थ की मिलावट का कोई स्थान नहीं है निस्वार्थ भाव से इसकी साधना होती है हमारे साहित्य में प्रेम तत्व को रस के रूप मे श्रृंगार में स्थान मिला वहीं गुण के रूप में माधुर्य में, इसकी महत्ता को स्वीकार किया गया है श्रृंगार के दोनों पक्षों में इसका वर्णन सरसता एवं सहृदय के साथ किया गया है डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में वर्णित महानायकों को जीवन गाथा में इनके जीवन से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार की प्रेम विषयक भावों की अभिव्यक्ति की है।

साहित्य का आधार मानव है और मानव हृदय की शुद्ध अनुभूतियों का आधार प्रेम तत्व है संयोग और वियोग की अवस्थाओं के माध्यम से डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अत्यंत चित्रमयी भाषा में प्रेम विषयों की स्थापना करने में सफल रहे है प्रेम मानव जीवन को प्रेरणा देता है प्रेम मानसिक शांति और उद्विग्नता को जीवन में व्याख्यायित करता है प्रेम के विविध स्वरूप है इसे जीवन के हर रूप में देखा जा सकता है इसकी संवेदना को महसूस किया जाता है यह जीवन के संघर्ष में प्रेरणादायक भाव है प्रेम को वात्सल्य, करूणा, स्नेह, भाईचारा जैसे विविध रूपों में देखा जा सकता है प्रेम भावना से जुड़ा विषय है जहाँ भी भावना का आधिक्य प्रवाहित होता है वहीं प्रेम का स्वरूप परिलक्षित होता है इनके उपन्यासों में प्रेम के स्वरूप को विविध दृष्टिकोण एवं स्वरूपों में रूपायित किया गया है।

डॉ. भटनागर हृदयगत भावों के भावुक द्रष्ट्रा है उनकी दृष्टि संकेत के भाव को समझती है यह ज्ञान केवल अनुभूत किया जा सकता है। उपन्यासकार ने ऐसी अवधारणाओं की उसी सांकेतिक भाषा में व्याख्या की है जिसे मानव का मन समझ सकता है। उल्लासित, आनंद एवं प्रसन्नता का अनुभव कर सकता है प्रेम मानव जीवन का सार्वकालिक सत्य है इसकी उपस्थिति एवं प्रासंगिकता हर युग, काल एवं परिस्थिति में बनी रहेगी डॉ. भटनागर के उपन्यासों में प्रेम विषय के ईश्वरीय स्वरूप का वर्णन एकात्म तथा श्रद्धा, समर्पण भाव से किया गया है ''उसके प्रति प्रेम हो। गहरा प्रेम इतना गहरा कि स्वयं को भूला जा सके और उसमें डूबा जा सके फिर तुझे कोई संशय सोच नहीं सतायेगा एकांत आँगन नन्हें श्याम के नुपुरों की छम छम से गूंज उठेगा। उससे तू प्रेम कर, प्रेम में मुक्ति है, वहीं तुझे दिशा सुझाएगा और तेरे बंधन काटेगा बंधन व्याधि है, निर्बन्धन मुक्ति। आज मानुष को यही चाहिए। इसी से वह विकार मुक्त होगा।''[28] उपन्यासकार ने मीरा की भक्ति में प्रेम का निष्काम संकल्प दर्शाया है समर्पण की भावना का विराट स्वरूप दिखाने का प्रयास किया है भक्ति के चेतना में प्रेम का प्रवाह कितने आनंद और प्रसन्ता की अनुभूति देता है यह तो सिर्फ भक्त ही जान सकता है ईश्वर के प्रति इस समर्पण में प्रेम की उद्भावना भक्ति में प्रेम की श्रेष्ठता को प्रमाणित करती है ''भक्त जैसे माने वह उसी रूप में सामने आ जाता है।........ मैं तो जानती ही नहीं हूँ कि मैं उसे किस रूप में मानती पुकारती हूॅ। मुझे लगता है कि वह मेरे पास है, मेरे से बतिया रहा है मुझे छका रहा है मुझसे रूठ गया है और मुझसे झगड़ रहा है। मुझे उसके हर रूप, हर मुद्रा में उसकी गहरी अनुभूति होती है वह मुझे हर बार नये रूप और नयी मुद्रा में मिलता है वहीं मेरा कीर्तन है, वहीं मेरा भजन है वहीं मेरा ध्यान है, वहीं मेरा संसार है और इस तरह वही रह जाता है, मैं नहीं रहती। वही मुझमें राग भरता है वही मुझमें रंग खिलाता है। तब मैं अपने में नहीं रहती तब मैं उसमें डूब जाती हूँ।''[29]

डॉ. भटनागर ने ईश्वरीय प्रेम को साधक चैतन्य अवस्था के भावात्मक स्वरूप का वर्णन करने में सफलता प्राप्त की है वह उन क्षणों की अनुभूत सत्यता को कल्पना का सहारा देकर व्यक्त करते है ईश्वर के प्रति जब मानव का आत्मसाक्षात्कार हो जाता है। तब माया का आवरण हट जाता है तथा समस्त चर अचर जगत के भेद नष्ट हो जाते है भक्ति की लहर में आकर भक्त अपने ईश्वर के प्रति अपनी प्रेम साधना की दिव्य ज्योति के दर्शन कर पाता है उसके प्रश्न उत्तर में परिवर्तित होने लगते है। वह अपने आप से बातें करने लगता है जो कि अन्तरात्मा की जागृत अवस्था है 'न गोपी न राधा' उपन्यास में इस प्रकार के प्रेम साधना के स्वरूप का वर्णन भक्ति चेतना के द्वारा किया गया है–''थे नटखट हो बात बनाने में, बातन में अनेक अर्थ निकालने में थारे सूँ कौन टक्कर ले म्हे तो सीधी सच्ची हूँ म्हारे कूँ दुनिया अरू थारी कला नाँय आती है तू जो कह रहा है वाही को माने चली जा रही हूँ चलती चली जाऊँगी थे तो एक मात्र म्हारा सब कछु हो। सखा, सखि, धणी, प्रिय आदि सब कछु तो थे ही हो थारे अलावा और म्हारा कोई

नाँय है।''[30] 'प्रेम' ईश्वर और मानव के बीच एक आत्मीय सम्बन्ध है जिसके बल पर मनुष्य मानवता के सिद्धान्तों का निर्माण करता है उसमें ईश्वरीय प्रेम का योगदान प्रमुख है।

'अमृत घट' उपन्यास में सूरदास की अंधी आँखों द्वारा जिस अलौकिक स्वप्न का दर्शन दिखाया गया है, वह ईश्वरीय प्रेम की आत्मिक व्याख्या है।

''उसके स्वप्न में श्रीकृष्ण आ गये। वह उसे जगाते हुए कहने लगे तू मुझे भज, तू मुझे गा, सूरा तिहरा जन्म इसलिए हुआ है। तू गवैया है। तेरे कण्ठ में मैं बैठा हूँ। तू मुझे देख सकता है। और अपना मित्र बना सकता है।

– क्या देखना संभव है?

– हाथ कंगन को आरसी क्या।

– मैं अभागा हूँ, प्रभु!

– तू भाग्यशाली है और तू मुझे बहुत प्रिय है। तेरा मन शुद्ध है। तेरी कुण्डलिनी जागृत है। तू सरस्वती पुत्र है।

पता नहीं परन्तु तिहारी बात मेरे लिए पत्थर की लकीर है। वाहे मेरी मोटी बुद्धि में वा का अर्थ समझ में आये अथवा ना आए। वास्तव में मुझे अर्थ की भी चिन्ता नाहीं है। मेरा तू ही अर्थ है। तेरे अतिरिक्त अन्य कोई अर्थ नाही।''[31] मानव जब ईश्वर से प्रेम करने लगता है तो उसका आत्मचिंतन प्रखर हो जाता है, वह प्रश्नों के जाल से मुक्ति प्राप्त कर नव चेतना से सकारात्मक ऊर्जा ग्रहण करता है चित्त की निर्मलता के साथ भावों की पवित्रता उसके हृदय में स्थान बना लेती है तथा उसे सर्व संसार ईश्वरीय रचना लगने लगता है डॉ. भटनागर ने प्रेम विविध रूपों का वर्णन करते हुए देश के प्रेम की व्याख्या में मानव मन की गहराइयों से देश प्रेम का रत्न प्राप्त करते है और अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में इसकी स्थापना करते है 'दिल्ली चलो' उपन्यास में सुभाष बाबू और जेल सुपरिटेंडट के बीच का संवाद देश प्रेम की अभिव्यक्ति है।

''वह कुछ सोचकर बोले–'' आप कुछ–कुछ बंगला समझते है, सुपरिटेंडेंट साहब।

''हाँ......... पर बहुत कम।''

''तो सुनिये।''

''क्या''

''जेल की दशा की कल्पना से उपजा रवि बाबू का यह गीत।''

'' पहले सुनिये तो सही।'' इसके कुछ क्षण बाद सुभाष बाबू गा उठे–''सोनार बांगला, आमि तोमाय भालोवासी–चिर दिन सोनार आकाश तोमार बातास– आभार प्राणे बजाय बंसी।''

''क्या मतलब?''

''स्वर्ण भूमि बंगाल, मैं तुझे प्यार करता हूँ। प्रतिदिन तेरा आकाश और तेरी पवन मेरे हृदय में बंशी बजाता है।'' सुभाष ने कहा।''

''ओह। यह बात है।''

''मातृ भूमि हर एक को प्यारी होती है।, मि. सुपरिटेंडेट साहब''[32]

उपन्यास कार ने देश प्रेम की भावना को मानवतावादी मूल्यों से जोड़कर देश के प्रति जो श्रद्धा सुमन अर्पित किये है वे सराहनीय है महाराणा प्रताप स्वतंत्रता के हठ योगी थे वे स्वतंत्रता की साधना में सर्वस्व समर्पण का भाव रखते थे यह मूल्य उनकी सार्वकालिक चेतना से जुड़ा हुआ है क्योंकि स्वतंत्रता के लिए हर युग, हर काल में संधर्ष किया गया है युद्ध भी उसी से जुड़ा हुआ एक रूप है प्रताप के माध्यम से उपन्यासकार ने मानवतावाद की प्रतिष्ठा की है देश प्रेम के खातिर सर्वस्व समर्पण का भाव उपस्थित किया है मृत्यु का भय देश भक्ति के मार्ग में बाधा उपस्थित नहीं कर सकता क्योंकि मानवता की स्थापना में सहयोग करने के लिए स्वयं का उपस्थित होना अनिवार्य है युद्ध के दो पक्ष होते है इसका सम्बन्ध हार जीत नहीं अपितु मानव मूल्यों से होता है देश प्रेम की जो भावना प्रताप के सम्बोधन में है वह सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्त है।

''रणबांकुरो, यह दिन भाग्यशाली को देखने को मिलता है कुंवर मानसिंह और उसके साथ राजपूत सेना भी है वे कटेगें मरेगें और शौर्य का प्रदर्शन करेंगे परन्तु उनका युद्ध में भाग लेना मानव मूल्यों को समाप्त करने के लिए है अतः वे इस संसार में सदा उपेक्षा के पा्त्र रहेगें उन्हें मातृ द्रोही और मानवता के शत्रु के रूप में याद किया जायेगा वे वीर पराक्रमी व उद्भट योद्धा होकर भी अपमानित होंगे कारण, युद्ध, जय, पराजय से उतना सम्बन्ध नहीं रखता है, जितना वह उसके कारणों से, मूल्यों से मानवता से रखता है।''[33]

डॉ. भटनागर ने प्रताप के उद्बोधन देश प्रेम एवं मानव मूल्यों की स्थापना के प्रति निष्ठा व्यक्त की है अपने देश के प्रति जो कर्तव्य एवं दायित्व है वहीं सच्चा देश प्रेम है इनके उपन्यास में देश प्रेम की सार्वकालिक व्याख्या प्रस्तुत हुई है। डॉ. भटनागर ने प्रेम की स्वाभाविक अभिव्यक्ति को ही व्यक्त किया है एक माँ अपने पुत्र के लिए वात्सल्य का सागर अपने हृदय में समेटे रहती है वह अपने पुत्र के ऊपर उस सागर की अजस्त्र धारा लुटाती रहती है 'विवेकानंद' उपन्यास में माँ के पवित्र प्रेम का रूप परिलक्षित होता है।

अचानक मेरी आँख खुली मैं चौंक पड़ा, '' माँ, ये तू क्या कर रही है?''

''जो एक माँ को करना चाहिए।''

'' पाँव दबाना।''

''तुझे आज खूब दौडाया गया था ना।''

''तो?''

''तू थक गया होगा, बिले, अब चुपचाप सो जा,बिले। कुछ पूछताछ नहीं,''

''ना माँ ना।'' मैने अपने पाँव खींचने चाहे तो माँ ने मेरे पांव को कसकर पकड़ लिया और कहा,'' तू चुपचाप सो जा।''

''पर यह गलत है।''

''क्या गलत है?, शिशु को रोता देखकर क्या उसे दूध पिलाना गलत है? या शिशु के गू–मूत साफ करना गलत है.............. उसके वस्त्र. बदलना गलत है, उसे सूखे में सुलाना गलत है........ उसको प्यार करना या उनके मन की चीज बनाकर खिलाना गलत है। क्या गलत है, बिले, कम से कम तू मुझे तो बता कि क्या सही है और क्या गलत है?''[34]

प्रेम के जितने भी शब्द चित्र उपन्यासकार ने प्रस्तुत किये है वे सब सार्वकालिकता चेतना से सम्पृक्त है, क्योंकि प्रेम के बिना मानवीय संवेदना का कोई अस्तित्व नहीं है अतः प्रेम जीवन का आवश्यक भाव है डॉ. भटनागर ने प्रेम की सार्वकालिकता पर 'गौरांग' उपन्यास में अपना मत व्यक्त किया है–''फिर से मेरी चेतना में स्त्री का विमल रूप सौन्दर्य जवान सा हो गया और वह मेरे स्वप्नों में यदा–कदा आने लगी थी मैं सच्चे मन से भागीरथी की ओर मुख करके यह स्वीकार करना चाहता हूँ कि शनै–शनै मुझमें स्त्री सौन्द्रर्य के पुनीत आकर्षण ने मौन संवाद प्रारंभ कर दिये और कई बार चाहकर या अनचाहे विष्णु प्रिया से सामना हो गया वह नत सिर किए, मन के स्पदनों को खामोश किए, मेरे सामने से चुपचाप निकल गई और मुझमें हलचल मचा गई वे पल कितने प्रीतिकर थे कि अन्तःकरण प्रेमाश्रुओं से आर्द्र हो गया। मुझे लगा कि मनुष्य में कभी प्रेम मर नहीं सकता प्रेम मनुष्य का जितना गोपनीय स्वभाव है, उतना ही अगोपनीय भी...........।''[35] डॉ. भटनागर ने उपर्युक्त चिंतन में प्रेम की अमरता एवं उसकी जीवन्तता को प्रस्तुत किया है प्रेम जीवन की सुखद स्मृतियों का ज्योति पुंज है। जो मन के स्पर्श से प्रकाशित होता रहता है।

साहित्य की चिंतन धारा का मुख्य विषय प्रेम से सम्बद्ध है यह विभिन्न परिस्थितियों में विविध रूपों में दृष्टिगत होता है प्रेम क्षण विशेष का परिचायक न होकर जीवन की सकारात्मक ऊर्जा है जो हर पल नवीनता से सरोबार है प्रेम जीवन की नीरसता में सुखों का अमृत पान है जो जीवन को प्रफुल्लित करता है उपन्यासकार ने 'नीले घोडे के सवार' उपन्यास में महाराणा और अजवांदे के प्रेमालाप का मोहक चित्र खींचा है।

''अब प्रताप की दृष्टि अजुवांदे के चेहरे पर थी कैसा भावपूर्ण चेहरा है उसका कितना निश्चल और कितना भोला एकदम रक्ताभ उसकी बड़ी बड़ी आँखे किसी दक्षिण की अभिसारिका को परास्त करती प्रतीत आ रही थी उसकी अधर सुषमा सम्मोहित कर रही थी प्रताप ने उसकी तन्वी कमर को अपनी बाँहों में ले लिया। अजवांदे परमार एकदम चौक पड़ी। वह घबरा कर कह उठी,

''यह क्या है?''

''प्यार, महारानी प्यार।''

''छोड़ो भी।''

''देखती हो,राणी सा, आज स्वयं जीवन फाग बन नाच उठा है। कितना मादक है, यह जादुई दृश्य!'' प्रताप ने उसे कसते हुए कहा

''कुछ तो सोचो! यहाँ कोई आ गया तो......।''

यहाँ कोई नहीं आएगा।'' प्रताप ने मचलते हुए कहा,''यहाँ आएगा तो प्यार आएगा। मधुमास आएगा।''

यह तुम्हें क्या हो गया है आज।''

''कहा नहीं की प्यार।''[36]

डॉ. भटनागर ने प्रेम विषय की स्थापना में मन को अधिक महत्व दिया है क्योंकि मन की सुन्दरता के सामने बाह्य रूप की सुन्दरता फीकी पड़ जाती है। 'अमृतघट' उपन्यास में सूरदास और सारंगी के बीच का यह वार्तालाप प्रेम की सात्विक एवं पवित्र भावना को परिलक्षित करता है जीवन में प्रेम की भावना सबसे अधिक सक्षम है मन के सौन्दर्य को समझने में । इसी कारण सारंगी सूर की अंधी आँखों में भी प्रेम के सात्विक स्वरूप के दर्शन कर लेती है तथा सूर की शारीरिक विकलांगता को परे करके हृदय के गहराइयों से प्रेम का स्पर्श प्राप्त करती है।

– ''तू कितना प्यारा है सूरा।

– मुझे नहीं ज्ञात सारंगी।

– काश, तू जे जान पाता तो?

– मुझे कछु नहीं जानना।

– जे ठीक नाहीं

– प्यार ठीक नाहीं क्या

– म्हारे पर दया कर। मैं जा योग्य नाहीं हूँ।

– तू किस योग्य है, जे म्हारे से ज्यादा कोई नहीं जानत है, पगले।

– तू अंधे से उपहास नाहीं कर।

तू बारबार अंधो आँधरों का रोना छोड़ क्या अंधा आँधरो मानुख नहीं होत है? क्या उसके सिर पाँव, हाथ मुँह नाहीं होते है? क्या वो रोटी नहीं खात है? ऐसा क्या नहीं है वा में जो आँख वालों में है। सारंगी ने उसका हाथ ऐ झटके से छोड़कर बड़बडाना शुरू कर दिया–ले हाथ छोड़ दियो। अब बता क्या हुआ? क्या तू म्हारे मन से कढत सकत है। तू तो जहाँ बस गयौ है– म्हारे हिय के बहुत भीतर। वहाँ से तिहारे कूं कौन निकास सकत है? तू झूठ न बोलना, तिहारे को कृष्ण गोपाल की सौगंध, क्या तिहारे ह्रदय में सारंगी नाहीं बसत है।''[37]

डॉ. भटनागर ने प्रेम की विभिन्न परिस्थितियों का स्पर्श मन की आत्मिक अनुभूति से किया। इसी कारण वे प्रेम में वासना को केवल रूप सौन्दर्य तक ही सीमित करते है वास्तविक रूप में उन्होनें प्रेम की सात्विकता एवं इसकी पवित्रता पर बल दिया है वे प्रेम के पक्षधर है वासना के नहीं अतः इनके उपन्यासों में प्रेम विषय की स्थापना में ह्रदय की स्पर्शात्मक अनुभूतियों से आदर्श प्रेम का स्वरूप स्थापित किया गया है। अनुभूतियाँ शाश्वत सत्य होती है।

## (ग) नगरीय एवं ग्रामीण बोध

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने महापुरूषों के जीवन को अपने उपन्यासों का केन्द्रीय विषय बनाया है इनकी जीवन गाथा से जुड़ें विविध प्रसंगों एवं संदर्भो को व्याख्यायित करते हुए उसे एक सम्पूर्ण साहित्यिक कृति का स्वरूप प्रदान किया है इनके उपन्यासों में परिवार, समाज, परिवेश एवं वातावरण का भी चित्रण किया गया है इन्होंने अपने उपन्यासों में इनके ग्रामीण एवं नगरीय जीवन शैली को भी चित्रित किया है हमारे यहाँ कि संस्कृति, रीति रिवाज, रहन सहन, खान पान वेशभूषा एवं अन्य कई विषयों को लेकर इन्होंने उपन्यासों में चित्रण किया है इनके उपन्यासों में ग्रामीण और नगरीय बोध को व्याख्यायित रूप में प्रस्तुत किया गया है। ग्रामीण बोध में इन्होंने, समाज से जुड़े कई तथ्यों का सहज एवं सरल रूप को दृष्टिगत किया है वहीं नगरीय परिवेश में कुंठित मानव मन की पीड़ा, अन्तर्द्वन्द्व को भी व्याख्यायित किया है। ग्रामीण और नगरीय बोध दोनों का समन्वित स्वरूप इनके उपन्यासों की विशेषता है इनके उपन्यास इतिहास से सम्पृक्त है इतिहास से जुड़े होने पर भी इनमें जीवन गाथा या चरित्र का विवेचन है इसी कारण इनके उपन्यासों में इन दोनों संस्कृतियों का स्थान महत्वपूर्ण है।

भारतीय समाज की अवधारणा पर अब तक बहुत सिद्वान्तों एवं विचारों का निष्कर्ष यही है कि मानव समाज की धुरी है केन्द्र है इसके चारों तरफ के परिवेश, वातावरण के साथ जो उसकी

साम्यता या विषमता है उसका मूल्यांकन भी उसी समाज के आधार पर होता है। समाज को समझना ही मानव को समझना है मानव के साथ जुड़े हुए तथ्यों का अध्ययन है मानव के दो भेद 'स्त्री और पुरूष' और उनसे जुड़े विभिन्न किरदार मानवीय विषयों को पूर्णता प्रदान करते है मानव की स्थिति को अगर समझना है तो उसके परिवेश को समझना आवश्यक है इस आधार पर उसे दो भागों में फिर विभाजित किया है 'ग्रामीण और नगरीय' 'ग्रामीण' शब्द ग्राम से बना है जो कि व्यक्ति की एक छवि प्रस्तुत करता है उसके व्यवहार को प्रदर्शित करता है ग्रामीण व्यक्ति की वेशभूषा, खानपान, रीति–रिवाज, मान्यताएँ, विचारधारा, परम्परा और उसकी मानसिकता सरल, सहज होती है। द्विवेदी जी के अनुसार–''लोक शब्द का अर्थ गाँवों में फैली हुई वह समूची जनता है, जिनके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं है। ये लोग नगर में परिष्कृत, रूचि, संपन्न तथा सुसंस्कृत समझे जाने वाले लोगों की अपेक्षा अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते है और परिष्कृत रूचि वाले लोगों की समूची विलासिता और सुकुमारिता को जीवित रखने में जो भी वस्तुएँ आवश्यक होती है उनको उत्पन्न करते है।''[38] वह छोटे से सीमा क्षेत्र में अपने विस्तार को देखता है लघुता में विशालता का मोह उसके व्यक्तित्व को परिभाषित करता है वह अन्य की तुलना में अपने आप को कभी नहीं रखता है हर रिश्ता उसके लिए महत्वपूर्ण होता है वह प्रकृति प्रेमी सहृदय एवं उदार है वह नित्य एवं शाश्वता में विश्वास रखता है उसकी छवि उसे भोला सरल एवं सहृदय के रूप में प्रस्तुत करती है छोटे से जीवन की विशालता का आभास उसे हमेशा रहता है मानव की मानवता का हर पल स्मरण उसके जीवन को आशावान बनाए रखता है वह कम जानता है या यूँ कहे कि वह शास्त्र ज्ञान से परिचित नहीं है, अल्प परिचित है, लेकिन वह जो भी सीखता है वह उसे जीवन भर निभाता है, प्रेरणा प्राप्त करता है। मानवीयता का चिंतन उसके जीवन का गहन तथा गम्भीर विषय है जिसके लिए उसे अपने इतिहास से प्रेरणा मिलती है ग्रामीण जीवन की महत्वाकांक्षा केवल संयमित उपभोग तक सीमित है वह प्रकृति के कोप और वरदान दोनों स्वरूपों का साक्षी है अतः वह अपने आपको प्रकृति के अनुकूल मर्यादित रखता है ग्रामीण जीवन की सहजता ने उसे अहिंसक एवं कृषक बनाया है जीवन की आशावान परिस्थितियों में जीवन की महत्ता का मूल्यांकन वह कर चुका है वह अपने व्यवसाय के प्रति पूर्णरूपेण समर्पित है ''भारतीय जीवन तथा सभ्यता का मूल स्रोत कृषि है और उसका विस्तार ग्राम जीवन में ही परिलक्षित होता है।''[39] संयुक्त परिवार उसकी प्रतिष्ठा है एकाकी जीवन को तुच्छ समझता है उसके लिए परिवार की सुरक्षा हर क्षण चिंतनीय है अपने परिवार के साथ अपने पड़ौसियों के साथ भी पारिवारिक सम्बन्धों ने उसे हर क्षण मानवीय मूल्यों का बोध कराया फलस्वरूप वह आस्था श्रद्धा, समर्पण, त्याग और सहानुभूति जैसे गुणों का समेटता हुआ अन्नदाता की भूमिका का प्रतिनिधित्व करने लगा है।

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में ग्रामीण बोध से जुड़े हुए विषयों को स्पष्ट करने का प्रयास किया है इनके उपन्यासों में ग्राम एवं ग्रामीण जीवन वातावरण उनकी लोक परम्परा, संस्कृति, एवं मनोदशा का चित्रण भी किया है। ''ग्राम जीवन एक विशेष मनोदशा, एक सहज सरल वृत्ति है। भारतीय जीवन का शाश्वत राग बोध है।''[40] ग्रामीण स्तर पर स्थापित सोच का विश्लेषण इनके उपन्यासों की सार्वकालिकता को परिभाषित करता है। भारत देश की अधिकांश जनता ग्रामीण है और कृषक एवं ग्राम जीवन की परम्परा का पालन कर रही है इनका जीवन सहज, सरल एवं सामान्य है इन्हें राजनीति का कोई विशेष लगाव नहीं है परन्तु राज्य का सहयोग इनका धर्म एवं कर्तव्य है डॉ.भटनागर ने अपने उपन्यासों में इनकी स्थिति का मूल्यांकन किया है इनके परिवेश वातावरण के साथ इनकी मनोदशाओं का भी चित्रण किया है उपन्यासकार ने विश्लेषण परक अध्ययन में पाठक की रूचि जागृत की है। इनसे जुड़ी धार्मिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक, एवं राजनीतिक परिस्थितियों का मूल्यांकन किया है। जीवन की विविध परिस्थितियों के संदर्भ में इनका मूल्यांकन उपन्यासों में सार्वकालिक चेतना के रूप में व्यक्त हुआ है ग्रामीण जीवन को समझना बड़ा कठिन है क्योंकि इनकी परम्परा में शामिल मूल्यों का इन पर गहरा प्रभाव होता है। अतः ये नवीनता को शीघ्रता से स्वीकार नहीं कर सकते इन पर परिवर्तन जल्दी से लागू नहीं किया जा सकता है इनकी सहजता ही जीवन का आधार है।

डॉ.भटनागर ने ग्रामीण परिवेश का गहनता से विश्लेषण किया और तत्कालीन परिस्थितियों के संदर्भ में इनका अध्ययन किया है डॉ.भटनागर ने 'सूर्यवंश का प्रताप' उपन्यास में भीलों के साथ बिताए गये जीवन को प्रताप के अनुभवो के साथ जोड़ा है भील महाराणा प्रताप की सामान्य प्रजा थी जो ग्रामों में या जंगलो के निकट निवास करती थी महाराणा प्रताप का जीवन संघर्ष इनके योगदान के बिना अधूरा है प्रताप इनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते है डॉ. भटनागर ने महाराणा प्रताप के जीवन अनुभवों में इसे विशेष संदर्भो में भी प्रस्तुत किया है भीलों के साथ प्रताप का जुड़ाव बाल्यकाल से रहा जो जीवन के अंतिम समय तक भी बना रहा है प्रताप ने इनके जीवन से बहुत कुछ अनुभव किया था–''भीलों का लाग लपेट रहित स्वतंत्र जीवन उसे बहुत रास आया था। उसके मन निष्कपट उनमे अप्रतिम शक्ति वे बेजोड़ योद्धा और तीर कमान चलाने में उनका कोई सानी नहीं था। प्रताप ने तीर कमान चलाना वहीं से सीखा था। कमान और तीर का उनका कौशल भी अद्भुत था।''[41] महाराणा प्रताप के व्यक्तित्व में जो सहृयता और सरलता है वह संभवतः भीलों की सामाजिकता से प्राप्त हुई है भीलों का जीवन संघर्षमय है वह परिस्थितियों को अपने अनुकूल बनाना जानते है जब भीलों का मुखिया घायल है तो प्रताप राजवैद्य को बुलाना चाहता है तो मुखिया मना कर देता है।–'' यह आज का किस्सा नहीं है। कुंवर सा जंगल में रहते है भंयकर जानवरों से घिरे रहते है। उनसे लड़ना और जूझना तो पड़ेगा ही। आज राजवैद्य आ भी गया तो कल कौन राजवैद्य लायेगा। हम सब बराबर है।

हमारे यहाँ मुखिया भी साधारण भील है मुखिया होने से उस पर जिम्मेदारियाँ अधिक आ गई है उसके घर चूल्हा तब जलता है जब सब भीलों के घर चूल्हे जल उठते है यहाँ आपकी तरह से वे सुविधाएँ नहीं है जो मुखिया को दूसरे से अलग कर दे और न मुखिया का कोई कर होता है किसी पर वह न्याय सम्मान का संरक्षक होता है उसे अपना जीवन अपनी जाति के लिए न्यौछावर करना होता है।''[42] महाराणा प्रताप का जीवन प्रजा के साथ मित्रवत या पारिवारिक रूप में स्थापित हो चुका था वे असली महाराणा थे उन्हें उनकी भील प्रजा हृदय से चाहती थी प्रताप के लिए उनका सर्वस्व समर्पण था महाराणा प्रताप ने उन्हें अपने जीवन संघर्ष से जोड़ लिया था प्रताप के द्वारा लिए गये निर्णय के वे साक्षी एवं समर्थक थे प्रताप का हर निर्णय प्रजा के साथ लिया गया था। इसी कारण मेवाड़ का हर व्यक्ति स्वतंत्रता के इस महायज्ञ में आहुति देने को तैयार था महाराणा प्रताप ने गाँवों के लोगों की मानसिक स्थिति को गम्भीरता से समझा था वे गाँवों में जाकर युद्ध के उत्साह को जीवन का हिस्सा बनाना चाहते थे इसी कारण वे गाँवों की सभा में स्वयं भाग लेते थे ''नीले घोड़े का सवार'' उपन्यास में भीलों के साथ उनके द्वारा की गई सभाएँ स्वतंत्रता के यज्ञ में सहयोगी सिद्ध हुई। ऊँचे पत्थर पर खड़ा हुआ एक व्यक्ति ग्रामवासियों से ऊँची आवाज में कहता है।

''सभी को सूचना दी जाती है कि महाराजाधिराज श्री प्रताप सींघ राणो जी आपके गांव में आज शाम पधारेंगे। यहाँ एक सभा जुड़ेगी। इनमें राव सामंतों के अलावा श्री राणो जी आपको संदेश देगें। आप अपने आस पास वालों को खबर कर दो कि श्री राणो जी पधार रहे है। सभी लोग बच्चों से लेकर बूढ़े तक सभा में आए और श्री राणो जी को सुने''[43] उपन्यासकार ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में इस बात का गहन चिंतन किया है कि प्रजा का समर्थन राज्य को प्राप्त होने पर राजा की निर्णय शक्ति प्रखर हो उठती है वह बड़े से बड़े निर्णय चाहे आत्मघाती हो, जनता के भरोसे को जीतकर वह ले सकता है इतिहास साक्षी है कि जनता के द्वारा किया गया प्रयास कभी निष्फल नहीं जाता है ग्राम स्तर से उठने वाला आक्रोश सत्ता वर्ग की आकांक्षा पर पानी फेरने में सफल रहा है राज्य के निर्माण में ग्राम की भूमिका को नजर अन्दाज नहीं किया जा सकता है क्योंकि ग्राम ही राज्य का आधार है। 'सरदार' उपन्यास में भी बल्लभ भाई पटेल ने सत्याग्रह एवं सामाजिक आन्दोलनों को सफल बनाया था–'' सत्याग्रही टोलियों की चहल पहल फिर चारों ओर सुनाई पड़ने लगी। गाँवों को अनेक समूह में बाँटा गया। हर गाँव को सत्याग्रह की छावनी बनाई गई। उनकी सभी ने एक स्वर से वल्लभबाई पटेल की बात मानी कि अब से कोई भी सरकार के खजाने में मुंड जमा नहीं करेगा और सरकार अपनी और से जो दमन चक्र चलाएगी, उसके धैर्य और शांति से सहन करेंगें परन्तु उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप ऐसा कुछ नहीं करेंगें कि जिससे सत्याग्रह की भावना को ठेस पहुँचे सरकार हैरान। वह जहाँ जहाँ जाती वहाँ वहाँ उसे घरों में ताले लटके मिलते वह जब्ती की कारवाई करती तो कैसे? खिसयानी बिल्ली

खम्भा नोचने वाली स्थिति में थी तब सरकार गाँवों में पत्रिकाएँ बँटने लगी उनमें प्रतिदिन सरकार के कारनामों का जिक्र होता। और जिक्र होता सत्याग्रह की कारवाइयों, उसके धैर्य तथा हौंसले का। गाँव–गाँव सुदृढ़ संगठन बना दिया गया था।''[44] काल, खण्ड, की सीमा से परे यह भावात्मक एकता सिर्फ गाँवों में ही देखने को मिलती है महाराणा प्रताप का देश की स्वाधीनता के प्रति युद्ध हो या सरदार पटेल का सत्याग्रह प्रजा के साथ लिया गया।

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में जिस ग्रामीण बोध का चिंतन संस्कृति एवं सभ्यता से सम्बद्व है वे सीधे सादे लोग है उनकी अपनी आवश्यकता है अपना जीवन संस्कार है। लेकिन वे किसी भी रूप में राज्य से अप्रभावित नहीं है राज्य के द्वारा स्थापित आर्थिक नीति का उनके जीवन पर खासा प्रभाव पड़ता है प्राचीन काल से चली आ रही आर्थिक प्रणाली में 'कर प्रणाली' का ग्रामीण जनता पर गहरा असर होता है यह असर तब अधिक घातक हो जाता है जब सरकार और शासक अपने स्वार्थो की पूर्ति हेतु जनता का शोषण करने पर आमादा हो जाती है। प्रजा अपने कर्तव्यों का नियमितता के साथ पालन करती है परन्तु अचानक से आने वाली आपदा के लिए वह तैयार नहीं होती है प्रकृति के साथ जुड़ी हुई हर समस्या को वरदान या अभिशाप के रूप में भोगते है उन्हें भी शासन से यह उम्मीद होती है लेकिन अधिकांशतः उनकी आशा को पश्चाताप ही भोगना पड़ता है। ग्रामीण जनता को प्रकृति का शाप, प्रकोप झेलना ही पड़ता है तत्पश्चात सरकार की शोषण परक नीतियों का भी सामना करना पड़ता है यह एक सार्वकालिक सत्य है कि ग्राम जीवन को इस आर्थिक शोषण से मुक्ति आज तक नहीं मिल पाई है। 'नीले घोड़े का सवार' उपन्यास में एक प्रसंग से आर्थिक शोषण की प्रस्तुति हुई है जो वेदना की सुप्त चिंगारी है।

– ''अमरसिंह ने वह कथा सुनानी शुरू की, ''एक कह रहा था–'ये सब राजा महाराजा है। मौज से रहते है। सोने चाँदी के बर्तनों में खाना खाते है।........ आलीशान महल में रहते है।.....

खूब ऐश करते है।..... कहाँ से आता है इन पर इतना धन!

– ''पता नहीं।''

''हमसे आता है।''

– ''हमसे''

– ''इसमें चौंकाने की क्या बात है?....बता ये खेती करते है।''

– ''नहीं''

– मजूरी करते है।

– मजूरी करते तो क्या ये राजा होते? सबने खिलखिला कर उत्तर दिया'

'' तब ये क्या करते है?''

सब हैरान! किसी की कुछ समझ नहीं आया। सबको पाकर वहीं व्यक्ति बोला–'' मैं बताता हूँ कि राजा महाराजा क्या करते है। हमारी सुन्दर लड़की देख ली, उसे महल में रखैल बना कर रखते है। यदि हमने इन्हें दुआ सलाम नहीं कि तो अपने सैनिकों से हमारी खाल खिंचवा लेते है।.... लगान नहीं दिया तो कोड़े बरसाते है.... ये बड़े लोग हम पर जुल्म करते है।.... हमसे जबरर्दस्ती कर वसूल करते है।.... और उससे अपना सुरग बनाते है।..... ये जौंक है।.... जौंक।''[45] उपन्यास में वर्णित ये प्रसंग ग्रामीण जनता की पीड़ा है जो वह वर्षों से भोग रही है परन्तु फिर भी उसकी यह पीड़ा आज भी कम नहीं हुई है।

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर की पकड़ उन विषयों पर भी रही है जो मानव की मनोदशा से सम्बन्धित थे उनको मनोदशाओं को समझने में देर नहीं लगती थी इनके ऐतिहासिक उपन्यासों में जो सृजनात्मक दिखाई देती है वह हर स्तर पर मनोदशा को व्यक्त करती हुई दृष्टिगत होती है इनके उपन्यासों में ग्रामीण जीवन से उत्पन्न समस्याओं का चित्रण किया है साथ उस मनोस्थिति को भी स्पष्ट किया है जिनसे मानव की संवेदनात्मक स्थिति का ज्ञान होता है ग्राम के आर्थिक शोषण पर इनकी दृष्टि संवेदनाओं के धरातल को छूती है। मूल्यों के अवमूल्यन और उनसे जुड़ी चेतना को इन्होंने अपने उपन्यासों में वर्णित किया है ग्रामीण जनता का नेतृत्व करते हुए उनके जीवन से जुड़े विविध पक्षों पर प्रकाश डाला है 'सरदार' उपन्यास में सत्याग्रह के मार्ग पर चलते हुए उन्हें जिन कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ा उसका वर्णन इन्होंने किया है।

''सिर्फ सच्ची बाते उन तक पहुँचाएँ।..... हम अपने ही लोगों को घर से बेघर कर रहे है। आज मोती गाँव को तहस नहस कर डाला।''

''क्या करते?''

उनकी स्त्रियों, बहुओं, बेटियों और बूढ़े बच्चो को भी बेइज्जत किया, बेतरह मारा पीटा।''

उन्होंने हमारी कार्यवाही का जरा सा भी विरोध नहीं किया। सर, संयम, धैर्य, सहनशीलता का ऐसा अद्वितीय उदाहरण हमने कहीं नहीं देखा।''[46] डॉ.भटनागर ने ग्रामीण बोध में जनता का नेतृत्व के प्रति जिस समर्पण की प्रस्तुति की है वह उनके अहिंसक, सरल एवं सहज जीवन का प्रतीक है कष्ट की पीड़ा इनके चरित्र को नहीं डिगा सकती इनकी वेदना की शून्यता आशा के सुनहरे भविष्य के साथ उड़ जाती है। ऐसा त्याग समर्पण एवं सहानुभूति को देखकर वल्लभ भाई पटेल भाव विभोर हो उठते है वे कहते है–''सवाल एक लाख रूपये बचाने का नहीं है। एक लाख की जगह दो लाख भी जमा करवाये जा सकते है यदि जमा कराने का आधार उचित हो सरकार अपने पाँवों पर कुल्हाड़ी मार रही है वह किसानों पर जुल्म कर रही है उन किसानों पर जो उनके अस्तित्व का आधार है सरकार ने उन लोगों को घर से बेघर किया, उनके घरबार लूटे,

उनमें आग लगाई, उनके खेत नीलाम किए, उन्हें कारागार में डाला।''[47] सरदार पटेल ने अपनी ग्रामीण जनता के आत्म विश्वास के बल पर सत्याग्रह को सफल बनाकर ग्रामीण चेतना को भारत के प्रजातंत्र के पक्ष में खड़ा किया है उपन्यासकार ने इस तथ्य का प्रस्तुतिकरण भी सहज रूप में प्रस्तुत किया है।

डॉ. भटनागर के ऐतिहासिक उपन्यासों में नगरीय जीवन संस्कृति और उससे जुड़े विविध विषयों का गहन मंथन किया गया है इनके उपन्यासों में नगरीय जीवन का बारीकी से परीक्षण किया गया है नगरीय समाज की अवधारणा एवं मनोस्थिति का मूल्यांकन उपन्यासों में व्यक्त किया है। ग्रामों की परम्परा से भिन्नता नगरीय जीवन परिप्रेक्ष्य की होती है नगर ग्राम की अपेक्षा अधिक जनसंख्या वाला होता है नगर के अंदर रहने वाले लोगों की संख्या के साथ ही उनके वर्ग, धर्म, सम्प्रदाय भी विविधता लिए हुए होते है साथ ही इनके अनुसार ही इनकी परम्परा एवं रीति रिवाज होते है जीवन की विविधता व्यवसाय के कारण भी होती है कई प्रकार के लघु एवं कुटीर उद्योगों के साथ उत्पादन श्रमता का भी विकास शहरों में होता है। व्यापार के विभिन्न संसाधन यहाँ उपलब्ध होते है शिक्षा का स्तर भी यहाँ ग्रामों की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ होता है। ''नगरीय समाज में व्यक्तियों के पारस्परिक संबंधों, आर्थिक क्रियाओं, सामाजिक संगठन, जनसंख्या सम्बन्धी विशेषताओं, औद्योगिकी तथा आवास के स्वरूप जैसी विशेषताऐं आदिम और ग्रामीण समाजों से पूर्णतया भिन्न होने के कारण इसे एक पृथक जीवन विधि के रूप में देखा जाता है।''[48]

नगरों में ग्रामों की अपेक्षा व्यक्ति में सामूहिक या संयुक्त परिवार प्रथा का अभाव होता है वह एकाकी या व्यक्तिवादी जीवन की कृत्रिमता से घिरा हुआ होता है। ''महानगरीय जीवन की हर घटना और व्यवहार से मानवयी तत्व लगभग समाप्त होता जा रहा है, यहाँ व्यक्तियों के सम्बन्ध यांत्रिक और कृत्रिम होते हैं।''[49] वह ऊँच–नीच, अमीरी–गरीब एवं भौतिक व्यवहार की कृत्रिम जीवन पद्धति का पक्षधर है उसकी प्रतिस्पर्द्धा अपने ही समाज से होती है महत्वाकांक्षा का प्रभाव उसे सदा प्रभावित करता रहता है व्यक्ति में स्वकेन्द्रित भावना अधिक होती है वह अपने स्वार्थ पूर्ति के उद्देश्यों के साथ जुड़ा रहता है उसकी व्यस्तता उसे समाज से अलग कर देती है जिसके कारण उसके स्वभाव में क्रोध, चिड़चिड़ापन, कुण्ठा एवं बैचेनी का प्रभाव अधिक होता है वह अपने समाज में ही अपने अस्तित्व की प्रधानता चाहता है नगरीय जीवन शैली का नगरीय मानव अपनी विचारधारा में उलझ कर अपने कार्यो का पुनः निरीक्षण करता रहता है उसका जीवन कठिन परिस्थितियों का अनुभव करता है वह हमेशा 'स्व' भावना के इर्द गिर्द सोचता एवं विचार करता है डॉ. नीलम गोनल के अनुसार–''महानगरों में एक बंधुत्व विहीन सभ्यता का प्रसार हो रहा है, बिना प्रयोजन किसी से बात करना, किसी पड़ौसी के विषय में जानकारी रखना, उससे मिलना जुलना, कोई सम्बन्ध स्थापित करना और यहाँ तक कि घर में रहते हुए भी किसी

किसी पारिवारिक सदस्य से बिना मतलब कोई मेल–जोल रखना या बातचीत करना इस सभ्यता से अपेक्षित नहीं है।''[50] शहरी परिवेश एवं वातावरण उसके मूल्यों का अवमूल्यन कर देता है उसमें जीवन के प्रति निराशा का भाव अधिक होता है उसका संघर्ष उसे एकाकी लगता है समस्त सुख संसाधनों के बीच भी उसे अकेलापन खाने को दौड़ता है शहरी परिवेश की अवधारणा में चारों तरफ कृत्रिमता का आवरण होता है जो एक भ्रम है, मानवीय सोच की बनावट का पर्दा है जिसके पीछे मानव का संसार अपने 'स्व' की बेड़ियों में जकड़ा हुआ है। वह अपने 'स्व' से मुक्ति चाहता है परन्तु कृत्रिम एवं भौतिक जगत का बंधन उसे बाँधे रखता है मुस्कुराने की वजह ढूँढता हुआ मनुष्य अपनी इच्छाओं का हनन करता रहता है शहरी जीवन की भौतिक चकाचौंध में मनुष्य को वह सुख नहीं मिल पाता जो वह ग्राम में अपने परिवार के बीच खेत खलिहानों के बीच सहज प्राप्त कर लेता था।

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने उपन्यासों में नगरीय जीवन शैली और उससे जुड़े विषयों का वर्णन अपने उपन्यासों में किया है उपन्यासकार ने उन मूल्यों की अनुसंधानात्मक स्थापना भी की है जो सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्त है मानव स्वभाव परिवेश की परिधि के साथ गति पाता है जैसा वातावरण एवं परिस्थितियाँ उसे मिलती है उसी के अनुसार उसका स्वभाव एवं व्यवहार हो जाता है वह जहाँ रहता है उसके आस पास के लोगों के व्यवहार का एवं जीवन पद्धति का उस पर गहरा असर पडता है। ग्राम एवं शहर का सबसे बड़ा अंतर जनसंख्या का है बड़ी जनसंख्या धनत्व वाला स्थान विविधता लिए हुआ होता है मानव शहर के जीवन की बाहरी और आंतरिक शैली का परिचय पाता है, तो अपने को भी उसी के अनुसार ढालना चाहता है परन्तु ऐसा करता हुआ वह अपनी निजता या निजि व्यक्तित्व का हनन करने लगता है वह सामूहिक भाव का पृथक्करण करता हुआ एकाकी जीवन में प्रवेश करता है उसे विश्वास का सहारा न मिलने के कारण जीवन एवं मानवीय मूल्यों की क्षति का अनुभव होने लगता है भौतिक संसाधनों की सुलभता के बीच व सुखों की उपेक्षा दुखों का ही अधिक प्रभावित होता है उसकी पीड़ा कुण्ठा, संत्रास, छटपटाहट एवं बैचेनी का अनुभव डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने उपन्यासों में वर्णित किया है। शहरों के परिवेश का उन्होंने वर्णन किया है महानगरीय जीवन और उनसे जुड़े विषयों का निरीक्षण भी उन्होंने तात्कालिक परिस्थितियों के साथ किया है।

मानव का शहर की ओर जाने का सबसे बड़ा कारण है आर्थिक सम्पन्न्ता! वह आर्थिक समस्याओं का हल ढूँढने शहर में आता है। वह जीवन की खुशहाली के लिए रोजगार के अवसर प्राप्त करना चाहता है 'कुली बैरिस्टर' में डॉ. भटनागर ने इसी विषय का वर्णन किया है–''इंग्लैण्ड से दो वर्ष पहले हो तो वह पढ़कर लौटा था। तब वहाँ भी अपना घर याद आता रहता था जो रोटी के लिए इतनी दूर का फासला तय करना सहज नहीं था। वहाँ पत्नी कस्तूरबा को एक बच्चे के साथ छोड़कर निकलना पड़ा था। उससे कितनी उम्मीदे जो रखी थी।

सारे घर ने! तब बैरिस्टर होकर लौटने का निश्चित अर्थ था– आसमान छूती खुशहाली के दिनों का तेजी से घर की चौखट पार कर आते जाना।''[51] व्यक्ति अपने परिवार के प्रति जिम्मेदारी निभाने के कारण उनके भावी जीवन को खुशहाल बनाने के लिए नगरों की और पलायन करता है वह सर्वप्रथम 'अर्थ' की समस्याओं से समाधान चाहता है इसी कारण वह अपने परिवार ग्राम से दूर शहर में अनजाने लोगों के बीच खुशहाली की तलाश में चला आता है। शहर का जीवन छल–कपट को सहजता से स्वीकार कर लेता है मानव को प्रारम्भिक अवस्था में मूल्यों के साथ समझौता करना असंभव प्रतीत होता है उपन्यासकार ने नगरीय परिवेश की इस विचार को वर्णित किया है।–''लालचंद धीमाभाई सालिसिटर थे। यदाकदा गाँधी को वह समझाते रहते थे, ''यहाँ तुम धंधे से जुड़े हो। हर धंधे के पनपने की अपनी रीति–नीति होती है। धंधे में बरकत तब शुरू होती है। जब धंधे को चमकाने वाले तजुर्बेकार और नामी हो। उन्हें तुम दलाल मानकर चलता मत करो। उनका भी तो यह धंधा है। ज्ञान ध्यान में वे खासे वकीलों के नाक कान काट सकते है।''[52]

शहरों का जीवन सदैव आर्थिक समस्याओं का हल ढूँढता हुआ परिलक्षित होता है वह भिन्न–भिन्न स्थितियों इसी का चिंतन करता है मानव अपने गाँव को छोड़कर शहर में सिर्फ अर्थ की विपदा को कम करने के लिए आता है डॉ.भटनागर के 'सरदार' उपन्यास में इसी कारण पर चर्चा करते हुए वल्लभभाई पटेल ने कलेक्टर से बात करते हुए कहते है– '' हम बहुत गरीब है हमारे परिवार पर कर्ज है।, दरअसल मैं यहाँ आने की स्थिति में नहीं था। लेकिन स्वप्न के पीछे दौड़ पड़ा। स्वप्न भी अपना बुना बनाया था। फिर छोड़ा भी नहीं जा सकता था।''[53] शहरी परिवेश में रचना बसना भी मजबूरी है यहाँ के लोग अपना मंतव्य पूरा करने के लिए किसी भी हद तक जा सकते है उसका एक बड़ा कारण बेरोजगारी है व्यक्ति यहाँ आय–व्यय के चक्र में फँसकर अपने जीवन मूल्यों के साथ जाने अनजाने में समझौता कर बैठता है 'अंतिम सत्याग्रही' उपन्यास में गंगा की यह सोच मानवतावाद की नकारात्मकता को स्पष्ट करती है। ''गंगा ने धीरे से कहा,उनको नारे लगाने की अच्छी मजूरी मिलेगी रोज से ड्योढ़ी।...... चोट फोट खा गये तो घर बैठे उतने दिन की दिहाड़ी मिलेगी, जितने दिन खाट भोगनी पडेगी।..... बेचारे घर जाकर दिहाड़ी दे जाते है। बड़े ईमानदार और भले लोग है वे।..... मैं तो ईश्वर से प्रार्थना करती हूँ। इस नगर में रोज–रोज ऐसे जूलूस निकले काम धंधे कढ़े और मौज मस्ती रहे तो इस नरक का भी उद्धार हो जाए''[54] डॉ. भटनागर ने शहरों की तरफ बढने वाले पलायन के पीछे कारणों और उनके द्वारा मानव व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों की और दृष्टि डाली है शहरी समाज की बदलती हुई संस्कृति का भी मूल्यांकन किया है नगरीय परिवेश की यथार्थ व्याख्या प्रस्तुत करते हुए भ्रष्टाचार को शहरी वातावरण को दूषित करने का यह कारण बताया है गरीब लोग शहर में आने पर यहाँ के वातावरण के साथ अपने को समायोजित करने में असफल रहते है वे यहाँ एक

छत की टोह में भटकते हुए ऐसे स्थानों का उपयोग करने लगते है जो गंदा नाला, खड्डा या हर तरह से प्रदूषित है इनकी मजबूरी यहाँ बसने में सहायक होती है सरकार को इनकी आवश्यकता पर ध्यान देना चाहिए। सरकार की शासन व्यवस्था में स्थापित सोच का शोषण चक्र निरंतर गतिमान रहता है कुछ स्वार्थी लोग इनके हिस्से में आने वाली सुविधाओं को अपने नाम कर लेना चाहते है सरकार में बैठे लोग ऐसी जगह जहाँ गरीब लोगों के जीवन स्तर में सुधार के प्रयास करने चाहिए एवं सुविधा प्रदान करनी चाहिए सरकार वह केवल नगरीय विस्तार के नाम पर इन बेवश, गरीब, लाचार मजदूर वर्ग के शोषित वर्ग का शोषण करती हुई बडे बिल्डर्स को जमीन बेचकर मुनाफा कमाती है।

डॉ. भटनागर ने शहर की मानवीय स्वार्थी परम्परा का प्रस्तुतिकरण किया है।–''महानगर पालिका की गाड़ी शहर भर का कचरा वहीं आकर डालती थी। जैसे ही यह जगह कचरा डालते रहने से ऊँची व समतल हो जाएगी वैसे ही उनकी बस्ती पर कहर टूटने लगेंगें। सरकार इस स्थान को लाखों में नीलाम कर देगी कोई बिल्डिंग मास्टर्स इसे खरीद लेगा फिर उनकी बस्ती को यहाँ से हटाने की कार्यवाही शुरू होगी राजी या बिना राजी उन लोगों को हटाना पड़ेगा, पैसा बँटेगा बस्ती के गुंडों की टोली चढ़ आयेगी बुलडोजर चला दिया जाएगा गरीबों को अहसास करा दिया जाएगा कि वे कितने बेवश, कमजोर, उपेक्षित, और असहाय है। गरीबी नंगी होकर रह जाएगी द्रोपदी की तरह भरी  सभा में उसकी लाज बचाने कृष्ण नहीं आएगा।''[55]

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में शहरों का चित्रण करते हुए यथार्थ प्रस्तुतिकरण किया है शहरों के हालात, हिंसा, दमन तथा शोषण को बेनकाब करने में उन्हें सफलता मिली है उनका अनुभव नगरीय परिवेश की हिंसात्मक कार्यवाही और परिणाम का अध्ययन करता हुआ दृष्टिगत होता है। अकसर लोगों को शहरों के बारे में यह लगता है कि यहाँ सब सुख साधन उपलब्ध है परन्तु वास्तविकता इससे कुछ हटकर है। 'कुली बैरिस्टर' उपन्यास में विदेशों में शहरों के हालातों को प्रस्तुत किया है।

'' गाँधी अन्दर आ गया। ड्राइंग रूम में बैठकर वह पूछ रहा था, '' आप लोग इतने घबराये हुए क्यों है?''

''आपको नहीं मालूम क्या?''

''क्या?''

''दो अंग्रेज अफसरों को गोली से उड़ा दिया गया है''

''किसने?''

"पता नहीं परन्तु तत्काल सारा शहर बन्द। सड़क सूनी, चारों ओर पुलिस यहाँ जो हाथ लगेगा, उसे पकड़ ले जाएगी। मार लगाएगी। हिंसा का दमन हिंसा से।"[56] उपन्यासकार ने शहरों के ताजा हालातों को बयान करने में संकोच नहीं किया है। शहरों का वातावरण शोषण और भेदभाव की नीति का समर्थक है यहाँ रंग, भेद, जाति, सम्पन्नता एवं धन के नाम से कई प्रकार का भेदभाव प्रचलित है शोषण की अंतहीन परम्परा का प्रचलन वर्षों से चला आ रहा है जो संभवतः हर बार नये रूप में प्रकट होती है यही सार्वकालिकता है जो हर काल में किसी न किसी प्रकार रूप में उपस्थित रहती है मानव का मानव के प्रति जो व्यवहार है वह सार्वकालिक चेतना के सन्दर्भ में परिभाषित होता रहा है शहरों में चलने वाली अदालतें कानून आदि सब ने शहर के वैभव को बनाने में योगदान दिया है। सब एक दूसरे का शोषण करते हुए अपने–अपने सपनो के महल खड़े करते हुए चले आ रहे है। गाँधी ने शहर के इस स्थिति का तथ्यात्मक विश्लेषण किया है। उपन्यासकार ने ऐसे चिंतन को उभारने का पूर्ण प्रयास किया है।–"सेठ साहब, हम लोग यहाँ परदेशी है जो पैसे कमाने के इरादे से आऐ है, गँवाने के लिए नहीं। यहाँ कौन है अपना! फिर जब अपने ही आँख दिखाने की तैयारी कर ले तब........? यह कहावत आपने सुनी ही होगी कि घर फूँक तमाशा देखना। उसे क्यों उदाहरण बनने दिया जाए!......... मुकदमा दमे का रोग है। सॉलिसिटर, बैरिस्टर और हम जैसे मददगार का तो यही नेक इरादा रहता है। कि मुकदमा चलता रहे, चलता रहे, तारीखे पड़ती रहे ताकि वे फसल की कमाई लम्बे समय तक चलती रहे और अंत में फरियादी और प्रतिवादी दोनों ही सड़क पर आ जाएँ। रूपया पैसा इकठ्ठा करने में बहुत जान फूँकनी पड़ती है। उसे लुटाने में देर नहीं लगती।"[57]

उपन्यासकार ने शहरी वातावरण की स्थिति पर गहनता से प्रकाश डाला है वे शहरों की वेदना को भी समझते है वे अनुभव करते है कि शहरों की मानसिकता में परिवर्तन संभव है यदि उन्हें अध्यात्म के प्रभाव से जोड़ा जाए। 'विवेकानंद' उपन्यास में उन्होंने अमेरिका जैसे देश में स्वामी विवेकानंद के भाषणों का असर देखा और अमेरिका के निवासियों की आध्यात्मिक चेतना को शांत करने का प्रयास किया उपन्यासकार प्रसंगों का चिंतन करने में कोताही नहीं बरतते जो आवश्यक रूप जरूरी है स्वामी विवेकानंद के चिंतन में उस समय की तात्कालीक दशाओं पर प्रकाश डाला है "यद्यपि अमेरिका मंदी के बुरे दौर से गुजर रहा है वहाँ बेकारी की समस्या काबू में नहीं आ रही है। और हड़ताले भी हो रही है हिंसा तथा आगजनी की घटनाएँ वहाँ की व्यवस्था की नाक में नकेल डाले हुए है फिर भी वहाँ पैसा बेशुमार है। ये कर्मठ है। खूब मन लगाकर काम करते है और फिर उस धन को दोनों हाथों से लुटाकर भी आनंद लेने में भी नहीं चूकते है। साम्राज्यवादी खून भी उनके मुँह लग चुका है। नीग्रो को दिन दहाड़े गोली से भून सकते है।........ कानून के कान पर जूँ तक नहीं रेंगती। फिर भी वहाँ विद्वानों, वैज्ञानिकों, पैसे वालो, कॉलेज में पढ़ने वालों में दिलचस्पी तेजी से बढती जा रही है। वे अनुभव कर रहे थे कि

भौतिक सुख सुविधाओं की ऊँची पायदान पर चढ़ा अमेरिका आध्यात्मिक रूप से भूखा है।"[58] डॉ. भटनागर का अनुसंधान परक विश्लेषण तात्कालिक शहरी वातावरण को प्रस्तुत करता है अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में शहर के वातावरण के सन्दर्भ जीवन मूल्यों के अवमूल्यन को समझकर उनकी व्यवस्था में दूषित परम्परा के कारणों पर प्रकाश डाला है।

## (घ) स्त्री विमर्श

'स्त्री विमर्श' अर्थात् स्त्री के बारे में एक विचार या चर्चा स्त्री के जीवन संदर्भ में किये जा रहे अनुसंधानों का ब्यौरा या विवरण है नारी जीवन को विविध दृष्टिकोणों से देखने का नजरिया है 'स्त्री विमर्श'। हमारे मन में यह प्रश्न उठता है कि आखिर स्त्री के किस पक्ष से अपने विचारों को सम्पृक्त करते हुए हम यह विमर्श प्रारंभ करे? जिससे कि हमारी चर्चा उस निष्कर्ष तक पहुँच सके जहाँ तक उस नारी का संधर्ष पहुँच चुका है हमारी समस्त चेतना उस समय द्वन्द्व में उलझ कर रह जाती है। जब हम देखते है कि जीवन का ऐसा कोई भी पक्ष या संदर्भ ऐसा नहीं है जब उसका संघर्ष कष्टदायक नहीं रहा है जन्म से अगर संघर्ष प्रारम्भ हो तो यह संघर्ष की मध्य अवस्था ही है क्योंकि वर्तमान युग में स्त्री का संघर्ष का सर्वप्रथम हमारे समक्ष जो आता है वह है 'कन्या भ्रूण हत्या' समस्त मानसिक द्वन्द्व एक स्थान पर इकठ्ठे हो जाते है जब हम सर्वप्रथम इस नारकीय वेदना का अनुभव करते है जो उस अजन्मे कन्या भ्रूण ने भोगी थी जीव की हत्या का यह घिनौना रूप हमारे समाज की वो कड़वी सच्चाई है जो हमारे जीवन की सुन्दरता को मात्र एक मुखौटा बना देता है। हमारी बनावट और कृत्रिमता भरी जिन्दगी का सच उजागर कर देता है। ऐसे समय में हमारा मन स्त्री के जीवन पर दृष्टि डालते हुए उसे हर पल उस अनचाहे भय ये उलझते देखता है जो उसके संघर्ष का हिस्सा है।

स्त्री का जीवन संघर्ष ही है एक ऐसा संघर्ष जो कभी समाप्त होने का नाम ही नहीं लेता है इस संघर्ष को कई नाम दिये गये है जो हमारे समाज की कुप्रथाओं के साथ जुड़ते हुए समाज की बुराई के रूप में हर काल, हर युग में उपस्थित रहे है स्त्री को जीवन की समस्याओं के साथ में मचलते, रोते, गिड़गिड़ाते, आँसू बहाते, देखने का समाज अभ्यस्त हो चुका है उस पर होने वाले अत्याचारों को विभिन्न नामों से पुकारा जाता है हर युग, काल में परिस्थितियाँ उसके जीवन संघर्ष को नित प्रतिदिन नवीन कष्टदायक प्रणाली को पहेली के रूप में उपस्थित करती है वह एक समस्या का समाधान ढूँढती है तो नवीनता के साथ समस्या अपना स्वरूप बदल कर उसके सामने पुनः उपस्थित हो जाती है नारी को विधाता ने ऐसी संघर्षमयी मूर्ति बनाया है जिसने संघर्ष का समर्थन किया है हार नहीं मानी है हार का भय तो मानव को कायर बनाता है परन्तु संघर्ष की प्रेरणा भय से नहीं आत्मचिंतन से आती है। नारी ने संघर्ष से अपने स्वरूप को स्थापित किया है वह समाज के उस वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है जो वर्षों से समाज के नियम कायदे, कानून,

परम्परा, रीति रिवाज आदि के कारण अत्याचार, अन्याय और शोषण का शिकार हुई है। डॉ. भटनागर 'अन्तर्यात्रा' उपन्यास में ऐसे हुई अवसरों पर स्त्री के पक्ष में चिंतन किया गया है।

''माँ, नारी जीवन उपेक्षित क्यों है?''

''नहीं तो, मीनु दी। मैं सामने हूँ।''

'' आप शक्तिपुंज, अपवाद है, परन्तु यहाँ की नारी के जीवन में उदासी है, मलाल है, तनाव है और अवहेलना है।''

''न हो, हो सकता है, परन्तु पराधीनता।''

'' माँ, कब कटेगी बेड़ियाँ?''

''जब स्त्री का स्वाभिमान, जाग उठेगा और वह शौर्यवती हो उठेगी। पंचम स्वर में वह गा रही होगी। स्वयं दिक्काल उसमें उतर कर ज्योति बन सारे अग–जग को प्रकाशित कर उठेगा।''[59]

उपन्यासों में स्त्री के पक्ष में चिंतन के विविध रूप दिखाये गये है इतिहास पर दृष्टि डाले तो नारी के संघर्ष के साथ चेतना का प्रवाह मिलता है। डॉ. भटनागर ने इस प्रवाह को रोचकता के साथ संवादों में स्पष्ट किया है। वह नारी को चेतना के रूप प्रस्तुत करते है नारी के जीवन में धार्मिक कार्यो में उपस्थिति को भी अपमान झेलना पड़ा है नारी को धार्मिक सम्प्रदायों स्थान नहीं दिया गया है इस प्रकार की अवधारणा का चिंतन डॉ. भटनागर के उपन्यासों में देखने को मिलता है। महर्षि अरविन्द और पॉल दिशार का संवाद द्रष्ट्रव्य है। ''संत तपस्वी, महात्मा नारी से दूर क्यों रहते है? मध्यकाल में तपस्वी स्त्री को माया मानता था। उनके तप भंग करने का साधन समझता था। आप क्या कहेंगे?''

''हमारे यहाँ अभी अभी रामकृष्ण परमहँस हुए है उन्होंने पत्नी का कभी त्याज्य नहीं किया श्री कृष्ण स्वयं शादीशुदा थे उसकी रास लीलाएँ इस दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है स्त्री पुरूष की उसी तरह शक्ति है जैसे पुरूष स्त्री की।''[60] डॉ. भटनागर ने स्त्री विमर्श में नारी के संघर्ष में प्राण भरते हुए उसके विचारों के प्रवाह को भी प्रस्तुत किया है स्त्री पुरूष की सहयात्री है उसके साथ किये व्यवहार में जब वह अत्याचार, शोषण, अत्याचार का भाव देखती है तब उसकी चेतना जागृत हो उठती है। वह चेतना के प्रवाह में आकर तर्क पूर्ण रूप से हो उन सभी दलीलों का खण्डन करती है जिन्हें पुरूष समाज अपने बचाव में प्रस्तुत करता रहा है 'अन्तर्यात्रा' उपन्यास में नंदिनी पत्रकार के चरित्र में ऐसे ही विचारों का प्रस्तुतिकरण 'स्त्री चेतना' को परिभाषित करता है। ''यही सच है मि. अरविन्द आप कलकते आकर लौट गये, क्योंकि आपके पास इतने काम थे कि आप को सिर उठाने की फुर्सत नहीं थी।................. यह आपने अपनी पत्नी को लिखा भी है

मि. अरविन्द। क्या मैं जान सकती हूँ कि पति के पास अपनी पत्नी से मिलने का भी समय क्यों नहीं था? पत्नी मात्र साधन, नहीं साध्य है के अनुसार विवाह धर्म वह पति की तरह साध्य है। शेष सब साधन है। पत्नी नहीं। इस जानकारी को पाकर उसके मन पर क्या बीती होगी? उसकी कल्पना कोई नवविवाहिता ही कर सकती है? पुरुष तो कदापि नहीं संसार में किसी पुरुष ने टॉलस्टाय को छोड़कर किसी दूसरे पति ने अपनी पत्नी के साथ ऐसा नहीं किया होगा क्या एक साधक का इसमें दम्भ या पत्नी के प्रति उपेक्षा भाव नहीं झलकता है? याद रहे मि. अरविन्द, पुरुष के इस दोहरे चरित्र ने हमारे समाज को अस्थिर, उपेक्षित तथा अपमानित किया है। यह प्रश्न आपके बाद भी उठेगें। महात्मा बुद्ध की तरह कि वे साधना सफल पाकर अपने घर लौटे, मात्र अपनी संतान को लेने और अपने धर्म में दीक्षित कर प्रचार प्रसार कार्य शुरू करवाने के लिए। जो धर्म गुरू आम्रपाली को अपने धर्म में जगह दे सकता है।.............. वह अपनी पत्नी से साथ आने का आग्रह क्यों नहीं कर सका? बौद्ध धर्म के अपूर्ण और पतन होने का एकमात्र यही कारण है। पत्नी समाज की धुरी है मित्र अरविन्द।''[61]

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने स्त्री की व्यथा को भावात्मक रूप से प्रस्तुत किया है वे उसके मन की गहराइयों के अन्तर्द्वन्द्व को स्पष्ट करने का प्रयास करते है। वे उन क्षणों के अनुभूत भावों को पाठक के समक्ष प्रस्तुत करना चाहते है जिनका द्वन्द्व आज भी प्रासंगिक सा लगता है स्त्री होना विधाता का निर्णय है। पुरूष की आश्रित होना समाज का निर्णय है वह अबला, बेवश, असक्षम क्यूँ? क्या उसे इन सब कार्यो में सहभागी होने का अधिकार नहीं है जिनमें पुरूष मुक्त होकर प्रतिनिधित्व करता है वे इस जीवन के ध्रुव सत्य के विचार को 'गौरांग' उपन्यास में विष्णुप्रिया के मन की व्यथा में स्थान देते है।

'' बेटी वह घर तेरा है। जमाई राजा ने संन्यास ले लिया तो तू क्या करेगी?''

''कुछ नहीं करूंगी।........ कर भी क्या सकती हूँ।'' विष्णुप्रिया ने अनिच्छा व्यक्त की थी।

''क्यों नहीं कर सकती? संन्यास लेने से पूर्व तेरी अनुमति अनिवार्य है।''

''क्या गौतम ने यशोधरा से अनुमति ली थी, माँ।......... तू अधिकार की बात रहने दे।.... श्रीराम ने रामराज्य स्थापित करने के लिए सबसे सुदृढ़ कदम यह उठाया था कि गर्भवती सीता को वनवास दे डाला। उन्हें जंगल में छुड़वा दिया।.......यह भी नहीं किया उन्हें मायके भिजवा देते। क्यों भिजवाते? लोकमत सीता के साथ था, तब भी सीता ने लोकमत का सहारा नहीं लिया था। रामराज्य अल्पमत की वकालत करता रहा। उस राज्य में किसी व्यक्ति में इतना साहस नहीं था जो उस अन्याय के विरूद्ध कुछ कह कर सके।......... ऐसा ही हर युग में हो रहा है। आज भी हो रहा है और आगे भी होता रहेगा।''[62] डॉ. भटनागर ने 'गौरांग' उपन्यास में विष्णुप्रिया के मन

की व्यथा को सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में प्रस्तुत करते हुए नारी के प्रति किये गए व्यवहार का मंथन करने का अवसर पाठक को दिया है।

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने स्त्री की विवशता का कारण समाज की संकीर्ण सोच को माना है स्त्री के ऊपर होने वाले अत्याचार को समाज का विरोध नहीं मिल पाने के कारण अत्याचार व अन्याय को बल मिलता है मध्यकाल में मुस्लिम शासकों द्वारा भारतीय जनता पर अन्याय एवं अत्याचार किये गये स्त्री के पक्ष में कोई भी सहायता या समर्थन करने वाला व्यक्ति या समाज नहीं था धर्म की आड़ में स्त्री का शोषण हो रहा था स्त्री का सुन्दर होना अभिशाप बना गया है उसे हवस के भेड़ियों का शिकार होते देर नहीं लगती थी अगर किसी प्रकार वह बच गई तो समाज ,परिवार उसे अपनाने से परहेज करता था 'गौरांग' उपन्यास में ऐसे ही प्रसंग से स्त्री की दशा का चिंतन किया गया है।

''क्या हुआ उसके साथ?''

''हमारे राजकुवंर से कुछ नहीं बन सका। उनकी रूपवती, सौन्दर्य की अधिष्ठात्री कर्मवती को पठान सेनापति खिलजी के आदमी सैनिक उठाकर ले गये और उसे खिलजी के हरम में पहुँचा दिया।''

''हरे कृष्णा, हरे कृष्णा, ऐसा घनघोर अत्याचार।''

''पठान सेनापति ने कर्मवती को रखैल बनाकर रखा उसे माँस मदिरा खाने पीने को विवश किया अपने रंगमहल में उसे नचवाया।''

''इतनी बेइज्जती। इतना निर्मम व्यवहार । हरे कृष्णा। हरे कृष्णा, तू कहाँ है?''

शची देवी के होश उड गये। वह काँप उठी।

'' वह मिली थी।''

''क्या कहते हो जी।''

''मौका पाकर वह उस जालिम सेनापति के हरम से निकल भागने में सफल हो गई। लुकती छिपती छिपाती वह अपने मायके में आई, लेकिन वहाँ उसे शरण नहीं मिली।......अब....?''

शची देवी के रोगंटे खड़े हो गये। वह इतना ही कह पाई,'' फिर?''

''दिशाहीन होकर वह महाकाली के मंदिर पहुँची और कई दिन की भूखी प्यासी, जर्जरित देह को लिए पल भर सोचा और फिर रात के सुनसान अंधेरे में मंदिर के कुँए में उसने छलांग लगा ली सुबह उसकी लाश निकाली पहचानी उसके मायके और ससुराल वालों को खबर की उनके आने की प्रतीक्षा की परन्तु वहाँ से कोई नहीं आया।''[63] एक स्त्री का ऐसी दशा के लिए

समाज उत्तरदायी है जिस समाज में उसके अस्तित्व को सुरक्षित रखने की प्रतिबद्धता होनी चाहिए वह अपने कर्तव्य से विमुख होने लगा था स्त्री को सहारा नहीं मिलने पर उसकी विवशता हार मानने लगती है। सहायता की आशा के टूटते रिश्तों की पीड़ा, छटपटाहट इसे जीवन से मृत्यु की तरफ उन्मुख करती है वह सांसारिक कष्टों से मुक्ति का मार्ग चुनती है वह अपनी स्त्रीत्व को व्यक्त करती है अपनी विदाई के पीछे जिन प्रश्नों को वह अनसुलझा छोड़ जाती है उन प्रश्नों की प्रासंगिकता हर युग काल में बनी हुई आज तक सार्वकालिक चेतना के रूप उपस्थित है।

भारतीय समाज को जिस रूप में चित्रित किया गया है वह केवल मात्र दिखाया जाने वाला चित्र है जबकि सच्चाई कल्पना से परे एक ऐसा यथार्थ का चित्र है जो समाज की उस धारणा की धज्जियाँ उड़ा देता है जो समाज को आदर्श रूप प्रदान करता है नारी के जीवन संघर्ष की गाथा को शब्दों में पिरोना सरल कार्य नहीं है क्योंकि नारी को समझना और उसके भावों को अनुभूत करते हुए प्रस्तुत करना साहित्यकार होने के साथ दृष्टा होने का भी अहसास कराता है नारी की वेदना, पीड़ा, शोषण, अन्याय, अत्याचार की पृष्ठभूमि का अवलोकन करने पर हमें नारी की प्रकृति और उसके परिवेश को समझने में सहायता मिलती है स्त्री के जीवन संघर्ष से जुड़े घर घटनाक्रम को हम अनुभूत करने का प्रयास करते हुए उस वेदना जन्य कष्ट की पीड़ा का आत्मसात् करते है तो हमें चेतना शून्य हो जाना ही उचित प्रतीत होता है परन्तु साहित्य साधना में इस पल को ही लेखन बिन्दु माना जाता है क्योंकि भावों की अनुभूति ही लेखन का आधार बनती है।

नारी का जीवन क्या था? क्या है? और क्या होना चाहिए? के प्रश्नों के मध्य जुड़ने वाली कड़ियों की श्रृंखला है वैदिक युग से लेकर आज तक के स्त्री जीवन स्वरूप में जो भी तत्व हमें प्राप्त होते है वे सब उसके संघर्ष को दिन प्रतिदिन और कठोर करते जा रहे है यही चिंतन हमें नारी के जीवन संदर्भों में सार्वकालिक चेतना की सम्बद्धता प्रदान करता है यही ''यत्र नार्यस्तु पूजन्ते रमन्ते तत्र देवता'' से घरेलू हिंसा, बलात्कार, दहेज हत्या, कन्या भ्रूण हत्या तक की कष्टदायक यात्रा को सहन करने वाली स्त्री के संघर्ष को शब्दबद्ध करना कठिन है नारी ने सहनशीलता और धैर्य के साथ अपने कर्तव्य पथ पर बढ़ती रही और आज तक यह क्रम निरंतरता के साथ जारी है।

विधाता द्वारा रचित सृष्टि में मानव के दो पक्ष प्रस्तुत हुए स्त्री एवं पुरूष सृष्टि ने दोनों में भेद करते हुए इस प्रकार रचना की थी कि दोनों एक दूसरे के पूरक बने पुरूष को जहाँ बाह्य स्वरूप में क्षमता एवं सामर्थ्य प्रदान किया वहीं स्त्री को नैतिक गुणों के साथ आभ्यांतर रूप प्रदान किया समाज में दोनों की भूमिका का क्रम था स्त्री को ईश्वर ने नैतिक गुणों से युक्त किया वे

सब मानवता की परिभाषा को व्यक्त करने वाले थे दया, ममता, सहनशील, धैर्य, निष्ठा, प्रेम, सहानुभूति आदि विविध मानवीय गुणों से युक्त किया है।

डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यास 'न गोपी न राधा' में मीरा के विराट व्यक्तित्व में स्त्री चेतना के स्वर को शक्ति के साथ प्रस्तुत किया है चिंतन से विषय की गम्भीरता को सरल किया जाता है मीरा के चिंतन में विषयों की क्लिष्टता को आसान कर पाठक के समक्ष जो प्रस्तुतिकरण उपन्यासकार ने किया है वह सराहनीय है स्त्री की उपेक्षा का अभ्यस्त हो गया था क्योंकि धर्म के द्वारा इस पर नियंत्रण किया गया था धर्म के साथ नारी को जोड़ा नहीं गया और यही कारण था कि नारी को कामनी रूप की व्याख्या सर्वत्र रही मीरा को भक्ति में कोई भेद नजर नहीं आया था। उन्होनें स्त्री की उपस्थिति को धर्म एवं समाज के साथ स्थापित करने का प्रयास किया ''जो व्यक्ति मठ, आश्रम, समाज आदि चलाते है। वे समाज पर अपना सीधा प्रभाव छोड़ते है। उनके चरित्र, व्यवहार और दर्शन का समाज पर प्रभाव पड़ता है। इस कारण उन्हें समाज द्वारा परखा जाना भी जरूरी हो जाता है। समाज स्त्री और पुरूष दोनों से मिलकर बनता है। अकेले पुरूष से नहीं फिर स्त्री की उपेक्षा क्यों? उससे परहेज क्यों? क्यों वह माया है? इसलिए हमें उसके भ्रम को तोड़ना चाहिए। समाज में स्त्री का अपमान स्वीकारना नहीं चाहिए।''[64]

मीरा के व्यक्तित्व में स्त्री की मुक्ति का संघर्ष दिखाया गया है लेकिन यह संघर्ष उन रूढ़ियों के विरूद्ध था जिन्हें धर्म के नाम समाज में विस्तृत रूप दिया गया था मीरा ने अपनी भक्ति चेतना से उन सभी परम्पराओं के खिलाफ अपनी उपस्थिति दर्ज करायी है डॉ. भटनागर ने नारी के संघर्ष को अनुभव किया है और वह उन सभी पक्षों का चिंतन करते है जिन्होनें स्त्री की स्वतंत्रता को बंधक बनाने का प्रयास किया वे भी इनके उपन्यासों में स्त्री के संघर्ष को व्यथा को उभारने का पूर्ण प्रयास किया गया है उपन्यासकार ने समाज के द्वारा उत्पन्न मनोस्थिति का भी वर्णन किया है डॉ. भटनागर ने स्त्री की मनोदशा स्वयं को अपराधी हीन, मान लेने के पीछे समाज के क्रूरतम चेहरे को प्रकट करने का साहस उपन्यासकार ने किया है।

''मैं अच्छी स्त्री नहीं हूँ। मैं शापग्रस्ता हूँ। पाप मेरा धरम करम है, वह मेरा अपना बोया नरक है।........ आप जोगिन है। मैं आपके साथ रहने योग्य नहीं हूँ। मुझे क्षमा करे।''

''स्त्री अच्छी ही होती है, वह बुरी नहीं होती। रोटी में पाप कैसा? तुम जहाँ पहुँची हो, उसका उत्तरदायी समाज है, धरम है, महन्त और धर्मावतार है, तुम कदापि नहीं। तुम स्त्री हो, मैं भी स्त्री इसमें योग्य होने न होने का प्रश्न कहाँ पैदा होता है?...... और होता है तो क्यों? कौन खड़ा करता है?'' मीरा ने गंभीर होकर कहा और ललिता के निर्दोष मन को अनुभव किया।''[65]

स्त्री पुरुष से मिलकर समाज का निर्माण होता है दोनों एक दूसरे के पूरक होते है समाज की व्यवस्था में दोनों का योगदान है उनके अपने अपने दायित्व है। समाज का यह आदर्श

रूप है परन्तु इस व्यवस्था का पालन सही रूप में नहीं हुआ। कुछ स्वार्थी लोगों की वजह से समाज में सर्वप्रथम स्त्री के स्वीत्व पर वार हुआ है। वह विरोध भी करती तो किससे? उसकी सम्पूर्णता का अतिक्रमण कर उसे सामाजिक कुप्रथाओं के बंधन में बाँधा जा रहा था शोषण एवं अन्याय के पक्षधर उसे धर्म समाज की मर्यादा एवं परम्पराओं के नाम पर छलते जा रहे थे वह नेतृत्व विहीन वर्ग की वह यात्री थी उसे ना लक्ष्य पता था, ना मार्ग वह अपनी स्थिति का चिंतन भी कर पाने में असमर्थ थी परन्तु मीरा उस वर्ग को प्रतिनिधित्व प्रदान कर सकी है वह नारी की अस्मिता और अस्तित्व को खंडित करने वाली आसुरी ताकतों को चुनौती देती है वह नारी की मनःस्थिति को समझते हुए उसे मानसिक सम्बल प्रदान करती है ''मीरा ललिता की मनःस्थिति समझती थी उसके टूटते आत्मविश्वास का अनुभव करती थी उसमें जड़ता जल कुंभी की तरह फैलती थी वह सोच भी नहीं सकती थी कि वह पुनः सामाजिक हो सकती है उसे लगता था कि अब उसके पास ऐसा नहीं रहा है जिससे उसे सामाजिकता का अनुभव हो सके और वह अपनी जिजिविषा के लिए संघर्ष कर सकें अब वह हाट की उपेक्षित वस्तु रह गयी थी वह अपने में ठूंठ का अनुभव करती थी समाज की धारा से कटकर व्यक्ति का सारा सोच किस असोच की मानसिकता में बदल जाता है? मीरा ने उसकी अन्तर्वेदना को समझते हुए उसे समझाया,'' जानती हो, तुम्हें समाज से बाहर कौन लाया?........ समाज के वे पुरोधे जो समाज के शत्रु है। और अपनी निरंकुशता को समाज पर थोपना चाहते है। वास्तव में वे डाकुओं से ज्यादा घातक है। अब तुम्हें पुनः अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा को सिद्ध करना है।''[66]

डॉ. भटनागर ने मीरा के माध्यम स्त्री वर्ग को प्रतिनिधित्व दिया है उसकी संकल्प शक्ति को संघर्ष की महायात्रा में सहायक सिद्ध किया है वह स्त्री को अत्याचार, अन्याय और शोषण के विरूद्ध विद्रोह करने का साहस प्रदान करती है। वह उस के समक्ष एक चुनौती के रूप में प्रस्तुत हुई है जिसने स्त्री वर्ग को दूसरा दर्जा प्रदान करते हुए उसकी सामाजिकता पर प्रहार किया है ''मैं तुम्हारे साथ हूँ और इस संकल्प से हूँ कि व्यक्ति  से उसकी सामाजिकता कोई नहीं छीन सके। उसे कोई नरक में नहीं ढकेल सके।.......स्त्री के साथ होने वाले अन्याय और अत्याचार से लड़ना है। सिद्ध करना है कि स्त्री पुरुष से कम या अशक्त नहीं है। वह पुरूष के बराबर है उससे भी बढ़कर है।''[67]

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने उपन्यासों में नारी के विविध स्वरूपों का वर्णन किया है उपन्यास साहित्य में नारी के संघर्ष उसकी चेतना की ऐतिहासिक परम्परा को वर्तमान और भविष्य के स्वर्णिम स्वप्न को एक साथ स्थापित करने का प्रयास किया है स्त्री जीवन का संघर्ष इनके औपन्यासिक पात्रों में परिलक्षित होता है यद्यपि इनकी सम्पूर्ण साहित्य साधना में स्त्री के पक्ष का चिंतन मानवीय धरातल पर यथार्थ रूप से किया है तथापि इनके 'जोगिन' और 'न गोपी न राधा' उपन्यास में मीरा के माध्यम से नारी के संघर्ष चेतना और मुक्ति पर प्रकाश डाला गया

है डॉ. भटनागर 'जोगिन' उपन्यास की प्रस्तावना में लिखते है कि–'' मीरा जैसी दूसरी नारी नहीं हुई उसमें अपार शक्ति थी, अटूट विश्वास था और सम्पूर्ण समर्पण की तीव्रतर भावना थी मुझे उसके विद्रोही रूप ने हिलाकर रख दिया मैं जब भी उसके बारे में सोचता हूँ तो मेरा मन प्रणाम मुद्रा में आ जाता है। उसकी भक्ति के सामने नत हूँ।''[68] मीरा का चरित्र आज सम्पूर्ण नारी जाति के संघर्ष की बुलंद आवाज है मीरा भक्त थी अपने आराध्य भगवान श्रीकृष्ण की अनन्य उपासिका थी वह सामाजिक बंधनों के बंधन से मुक्त हो चुकी थी वह स्त्री जाति की चेतना का प्रखर स्वर थी मीरा के चरित्र के माध्यम से डॉ.राजेन्द्र मोहन भटनागर ने जिन सामाजिक मान्यता और परम्पराओं का खण्डन किया है वह हमारी संस्कृति का अंग नहीं है वह विषमता उपस्थित की गई सत्ता के लोभी, स्वार्थी मनुष्यों ने समाज को बंधक बनाने के लिए इन्होंने उसे परम्परा, रीति रिवाजों का चोला पहनाया था मीरा के विराट व्यक्तित्व के सामने यह बौने साबित हुए।

स्त्री का जीवन सामाजिक मान्यता एवं रूढ़ियो में बँधा हुआ है वह उसके शोषण एवं अत्याचारों को परिभाषित करता है समाज में व्याप्त बाल विवाह, पुनर्विवाह, विधवा जीवन, पर्दा प्रथा, वैश्यावृत्ति, बहु विवाह, अनमेल विवाह, आदि कई ऐसी कुप्रथा है जिनका सामना स्त्री को करना पड़ता है उपन्यासकार ने अपने उपन्यास में स्त्री चेतना की प्रचण्ड शक्ति का समर्थन करते हुए 'मीरा के कृष्णमयी स्वरूप की व्याख्या सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में की है नारी जीवन की समस्या न जाने कितने वर्षों से आज तक निरंतर अपनी गति बनाए हुए है नारी जीवन के संघर्ष को समाज से कब मुक्ति मिलेगी यह प्रश्न तो भविष्य के गर्भ में है साहित्यकारों ने अपने साहित्य सृजन में इसको केन्द्रीय विषय के रूप में व्यक्त किया है।

स्त्री का जीवन विषमताओं से भरा हुआ है उसमें जीवन के प्रति आशा की एक लौ है जो निरंतर प्रज्ज्वलित है नारी वेदना का अंत आज तक न आ सका। वह निरंतर संघर्ष की मूर्ति बनी हुई है अन्तरात्मा की पुकार उसे बार–बार उसके स्त्री होने की वजह गिनाती रहती है। वह मुक्ति चाहती है परन्तु किससे? यह प्रश्न स्त्री के साथ समाज की सम्पूर्ण व्यवस्था को भी चुनौती देता है आखिर स्त्री के अधिकारों को स्वतंत्रता समाज उसे कब प्रदान करेगा? डॉ. भटनागर ने स्त्री के विविध रूप में प्रस्तुत संदर्भो का चयन उपन्यास में किया है।

डॉ.भटनागर ने स्त्री के पत्नी पक्ष की भावुक अभिव्यंजना भी की है वह पुरूष की तुलना में अधिक सहृदय है वह अपने पति की सेवा और उसके आत्म सम्मान का विशेष ध्यान रखती है 'युग पुरूष अम्बेडकर' में उपन्यासकार ने स्त्री के इस समर्पित भाव को प्रस्तुत किया है भीमराव अम्बेडकर का पत्नी के प्रति भाव स्त्री के उज्ज्वल चरित्र को दर्शाता है ''भीमराव अम्बेडकर का हृदय भर आया और वह यह नहीं समझ पाए कि उन्होनें ऐसे क्या पुण्य कर्म किये थे जो उन्हें अन्नपूर्णा मिली कितना ध्यान रखती है वे आत्मविभोर होकर बोले–

''खाना लगाओ।''

''यहीं लगाऊँ?''

'' जहाँ तुम चाहों, वहीं लगाओ।''

'' मेरा मन रखने के लिए अपने मन को मारकर कहते हो जी......नहीं,.........नहीं जैसा आपका मन कहे, वैसा करो।......... मुझे आप पढ़ते हुए भी खाना खाते अच्छे लगते हो।'' रामा बाई उनके मन को जरा सा भी आघात लगे, यह न चाहती थी क्योंकि उनको आघात पहुँचाने वाले बाहर के लोग बहुत थे।''[69]

डॉ. भटनागर ने उपन्यासों में भक्ति के माध्यम से समाज में विशेष रूप से स्त्री और उपेक्षितों के प्रति एक बदलाव की स्थापना करने का प्रयास किया है भक्ति में भी शक्ति होती है ऊर्जा होती हैं उष्मा होती है उर्ध्व चेतना होती है वह समाज के कल्याण, उपेक्षितों के उद्धार और जन के सम्मानार्थ खड़ी रहती है। भक्ति साधना से मुक्ति का संघर्ष सरलतम हो जाता है पत्नी के रूप में स्त्री ने सदैव अपने धर्म का पालन करने में अग्रणी भूमिका निभायी है वह सेवा करने में विश्वास रखती है वह पति को अपना आराध्य मानती है उसे परमेश्वर की संज्ञा देती है सेवा की नैतिकता का विकास उसको सहृदय एवं सामाजिक बनाते है।

डॉ.भटनागर ने स्त्रियों की दशा पर चिंतन करते हुए उसके जीवन की सहजता को भी व्यक्त किया है सरदार' उपन्यास में वल्लभ भाई पटेल की पत्नी झवेरबा की सहजता सरलता और जीवन के प्रति निष्काम भाव को प्रस्तुत किया है जो अपने घर परिवार के प्रतिपूर्ण समर्पण और निष्ठा से अपने दायित्वों का निर्वहन करती है। वह पुरूष के स्वामित्व को स्वीकार करती है एवं महिला शिक्षा पर भी विचार प्रस्तुत करती है।

पहाड़ सा दिन काटने का एक रास्ता सुझाया?''

''किसने''

''यहाँ की औरतों ने।''

''क्या?''

''शादी होने वाली लड़कियो को चिठ्ठी बाँचने लिखने लायक बना दो........ कुछ सीना पिरोना, कढ़ाई बुनाई सिखा दो। इस तरह छः सात लड़कियाँ आ जाती है। उनसे दूध, छाछ, मक्खन, थोड़ा बहुत घी आ जाता है।......... कभी–कभी साग सब्जी भी।.... तो क्या हमें इतना हक नहीं है जो?''

''झबेरवा तू इतना सब जानती है। घर मे तो यह सब हम कभी जान ही नहीं सके। ........ तुम्हें हमने क्या दिया? भट्टी से निकाला भाड़ में डाल दिया।''

यह क्या कहते हो जी ''......... राम, राम,...........कभी सपने में भी मत सोचना।.... आप दिन रात मेहनत करते हो तो क्या हमारा फर्ज नहीं बनता है जी......?''

''कि कन्धे से कन्धा मिलाकर चले। कोई सुनेगा तो क्या कहेगा।''

''सबने आकर हमसे प्रार्थना की है। तब ना हम तैयार हुए है। वे जो कर रहे अपनी खुशी से।........ वे अपनी लड़की को चिठ्ठी पत्री पढने– लिखने योग्य बनाना चाहते है।.... स्त्री का ना पढ़ना लिखना कितना बड़ा अभिशाप है।''[70]

'सरदार' उपन्यास में स्त्री की शिक्षा की महती आवश्यकता पर बल दिया है। स्त्री का शिक्षित होना समाज के लिए अति आवश्यक है। सरदार वल्लभ भाई पटेल भी इस पर समर्थन व्यक्त करते है। ''तुम ठीक कहती हो। स्त्रियों का पढ़ा लिखा होंना, अपने को समझना, दुनिया को जानना बहुत जरूरी है।''[71] डॉ. भटनागर ने यद्यपि अपने उपन्यासों में स्त्रियों के साथ समाज के समस्त पक्षों पर चिंतन किया है परन्तु स्त्री विमर्श पर उनकी दृष्टि एक पुरूष की न होकर साहित्यिक की है जो सत्य की खोज में उन तथ्यों की सम्पृक्ता को स्पष्ट कर सके जो सार्वकालिक चेतना से संदर्भित है। 'स्त्री विमर्श' के सभी पक्षों का चित्रण, प्रस्तुतिकरण इनके उपन्यास में किया गया है। स्त्री की दशा एवं अवस्था पर अभी भी बहुत विचार होना बाकी है साथ ही आवश्यक है कि स्त्री को उसके अधिकार दिए जाए ताकि वह जीवन के प्रति अपने दायित्वों का पालन पूर्ण रूप से कर सके।

## (ङ) दलित विमर्श

भारत की संस्कृति एवं सभ्यता जितनी उच्च कोटि की है उतना ही इसका वैभव सम्पूर्ण विश्व प्रचारित है भारत जैसे विशाल राष्ट्र में विभिन्न जाति, वर्ग, सभ्यता, संस्कृति के लोगों का निवास है यह सब अपनी विविधता में भी एकता एवं अखण्डता बनाए रखे हुए है भारत की सांस्कृतिक विरासत को अक्षुण्ण बनाए रखने में भारत के सामाजिक जीवन का बहुत बड़ा हाथ है यह परम्परा वर्षों से चली आ रही है कि हम सहयोग की भावना एवं मानवीय जीवन मूल्यों का सम्मान करते है हमारी विरासत हमें 'जीओ और जीने दो' के मंत्र का पालन करना सिखाती है हमारी परम्परा संस्कृति एवं सभ्यता को पूरा संसार नमन करता है हमें गर्व होता है हमारी प्राचीनता और वैभव पर भारत का यही स्वरूप हमें और दुनिया को सुहाता है। परन्तु भारत की इस महानता पर एक कोढ़ है जो 'जातिप्रथा' के रूप में उपस्थित है 'जाति प्रथा; समाज की व्यवस्था के रूप में प्रचलित होती है न जाने कैसे? कब? यह अस्पृश्यता का रोग ग्रहण कर लेती है पता ही नहीं चलता है और धीरे धीरे यह रूढ़ होती हुई भारत की धरती पर अपनी रूढ़ान्धता को सुदृढ़ कर लेती है। डॉ. अम्बेडकर के अनुसार प्रारम्भ में जाति प्रथा नहीं थी। समाज के कुछ स्वार्थी लोगों ने जो ऊँचे स्तर के थे, कमजोर लोगों से उनकी इच्छा के विरूद्ध जबरदस्ती काम

कराना प्रारम्भ कर दिया, इन कमजोर लोगों को शिक्षा प्राप्त करने, व्यापार करने, धन इकट्ठा करने और हथियार रखने से वंचित कर दिया जिससे वे विरोध न कर सके और अपनी दासता दूर न कर सके। इस प्रकार जातिवाद को अपनाकर शूद्रों को अपंग कर दिया गया।"[72] भारत की पवित्र भूमि पर मानवता को शर्मशार करती हुई हमारी एकता अखण्डता को खण्ड–खण्ड करने का प्रयास करने लगती है अस्पृश्यता के चलते भारत की सामाजिक स्थिति में छुआछूत का ग्रहण लगता है तथा जातीय संघर्ष को बल मिलता है। जातीय व्यवस्था अब संघर्ष का स्वर पाने लगती है अत्याचार, शोषण का षड्यंत्र प्रारम्भ हो जाता है सत्ता का स्वार्थ प्रजा का शोषण करने लगता है राजा प्रजा को केवल साधन मानने लगता है शोषक की भूमिका का निर्वाह करने वाले लोग अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए इस परम्परा को बढ़ावा देने लगते है वे संसाधनों का दोहन करना चाहते है इसलिए प्रजा के आपसी सद्भाव और भाईचारे को नष्ट कर जातिप्रथा को उच्च वर्ग और निम्न वर्ग में स्थापित करते है।

कर्म की महानता वाले इस देश में कर्म को ही जाति का आधार बना दिया गया अब कर्म सेवा का रूप लेने लगा ओर धीरे–धीरे शोषण का आधार भी बनने लगा गरीबी और शोषण के साथ अस्पृश्यता की वेदना भी उसे कोढ़ में 'खाज' मालूम हुई परन्तु शक्ति साहस एवं सामर्थ्य के अभाव में वह चुप रहा और इससे शोषक वर्ग का हौसला और बढ़ा। भारत में जो महान परम्परा, सभ्यता एवं मानवीयता का संरक्षण करने वाले देश में अब उच्च वर्ग और निम्न वर्ग की परम्परा रूढ़ होने लगी थी निम्न वर्ग में ज्यादातर ऐसे कार्य थे जो उच्च वर्ग की सेवा से जुड़े थे प्रारंभ में यह केवल सेवा और सम्मान के साथ जुड़े थे परन्तु धीरे–धीरे शोषण चक्र धुरी बन गये अब भारत में इनका शोषण उच्च वर्ग का अधिकार था शोषण को सहना इनका भाग्य बन गया था समाज की व्यवस्थाएँ क्षीण होने लगी थी मानवीय मूल्यों का अवमूल्यन होने लगा था भ्रामक स्थितियों के चलते मतभेद और शोषण दिन दुगना, रात–चौगुना बढ़ता ही गया मानव का रूप अब विकृत होने लगा था धर्म, समाज, जाति, वर्ग, सम्प्रदाय के नाम पर उसे बाँटा जाने लगा मानव अब मानव का शोषण करने लगा था।

किसी भी राष्ट्र की उन्नति में 'अस्पृश्यता', जातिप्रथा, वर्गभेद एवं रंगभेद बाधा उपस्थित करते है भारत में जब इसका प्रचलन बढ़ा तो राष्ट्र की एकता तो नष्ट होने लगी साथ ही हमारी प्रगति और उन्नति के मार्ग में भी बाधा आने लगी थी भारत ऐसा राष्ट्र है जो मानवता एवं जीवन मूल्यों का हितेषी है जब हमारे देश में भी इन सब बाधक तत्वों का सामाजिक जीवन में प्रवेश हुआ तो मानवीय मूल्यों की अवहेलना होने लगी और देश की अखण्डता नष्ट होने लगी थी। डॉ. अम्बेडकर ने सत्य रूप में इस बात का प्रतिपादन किया है कि "जाति व्यवस्था पूर्णतया अवैज्ञानिक, अव्यावहारिक, अन्यायपूर्ण और गरिमाविहीन है। आर्थिक क्षेत्र में इसने कार्यकुशलता को आघात पहूँचाया है तथा सामाजिक जीवन में जड़ता रूढ़िवादिता एवं विद्वेष को जन्म दिया

है। उन्होंने 1930 में ही इस बात को समझ लिया था कि जाति व्यवस्था राजनीतिक जीवन में अनेक विकृतियों को जन्म देगी। डॉ. अम्बेडकर को इस बात का श्रेय दिया जाना चाहिए कि उन्होंने हिन्दुओं का ध्यान उन सामाजिक समस्याओं की ओर आकर्षित किया जो हिन्दू समाज के दो अंगों में भारी तनाव को जन्म दे रही थी और कालांतर में न केवल हिन्दू समाज वरन् राष्ट्र की सम्पूर्ण व्यवस्था के लिए घातक हो सकेगी।''[73] भारत की पुण्य भूमि पर यह घिनौना कृत्य तांडव करने लगा समाज का रूप विकृत होने लगा था समाज का एक वर्ग समाज में ही पिछड़ने लगा वह मुख्य धारा से दूर समाज के पायदान के निम्न स्तर पर आ गया था समाज में ऐसे वर्ग को 'दलित' नाम दिया है। 'दलित– शब्द की व्याख्या बहुत विद्वानों ने की है और संभवतः हो सकने वाले प्रयास भी दलित उत्थान के लिए किये है दलित कौन है? यह प्रश्न समाज के समक्ष उपस्थित होने पर इसे सीधा जाति से जोड़कर व्याख्या कर देना सरल है परन्तु 'दलित' शब्द की विचारधारा में जब जीवन मूल्यों को टटोला जाता है तो शोषण का वह रूप हमारे समक्ष साकार होने लगता है जिसे किसी भी सूरत में हम मानवीय नहीं कह सकते है। शोषण का संभवतः शायद ऐसा ही कोई पक्ष या रूप न हो जो इन दलितों ने नहीं भोगा हो आर्थिक, सामाजिक, शारीरिक, यौन, मानसिकता जैसे कई रूपों में शोषण होने लगा। संभवतः शायद रूढ़ हो चुकी परम्परा इस परम्परा का उन्मूलन होने में अभी और भी समय लगेगा आज भी इस रोग से समाज को मुक्ति नहीं मिली है यह कई प्रकार के रूप धारण किए हुए है।

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर भावों के कुशल जादूगर है जादूगर इसलिए कि भावों की सत्यता को कल्पना के मिश्रण से समाज के इतिहास को जीवन्त करने की क्षमता अद्भुत है। इन्होंने अपने रचनाकर्म से समाज की कुत्सित बुराइयों को प्रकाशित किया तथा साथ ही उनका उपचारात्मक परीक्षण करने में भी सफल रहे हैं इनके उपन्यास इतिहास से प्रेरणा ग्रहण करते है। इनका विवेकशील मानस इतिहास के ऐसे तथ्यों का अनुसंधान करने में सफल रहा है जो सार्वकालिक है दलित विमर्श से जुड़े हुए ऐसे कई तथ्य जो भावों के अभाव में शून्यता के सागर में यत्र तत्र बिखरे हुए थे। डॉ. भटनागर ने उसको एक सूत्र में बाँधकर श्रेष्ठतम प्रयास किया है उपन्यासकार ने रचनाकर्म क्षेत्र में ऐतिहासिक महानायक की जीवन गाथा के संदर्भ में विभिन्न प्रसंगों के माध्यम दलित विमर्श विषय का मूल्यांकन करने का प्रयास किया है।

जीवन की समता विषमता के सागर में भावों के ज्वार को सँभालने और प्रस्तुत करने का जोखिम उपन्यासकार ने उठाया है कलम को कमल की तरह सुशोभित करते हुए भावों की सत्यानुसंधान की साहित्यिक परम्परा का निर्वहन किया है उपन्यास साहित्य केवल मनोरंजकता का साधन मात्र नहीं अपितु महान व्यक्तित्व की साधना का परिणाम है जो विचारों के प्रवाह में बहना ही नहीं जानता बल्कि मानव की चेतना को झंकृत करने का भी साहस एवं सामर्थ्य रखती है।

डॉ. भटनागर ने भीमराव अम्बेडकर के महान व्यक्तित्व को अपनी सृजनात्मक शक्ति के साथ प्रस्तुत करने का श्रम एवं साहस किया है अम्बेडकर दलित उत्थान के नायक है जिन्होंने समाज के उस वर्ग का प्रतिनिधित्व किया जिसका शोषण कई वर्षों से चला आ रहा है अम्बेडकर के महान विचारों की सृष्टि में कल्पना का मिश्रण कर भावों की कुशल योजना का प्रस्तुतिकरण ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में सरल कार्य नहीं है तथापि इन्होंने अपनी रचनात्मक प्रतिभा की क्षमता के बल पर यह रचनाकार्य सम्पन्न किया है। 'युग पुरूष अम्बेडकर' इनका एक ऐसा उपन्यास है जिसमें इनकी दृष्टि ने दलित विमर्श का प्रस्तुतिकरण किया है डॉ. भटनागर ने अपने चरित्र नायकों की जीवन दृष्टि में दलित विमर्श का प्रस्तुतिकरण करते हुए सार्वकालिक चेतना की व्याख्या की है दलित विमर्श का चिंतन 'युग पुरूष अम्बेडकर' में उपन्यास में अम्बेडकर के विचारों के माध्यम से हुआ है अम्बेडकर अपनी जीवन के प्रारम्भिक जीवन में जब इस भयानक सच्चाई से सामना होता है तो उनकी दृष्टि प्रश्नाकुल हो उठती है वह अपनी जीवन समस्याओं के समाधान के साथ अपने साथ समानता का व्यवहार चाहते है। वे अपनी माँ से सर्वप्रथम अपने प्रश्नों का जबाब एवं प्रेरणा प्राप्त करते है। माँ भीमाबाई और बालक अम्बेडकर के संवाद में दलित चिंतन में मार्मिक वेदना का स्वर प्रस्फुटित होता है।

''इसलिए मुझे कक्षा में अलग बिठाया जाता है...... मेरे साथ कोई नहीं खेलता.....

हम, नीच है ना, माँ?'' अम्बेडकर गले में पड़े फंदे को निकालता हुआ कहता है।

– ''तू इन बातों पर अपना सिर मत खपा। पढ़। पढ़ कर गुना....... इन बातों के लिए पूरी जिंदगी पड़ी है।...................पढ़ लिखकर इन बातों पर खूब सोचना। निर्णय लेना।

– कहती। उसका ह्रदय भर आता है। भीमाबाई प्रत्युत्तर?

– माँ हमसे इतनी नफरत क्यों?

– सब ठीक हो जाएगा, समय आने दो।'' भीमाबाई उसे तसल्ली दिलाती है।

– ''समय कब आएगा'' भीमराव प्रश्न करते है।

– ''जल्दी ही आएगा।....... अवश्य आएगा। मेरा मन कहता है। माँ का मन कभी झूठ नहीं बोलता। तू विश्वास कर।''

– ''पर कैसे?''

– ''तू लाएगा। जैसे कबीर लाया था।...... भीमाबाई तेजी से कहती है।''[74] अम्बेडकर के मन में उठे प्रश्नों का समाधान और प्रेरणा माँ भीमाबाई का वह योगदान है जो इतिहास को सार्वकालिक घोषित करता है क्योंकि इतिहास साक्षी है कि माँ की प्रथम प्रेरणा से ही शिवाजी, महाराणा प्रताप,

विवेकानंद, मीरा, लक्ष्मीबाई आदि महान व्यक्तित्वों ने समाज की दिशा एवं दशा में आवश्यक परिवर्तन किया है।

डॉ. भटनागर ने शूद्रों की अवस्था का वर्णन करते हुए दोषी लोगों की मानसिकता का भी चित्रण किया है शिक्षा जैसे पवित्र क्षेत्र में इनकी घुसपैठ पर विमर्श करते हुए तत्कालीन समाज की विकृत मानसिकता पर भी प्रश्न करते है अम्बेडकर ने दुनिया के इस व्यवहार को बखूबी अनुभव किया परन्तु वह निडर रहे और निरंतर अनुसंधान में जुटे रहे। उनकी लगन रही और वे सत्य की प्रश्नाकुल मानसिकता का अध्ययन करते रहे। 'शूद्र' का अनुसंधान ही उनकी आत्मा को शुद्ध करता रहा था।

''एक बार पुनः विचार कर लीजिए।..... मैं अपनी संस्कृति को जानना चाहता हूँ। आपकी बड़ी कृपा होगी। मुझे शूद्र होने का दण्ड न दीजिए।''

भीमराव अम्बेडकर धीरे धीरे कहता जा रहा था।

''नहीं का मतलब नहीं। शूद्र के लिए संस्कृत पढ़ना, उसी तरह निषेध है जैसे मंदिर में जाना।........ तुम फारसी ले लो।'' इतना कहकर वह चल पड़े अम्बेडकर मूर्ति बना उनको जाते हुए देखता रह गया।

भीमराव अम्बेडकर की यह एक और हार हुई। शूद्र क्या होता है? ये कौन है? फिर वे हिन्दू क्यों है? एक धर्म के दो व्यक्तियों के बीच इतना भेदभाव क्यों? एक स्वामी और दूसरा दास क्यों? ब्राह्मण भी हिन्दू है और महार भी हिन्दू है, पर दोनों में जमीन आसमान का अंतर है।

भीमराव अम्बेडकर अन्दर ही अन्दर घुटता रहा वह पाठ्य पुस्तकों की अपेक्षा अन्य पुस्तकें अधिक पढ़ता था। वह जानना चाहता था कि शूद्र है तो क्यों? किसने बनाया है। उन्हें शूद्र?''[75]

डॉ. भटनागर ने अम्बेडकर की उस सोच का विश्लेषण किया है जो समाज ने स्थापित किया है जो समाज ने स्थापित कर रखी है। 'शूद्र' के निम्न जीवन स्तर के पीछे की घृणित मानसिकता को भी प्रकट किया है 'शूद्र' का मतलब यह कतई नहीं है कि उसे उसके मानवीय अधिकारों से वंचित कर दिया जाए। अम्बेडकर ने हार नहीं मानी वे लगातार उन परिस्थितियों का मूल्यांकन करते रहे जो शूद्र होने का अर्थ हीन होना मानते थे डॉ. अम्बेडकर ने जो अनुभव किया वे सब दलित विमर्श का पक्ष प्रकट करते थे विलायत से लौटने के पश्चात बड़ौदा रियासत में उन्हें सैन्य सचिव का पद मिलता है। वह बड़ौदा पहुँचकर अपनी सेवाएँ राज्य को देना चाहते है परन्तु यहाँ भी उनके सम्मान को जाति के साथ जोड़ा जाता है। और उन्हें अपमानित किया जाता है बड़ौदा रियासत के मुख्यमंत्री भी उनकी कोई सहायता को पाने में असमर्थ होते है आनंदराव और अम्बेडकर कोई रहने के लिए जगह नहीं देता है। डॉ.भटनागर ने इस प्रसंग के माध्यम से दलित विमर्श को परिभाषित करने का प्रयास किया है।

''ताज्जुब है कि हमसे आगे हमें जातीय अभिशाप स्वागत सत्कार करता हुआ खड़ा मिलता है।....... पर क्यों?'' वे बोले कब खत्म होगी यह घृणा। इसी घृणा ने हिन्दू धर्म और इस देश को बद से बदतर स्थिति में ला पटका है।....... आगे का पता नहीं क्या हो?''

वे रियासत के मुख्यमंत्री से मिले। उन्होनें अपनी व्यथा समझायी। वे बोले ''फिलहाल निवास आपको स्वयं तलाशना होगा, रियासत मजबूर है''

''मैं बड़ौदा से अपरिचित हूँ। उन्होनें तर्क दिया और प्रार्थना की'' कृपया आप इसमें मदद करें।''

''कौशिश करके देखता हूँ। लेकिन कोई आश्वासन नहीं दे सकता।'' मुख्यमंत्री ने ऊपरी मन से कहा और अंदर मन में दोहरा लिया, '' ये भारत है, विलायत रिटर्न अछूत........ यहाँ इन्हें भी तो सवर्णो की जूतियों के नीचे रहना होगा, जैसे मलबे के नीचे कीड़े–मकौड़े।''

आनंदराव दिनभर होटल मकान ढूँढते रहे परन्तु उन्हें न किसी होटल में जगह मिली और न किसी न उन्हें मकान ही दिया किराये पर। सबने टका सा जबाव दे दिया। अछूतों के लिए कोई जगह नहीं है।''[76]

डॉ. भटनागर ने दलित विमर्श पर तीखी आलोचना की है वे 'विवेकानंद' उपन्यास में अपने नायक स्वामी विवेकानंद के विचारों में दलितों की दशा पर विमर्श करते है वे वर्षों से अत्याचार सहने वाले दलित वर्ग के हितों की रक्षा का दायित्व उठाए हुए है वे शास्त्रों की परम्परा का अनुसरण करते है परन्तु अस्पृश्यता को समाज में स्वीकार नहीं करते है स्वामी विवेकानंद भारत की जनता के बीच पनप रहे इस कुचक्र को तोड़ना चाहते है वे कहते है–''यह कल्पना नहीं, भारत के अधःपतन का यथार्थ है। जो भी प्राप्त हो रहा है। वह सर्वहित में त्याग के लिए है।..... खाओं तो समाज के शुभ के लिए, पहनो तो समाज के सौन्दर्य के लिए, पढ़ो तो समाज के शिव के लिए। जो प्राप्त किया है। वह सर्वस्व सहर्ष दान कर दो। देह है तो दान करो, विवेक है तो दान करो। जहाँ जिसको भी गठरी में बाँधा या तिजोरी के हवाले किया नहीं कि तत्काल वह पतन का कारण बन जाएगा। ....शूद्र क्या नहीं कर सकता? वेद क्यों नहीं पढ़ पढ़ा सकता? मंदिरों में पूजा क्यों नहीं कर सकता या करवा नहीं सकता। उनके कारण जिन्हें छूने से हम अपवित्र हो जाते है, जिन्हें हम शूद्र कहकर उपेक्षित करते है। वे साक्षात् ईश्वर है।''[77] डॉ. भटनागर का स्वर प्रखर हो उठता है जब वह निचले तबके के बारे मे मंथन करते है। जीवन का अनुभव जब परिपक्व होता है तो चिंतन भी सही दिशा की ओर अग्रसर होता है उपन्यासकार ने उपन्यास मे हर वर्ग तथा स्तर के बारे में गहनता से विचार किया है इनके उपन्यासों में दलित के बारे में जो विमर्श स्थापित किया वह सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्त है क्योंकि मानव का यह व्यवहार हर काल खण्ड में उपस्थित रहा है। शूद्र कहकर इनका अपमान करना तथा इनके

अधिकारों पर अतिक्रमण कर अपने स्वार्थ की सिद्धि करना मानवता का अपमान है। डॉ. भटनागर ने 'विवेकानंद' उपन्यास में इस समस्या पर विमर्श किया और चेतनागत भावों की अभिव्यक्ति दी है।

''क्यों न कहूँ, मुदलियर? वे हमारे गू को सिर पर ढोते है हम उनकी टोकरी में रोटी दूर से फैंकते है। उन पर थूकते है, और उनसे जीने के सारे अधिकार छीनकर भयाक्रांत करते है।..... गू मूत माँ उठाती है या वे उठा रहे है। क्या माँ अछूत है, शूद्र है, वंचिता है? यदि माँ सम्माननीय है, तो उनका दरजा माँ से भी ऊपर है, क्यों कि माँ तो अपनी संतान के ही गू मूत एक आयु तक उठाती है। और ये हम परायों के गू मूत बिना आयु सीमा का विचार किये, सिर पर ढोकर ठिकाने पर डालते है। उन ठिकानों पर जहाँ उनको सारी जिन्दगी रहना पड़ता है।......... क्यों भला? हमारी लम्बी गुलामी का यही कारण है हम पवित्र है, हमारा वेद ज्ञान भ्रम है, हम शिक्षित अनपढ़ है। हमारा आत्माभिमान ढकोसला है, थोथा है। जब इनकी आत्माएँ जगेगी,? उनमें सत्य चेतना उमंगित होगी और शौर्य शील शक्ति का भाव संचारित होगा, तब नया भारत सामने आएगा, उसका पुराना गौरव प्रतिष्ठित होगा, और वह सम्पूर्ण विश्व का मार्गदर्शन करेगा।''[78] उपन्यासकार ने विवेकानंद के विचारों में अपनी कल्पना का शक्ति मिश्रण कर तथ्यों को नवीन ऊर्जा से समृद्ध किया है। जीवन मूल्यों की संवेदना को समझाने का प्रयास किया है।

डॉ. भटनागर ने दलितों की मूक पीड़ा की चीत्कार का अनुभव किया है। समाज में व्याप्त इस बुराई को दूर करने के लिए वे संकल्पित भी दिखाई देते है इनका चिंतन कोरा चिंतन मात्र नहीं है, अपितु समाधान की ओर बढता है। 'गौरांग' उपन्यास में भी स्वामी चैतन्य महाप्रभु ने समाज की इस बुराई एवं रूढ़ परम्परा का खण्डन किया है वे समाज में शूद्र माने जाने वाले अन्त्यजों को गले लगाते है वह सभी मानवों को ईश्वर की दिव्य संतान मानते है प्राणी प्राणी में किसी प्रकार के भेद को वे स्वीकार नहीं करते है वे एक अवसर पर कहते है ''मुझे अन्त्यज सबसे प्यारे लगते है और श्री कृष्ण की भी उन पर विशेष कृपा है। स्मरण है कि विदुर के निवास पर जाकर श्रीकृष्ण ने प्रसाद पाया था। जाति, कुल, वर्ग आदि श्री गोपाल के रास्ते में कहाँ आते है। ऊँच–नीच वे कहाँ मानते है। कैसे माने। वह भी उनकी सृष्टि में भेदभाव कैसा? फिर हम तो..... ।''[79] उपन्यास में दलित विमर्श का मंथन भक्ति के भाव में तन्मयता के साथ हुआ है क्योंकि भक्ति में मानवता का स्थान है भेदभाव का स्थान नहीं। समाज में व्याप्त इस अस्पृश्यता की खाई को पाटने के लिए भक्ति की शक्ति का आग्रह ईश्वर का अनुग्रह है समस्त भेदों को नष्ट करने वाली भक्ति के लिए अस्पृश्यता का तुच्छ भेद समाप्त करना बहुत ही सरल है। डॉ. भटनागर अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में जिन चरित्रों का चित्रण किया है वे मानवीयता को स्थापित करने का प्रयास करते हुए दिखाई देते है ईश्वर एक अज्ञात सत्ता है जिसकी अलौकिकता में मनुष्य का सहज विश्वास है मानव का यह विश्वास उसे मानवता की रक्षा एवं सद्भाव की शिक्षा देता है जो

लोग ईश्वर की रचना मानव को अपने हिसाब भेद, वर्ग, रंग में बाँट देते है। भक्ति मार्ग सदैव ऐसी परम्परा एवं मान्यताओं का खण्डन करते है। भक्ति की साधना में समस्त भेद निर्मूल साबित होते है अस्पृश्यता का खण्डन राम ने शबरी के झूठे बेर खाकर समाप्त कर दिया था तब भी समाज में इस परम्परा का उन्मूलन न हो सका है क्यों कि समाज के स्वार्थी लोगों की लोलुपता ने इसे बनाये रखा है।

'गौरांग' उपन्यास में महाप्रभु चैतन्य के विचारों ने समस्त भक्ति मार्ग की सहजता सरलता एवं समानता का संदेश दिया है उपन्यासकार की दृष्टि में समाज में व्याप्त इस कुरीति का उन्मूलन करने के लिए स्वयं को ही सबसे आगे आना होगा। महाप्रभु ने निर्भय होकर समाज एवं सम्प्रदाय की प्रचलित रूढ़ियों का खण्डन किया था। जो कि धर्म की प्रतिष्ठा को और भी मजबूती प्रदान करता है। वह किसी के नाराज होने की शंका नहीं करते है। जो सहज है उसे स्वीकार करते है। मानव ईश्वर की दिव्य संतान है उनमें परस्पर प्रेम एवं आदर होना चाहिए घृणा एवं अपमान नहीं अन्त्यज हरिदास को वे अपने गले लगाकर अस्पृश्यता के भेद को भी समाप्त करने की दृष्टि समाज को प्रदान करते है।

''यह आप क्या गजब कर रहे है। इससे यहाँ  के वैष्णव और उच्च जाति के प्रभावशाली और प्रतिष्ठितजन नाराज हो जाऐंगे।

'' हो जाने दो आचार्य, मुझे किसी की चिंता नहीं मात्र अपने गोविन्द के।

जब गोविन्द छुआछूत नहीं मानता है तो फिर मैं किस खेत की मूली हूँ जो उसे मानकर उसके परम भक्त से न मिलूँ।''

इतने मे ही हरिदास भी वहाँ पहुँचा। उसे देखकर गौरांग हरिदास की ओर लपके ही थे कि हरिदास ने पीछे हटते हुए कहा, ''महाप्रभु आप वहीं रूके। शायद आपको यह मालूम नहीं कि मै, मोची हूँ और मोची अस्पृश्य है।''

ओह! हरि! हमें तो अभी तक यह ज्ञात ही नहीं था कि तुम अस्पृश्य हो तुम हमें नहीं छू सकते, क्योंकि यदि तुमने ऐसा किया तो हमारा धर्म भ्रष्ट हो जाएगा। लेकिन हम तो तुम्हें छू सकते है ना हरि ताकि हमारा नहीं तुम्हारा धर्म भ्रष्ट हो जाए।..... तुम अपनी जगह यथावत खड़े रहो, मुझे अस्पृश्य होने का रहस्य पता चल गया। '' यह कहते हुए गौरांग हरिदास की ओर बढ़े और सहसा उसे अपनी बाँहों में भर लिया।''[80]

डॉ. भटनागर का दलित विमर्श कोरा विमर्श न होकर समाधान की ओर बढ़ने वाला सरल विश्लेषण है मानव का मानव के प्रति यही आत्मीय व्यवहार धर्म का आदर्श है इस व्यवहार समझना ईश्वर को समझने जैसा ही है जब भक्ति का प्रकाश आत्मा का ज्ञान रश्मियों से आलोकित करता है, तो पृथ्वी पर स्थापित समस्त मानवीय भेदों का समापन स्वतः हो जाता है

उपन्यासकार का यही लक्ष्य है कि धर्म की स्थापना की वास्तविकता से लोगों का परिचय हो वे धर्म के मर्म को जाने और समझे साहित्य मानव के विवेक को जागृत करने का कार्य वर्षों से लगातार करता आ रहा है उसे जीने की सही राह एवं विकल्पों का ज्ञान एवं समझ प्रदान करता है उसे इतिहास के ज्ञात तथ्यों से प्रेरणा प्रस्तुत करता है और जीवन की व्याख्या से निष्कर्ष देता है। इसी साहित्यिक परम्परा का पालन करते हुए डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में जिन महापुरूषो की जीवन गाथा को विषय बनाया है उन सभी में ऐसे मूल्यों एवं तथ्यों की प्रस्तुति दी है जो सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्त है।

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने हिन्दी साहित्य की उपन्यास विधा का सशक्तिकरण किया है भावों के प्रवाह को वहन करने का सामर्थ्य प्रदान किया है। स्थिति–परिस्थितियों का मूल्यांकन किया है। इतिहास से प्रदत्त मूल्यों की सार्वकालिकता चेतना की व्याख्या करने का प्रयास किया है दलितों एवं शूद्रों की तात्कालिक अवस्था का चिंतन भी इनके उपन्यासों में बारीकी से किया गया है।

मीरा स्त्री पक्ष की बुलन्द आवाज है स्त्रियों के साथ समाज के दबे एवं उपेक्षित लोगों की पीड़ा को भी दूर करने का उपाय प्रस्तुत करते हुए मानवीय धर्म की प्रस्तुति दी है मानव धर्म की स्थापना और भक्ति मार्ग की प्रतिष्ठा करने में मीरा ने एक वास्तविक संत होने का परिचय दिया है। वे उन बस्तियों में भक्ति मार्ग की चेतना को जागृत कर समस्त मानव भेदों को भुलाना चाहती है।

अचानक ललिता ने पूछा '' आपको उस बस्ती में जाना है न!.....

''किस बस्ती में?..... मीरा ने उसे टटोला।

'' उन अभागों, उपेक्षितों की बस्ती में, जिनको सवर्ण जाति ने अपने से अलग थलग कर रखा है।'' ललिता ने कहा।

'' हाँ, वहाँ जाना तो है।'' मीरा ने कहा।

'' वहाँ तो निरंतर आना जाना बने रहना होगा,दीदी....।

''हाँ! मुझे अब जाकर यह अनुभव हुआ कि उन्हें मेरी आवश्यकता है, वे सच्चे है, भोले है और निष्ठावान है। वास्तव में धर्म के नाम से पहचाने बनाने वालों से वे अच्छे है, नेक है और भले है।'' मीरा का ह्रदय द्रवीभूत हो उठा। उसके सामने फटे पुराने कपड़ों से अनेक अपनी देह ढके गंदे लोग उभर आए। चिथड़े पहने उन बच्चों की आँखों में कितना स्नेह था!''[81] मीरा का चिंतन ईश्वर भक्ति के साथ मानव सेवा का भी रहा है। वे मानव सेवा के लिए अस्पृश्यता और जाति प्रथा का विरोध करती है वह हर पल उन लोगों की चिंता करती है जो उपेक्षित है। मीरा सभी

को मानव मूल्यों से सम्पृक्त करना चाहती है वह समाज की व्यवस्था को भी दोष देती हुई प्रखर हो उठती है वह बड़ी गम्भीरता से उन समस्त धार्मिक आचार्यों के मतों का खण्डन करती है।–''मीरा बहुत गम्भीर हो उठी। उसके सामने ठंड में ठिठुरते बच्चे घूम गये थे। जो उतराल पहने हुए थे। जिनकी छोटी–छोटी बाँहों में बड़े चोले की बाँहे झूल रही थी। वे समाज का बचा खुचा संतोष से खाते है। समाज की जूठन पर पलते है और संतोष से जीते है। वे मूरख फिर भी धर्म पुरोधाओं की बात मानते है। .... यह वह जूठन होती है। जिसे यदि वे नहीं ले जाते तो वह कूड़े पर फेंकी जाती।..... वे उस जूठन पर भी संतोष करते है। किसी को कोसते नहीं। अपने जीवन को पूर्व कर्मों का फल मानते है। वे कितने भोले है, कितने नेक!''[82] मीरा ने इन उपेक्षित लोगों की जीवन दशा सुधारने का प्रयास किया था वे जीवन का महत्व समझाते हुए उन्हें साफ सफाई से रहने एवं भगवद् चिंतन का मार्ग अनुसरण करने की प्रेरणा देती है।

मीरा का जीवन यद्यपि भक्ति की साधना में लीन रहता है तथापि वह मानव समाज की घृणा एवं बुराइयों को नष्ट करना मानव धर्म समझती है। डॉ.भटनागर ने मीरा के विचारों में चेतना का उग्र रूप भी दिखाया है जब मीरा समाज को उनकी बुराइयों का आइना दिखाती है वे कहती है– ललिता, समाज की सारी गंदगी वे उठाते है। समाज को वे साफ रखते है। यह कर्म तो ईश्वर का है। यह तो जमुना गंगा का है। गंगा जमुना हर जगह कहाँ  है? लेकिन ये लोग हर जगह है। खुद गंदे रहते है। गन्दगी में रहते है। चिथड़ों में लिपटे रहते है।......सबकी खरी–खोटी सुनते है, परन्तु वे फिर भी आशीष बाँटते है।''[83] डॉ.भटनागर को जब भी अवसर मिला उन्होनें दलितों की दशा एवं दिशा का चित्रण करते हुए समाज में चेतना लाने का प्रयास किया है। वे दलित विमर्श को विमर्श तक ही सीमित नहीं रखना चाहते बल्कि साथ ही उसका उन्मूलन करते हुए चलते है समाज की व्यवस्था की रूढ़ हो चुकी मान्यताओं की दुर्गंध से वे समाज को बचाने का प्रयास करते है समाज में भाईचारा, प्रेम एवं सद्भाव की स्थापना पर समस्त मानव भेदों को समाप्त करने का लक्ष्य उपन्यासकार का रहा है।

भेद का प्रबल पक्ष यह है कि मानव की विचार शक्ति को शून्यता में प्रवेश कराने में सक्षम  है क्योंकि वह जान ही नहीं पाता कि क्या सही है, क्या गलत है जीवन की विषमता उस समय और अधिक बढ़ जाती है जब ईश्वर के द्वार पर भी इस प्रकार का भेद किया जाता है। ईश्वर को ज्ञान एवं तर्क की तुला पर तौलने का कार्य मानव करता है ईश्वर किसका है? किसका नहीं यह निर्णय भी स्वयं ही करता है? वह अपने अहंकार और घृणा से धधकते हुए मस्तिष्क में प्रेम और विवेक को दाह कर रूढान्धता का मार्ग स्वीकार कर लेता है। 'युग पुरूष अम्बेडकर' उपन्यास में ऐसे मानव भेदों का वर्णन प्रस्तुत हुआ है।

''भीमराव अम्बेडकर ने उससे कहा'' हम भी गणेश पूजन का स्वागत अभिनन्दन करते है, पुजारी जी साथ ही आपसे प्रार्थना करते है कि आप इस उत्सव का आनंद सबको लेने देगें किसी को रोकेगें नहीं।

''परन्तु यह हमारा उत्सव है।'' प्रमुख पुजारी ने तेज स्वर में कहा'' हम इस उत्सव में हर एक को सम्मिलित नहीं होने देगें।''

''परन्तु अपने धर्म वालों को तो ..........वह तो स्वाभाविक भी है।''भीमराव अम्बेडकर ने कहा'' यह हिन्दू धर्म का उत्सव है। और सार्वकालिक उत्सव है... फिर...।''

अछूतों को इसमें सम्मिलित नहीं होने देगे। यह हम पहले ही घोषणा कर चुके है।

फिर यह वर्ग जबरदस्ती क्यों करना चाहता है।''

''क्योंकि वे भी हिन्दू है। आप सबकी तरह और गणेश जी उनके भी देवता है।''

भीमराव अम्बेडकर ने अत्यन्त सहज ढंग से कहा।

''वे अपना अलग मनाएँ।''

''क्यों अलग मनाएँ।'' भीमराव अम्बेडकर ने नम्रता से प्रश्न किया, '' हिन्दू अपने उत्सवों में सम्मिलित नहीं हो सकेगे तो फिर वे हिन्दू कैसै?''[84]

अम्बेडकर सभी लोगों को हिन्दू होने पर अधिकार भी समान होने का भाव प्रदर्शित करना चाहते थे। वे मानते थे ईश्वर के द्वार पर मानव को पाबंद करना गलत है अतः उन्होंने अपने जीवन के ऐसे अवसरों पर दलितों के धार्मिक शोषण के विरूद्ध युद्ध का संकल्प आजीवन निभाया था।

बाबा साहेब अम्बेडकर ने जीवन भर अछूत जाति के अधिकारों के लिए संघर्ष किया वे अनुसंधान रत रहे कि कब, कैसे, क्यों एवं किस तरह सब बदल गया था? क्यों अछूतों के अधिकारों का हरण कर लिया गया था? इन प्रश्नों की उधेड़ बुन में वे निरंतर अपने मानसिक प्रश्नों का समाधान ढूँढने का प्रयास करते थे। डॉ. भटनागर ने अम्बेडकर की इस मानसिक अवस्था का अनुभव किया है तथा कल्पना के मिश्रण से सार्वकालिक सत्य को प्रस्तुत किया है जो कहीं न कहीं उस घनघोर पीड़ा का साक्षी है जो अछूतों को भोगनी पड़ी थी।

उपन्यासकार ने चिंतन को आकार देने का पूर्ण प्रयास किया है जीवन की सफलता व असफलता के भँवर से निकालकर मानवतावादी स्वरूप प्रदान करने का प्रयास किया है डॉ. भटनागर लगातार अम्बेडकर के चिंतन के साथ आत्म साक्षात्कार करते रहे है और उस एक–एक पल का बोध आत्मसात करते रहे जिसे उस समय के दलितों ने हर पल भोगा था उपन्यासकार का लक्ष्य समाज की व्यवस्था का बनाए रखना है परन्तु आवश्यक तथ्यों का

प्रकाशन भी आवश्यक है। ऐसे समय में जब लेखक के समक्ष यह दुविधा आती है तो वह कल्पनागत भावों की सत्यता का परीक्षण इतिहास के प्रदत्त साक्ष्यों के साथ करता है।

डॉ. भटनागर ने दलितों की पीड़ा, बैचेनी एवं छटपटाहट का अनुभव किया एवं उसे अम्बेडकर के विचारों के माध्यम से शब्दबद्ध करने का स्तुत्य प्रयास भी किया है। अम्बेडकर ने जीवन की लोकतांत्रिक शैली में विश्वास किया है वे मानव को बराबर मानने का संकल्प लिए हुए है। वे कहते है–''मित्रों यह मत भूलों कि हम अपने लोगों के मानसतंत्र का कायाकल्प करने की दिशा में आगे बढ़ रहे है और हमें उन लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए भी तैयार करना है अन्यथा कोई राजनीतिक षडयंत्र आज नहीं तो कल अपने व्यक्तित्व के छलावे में लेकर इस उमंगित जोशीली और कुछ कर गुजरने की तमन्ना वाली भीड़ को सदा के लिए अपना गुलाम बनाकर सोने के पिंजरे में बंद कर सकता है।....... तब क्या होगा इस स्वप्नाकांक्षी दलित भीड़ का कुएँ से निकलकर खाई में गिरेगी। उनको फिर से नवीन शोषण चक्र से गुजरते हुए अपने न होने की इसी मानसिकता से जुड़ना पडेगा। जिसके विरूद्व आज यह भीड़ इकठ्ठी हुई है। लोकतंत्र परचम फहराने या नारे लगाने से नहीं बल्कि उसकी टोली के मार्यदित उन्मुक्त व्यवहार कर्म को स्थापित करने से अनुभूत होगा जिसमें व्यक्ति की चेतना सामाजिक धर्म संविदा से जुड़कर एकता बराबरी स्वतंत्र और पारस्परिक एहसास को उत्तरोत्तर बढ़ाती जाएगी।..... यदि यह नहीं हुआ तो लोकतंत्र चेतना को अपनी मुठ्ठी में कर लेगा और परतंत्र मूलक अनुभूतियों की छाप छायाएँ मँडराने लगेगी। इसलिए हमें नई राह बनानी है। खोजनी है और जन मन को सही दिशा में ले जाने के लिए उसकी निरंतर और त्वरा गति से चेष्टा करनी है।''[85]

डॉ. भटनागर ने दलित विमर्श में दलितों को चेतना प्रदान की और उनके लक्ष्य के प्रति निष्ठा भी व्यक्त की है जीवन की विषमता में समता एवं समानता के लक्ष्य को निकट लाने का प्रयास किया इनके द्वारा प्रस्तुत दलित विमर्श एक ऐसी सार्वकालिक चेतना का प्रस्तुतिकरण है जो हर काल , हर युग में संभवतः किसी न किसी रूप में उपस्थित रही है दलितों का संघर्ष आज भी जारी है यद्यपि परिस्थिति परिवर्तन की ओर अग्रसर है फिर भी इनका संघर्ष और विमर्श सार्वकालिक चेतना की ज्योति से प्रज्ज्वलित बना हुआ है।

♦ ♦ ♦ ♦

## सन्दर्भ सूची


1. मानव तथा मानवतावाद–डॉ. ब्रजभूषण शर्मा श्रीकला प्रकाशन दिल्ली सं. 1996, पृ. 90
2. Variaties of Human Values-Charles Marries यूनिवर्सल लाइब्रेरी, पृ. 11
3. संत और सूफी साहित्य–पं. परशुराम चतुर्वेदी, पृ. 355
4. भारत में साम्प्रदायिकता : इतिहास और अनुभव–असगर अली अंजीनियर, इतिहास बोध (इलाहाबाद) प्रकाशन सं. 2004, पृ. 121
5. संत और सूफी साहित्य–पं. परशुराम चतुर्वेदी, पृ. 455
6. गौरांग– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 177
7. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ.14
8. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ.14–15
9. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ.17
10. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ.17
11. गौरांग– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 83
12. गौरांग – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 147
13. गौरांग – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012) पृ. 82
14. गौरांग – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 83
15. गौरांग – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 225
16. गौरांग – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 285
17. एक अंतहीन युद्व– राजेन्द्र मोाहन भटनागर अनन्य प्रकाशन (2018), पृ. 154
18. सूर्य वंश का प्रताप – राजेन्द्र मोाहन भटनागर अनुराग प्रकाशन (2005), पृ. 41
19. सूर्य वंश का प्रताप – राजेन्द्र मोाहन भटनागर अनुराग प्रकाशन (2005), पृ. 91
20. सूर्य वंश का प्रताप – राजेन्द्र मोाहन भटनागर अनुराग प्रकाशन (2005), पृ. 91
21. सूर्य वंश का प्रताप – राजेन्द्र मोाहन भटनागर अनुराग प्रकाशन (2005), पृ. 92
22. भारतीय साहित्य में श्रृंगार रस – डॉ. गणपति चंद्र गुप्त, पृ. 42
23. गौरांग–डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर राजपाल एण्ड संस (2009), पृ. 112

24. गौरांग–डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर राजपाल एण्ड संस (2009), पृ. 112–113

25. हिन्दी कहानी साहित्य में प्रेम एवं सौन्दर्य तत्व का निरूपण–डॉ. देव कपूरिया, पृ. 22

26. 'न गोपी न राधा'– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर प्रभात प्रकाशन दिल्ली (2008), पृ. 79

27. युग पुरूष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ. 39–40

28. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बंक कम्पनी (2008), पृ. 84

29. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बंक कम्पनी (2008), पृ. 112

30. 'न गोपी न राधा'– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर प्रभात प्रकाशन दिल्ली (2008), पृ. 305

31. अमृतघट– राजेन्द्र मोहन भटनागर, इरावदी प्रकाशन दिल्ली (2008), पृ. 30–31

32. दिल्ली चलो – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 48–49

33. एक अंतहीन युद्ध – राजेन्द्र मोहन भटनागर, अनन्य प्रकाशन (2018), पृ. 158

34. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ.63

35. गौरांग– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2009), पृ. 119

36. नीले घोड़े का सवार– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ.–33–34

37. अमृतघट– राजेन्द्र मोहन भटनागर, इरावदी प्रकाशन दिल्ली, (2000)

38. जनपद वर्ष अंक 01/01 हजारी प्रसाद द्विवेद्वी, पृ. 65

39. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास और ग्राम चेतना–डॉ. ज्ञान चंद गुप्त अभिनव प्रकाशन दिल्ली 1989, पृ. 23

40. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में ग्राम जीवन और संस्कृति– डॉ. राजेन्द्र कुमार परिमल पब्लिकेशन, पृ. 118

41. सूर्य वंश का प्रताप – राजेन्द्र मोहन भटनागर अनुराग प्रकाशन (2005), पृ. 37

42. सूर्य वंश का प्रताप – राजेन्द्र मोहन भटनागर अनुराग प्रकाशन (2005), पृ. 38

43. नीले घोड़े का सवार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ. 66

44. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ. 185

45. नीले घोड़े का सवार– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स, पृ. 54

46. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ. 210

47. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ. 211

48. भारतीय ग्रामीण समाज शास्त्र–प्रो. एन.एल. गुप्ता एवं डॉ. डी.डी. शर्मा, पृ. 54

49. नयी कहानी में आधुनिकता बोध–डॉ. साधना शाह पुस्तक संस्थान कानपुर 1978, पृ. 104

50. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी लेखिकाओं के उपन्यासों में अलगाव–डॉ. नीलम गोयल, पृ. 62–63

51. कुली बैरिस्टर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2008), पृ. 11

52. कुली बैरिस्टर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2008), पृ. 15

53. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ.

54. अंतिम सत्याग्रही –राजेन्द्र मोहन भटनागर, अरू पब्लिकेशन प्रा.लि. (2008), पृ. 52

55. अंतिम सत्याग्रही –राजेन्द्र मोहन भटनागर, अरू पब्लिकेशन प्रा.लि. (2008) पृ. 53

56. कुली बैरिस्टर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2008), पृ. 47

57. कुली बैरिस्टर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2008), पृ. 49

58. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 218

59. अर्न्तयात्रा – ( भाग 2) राजेन्द्र मोहन भटनागर, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृ. 281

60. अर्न्तयात्रा – ( भाग 2) राजेन्द्र मोहन भटनागर, हिन्द पॉकेट बुक्स पृ. 295

61. अर्न्तयात्रा – ( भाग 2) राजेन्द्र मोहन भटनागर, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृ. 299

62. गौरांग – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2009), पृ. 238

63. गौरांग – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2009), पृ. 38–39

64. न गोपी न राधा'– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर प्रभात प्रकाशन दिल्ली (2008), पृ. 205

65. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी (2008), पृ. 51

66. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी (2008), पृ. 52

67. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी (2008), पृ. 52

68. जोगिन– प्रसतावना डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी (2008), पृ. 01

69. युग पुरूष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ. 111

70. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ. 26

71. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ. 26

72. प्रतिनिधि भारतीय राजनीतिक विचारक–डॉ. पुखराज जैन साहित्य भवन पब्लिकेशन, पृ. 198

73. प्रतिनिधि भारतीय राजनीतिक विचारक–डॉ. पुखराज जैन साहित्य भवन पब्लिकेशन, पृ. 205

74. युग पुरुष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ. 26–27

75. युग पुरूष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ. 44

76. युग पुरुष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ. 81

77. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर 105, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 105

78. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर 105, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 105

79. गौरांग–राजेन्द्र मोहन भटनागर राजपाल एण्ड संस (2009), पृ.–282

80. गौरांग–राजेन्द्र मोहन भटनागर राजपाल एण्ड संस (2009), पृ.–284

81. जोगिन–डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर अजमेरा बुक कम्पनी, पृ.–102

82. जोगिन–डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी, पृ.–106

83. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी (2008), पृ.–106

84. युग पुरुष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ.–137

85. युग पुरुष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ.–149

# पंचम – अध्याय

# पंचम अध्याय

# डॉ. भटनागर के उपन्यास : मूल्य चिंतन और शिल्पगत सौन्दर्य

## (क) मानवीय मूल्य : चिंतन

डॉ. भटनागर के उपन्यासों में ऐतिहासिक महापुरुषों के जीवन संघर्ष की सार्वकालिक चेतना को आधार बनाया है। साहित्यकार का प्रयास रहता है कि वह अपने उपन्यास में समस्त भावों की व्याख्या कर सके इसलिए वह मानव के चिंतन को व्यक्त करने का प्रयास करता है। मानव का चिंतन समाज के परिप्रेक्ष्य में होता है उसकी सोच के साथ कल्पनागत भावों का समावेश साहित्यकार बड़ी सावधानी के साथ करता है विषय इतिहास से जुड़ा होने पर यह जिम्मेदारी और अधिक बढ़ जाती है। उपन्यास साहित्य में मानवीय मूल्यों का चिंतन विविध पक्षों एवं संदर्भों में किया जाता है साहित्य का टिकाव ही चिंतन पर है क्योंकि जब भावों का धारा में प्रवाहित होता हुआ मानव जीवन संदर्भों के थपेड़े सहता हुआ यथार्थ के धरातल पर पहुँचता है तो मानवीय मूल्यों से सम्पृक्ति स्पष्ट परिलक्षित होने लगती है। डॉ. भटनागर ने उपन्यासों में मानवीय मूल्यों के पक्ष एवं विपक्ष के संदर्भों का सटीक विश्लेषण करते हुए कारणों, प्रभाव, परिणाम एवं समाधान पर प्रकाश डाला है।

डॉ. भटनागर के उपन्यास ऐतिहासिक बोध से सम्पन्न और सम्बद्ध है मानव के महामानव बनने के संधर्ष की महान गाथा को शब्दबद्ध किया है। इतिहास के साथ कल्पनागत भावों का सम्मिश्रण केवल विषय के स्पष्टीकरण के लिए किया है। यद्यपि इनके उपन्यासों के विषय एवं पात्र इतिहास से सम्पृक्त है तथापि इनके प्रयासों ने मानवीय मूल्यों का चिंतन सर्वथा नवीन, प्रासंगिक एवं सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में किया है।

डॉ. भटनागर मानवीय मूल्यों का चिंतन करते हुए अपने सृजनशीलता की परिपक्वता को प्रमाणित ही नहीं करते अपितु उनकी समस्त शक्ति एवं ज्ञान सार्वकालिक चेतना के संदर्भों की कुशल व्याख्या भी करते है डॉ. भटनागर ने जिन मूल्यों की सार्वकालिक व्याख्या की है वे मानव के नैतिकता एवं उसके स्वभाव का मूल्यांकन मानवीय गुणों के आधार पर करते है। यह गुण कहाँ से, कैसे प्राप्त करता है इसका सम्बन्ध इतिहास की सार्वकालिक चेतना ही है। अतः इन्होंने मानव के मूल्यों के चिंतन में मानव के संघर्ष को सम्बद्ध किया है। डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में स्वतंत्रता, सत्य, अहिंसा, धर्म, दया, सहिष्णुता आदि मूल्यों का चिंतन मानव के जीवन संदर्भ में प्रस्तुत किया है इनका लेखन मानव के जीवन के विभिन्न संदर्भों की सार्वकालिक व्याख्या को प्रस्तुत करता है स्वतंत्रता का संघर्ष हर युग, हर काल में बना हुआ है यह प्रारम्भ से ही मानव

मन के मूल्यों से संरक्षण पाता रहा है इनके उपन्यासों में मानवीय मूल्यों के चिंतन में स्वतंत्रता के मूल्य का सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में वर्णन किया गया है। ''वैयक्तिक मूल्यों में सर्वाधिक महत्व स्वतन्त्रता के मूल्य का है। प्रत्येक व्यक्ति की इच्छा होती है कि वो बिना रोक टोक, नियमबद्धता के स्वतंत्र होकर जीवन यापन करे।''[1]

इतिहास वर्तमान को प्रेरणा देता रहा है यह एक सार्वकालिक महत्व का बिन्दु है इसे किसी भी परिस्थिति में नकारा नहीं जा सकता है इतिहास की घटनाएँ, क्रिया कलाप एवं चिंतन को चेतना में परिवर्तित करने की क्षमता प्रदान करता है। मानव अपने जन्म से स्वतंत्रता का भाव लेकर उपस्थित हुआ क्षुद्र स्वार्थों की पूर्ति हेतु मानव का मानव को बलात् बंधक बनाकर उसकी स्वतंत्रता का हरण करना कायरता है डॉ भटनागर ने हर उपन्यास में इस सार्वकालिक मूल्य को चेतना प्रदान की है इनका प्रत्येक पात्र इस मूल्य का किसी न किसी रुप में चिंतन अवश्य करता है वे मानव की स्वतंत्रता के साथ समाज के व्यवहार को भी प्रस्तुत करते हैं मानव स्वतंत्र होने के साथ मानवीय कर्तव्यों एवं दायित्वों से जुड़ा हुआ है यह जुड़ाव बंधन नहीं अपितु संघर्ष की प्रेरणा शक्ति है जो मानव हितों की लक्ष्य साधना के लिए अत्यंत आवश्यक है।

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर के उपन्यासों समस्त मानवीय मूल्यों का चिंतन विविध प्रसंगों के माध्यम से हुआ है मानव के मूल्यों में सर्वप्रथम हमारे समक्ष धर्म का प्रसंग उपस्थित होता है धर्म का प्रथम लक्ष्य मानव को सत्कर्म की प्रेरणा देता है। उसके संस्कार में सभ्यता का समन्वय करता है। ''धर्म से मानव सत्कार्यों की ओर बढ़ता है और मानवता विश्व बन्धुत्व की भावना जैसे गुणों का प्रादुर्भाव मानव में धर्म से ही होता है, जिससे मनुष्य की रक्षा हो व उन्नति हो वही धर्म है, धर्म एक कानून के समान है जो मानवता की रक्षा करते हुए, मनुष्य का पथ प्रदर्शक है।''[2] धर्म का आधार हमारे यहाँ मानवता से लिया जाता है हमारे ऋषि मुनियों ने धर्म से जुड़ी हुई विभिन्न परम्पराओं और मान्यताओं का प्रचलन समाज में मूल्यों के विकास के लिए किया मानव प्रेम, दया, सहिष्णुता, अहिंसा जैसे मूल्यों का चिंतन हमारी गौरवशाली ऐतिहासिक परम्परा से ही प्राप्त होता है पूरे विश्व को परिवार मानने की शक्ति हमें हमारी प्राचीन विरासत से प्राप्त होती है हम समस्त संसार के प्राणियों के प्रति प्रेम एवं सहिष्णुता का भाव रखते है हम सदैव ऐसे मूल्यों के समर्थक है जिन्होंने विश्व शांति और सद्भाव में सहयोग किया। 'अतिथि देवो भवः' की महान् परम्परा का पालन करने वाले देश को इस परम्परा का मूल्य 200 वर्षो की दासता से चुकाना पड़ा हम लोग मानव के विकास के समर्थक एवं सहयोगी है यही कारण है कि पूरे विश्व में आज भारतीय अपना अस्तित्व कायम रखे हुए है समस्त विश्व में जहाँ हमारी सभ्यता एवं संस्कार को लोगों सराहा वहीं भारत की भूमि से भारतीयों ने 'सर्वे भवन्तु सुखिन सर्वे सन्तु निरामया' का संदेश पूरे विश्व भर में फैलाया।

हमारे धर्म एवं अध्यात्म का सम्पूर्ण ज्ञान आज भी विज्ञान एवं तकनीक की प्रेरणा दे रहा है सम्पूर्ण विश्व की धर्म संसद में स्वामी विवेकानंद का भाषण हमारे ज्ञान, विज्ञान, सभ्यता, संस्कार, धर्म, अध्यात्म, वेदान्त, सिद्धान्तों की पहचान है। 'अमेरिका के भाई और बहनों' का सम्बोधन सम्पूर्ण विश्व में हमारे मानवीय मूल्यों का द्योतक है भारतीय सदैव मानवीय मूल्यों का चिंतक एवं रक्षक रहा है।

डॉ. भटनागर के उपन्यासों में राष्ट्रीय एकता के संदर्भ में भी मानवीय मूल्यों का चिंतन व्यापक रुप से हुआ है भारत में सदैव अपने राष्ट्र के प्रति दायित्व एवं कर्तव्यों की भावना का विकास मानवीय मूल्यों की स्थापना करता है हमारा देश शांति एवं सद्भाव का प्रचारक है हमारे वैभव एवं सम्पदा ने सदैव विदेशी आक्रांताओं को आकर्षित किया अतः भारत पर लगातार बाह्य आक्रमण होते रहे। हमारे देश की संस्कृति को इन विदेशी आक्रमणकारियों ने नष्ट भ्रष्ट करने का प्रयास किया परन्तु ईश्वर की कृपा से हमें हर युग में हमारा पथ प्रदर्शक मिल ही गया डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में ऐसे पथ प्रदर्शक महापुरुषों की जीवन कथा को प्रस्तुत किया है जीवन निरंतरता के प्रवाह में मानव विविध परिस्थितियों में जूझता है संघर्ष करता है संघर्ष के सफर का मूल्यांकन करते हुए डॉ. भटनागर ने जिन मानवीय मूल्यों की सम्पृक्ति अपने उपन्यासों मे दी है वह आज भी सार्वकालिक चेतना की अभिव्यक्ति को प्रस्तुत करते है। संघर्ष के दौरान इन्हीं मानवीय मूल्यों के चिंतन ने उसको शक्ति प्रदान की मानव हित का संकल्प लिए महानायकों ने मानवीयता के हर मूल्य को जीवन्त बनाए रखने का प्रयास किया। युद्ध जैसे गम्भीर मसले पर भी इनका नैतिक चरित्र नहीं डगमगाया था।

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने ऐतिहासिक महापुरुषों के जीवन चरित्र से मानवीय मूल्यों के प्रवाह को समेटने का प्रयास अपने उपन्यासों में किया है इन्होंने सर्वाधिक महत्व मूल्यों को दिया है क्योंकि बिना मूल्यों के जीवन अधूरा है वे जीवन को उनके प्रेरणास्पद प्रसंगों से जोड़ते है जीवन के संदर्भ में मानव मूल्यों का चिंतन डॉ. भटनागर के उपन्यासों की विशेषता है। 'गौरांग' उपन्यास में मानवीय मूल्यों का चिंतन उपन्यासकार ने अवसरों की सुलभता के साथ किया है 'मित्रता' एक ऐसा मानव मूल्य जिसकी प्रगाढ़ता ने प्राणियों के हर भेद को मिटाने में सक्षमता प्रदान की है। भेद की दृष्टि पर पड़ी हुई हर काई को हटा दिया चाहे वो जाति, धर्म, वैभव या अन्य किसी प्रकार की हैं। 'मित्रता' का मूल्य चिंतन हमारे युगों की परम्परा में श्रीकृष्ण और सुदामा के प्रसंग से प्रचलित रहा है और हर भेद को निर्मूल साबित करता है। डॉ. भटनागर ने भी अपने चिंतन में इस मूल्य को स्थान दिया है। 'गौरांग' उपन्यास में गौरांग अपने मित्र रघुनाथ के लिए अपने न्याय शास्त्र ग्रंथ को नष्ट कर दिया है। ''रघु तुम मन छोटा न करो। मेरे लिए तुम्हारी मित्रता बहुमूल्य है। ग्रंथों का क्या, वे धरती पर जन्म लेते है। आकाश में रमते है। हवा में तैरते है और स्मृतियों में समा जाते है।''[3]

मित्रता जीवन की अमूल्य निधि है जो मानव को मानव से जोड़ने की कड़ी है मानव में मानवीयता के गुणों में वृद्धि करने और परिस्थितियों में सहयोग की परम्परा है उपन्यास में स्थान स्थान पर मित्रता के मूल्यों की व्याख्या डॉ. भटनागर की विशेषता है मानव के लिए मित्रता का स्थान हार्दिक है जो समर्पण और त्याग की व्याख्या करता है जो समर्पण, त्याग, प्रेम, सहानुभूति जैसे सद्गुणों का मानव में विकास करता है ''सूर्यवंश का प्रताप'' उपन्यास में घोड़े चेतक और नाटक के माध्यम से मित्रता को भाव का प्रदर्शन सराहनीय है।

''उसने मद्धिम स्वर में कहा– चेतक, तुम चाहते हो कि मैं बिना किसी पश्चाताप के जीवन की इस अंतिम बेला का स्वागत कर सकूं तो तुम मुझे वचन दो। तुमसे वचन पाकर मेरा दुख जाता रहेगा। बोलो , दे सकोगे वचन?''

वचन तो क्या, मैं अपनी जान भी दे सकता हूँ। तुम बोलो, नाटक ! मैं वचन देता हूँ कि अपने प्राणों को भी दाँव पर लगाकर उसका पालन करुँगा। चेतक ने तड़प कर कहा। सोचा, खुदा कितना महरबान है कि वह दोस्त होने का हक अदा कर सकेगा। उसने उसे एक अवसर प्रदान किया। वह अपने जीवन की इस सार्थकता पर बारम्बार खुदा का शुक्रिया अदा करने लगा।''[4] डॉ. भटनागर में चेतक और नाटक के मूक वार्तालाप से मित्रता के भाव का सटीक मूल्यांकन किया है। 'मित्रता' मानव मूल्यों में सम्मानजनक भाव है जो अवसर पर परीक्षा पाकर परिष्कृत होता है विपदाकाल में ढाल की भाँति खड़ा रहता है जीवन का सुरक्षा का कवच है संवेदना का माध्यम है। 'मित्रता' की सार्वकालिक चेतना इस रुप सदैव बनी रहेगी की यह जिन्दगी के साथ भी और जिन्दगी के बाद भी उपस्थित रहती है युगों से चली आ रही यह परम्परा आज भी सार्वकालिक है।

मानव का मानव के प्रति जो कर्तव्य है उसमें श्रद्धा, प्रेम एवं सेवा का भाव उपस्थित होता है जो मानव को श्रेष्ठ बनाता है सेवा एक ऐसा मानव मूल्य है जिससे मानव हृदय पर अधिकार करना संभव है सेवा व्यक्ति के अंदर अपनापन का सुखद अहसास जगाती है मानव के व्यवहार में सौम्यता, सद्भाव और प्रेम को प्रकट करती है। सेवा के बल पर मानव समाज में समता की स्थापना करने में सहयोग करता है डॉ. भटनागर ने मानव के इस नैतिक मूल्य का प्रस्तुतिकरण प्रेम तत्व के साथ जोड़ते हुए किया है वे अपने उपन्यासों में सेवा के विविध रुपों का प्रस्तुतिकरण करते हुए मानव को सामाजिक दायित्वों का बोध कराते है 'सूर्यवंश का प्रताप' उपन्यास में काकी के माध्यम सेवा को मानव धर्म के रुप में उपस्थित करते है–''जिसका कोई नहीं उसकी काकी है। न धर्म करती, न मंदिर जाती और न पूजा पाठ करती है। परन्तु आस–पास कोई बीमार है। उसकी देखरेख करने वाला, कोई नहीं है तो काकी वहाँ जाकर जम जाती है। और जब तक वह ठीक नहीं हो जाता तब तक वहीं जमी रहती।''[5] उपन्यासकार ने सेवा को स्व प्रेम के परिणाम के रुप में प्राप्त होने वाला प्रसाद माना है जो मानव को मानव में आत्मा परमात्मा के सात्विक

व्यवहार को दर्शाता है। मीरा एक स्थान पर कहती है 'अधिकार माँगने से नहीं मिलता, वह स्नेह से मिलता है। स्वतः ही मिलता है। स्नेह सेवा का प्रतिफल है।.........मैंने कभी किसी से कुछ नहीं माँगा....... न माँगूंगी।'[6] सेवा मानव में स्नेह का स्त्रोत बनकर अनवरत बहता रहता है वह कभी भी इस सुख से वंचित नहीं होना चाहता है सेवा से अधिकार स्वतः मिल जाता है यह मानसिक विकारों से भी मुक्ति प्रदान करता है मन की संतुष्टि प्रदान करता है। डॉ. भटनागर ने मीरा के बीमार होने पर ललिता के द्वारा की गई सेवा का भावात्मक चिंतन करते हुए इसमें सुख का बोध उपस्थित किया है।

– ''ताप कम हुआ तो वह जबरदस्ती उसका सिर दबाने लगती । मीरा कहती

''ललिता,यह नहीं।''

''क्यों नहीं?''

''कहा नहीं कि नहीं।''

''इससे सिर दरद बढ़ता है क्या,दीदी?''

''हाँ'' मीरा कहती है।

''मेरा सुख चाहती हो न, दीदी।''

कुछ देर बाद मीरा धीमें से कहती,''नहीं'' बिल्कुल नहीं।''

''सच कहती हो,दीदी।''

''तो क्या मैं झूठ बोलती हूँ?''

मीरा कुछ तेज स्वर में कहती।

''मुझे सुखी हो लेने दो,दीदी।'' यह कहते हुए माथा दबाती रहती,

''सच दीदी, मुझे इससे बहुत सुख मिलता है। यह मेरा सुख है, दीदी। मुझे इस सुख से कभी वंचित मत करना, दीदी। यह मेरी हाथ जोड़कर विनती है।''[7] उपन्यासकार ने सेवा में आत्मसंतुष्टि के भाव को उपस्थित कर मौलिक चिंतन की सार्वकालिक चेतना को संदर्भित किया है। डॉ.भटनागर के उपन्यासों का विषय ऐतिहासिक महापुरुषों के जीवन संदर्भ पर आधारित है इनके इतिहास चिंतन का विषय मानवतावाद के लक्ष्य को स्पष्ट करना है। उपन्यासकार ने यहाँ साहित्य के माध्यम से उन मूल्यों का चिंतन किया है। जो मानव को मानव बनाने का प्रयास करते है।

डॉ. भटनागर ने 'एक अंतहीन युद्ध' उपन्यास में मानवतावाद का मंथन किया है वह युद्ध जैसे गम्भीर विषय के साथ मानवीय मूल्यों की सम्पृक्ता को प्रस्तुत करते है। ''युद्ध में हार जीत

का उतना महत्व नहीं, जितना युद्ध के पीछे निहित उद्‌देश्यों का है। युद्ध कोई जीते, कोई हारे उससे कोई फर्क नहीं पडता है। युद्ध में जीत उसी की हो रही है जो मानवता का रक्षक है। युद्ध की भौतिक हार जीत का सामरिक व तात्कालिक महत्व हो सकता है, परन्तु उसका स्थायी तथा शाश्वत महत्व नहीं हो सकता है।"[8] डॉ. भटनागर ने युद्ध की जय पराजय से परे एक ऐसे मूल्य से जोड़ा है जो मानवतावाद की प्रतिष्ठा करता है साथ ही युद्ध के विषय की सार्वकालिक चेतना को प्रासंगिक किया है जिसमें युद्ध को सत्य असत्य की परम्परा के साथ प्रस्तुत किया है। डॉ. भटनागर युद्ध के माध्यम से वे उन मानवीय मूल्यों का चिंतन व्यक्त करते है जो मानव सत्ता प्राप्ति के संघर्ष में मानव भूल चुका है।

सत्य के पक्षधर मनुष्य को मृत्यु का भय भी अपने लक्ष्य से नहीं भटका सकता है वह सत्य और मानवता की प्रतिष्ठा के लिए किये जा रहे यज्ञ में स्वयं प्राणों की आहुति देने को तत्पर रहता है। "जीवन और मृत्यु क्रम कोई तोड़ नहीं सकता। जो आया है लाख प्रयत्न कर ले, लेकिन उसे इस संसार से जाना भी अवश्य पड़ेगा। मनुष्य कैसे लिया और उसने अंतिम साँस तक क्या किया हर बार इसी का मूल्यांकन होता है। हम लोग मृत्यु का श्रृंगार करना जानते है। उससे दो–दो हाथ भी कर सकते है। हमारे ऊपर किसी शक्ति का दबाब नहीं है और न हम किसी की पराधीनता स्वीकार कर सकते है। हम हवा, पानी, अग्नि, आकाश आदि की तरह से स्वतंत्र पैदा हुए है। स्वाधीनता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। जो मानव जाति की स्वाधीनता का शत्रु है वह मानव कहलाने का अधिकारी नहीं है।"[9] साहित्यकार ने मानव मूल्यों के लिए किए गये युद्ध की सार्थकता पर विचार किया है चिंतन में जो प्रश्न मस्तिष्क में घेरा डालते है पाठक को उसका उत्तर देना डॉ. भटनागर के साहित्य की विशेषता है। इन्होंने मानव के मूल्यों का चिंतन ही नहीं किया अपितु मस्तिष्क में उठने वाले प्रश्नों के ज्वार को भी शांत करने का सार्थक प्रयास किया है।

डॉ. भटनागर ने 'अन्तर्यात्रा' उपन्यास में राष्ट्र की एकता और उसकी अस्मिता की रक्षा पर विचार महर्षि अरविन्द के माध्यम से प्रस्तुत किए है। वह भारत के सुप्त वर्तमान को भविष्य में जागृत देखना चाहते है। वे कहते है।–" हमारा अतीत महान था, है और सदा रहेगा, जिससे हमें निरंतर नवजीवन शक्ति की अनुभूति होती रहेगी। यदि हमारे पास मौलिक और ऊर्जावान अतीत नहीं होता तो हमारी भी वहीं स्थिति होती जो ई. पूर्व सातवीं सदी में एसारहड्‌डान, असीरिया राजा और कोसराज.........सम्पीनद, फारस का अंतिम शासक जिसने सातवीं ईस्वी तक राज्य किया था की हुई थी.......... हम भी उनकी तरह यूनान और सीजरों के रोम के साथ उन कब्रों में पड़े पड़े लंबा समय गुजार चुके होते, जहाँ अनेक मृत राष्ट्र पड़े हुए है। अब हमें तो इतना करना है कि हमने जिस बौद्धिक स्वतंत्रता और सोच को खो दिया है। उसे कैसे वापस लाए? कैसे भारतीय युवक को विचार करना सिखाए जाए? जब मौलिक विचारकों का अभाव होने लगता है।

तब देश राजनीतिक आजादी का लाभ लेते हुए भी परतंत्रता की यातना से ग्रस्त होता है। यदि किसी राष्ट्र के पास ऐसी स्वतः सम्पूर्ण अंतनिर्हित ऊर्जा और आध्यात्मिक शक्ति सौन्द्रर्य का अकाल पड़ता जाएगा। तो उसे अंतः बहिर ऊर्जा का आध्यात्मिक और प्राणवान् संबोध शनैः शनैः मिलना बंद होने लगेगा। और वह राष्ट्र स्वतः पराड्मुख होने लगेगा। अभी तक भारत के साथ ऐसा नहीं है। उसे सुप्त पड़ी दिग्भ्रमित युवा पीढ़ी को विचार के क्षेत्र में मौलिक और अंतर्दृष्टि युक्त बनाने का प्रयत्न होना चाहिए।''[10]

डॉ. भटनागर का चिंतन मानव के अस्तित्व को प्रकट करता है उनके जीवन मूल्यों में राष्ट्र की स्थापना एकता और उसकी स्वतंत्रता का प्रतिनिधित्व करता है जीवन मूल्यों में राष्ट्र को सर्वाधिक महत्व दिया है मुक्ति मानव का जन्म सिद्ध अधिकार है उससे इस अधिकार को कोई आसुरी शक्ति नहीं छीन सकती है। अतः उपन्यासकार में अपने मानवीय मूल्यों में सर्वप्रमुखता दी है स्वतंत्रता एवं राष्ट्र निर्माण के मूल्य मानवतावाद के समर्थक है स्वतंत्रता के प्रति मोह भारत के विचारकों के चिंतन में प्रकट होता है। मानव समुदाय को पराधीनता से मुक्ति दिलाने का संकल्प इनकी चेतना का केन्द्र रहा है 'सूर्यवंश का प्रताप' उपन्यास महाराणा प्रताप के जीवन संघर्ष की व्याख्या करता है उनके स्वतंत्रता सम्बन्धी मूल्यों की सार्वकालिक चेतना को प्रकट करता है।

''जानते हो, बहादुर इंसान कब बुजदिल और निकम्मा सिद्ध होता है?

उसने तनिक सोचकर कहा कब? प्रताप ने उसके चेहरे पर उड़ती हुई दृष्टि डालते हुए कहा– जब वह गलत आदमियों के इशारे पर काम करता है। और स्वयं रेहन रख देता है। अपनी जिंदगी तब?

''तब?

हाँ, तब। वह भूल जाता है कि वह स्वतंत्र पैदा हुआ है। आजादी हर व्यक्ति का जन्म सिद्ध अधिकार है उसे खोकर उसे इंसान, इंसान नहीं रहता है, जिसमें तो वीर पुरुष दूसरों की आजादी के लिए काम करता है। उसे कोई खरीद सकता बिका हुआ इंसान दास से भी गया बीता है।''[11] डॉ. भटनागर ने युद्ध के विषय  की हार जीत, जय पराजय की धारणा का खण्डन किया और मानवीय जीवन मूल्यों की रक्षा के लिए किया गया प्रयास माना है युद्ध अशांति का प्रतीक है विनाश की ओर मुड़ना है। परन्तु विनाश के बाद हुआ निर्माण युगों–युगों तक मानव को अन्याय, अनीति, अत्याचार के विरुद्ध विद्रोह की प्रेरणा देता रहेगा यही परम्परा एवं युग बोध है जो सार्वकालिक सत्य की व्याख्या करता है।

डॉ. भटनागर ने अपनी सूक्ष्म दृष्टि के द्वारा इस भाव को अभिव्यक्त बड़ी सरलता के साथ की गई है ''राजा साहिब शक्ति का अपरिमित बल तो रावण पर भी था, परन्तु वह हारा था, क्योंकि उसमें असीमित पशु बल था और श्रीराम में असीमित मनोबल। जीत हार तो होगी ही।

इसमें कोई नयी बात नहीं है। परन्तु युद्ध किन मूल्यों को लेकर हो रहा है। सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात तो यह है। आने वाला समय मूल्यांकन उन्हीं आधारों पर करेगा। जिन पर मानवीय जीवन टिका हुआ है। याद रहे हमेशा पशुता मानवता से पराजित हुई है। सवाल शक्ति का उतना है भी नहीं, जितना अन्याय, उचित, अनुचित, सत्य, असत्य, स्वतंत्रता पराधीनता, शोषक–शोषित, मान–अपमान और निर्भीकता और भय का है।''[12] डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने स्वतंत्रता के संघर्ष से जुड़े मानव मूल्यों का वर्णन किया है वे सब मानवतावाद की सर्वात्म प्रतिष्ठा करते है संघर्ष में मानवीय मूल्यों का चिंतन किया गया है वे मानव हृदय की गहराइयों से स्पर्श करते हैं। मानव मानव के ऊपर शासन करना चाहता है वह भूल जाता है उन मूल्यों की जो मानवीयता के पक्षधर है वह अपनी मानवीयता को नष्ट कर पाशविक मनोवृत्तियों का वरण कर लेता है और समाज को दूषित मनोवृत्तियों का कचरापात्र बना देता है। जीवन की स्वतंत्रता को परतंत्र बनाने की जिद में वह कुत्सित विचारों को सत्ता, शासन के साथ प्रयोग करने का प्रयास करता है परन्तु भारतीय दर्शन में धर्म की स्थापना में किसी न किसी नायक का नेतृत्व स्वीकार किया गया है जो हमें इन ऐतिहासिक महापुरुषों में दिखाई देता है स्वतंत्रता अमर है। परन्तु इसे परतंत्रता से कलंकित करने का कुत्सित प्रयास निरंतर दोहराया जा रहा है।

'दिल्ली चलो' उपन्यास में सुभाष बोस के अंतर्द्वन्द्व में इसकी प्रस्तुति मानवीय मूल्यों को व्यक्त करती है। ''है दुर्गा माँ, किसी देश को कभी गुलाम मत होने देना। गुलामी सबसे कठिन कठोर और क्रूर दंड है।.............यह मानवता पर कलंक है।''[13] सुभाष के विचारों में जन्में द्वन्द्व को युद्ध अहिंसा, सत्य, स्वतंत्रता के साथ सम्पृक्त कर एक नवीन सार्वकालिक चेतना रुप की प्रस्तुति की गई है युद्ध की अनिवार्यता अंतिम विकल्प है परन्तु यदि शत्रु को यही भाषा समझ आती है। इसी से निर्णय की उम्मीद है तो युद्ध अहिंसा का ही एक पक्ष है। ''इस सबसे मैं यह सोच पाया हूँ कि युद्ध की अनिवार्यता के लिए युद्ध ही चाहिए, आंदोलन, घेराव आदि नहीं। मुझे इस युग में जो मात्र अभी संभावित है, अहिंसा की ही अनुभूति हो रही है। क्योंकि यह युद्ध पाण्डव अपने अस्तित्व की स्वतंत्रता के लिए कर रहे है।.... श्री भगवान श्रीकृष्ण स्वयं सबको कुरुक्षेत्र में लाए वे क्योंकि उनके जीवन समझाने मनाने से दुर्योधन माने नहीं थे। उन्हें युद्ध चाहिए था फलतः उन्हें युद्ध ही दिया गया ।''[14]

युद्ध में अहिंसा की अनुभूति लक्ष्य की भटकाव अवस्था का उन्मूलन करता है डॉ. भटनागर भावों एवं विचारों को प्रस्तुत करने मे हर अवसर को अनूकुल सिद्ध किया है युद्ध पर मानवीय मूल्यों का चिंतन इनके साहित्य को सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्त करता है। युद्ध के परिणाम एवं प्रभाव से सभी परिचित होते है परन्तु इसकी अनिवार्यता तब आवश्यक हो जाती है जब कोई समझाइश काम नहीं करती है। 'नीले घोड़े का सवार' उपन्यास में इसे स्वतंत्रता के मूल्य के साथ प्रस्तुत करने में साहित्यकार का सार्थक प्रयास सराहनीय है। ''मित्रों, महासंकट का

समय है। साक्षात् काल सामने आ खड़ा हुआ है। यह सभा यहाँ इसलिए आमंत्रित की है ताकि वर्तमान स्थिति का जायजा लेकर निर्णय लिया जा सके।........ आप यह सब अच्छी तरह जानते है कि इस समय स्वाभिमान रक्षार्थ युद्ध की चुनौती स्वीकार करनी हैं। युद्ध का उत्तर युद्ध है।......... यह भी निश्चित है कि आक्रमणकर्ता विशाल सेना लिए निरन्तर इस ओर बढ़ता जा रहा है।...... अभी चितौड़ का घाव भरा भी नही और न हम संभल पाएँ ।.... शहंशाह अकबर ने हमें युद्ध में रौंदने का निर्णय ले लिया है। अब आप क्या चाहते है कि हम भी अन्य राजपूत राजाओं की तरह समर्पण कर दे या अपनी स्वतंत्रता और मातृभूति की रक्षार्थ युद्ध करे।''

महाराणा प्रताप ने अपनी बात बहुत संक्षिप्त में उन सबके सामने रख दी सब परस्पर विचार करने लगे।

''युद्ध का उत्तर युद्ध है।'' समवेत स्वर था

''यानी महासंहार ! अपार जनहानि।''

''हो तो हो। पर युद्ध का उत्तर युद्ध ही है। ईंट का जबाब पत्थर से देना हम जानते है।'' ग्वालियर के राजा रामशाह ने सबकी ओर से कहा।

राजा रामशाह के पुत्र शालिवाहन ने जोश के साथ अपने पितृश्री की बात का समर्थन करते हुए कहा ''शहंशाह अकबर को युद्ध की बहुत चाह है तो उन्हें युद्ध का अर्थ समझाना हमारा नैतिक दायित्व है।........... हमें आजादी प्रिय है, प्राण नहीं।''[15] डॉ.भटनागर ने मानवतावाद की प्रतिष्ठा में संघर्ष को विविध रुपों को प्रस्तुत किया है। जीवन सबसे पहली और आवश्यक शर्त स्वतंत्रता है जिसके साथ मानवीय मूल्यों की संवेदना को समझना आसान है अतः सर्वप्रथम मनुष्य का स्वतंत्र होना आवश्यक है।

## (ख) दर्शन धर्म एवं संस्कृति की अन्तर्दृष्टि

हिन्दी साहित्य की अवधारणा सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् की रही है साहित्य सत्यता को ग्रहण करने वाला मानव का कल्याण चाहने वाला, और आदर्श रुप अर्थात् समाज के समक्ष सुन्दर रुप को प्रस्तुत करने वाला होना चाहिए। अतः हमारे साहित्य की विचारधारा में जो दर्शन है वह सम्पूर्ण विश्व में जनमानस के चित्त पर गहरी छाप छोड़ता है हमारे ऋषि– मुनियों से चली आ रही परम्परा का निर्वाह आज भी भारतीय साहित्य की महत्वपूर्ण विशेषता है हमारी संस्कृति और दार्शनिक विचारों का मूल धर्म है धर्म के आधार पर हमारी भारतीय संस्कृति और उसके दार्शनिक तत्वों को सरलता से समझा जा सकता है।

धर्म, दर्शन और संस्कृति का आधार मानव हितों की लक्ष्य साधना से लिया गया है यह मानवतावाद की अवधारणा केवल भारत भूमि तक ही सीमित नहीं है अपितु सम्पूर्ण विश्व को एक

परिवार के रुप में देखती है। फलस्वरुप हमारे दार्शनिक विचारों में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना परिलक्षित होती है धर्म ने जिन मानवीय गुणों से युक्त विचारों को प्रस्तुत किया वे सब हमारे दर्शन को सदैव नवीन एवं सार्वकालिक स्वरुप प्रदान करते है। दर्शन सत्यान्वेषण का ही संदर्भ है।''[16] धर्म, दर्शन और संस्कृति की त्रिवेणी धारा भारत की विचारधारा को सम्पूर्ण विश्व में एक गुरु की भूमिका के रुप में प्रस्तुत किया है। हिन्दी शब्द कोश के अनुसार ''धर्म को ईश्वरीय श्रद्वा पूजा पाठ तथा लौकिक व सामाजिक कर्तव्यों से जोड़ा गया है।''[17] वहीं महर्षि कणाद धर्म पर लिखते है–'' जिसके द्वारा लौकिक सुख और अंतिम लक्ष्य की सिद्धि हो सके वही धर्म है।''[18]

धर्म पर हमारे भारतीय मनीषियों एवं विचारकों का दृष्टिकोण आध्यात्मिक एवं वैज्ञानिक रहा है जो हमारे धर्म का मूलभाव है अतः हमारे समाज की धुरी जिस मानव को माना गया वह संगठन की सबसे छोटी पर महत्वपूर्ण ईकाइ है। हमारे धर्म की मूल चेतना मानवतावादी है जो 'जियो और जीने दो' के भाव को सर्वत्र देखता है मानव जाति का उत्थान और जीवन के समन्वय को परिभाषित करता हुआ हमारा आध्यात्मिक दर्शन सम्पूर्ण विश्व में शिरोधार्य है।–''धर्म का उद्देश्य चिंतन का भाव समाधि नहीं है अपितु जीने की धारा के साथ एकात्म स्थापित करना और उनके लिए सृजनात्मक प्रगति में भाग लेना है। धर्म परायण मनुष्य उसके ऊपर उसकी भौतिक प्रकृति या सामाजिक दशाओं द्वारा थोपी गई मर्यादाओं से ऊपर उठ जाता है। और सृजनात्मक उद्देश्य विशालत्तर बनाता है। धर्म एक गतवर (गत्यात्मक) प्रक्रिया है। सृजनशील तीव्र मनोवेग के नये प्रयास जो असाधारण व्यक्तियों के माध्यम से कार्य करता है। और जो मानव जाति को एक नए स्तर तक उठाने के लिए प्रयत्नशील है।''[19]

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने उपन्यासों में धर्म, दर्शन और संस्कृति पर गहरा अध्ययन एवं विश्लेषण किया है उन्होंने भारतीय आध्यात्मिकता को मानवीय जीवन संदर्भ में समझने का प्रयास किया है उनका चिंतन जीवन की परिस्थितियों में इनके प्रयोग एवं इसकी महत्ता पर दृष्टि डालता है। डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में धर्म, दर्शन एवं संस्कृति को जन मानस तक पहुँचाने का प्रयास किया है इनके पात्र भारतीय आध्यात्मिकता के चिंतन को प्रस्तुत करते है मीरा के प्रखर व्यक्तित्व के समक्ष धर्म की स्वतंत्रता को कोई नहीं बाँध सका वह कहती है।–''धर्म व्यक्ति की साधना की निष्ठा का प्रतीक है वह व्यक्तिगत आस्था पर टिका हुआ है। न कि राज की आस्था से बँधा हुआ है।''[20] मीरा ने धर्म को आस्था एवं विश्वास के रुप में परिभाषित किया है।

मीरा के विचारों के माध्यम से डॉ. भटनागर ने धर्म दर्शन पर गहन शोध किया है और तत्कालीन समाज की परिस्थितियों के साथ उसका समन्वय दर्शाया है। मीरा भक्त भी है और समाज की बुराइयों को प्रकाशित करने वाली द्रष्टा भी। वह तत्कालीन समय में धर्म को राज की परतंत्रता से मुक्ति दिलाती है। धर्म स्वतंत्रता है वह मानव का विश्वास है।'' ''पानी का धर्म बहना

है। बादल का धर्म बरसना है। धरती का धर्म सबको स्वीकार कर सबको प्रसन्न रखना है। किसी को अस्वीकारना दुत्कारना नहीं है। धर्म का अर्थ है व्यक्ति के जीने का विश्वास। कोई राज व्यक्ति को उसके इस नैतिक तथा प्राकृतिक अधिकार से वंचित नहीं कर सकता।''[21] डॉ. भटनागर ने मीरा के विचारों का प्रस्तुतिकरण केवल भक्ति तक ही सीमित नहीं रखा है अपितु उस समय की समस्त राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक पक्ष का भी चिंतन किया है। उपन्यासकार ने समाज की तत्कालीन अवस्था में मानव को धर्म के सरल, सहज और आदर्श रुप से परिचित कराया है जो भारतीय आध्यात्मिक चेतना के प्रभाव की दार्शनिकता को व्यक्त किया है। डॉ. भटनागर ने संस्कृति, सभ्यता, संस्कार पर गहरा मंथन कर संशोधन प्रस्तुत किया है। उपन्यासकार की दृष्टि में मीरा एक संत के विराट व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करती हुई भारतीय अध्यात्म के दर्शन को जन मानस के हृदय तक पहुँचा रही है मीरा का कृष्ण के प्रति समर्पण धर्म की सार्वकालिक चेतना का प्रतीक है कृष्ण तत्व का विवेचन उसके जीवन का मर्म और कर्म है कृष्ण का प्रस्तुतिकरण सगुण निर्गुण की भ्रामक स्थितियों का खण्डन करता है वहीं सर्वव्यापकता, सार्वभौमिकता एवं सार्वकालिकता का भी बोध कराता है।

भक्ति में नारी और पुरुष में किसी प्रकार का कोई भेद नहीं है।'' भक्ति आंदोलन नारी को शरीर मात्र नहीं, मन और ह्रदय युक्त मनुष्य के रुप में देखता था। सदाचार पर जितना बल भक्तों ने दिया है उतना ही कुछ धार्मिकों ने दिया होगा जो सदाचार की महिमा जानता है वह मन की चंचलता की शक्ति भी जानता है जो बड़ा होता है वहीं क्षमा कर सकता है भगवान यदि पतितों का उद्धार करने वाले है, यदि वे पुरुष को शरण में ले सकते है तो क्या नारी का उद्धार नहीं करेगें? क्या भगवान की भी निगाह में पुरुष और स्त्री का भेद बरकरार है? भक्ति आंदोलन इसका उत्तर नहीं में देता है।''[22] मीरा ने सभी भेदों को अस्वीकार धर्म की व्याख्या सहज और सरल रुप में की थी मीरा का काव्य लौकिक था परन्तु भक्ति के सामर्थ्य से वह अलौकिकता को प्राप्त होता है मीरा संत थी, भक्त थी, या स्त्री चेतना की बुलन्द आवाज यह तो समीक्षकों की दृष्टि का भेद है और उसी भेद की सृष्टि ने मीरा के चिंतन को सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्त किया। धर्म, दर्शन और संस्कृति समाज से जुड़े होने के कारण मानव को सीधे तौर पर प्रभावित करते है अतः मीरा के व्यक्तित्व में डॉ. भटनागर ने तीनो तत्वों का सम्मिश्रण कर एक नवीन स्थापना की है।

हमारी दार्शनिक विचारधारा का आधार हमारे वेद , पुराण, उपनिषद्, टीका, व्याख्या है। जिनके आधार पर भारतीय दर्शन का गहरा अध्ययन किया जाता है। डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों के चरित्र में इन विचारों को संवाद का रुप देकर श्रौता पाठक का वेदान्त दर्शन से अवगत ही नहीं कराया अपितु उसकी महत्ता और प्रयोग की सार्थकता पर भी बल दिया है इन्होंने अपने उपन्यासों में धर्म दर्शन और संस्कृति से जुड़ी हुई कई भ्रांतियों का समाधान

सहज रुप से जनमानस तक पहुँचाया है विवेकानंद, महर्षि अरविन्द, मीरा, सूरदास आदि विचारकों के माध्यम से धर्म की भ्रांतियों को दूर करने का प्रयास किया है। जहाँ लोग धर्म परिवर्तन के अभियान पर निकले थे वहीं इन विचारकों अपने धर्म का संदेश जनमानस तक पहुँचाया जो 'वसुधैव कुटुम्बकम्' अवधारणा को प्रस्तुत करता है भारतीय संस्कृति के पोषक के रुप में इनका सहयोग सदैव जनता को मिला अन्य धर्म जहाँ भारतीय संस्कृति व दर्शन को असभ्य बताने की चेष्टा करते हुए दूषित करने का प्रयास कर रहे थे संस्कृति की प्राचीनता का वैभव नष्ट करने पर आमादा थे ऐसे समय में जब भारत पराधीनता की बेड़ी जकड़ा हुआ था। अमेरिका की धर्म संसद में एक तरुण संन्यासी का सम्बोधन 'अमेरिका वासी बहनों और भाइयों' समस्त विश्व को चकित कर देता है। भारतीय धर्म की श्रेष्ठता का प्रतिपादन करते हुए की इसकी आवश्यकता पर बल देते हुए कहते है। ''यदि कभी कोई सार्वभौमिक धर्म होगा तो वह किसी देश या काल से सीमाबद्ध नहीं होगा। वह उस असीम ईश्वर के अनुयायी के सदृश ही असीम होगा जिसका वह उपदेश देगा, जिसका सूर्य श्रीकृष्ण और ईसा के अनुयायियो पर संतो पर और पापियों पर समान रुप से प्रकाश विकिर्ण करेगा। जो न तो ब्राहमण होगा न बौद्ध, न ईसाई, न इस्लाम, वरन् इन सब की समष्टि होगा किन्तु फिर भी जिसमे विकास के लिए अनंत अवकाश होगा जो इतना उदार होगा कि पशुओं के स्तर से किंचित् उन्नत निम्नतम घृणित जंगली मनुष्य से लेकर अपने हृदय और मस्तिष्क के गुणों के कारण मानवता से इतना ऊपर उठ गये उच्चतम मनुष्य तक को जिसके प्रति सारा समाज श्रद्धानत हो जाता है। और लोग जिसके मनुष्य होने में संदेह करते है। अपनी बाहुओं से आलिंगन कर सके और उनमें सब को स्थान दे सके। वह धर्म ऐसा होगा, जिसकी नीति में उत्पीड़ित था असहिष्णुता का स्थान नहीं होगा, वह प्रत्येक स्त्री और पुरुष में दिव्यता को स्वीकार करेगा और उसका सम्पूर्ण बल और सामर्थ्य मानवता को अपनी सच्ची दिव्य प्रकृति का साक्षात्कार करने के लिए सहायता देने में ही केन्द्रित होगा।''[23]

डॉ. भटनागर ने स्वामी विवेकानंद के विचारों का अध्ययन और विश्लेषण करते हुए पाठक को उससे जुड़ने का सुअवसर प्रदान किया है। पाठक को विचारों की श्रृंखला में कोई अवरोध न हो इसके लिए उन्होंने विविध प्रसंगों पर अंतर्दृष्टि डालते हुए संवाद शैली का आश्रय लिया है। जीवन के अनुभवों के साथ संवाद के माध्यम से उपन्यासकार ने जो रोचकता जगायी है वह सरल एवं सहजता के साथ पाठक को ग्राहय है। हर धर्म एक ईश्वर के अस्तित्व का बोध कराता है परन्तु दर्शन का बोध केवल विरले लोगों को ही होता है ऐसी मान्यता प्रचलित है। डॉ. भटनागर ने 'विवेकान्द' उपन्यास में अपनी अंतर्दृष्टि से इसका सरल समाधान प्रस्तुत करते हुए परमात्मा के आत्म तत्व को व्याख्यायित किया है।

''आप ब्रहमचारी है?''

''हाँ।''

ईश्वर को जानने का व्रत ले रखा है क्या?'' उस युवती की बड़ी–बड़ी आँखों में गज़ब का शुरुर था, मस्ती थी और चमक थी।

''जो मनुष्य को जान लेता है, उसे ईश्वर को जानने की जरुरत नहीं मिस............।''

''क्रिस्टल।'' वह आश्चर्य से उस नवयुवक संन्यासी को देखती रह गई। उसने पूछा

''वह कैसे?''

इसलिए कि इसे अपने होने का प्रमाण देने के लिए मनुष्य रुप में जन्म लेना पड़ता है।

''मिस क्रिस्टल।''

वह अवाक् हतप्रभ। क्या बात कह डाली। फिर भी उसने प्रश्न किया'' ऐसा वह क्यों करता है।''

''क्यों करता है।''

''क्योंकि वह मनुष्य है।''

''क्या कहा।''

''तुमने ठीक सुना, मिस क्रिस्टल, ईश्वर वास्तव में मनुष्य ही है। जब जब मनुष्य यह भूलने लगता है और उसे  कहीं और तलाश करने लगता है, तब–तब मनुष्य ही ईश्वर बनकर यह स्मरण करता है कि मनुष्य ही ईश्वर है। उससे बाहर कहीं ईश्वर नहीं है।'' विवेकानन्द की इन स्थापनाओं को और व्यक्ति भी सुन रहे थे। सबमें जिज्ञासा पैदा हुई। एक अन्य व्यक्ति ने

पूछा'' क्या हम सब ईश्वर है?''

''क्यों नहीं, आप सब ईश्वर है।''

''कैसे?''

''अपने में खोजकर देखो तो मेरे कथन का सत्य अनुभूत होने लगेगा।''

''क्या ईश्वर हमारे अलावा दूसरा कोई नहीं है?'' एक अधेड़ उम्र के ठिगने व्यक्ति ने पूछा।

''नहीं है, श्रीमान दूसरा ईश्वर कोई नहीं है। बशर्ते तुम्हें अपने पर भरोसा हैं।''

वह कैसे होगा?''

''ईश्वर के नाम से जिन विशेषताओं का उल्लेख हुआ है। उनको तुम अपने से व्यक्त कर सको?''[24] विवेकानंद के विचारों में धर्म, दर्शन और संस्कृति की व्याख्या मानव के संदर्भ में की है विवेकानंद के विचारों को एक सूत्र में पिरोकर धर्म, दर्शन और संस्कृति को विशेष दर्जा प्रदान किया है।

डॉ. भटनागर ने विवेकानंद के जीवन चरित्र को नवीनता के साथ किया है। धर्म, दर्शन, संस्कृति के चिंतन के प्रवाह को गति दी है, जो वर्षों से जमा कीचड़ को बहा ले गई और पीछे स्वच्छ निर्मल धारा का प्रवाह परिलक्षित होने लगा। डॉ.राजेन्द्र मोहन भटनागर ने धर्म की व्याख्या की और उसके आदर्शात्मक स्वरुप को अपने ऐतिहासिक पात्रों के आचरण एवं व्यवहार में दिखाया है धर्म को समझना आसान और सरल था इसका स्वरुप भी सत्य एवं सहज था परन्तु इसे दुरुह एवं कठिन बनाया अज्ञानता के अंधकार ने अज्ञानता के कारण ही भारतीय जनमानस धर्म के मूल आदर्शों से भटक गया और ऐसे धर्म को मानने को विवश हो गया जो उसे केवल समाज और राज से जोड़ता है। ईश्वर से नहीं। मानव को हृदय में झाँकने का अवसर न था उसे केवल राज्याज्ञा या समाज की रुढ़िवादी परम्परा की चिंता थी चिंता मनुष्य में भय उत्पन्न करती है चिंतन मानव को निर्भीक बनाता है।

डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में इन दोनों का विश्लेषण करते हुए समाधान खोजने का सफल प्रयास किया है मानव को अध्यात्म समझाते हुए महाप्रभु चैतन्य कहते है–''सृष्टा ने ही सृष्टि को जन्म दिया है सृष्टि उसी का सृजन है....... मैं भी आप भी, पेड़ पौधे जीव जंतु, पत्थर पदार्थ आदि सभी उसकी सृष्टि है। सृष्टि को जन्म देकर वह स्वयं ऐसे अदृश्य हो गया जैसे पानी में नमक हो जाता है।''[25] डॉ. भटनागर ने महाप्रभु चैतन्य के जीवन संदर्भो पर अंतर्दृष्टि डालते हुए धर्म, दर्शन और संस्कृति को तत्कालीन सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों के साथ प्रस्तुत किया है धर्म के प्रचार में धर्म प्रचारकों ने धर्म का मूल स्वरुप बिगाड़ने की चेष्टा की है धर्म को व्यवहार में उतारने की अपेक्षा व्याख्यान की विषय बनता जा रहा था परन्तु मन परिवर्तन हुआ न धर्म परिवर्तन मानव इन दो पाटों के बीच पिस कर रह गया। संस्कृति के सत्य पर रुढ़िवादी मान्यताओं की काई छाने लगी है समय की मांग किसी चिंतक एवं विचारक की थी और भारत की पवित्र भूमि पर जनता को धर्म दर्शन और संस्कृति पर अंतर्दृष्टि द्वारा सत्य का मार्ग प्रशस्त करने वाले महायात्री चैतन्य महाप्रभु का नेतृत्व प्राप्त हुआ।

चैतन्य महाप्रभु 'गौरांग' को भक्ति का सत्य अनुभूत था। वह परमात्मा का संभवतः साक्षात्कार कर चुके थे वे मानवीय मूल्यों के वाहक थे उनके स्वरुप में भारतीय अध्यात्म के दर्शन का विवेचन है। 'गौरांग' उपन्यास में धर्म की स्थिति का मूल्यांकन तत्कालीन परिवेश में किया गया है ''प्रायः ऐसा स्पष्ट नजर आता है कि धर्म संस्थापकों की भावना पवित्र थी और सर्वजन को अँधेरे में से बाहर लाने की थी। परन्तु उनके उत्तराधिकारियों ने उनसे लाभ लेना शुरु किया। अंतोगत्वा वह धर्म कुकर्म, षड्यंत्रों और असामाजिक तत्वों का अड्डा बन गया।''[26] धर्म की स्थिति पर प्रकाश डालने के साथ ही उपन्यास में उसके कारणों का अनुसंधान भी किया है। साथ ही मानव को आत्मज्ञान एवं आत्मतत्व के आधार पर सत्य मार्ग का अनुसरण करने का लक्ष्य प्रस्तुत किया है।'' धर्म के संस्थापकों ने धर्म को धंधे की शक्ल दे दी। पतन यहाँ से शुरु हुआ।''

“ प्रिया, तुम सब जानती हो।”

विष्णु प्रिया प्रवाह में बह उठी थी अतः कह उठी’ होता यह है कि धर्म मनुष्य को उठाने के लिए प्रारम्भ होता है, परन्तु धीरे धीरे यह पतन की ओर बढ़ने लगता है। और जनास्था खोने लगता है। इसलिए मेरे लिए धर्म दिखावा या प्रचार नहीं है मन और अंतरात्मा से जुड़ा धारण योग्य सत्य है।”[27] डॉ. भटनागर ने गौरांग की पत्नी विष्णुप्रिया के विचारों में धर्म के दूषित होने का कारण बताया है वहीं अपनी स्वानुभूत ज्ञान दर्शन का भी परिचय दिया है उपन्यासकार ने हर अवसर में चेतना के प्राण फूंके है। डॉ. भटनागर एक ऐसे उपन्यासकार है जिनका इतिहास बोध गहरा है वह इतिहास के साथ उन दार्शनिक विचारों का भी मनन मंथन करते है। जिनकी प्रासंगिकता मानव जीवन में आज भी बनी हुई है। कर्म और फल की चिंता से मानव को मुक्ति भारतीय दर्शन का विवेक है। यह ज्ञान डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में वर्णित किया है सूरदास और भगवान श्री कृष्ण के मध्य अलौकिक संवाद में कर्म और फल के ऊपर किया गया चिंतन सराहनीय है।

“उचित समै?

तू बूझना छोड़ दे। जितना बूझेगो उतना उलझेगो। उलझना तिहारा स्वभाव नहीं है। तू सूरा है। सूरा माने भरपूर उजाला अप्रतिम और अंदर वीर ........ जा अब लौट जा। जाह हमारो आदेश मान ले।

इस बार अंधे सूर की आँखे फटी की फटी रह गई। उसे सब कुछ दीख रहा था। गोपाल कृष्ण बने प्रौढ़ नजर आ रहे थे। वो कृष्ण कुरुक्षेत्र वाले थे। उनकी उंगली में सुदर्शन चक्र था। उनके पास गांडीव लिए अर्जुन थे। वह कह रहे थे तू नाम का अर्जुन है। न गांडीव तू उठाए हुए है। न तिहारा कोई सगा सम्बन्धी, भ्राता नाते रिश्तेदार है।....... न तू किसी को मारेगो। न तिहारे मारने से कोई मरेगो। ले देख बता कि यहाँ जिन्दा मानुष कौन है। जे ही मारी माया है। जो जा मे फँसो वो गयो काम से अब तू ही निर्णय कर कि तिहारे को क्या करना है।”

अर्जुन ने हाथ जोड़कर कहा प्रभु मैं कर्त्ता कहाँ हूँ । मैं तो निमित्त मात्र हूँ।

तू समझ गयो रे। तिहारी भेद बुद्धि कूच कर गई। अब शंका क्या है?

कछु नहीं

फिर चिंता?

वो भी कछु नाहीं।

तिहारे काम है। गांडीव उठाना, तरकस से तीर निकाल का धनुष पर चढ़ाना और निशाना साध कर तीर ठिकाने पर छोड़ देना है। तू कर्त्ता नाहीं। फिर परिणाम की आशंका में दुबला क्यों?

समझ गयो, गोपाल''[28]

डॉ. भटनागर ने उपर्युक्त संवाद में श्रीमद्भागवत के कृष्ण अर्जुन संवाद का सहारा लेकर मानव मात्र को निष्काम कर्म की ओर दृष्टि प्रदान की है उपन्यासकार का भारतीय दर्शन का ज्ञान इनके उपन्यासों को प्रासंगिक एवं सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्त करता है श्रीमद्भागवत् गीता के सिद्धान्त सम्पूर्ण विश्व में एक नवीन चेतना को प्रस्तुत करते हुए हर काल में हर युग में मानव को सम्बल प्रदान करते है डॉ. भटनागर ने श्रीमद्भागवत को चिंतन का आधार बनाकर मानव को भय से मुक्त किया है। मानव के अंदर जब तक भय है वह कभी अपने सच्चे स्वरुप व लक्ष्य को नहीं पहचान सकेगा। जीवन मृत्यु एक चक्र है और शाश्वत सत्य का ज्ञान है परन्तु भय मृत्यु की उपासना करता है। और जीवन का वरदान माँगता है। डॉ. भटनागर इस अनुसुलझे प्रश्न का मंथन करते हुए इसका सरल समाधान उपस्थित करते है।

''श्यामा में आध्यात्मिक जिज्ञासाएँ जाल बुन रही थी। वह देह और मन को एक मानती थी। पूछ रही थी–सूर,जीवन का विराम क्या है?

कृष्णार्पण होना

फिर

फिर क्या? कृष्णार्पण ही जीवन है। ब्रह्म है, जीव है। दोनों का अस्तित्व है। दोनों में आकर्षण है। ब्रह्म अणु भी है। और सर्वव्यापी भी। माँ यशोदा की गोद में बैठा हुआ कृष्ण ही समस्त सृष्टि का हेतु है– समस्त जड़ चेतन का केन्द्र है।

सूर मुझे मरने से डर लगता है।

क्यों?

क्योंकि मरना जीवन का अंत है उसके बाद जीवन का रुप नहीं। कोई पहचान नहीं। आखिर क्यों? क्यों हम कृष्णार्पण हों। मरना फिर भी है। मृत्यु शाश्वत है। पर वह क्या है? उसके बाद क्या है?

प्रश्नों के इन्हीं द्वन्द्वों से अपने आपको बचाने का उपाय है । मधुरापति के प्रति सम्पूर्ण भाव अभाव से समर्पित हो जाना। तब मृत्यु का डर नहीं रहेगा। वह मात्र परिवर्तन का आशय देगा।''[29] डॉ. भटनागर ने हर अवसर पर भारतीय दर्शन का प्रभाव अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में स्थापित करने का प्रयास किया है। भारतीय जन मानस पर धर्म और दर्शन और संस्कृति से जुड़े हुए सत्य एवं अहिंसा के दार्शनिक सिद्धान्तों का बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा है और डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में इसके स्वरुप के तात्विक विवेचन को वाणी प्रदान की है इनके उपन्यास

'दिल्ली चलो' में महात्मा गाँधी द्वारा सुभाष को अहिंसा की शक्ति का परिचय दिया है। सुभाष चन्द्र बोस और महात्मा गाँधी का तर्कपूर्ण संवाद अच्छा उदाहरण है।

''तुम क्या सोचते हो।''

''मैं भारत की आजादी चाहता हूँ।''

''पर कैसे?'' गाँधी ने सरल होकर देखा प्रश्न कर डाला, जिसका सुभाष के पास कोई उत्तर नहीं था। वह चुप रहे।

'' तुम अपने प्रश्न का उत्तर सरकार से असहयोग में पाने का प्रयत्न कर सकते हो।....... प्रश्न सच्चे मन से करने का है।....... आजादी करने से ही हासिल होगी। हाथ पर हाथ रखकर मात्र सोचने से नहीं प्रिय सुभाष। गाँधी की अमृत वाणी सुभाष के ह्रदय में घुलती जा रही थी उनके एक साथी ने कहा भी था कि गाँधी जी से बचना, वह मंत्र शक्ति से दूसरे के चित्त को वशीभूत कर डालता है।

''आजादी का अर्थ है विदेशी सत्ता से मुक्त होना।.... सत्ता का चरित्र अस्त्र से बनता है।... ........ उसे अस्त्र शस्त्र से ही जीता जा सकता है।''

''यानी शक्ति से?''

'' हाँ''

'' तो क्या तुम्हारी दृष्टि में निहत्थे मन से असहयोग करने में शक्ति शून्यता है?''

''असहयोग से सत्ता पाना........। इतना कहकर सुभाष चुप रह गये।

''हाँ बिल्कुल संभव है। हिंसा से बड़ी ताकत अहिंसा है।...... अहिंसा सत्य की प्राण सत्ता है।...... और वेदों में सत्यमेव जयते को सर्वोपरि महत्व दिया है।''[30]

महात्मा गाँधी ने अपने अंतिम समय तक सत्य एवं अहिंसा का मार्ग का अनुसरण किया। वह इसकी शक्ति को आत्मसात् कर चुके थे वे मानते थे कि मनुष्य का ह्रदय परिवर्तन करना आवश्यक है शक्ति से उसे दबाया जा सकता है परन्तु ह्रदय परिवर्तन से उसे सच्चा मित्र या साथी बनाया जा सकता है। वे मानव मात्र को स्वयं की आत्मचेतना का एहसास कराना चाहते थे। वे सत्य को मात्र शब्द मात्र नहीं मानते थे अपितु वह उसे हर व्यक्ति के आचरण एवं व्यवहार में पुष्पित एवं पल्लवित होता हुआ देखना चाहते है।

महात्मा गाँधी सुभाष को सत्य एवं अहिंसा का महत्व समझाते हुए कहते है। ''तब तक नहीं होगा जब तक अहिंसा हिंसा का मन बदलने मे कामयाब न होने लगे। उन शोषित, वंचित और दीनहीन लोगों के मन पर अपने न होने का अंधविश्वास छाया हुआ है। डर उन पर कुंडली

मारे बैठ चुका है। .......... उन निहत्थे, असहाय और मटमैले इंसानों को अपने होने का यानी अपनी ताकत का अहसास कराना है। आत्मबल के आगे सैन्य बल निश्चेष्ट और निष्प्राण अनुभूत हो, यह भी जरुरी है। प्रिय सुभाष! मुक्ति मात्र ब्राह्य सीमा नहीं, मन, मन पर आच्छादित, संशय, भ्रम, दुःकल्पनाए, आतंक और अत्याचार से स्वतंत्र होना भी हैं..... सत्य जन बल का अस्त्र शस्त्र बने उसका आचरण सिद्ध हों और वही धर्म हो, मेरा प्रयत्न यह है।"[31] डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों जिन सिद्वान्तों का या मूल्यों का विवेचन किया है वह सब भारतीय संस्कृति के परिचायक है हमारी संस्कृति की उज्ज्वलता पवित्रता और मानवतावादी व्यवहार ने सम्पूर्ण विश्व को विवेक प्रदान किया है जीवन के पवित्र आदर्शो की संकल्पना हमारे विचारों में प्राण भरती है और हर युग काल में हमारी संस्कृति के सिद्धान्तों की सार्वकालिक दृष्टि का बोध कराती है जीवन में आशा का संचार करती है हमने कुशलता के साथ मानव हित को भी सदैव ध्यान में रखा है। उपन्यासकार ने संस्कृति के बाह्य और आभ्यांतर पक्षों को स्पष्ट कर मानसिक अवस्थाओं का गहन विश्लेषण किया है वे जीवन, धर्म, दर्शन और संस्कृति पर अन्तर्दृष्टि डालते है जीवन की विभिन्न मनोदशा एवं भावों का चित्रण करते है डॉ. भटनागर ने कालांतर में होने वाले परिवर्तनों को समझा और उसके कारण एवं प्रभावों को भी स्पष्ट किया है। मनुष्य के मूल्यों में होने वाले बदलाव की अवस्था को व्याख्यायित किया है वे जीवन के विविध संदर्भो से भावों का मूल्यांकन करने में सफल रहे है वे जीवन की सार्थकता को परिभाषित करते है उनके साहित्य की कल्पना मानव के मन अन्तर्दशा का ज्ञान सहज सरल एवं रोचक रुप में कराती है।

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने धर्म, दर्शन और अन्तर्दृष्टि डालते हुए इसके सौन्दर्य को जहाँ आदर्श रुप में स्थापित करने का प्रयास किया है वहीं धर्म के नाम किये जा रहे दुष्कर्म, पाखण्ड, अंधविश्वास का खण्डन करते हुए धर्म की स्थापना को सहयोग दिया है। विचारों एवं भावों के साथ इनकी प्रस्तुति ने इनको जनमानस के समक्ष सरल रुप में प्रस्तुत किया है सत्ता का स्थायीकरण करने की भावना ने धर्म एवं संस्कृति को सबसे अधिक आघात पहुँचाया है युगों से यह कुत्सित प्रयास मानव के हृदय को छलनी करता रहा है। जनता को धर्म से दूर, राजधर्म, सत्ता धर्म का अनुयायी बनाने का घृणित प्रयास मानव सभ्यता को गर्त में ढकेलने की ओर बढ़ रहा था और संभवतः यह रुप आज भी प्रचलित है सत्ता के स्वार्थी लोगों ने धर्म को अपनी ढाल बनाकर साम्राज्य को सुरक्षित करने के प्रयास में जनता को बलात् धर्म परिवर्तन की ओर प्रेरित किया गया इन सब परिस्थितियों के मध्य भी भारतीय धर्म की आंतरिक चेतना ने मानव को अध्यात्म का अमृत प्रदान किया।

'गौरांग' उपन्यास में बलात् धर्म परिवर्तन कराने व धर्म पर होने वाले आघात का वर्णन डॉ. भटनागर ने किया है। "यह दर्द दिल्लीपति, पठान बादशाहों के दिये उन आघातों से है। जिनसे हिन्दू धर्म अपने अनुयायियों की रक्षा नहीं कर सका, और बड़ी तादात में हिन्दुओं को

मुस्लमान हो जाने दिया। उन्होनें मंदिर तोड़े, उन्हें अपवित्र किया। मूर्तियां खण्डित की और आज भी पुरजोर से वे कर रहे है।''[32] उपन्यासकार ने जहाँ धर्म पर हो रहे राजनीतिक अत्याचार की बात की है वहीं वे धर्म के नाम पर फैलाये जा रहे अंधविश्वास, ढोंग, पाखण्ड, का भी विरोध करते है वामपंथी साधना के नाम पर होने वाले आडम्बर और व्याभिचार को भी स्पष्ट करते है।

''वाम मार्ग वाले कौन है?''

''पाखण्डी। पाँचमार्गीय।''

''कैसे, ललिता,''

''मॉस, मदिरा, मैथुन आदि उनके पाँच प्रकार है। ये खूब मॉस भक्षण करते है। डटकर मदिरा का सेवन करते है। ये ऐसे है।''

''उनके चक्कर मे मर्द झट से आ जाते है। क्यों न आए। वहाँ मौज के सब साधन है।

और वह भी धर्म के नाम पर। और क्या चाहिए साँड को।''

'' क्या ऐसा भी कोई धर्म होता है।''

'' होता नहीं है—वाम मार्ग। यह भी धर्म है और दुराचरण का अड्डा भी।''

''राम राम, राम राम''

''दूसरे में बौद्ध भिक्षु भिक्षुणियाँ? ये भी वामाचारी है। वामाचार की आड़ में अनाचार रत है।''[33] उपन्यासकार ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में धर्म, दर्शन एवं संस्कृति के माध्यम से मानव के बौद्धिक व्यवहार को मूल्यांकित किया है। उनका उद्देश्य जनमानस के मन में भारतीय धर्म के आदर्श स्वरुप को स्थापित करना रहा है। उपन्यासों के द्वारा इन्होंने धर्म, दर्शन एवं संस्कृति के मूल्यों को सार्वकालिक चेतना के महत्व के रुप में प्रतिपादित किया है।

## (ग) समसामयिक संदर्भ

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने कथानकों में भारतीय इतिहास के महापुरुषों के जीवन संदर्भ का चयन किया है भारतीय विचारकों के जीवन से जुड़े विविध प्रसंग एवं चरित्रों के माध्यम से समाज की तात्कालिक स्थिति का चित्रण किया है क्योंकि हर काल खण्ड में एक नेतृत्व ने सैकड़ों, हजारों, लाखों, करोड़ों लोगों में चेतना जगाई है। जीवन मूल्यों की रक्षा का दायित्व उठाए विचारकों ने भारतीय जन मानस को भ्रांतियों से अलग जीवन की सहजता का दर्शन कराया है। संस्कृति एवं सभ्यता के वास्तविक एवं यथार्थ स्वरुप की स्थापना में सहयोग किया है। डॉ. भटनागर ने इतिहास से जुड़े इन व्यक्तियों के महान व्यक्तित्व को समाज के समक्ष प्रस्तुत

किया उपन्यासकार ने रचना धर्म को निभाते हुए तात्कालीक समय परिस्थितियों का भी चित्रण किया है।

हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार –''उपन्यास और कहानी के लिए (समसामयिक) यथार्थ प्राण है। उसके न रहने से उपन्यास व कहानी प्राणहीन वस्तु बन जाती है।''[34] डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में समसामयिक सन्दर्भो का वर्णन करते हुए समाज के वर्तमान स्वरुप का भी चित्रण किया है समसामयिकता को लेकर उपन्यासों में स्थापित मूल्यों की प्रस्तुति ने इतिहास वर्तमान एवं भविष्य के प्रति समवेत स्वर में चेतना जागृत करने का कार्य किया है डॉ.भटनागर ने अपने साहित्य धर्म का पालन करते हुए उपन्यासों में समसामयिकता पर ध्यानार्षण किया है इनके उपन्यास इतिहास बोध से दृष्टि पाते थे अतः उपन्यासों में तात्कालीक समाज, धर्म, राजनीति एवं परिस्थितियों के साथ समसामयिकता को भी उभारा गया है। वैसे जहाँ तक साहित्य का प्रश्न है साहित्य हमें समसामयिक परिप्रेक्ष्य में ही रचना को अंकित करने को प्रेरित करता है क्योंकि वर्तमान घटनाएँ अतीत बनकर ही भविष्य का निर्माण करती है ऐसे में साहित्यकार के समक्ष इतिहास के साथ समसामयिक संदर्भो की प्रस्तुति करना आवश्यक हो जाता है वह अपनी मौलिक प्रतिभा एवं कल्पना शक्ति के साथ उस समय की अनुभूति को आत्मसात् करता है साहित्यकार के समक्ष यह कार्य जटिल प्रक्रिया है क्योंकि वर्तमान जीवन से भूतकाल की परिस्थितियों को अनुभूत करना सहज कार्य नहीं है जीवन की विषमता एवं क्लिष्टता में भावों के प्रवाह की गति का अनुमान करना सहज कार्य नहीं है। डॉ. भटनागर का यह सामर्थ्य है कि उन्होंने उस भूतकाल की नब्ज को टटोलकर भावों की अनुभूति को शब्दबद्ध करने का प्रयास किया है।

कोई भी काल अपने समय का वर्तमान एवं आधुनिक होता है उस काल खण्ड की अपनी परिस्थितियों एवं अपनी समझ होती है वह किसी से प्रेरणा प्राप्त कर भविष्य का निर्माण करने में संलग्न रहता है उसकी चिन्ता में भविष्य का स्वप्न एवं आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित वातावरण निर्माण का चक्र सदैव गतिशील होता है इसी कारण से वह अपने वर्तमान से संघर्ष करता हुआ दिखाई देता है यह संघर्ष परिस्थितियों की विविधता से गुजरता हुआ नित प्रतिदिन निखरता रहता है परिणामतः हमारे समक्ष वह संघर्ष पूजनीय बनता है जीवन की समिधा का भविष्य के यज्ञ में लगातार आहुति बने रहना ही, आज का वर्तमान है। अतः समसामयिक संदर्भो की विविधता के संघर्ष को समझने के लिए इतिहास की अग्नि परीक्षा का अवलोकन करना होगा। इतिहास का बहुत लम्बा पाट है जो कि तैर पार नहीं किया जा सकता है उस प्रवाह में डूबना ही पड़ता है। साहित्यकार ने अपने उपन्यासों की समसामयिकता के प्रस्तुतिकरण के लिए तात्कालिक भावों के प्रवाह में खुद को समर्पित करने का साहस किया है साहित्य और समसामयिक संदर्भो की सम्बद्धता है क्योंकि हर समय वर्तमान रुप में समसामयिक ही होता है।

डॉ. भटनागर ने अपने इतिहास परक दृष्टिकोण के साथ उस समय की परिस्थितियों का चित्रण कर तात्कालीन समसामयिक विषयों का मूल्यांकन किया है। राजनीति, आर्थिक, सामाजिक, ग्रामीण एवं नगरीय ,धार्मिक, साम्प्रदायिक आदि सभी विषयों का परीक्षण समसामयिक संदर्भों का विश्लेषण करते नजर आते है इनके द्वारा मूल्यांकित मूल्यों में हर प्रसंग वर्तमान समय में भी प्रासंगिक है डॉ.भटनागर के द्वारा रचित उपन्यासों में सत्य, शिवम, सुन्दरम् की अवधारणा प्रस्तुत की गई है इनके उपन्यासों में स्थापित समसामयिकता को निम्नांकित बिन्दुओं के माध्यम से समझा जा सकता है।

1. समाज एवं समसामयिकता
2. धर्म, सम्प्रदाय एवं समसामयिकता
3. आर्थिक परिस्थितियाँ एवं समसामयिकता
4. संस्कृति एवं समसामयिकता
5. राजनीति एवं समसामयिकता

**समाज एवं समसामयिकता**

समाज मानवों का समूह है समूह होने का अर्थ यहाँ बहुत मायने रखता है समाज की स्थापना में मानव का सहयोग ही नींव का पत्थर है क्योंकि समाज की परम्परा का टिकाव मानव के सहयोग एवं सद्भाव पर स्थिर है समाज के नीति नियम, परम्परा, मान्यता एवं मूल्यों का निर्माण दीर्घ काल से चले आ रहे प्रयासों एवं परिवर्तनों का फल है जो आज भी निरंतर गतिशील है डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में समाज की अवस्था का चित्रण समसामयिक संदर्भों में किया है समाज की व्यवस्था में आपसी भाईचारे सद्भाव का बहुत योगदान रहा है सभी एक संगठन में रहते हुए रीति नियमों का पालन करते है समाज की व्यवस्था का सभी समान रुप से पालन करते है यहाँ तक हम देखते हैं कि समाज शांति एवं संयम की पालना करता है जीवन की समता में प्रेम एवं सहिष्णुता का पालन करता है जैसे ही हम समाज की यथार्थ भूमि पर पैर रखते है तो समाज के दो पक्ष हमारे सम्मुख प्रस्तुत होते है आदर्श एवं यथार्थ के रुप में आदर्श रुप में समाज की अच्छाइयाँ प्रेम, सहिष्णुता, भाईचारा, मानवता एवं सद्भाव दिखाई देता है तथा यथार्थ रुप में समाज की वास्तविकता जैसे शोषण, दुराचार, द्वेष, ईर्ष्या, अतिक्रमण एवं घृणा के दर्शन होते है। ये दोनों ही रुप समाज के है परन्तु समाज में हर स्थिति एवं प्रसंग इनकी उपस्थिति समसामयिक है।

डॉ. भटनागर ने 'जोगिन' उपन्यास में समाज की सोच एवं मानसिकता का चित्रण किया है जो उस समय की सामाजिक अवस्था का समसामयिक चित्र है स्त्री को समाज में 'यत्र नार्यस्तु पूजन्ते रमन्ते तत्र देवता' के स्थान पर व्यंग्य एवं तानों का शिकार होना पडता है मीरा भगवान

श्री कृष्ण की अनन्य साधिका थी लेकिन उनके प्रति भी लोगों की मानसिकता बहुत संकीर्ण एवं घटिया थी। समाज की इसी कलुषित मानसिकता का चित्रण तत्कालीन नारी की अवस्था पर प्रकाश डालता है।

''किसी ने व्यंग्य फेंका–''विधवा संघ की सधवा जा रही है।''

''ऐसी स्त्री को कृष्ण कैसे स्वीकार करते?''

''इसी गम में कृष्ण की बाबरी हो गई है।''

''श्रीकृष्ण को लांछित कर रही है।''[35]

स्त्री के प्रति समाज का यह रुप उस समय की मर्यादा को छिन्न भिन्न करता है। नारी इस समस्या से आज भी मुक्ति नहीं पा सकी है यह एक सार्वकालिक सत्य है मीरा का उज्ज्वल चरित्र समाज की गंदगी में कमल के सदृश था। डॉ. भटनागर ने उसी के चरित्र के माध्यम से समाज को दिशा देने का प्रयास किया है। डॉ. भटनागर ने तत्कालीन समाज में व्याप्त कुप्रथाओं का खण्डन करने का प्रयास किया है समय और परिस्थितियाँ चाहे जैसी भी हो समाज में आदर्श की स्थापना का प्रयास नहीं छोड़ना चाहिए। संघर्ष की सफलता लोगों में वर्षों तक चेतना की लौ सुलगाने में सफल रहती है मीरा यद्यपि राज घराने से थी जीवन की मर्मान्तक पीड़ा और श्रीकृष्ण के वियोग रुप का जीवन जी रही है परन्तु जीवन के प्रति सम्मान एवं कर्तव्य से सरोबार थी। वह सही मायने में संत थी क्योंकि जहाँ भक्ति से मुक्ति के प्रयास में जीवन को ढूँढा जाए वहीं समाज आदर्शो की पालना में सक्षम हो सकता है।

डॉ. भटनागर ने इतिहास की पीड़ा दायक कुप्रथाओं का अंत होते हुए भी दिखाया है वे समय की चाल को पहचानते है एवं तात्कालीन समाज में व्याप्त कुरीतियों का मूल्यांकन भी करते है। समाज में स्त्रियों के प्रति अत्याचार के अनेक रुप थे उनमें से सती प्रथा अपने चरम पर थी कथाकार ने इसकी वास्तविक स्थिति का मूल्यांकन कर समाज को दिशा देने का प्रयास किया है।–''भगतो, जरा इधर देखो। जे सती अचेत अवस्था मे है। जाकें मुँह से झाग आ रहा है। पता नाहिं कि इस लोगन ने इसे क्या खिलाया पिलाया कि जे अधमरी हो गई। जरुर संखिया या ऐसा ही कोई विष या नशा जाहे इन लोगन ने करायो है। और बेहोशी की स्थिति में जाहे चिता पर ला बैठायो है क्या जे पुन्य का काम है? क्या जे धरम का काम है? क्या जा सूँ जाकी मुकति हो सकेगी? क्या जे कुरकम किसन कन्हैया की नगरी में होने दिया जाए? जे फैसला तुम सबन कूँ करना है। तुम क्या फैसला करते हो? थारा कोई भी फैसला हो, पर म्हारा फैसला भी सुन लो, जब तक जाहे चेत नाहिं आएगा तब तक जें सती नाहि होने दी जाएगी?''[36] वृन्दावन जैसी धर्मनगरी में कुप्रथाओं के विरुद्ध खुली चुनौती का साहस मीरा की समाज सुधारक की भूमिका को प्रस्तुत करता है तथा समाज में व्याप्त सती प्रथा के भयावह रुप का भी उद्घाटन करता है

समाज में स्त्री पर होने वाले अत्याचार यद्यपि आज भी कम नहीं है तथापि उस काल खण्ड से शुरु हुए अभियान ने स्त्री पक्ष में लोगों की मानसिकता का परीक्षण करना भी शुरु कर दिया है।

'युग पुरुष अम्बेडकर' उपन्यास में डॉ. भटनागर ने तात्कालीन समाज की दशा का चित्रण किया है 'अस्पृश्यता' भारतीय समाज की एकता को खण्डित करने वाला तत्व है यह नासूर है इसकी पीड़ा से समाज दो हिस्सों में बँटता चला जा रहा था समाज में अस्पृश्यता का इतना प्रभाव था कि यह विधर्मी लोगों से भी नीचा माने जाने लगा एक सभ्य समाज में इसकी कल्पना तक नहीं कि जा सकती है। यह उस समय की मानसिकता को चित्रित करता है जब यह छूआछूत चरम पर थी। डॉ. अम्बेडकर के जीवन प्रसंगों में अस्पृश्यता का दंश काफी गहरा था वह चाहकर भी इससे मुक्ति नहीं पा सके थे डॉ. भटनागर ने समाज की इस अवस्था की मर्मान्तक व्यथा को स्पष्ट करने का प्रयास किया है।–''बहुत जल्दी वे कॉलेज में इतने विख्यात प्रोफेसर सिद्ध हुए कि अन्य कॉलेज के विद्यार्थी उनके कालांश में अनुमति लेकर बैठने लगे। परन्तु कॉलेज के सवर्ण प्रोफेसरों विशेषतया गुजराती प्रोफेसरों ने उनके द्वारा स्टॉफ के लिए रखे गये बर्तन से पानी पीने पर सख्त ऐतराज़ उठाया। वाह री। जलालत भरी ज्ञानेश्वरी पीढ़ी के विद्वान पुरोधा। उन्हें लगा कि सच जो कभी थकने वाला नहीं था, वह भी अब तक थक चुका है। बूढ़ा हो गया है। और मानवतावाद को उम्र कैद की सजा उसके अनुयायियों ने बेखौफ सुनाकर उसे अंधेरी कोठरी में बंद कर दिया है।''[37] जीवन के विष को पीकर भी इस महान संत ने सत्य का मार्ग नहीं छोड़ा अपितु प्रण किया कि वह समाज में आदर्श व्यवस्था को स्थापित करेंगें।

उपन्यासकार ने इन सब परिस्थितियों का चित्रण करते हुए समाज के युग बोध को स्पष्ट करने का प्रयास किया है 'कुली बैरिस्टर' उपन्यास में उपन्यासकार ने समाज में व्याप्त रंग भेद एवं ऊँच नीच के वर्ग संघर्ष का चित्रण भी किया है। महात्मा गाँधी को भी जब प्रथम श्रेणी का टिकट होते हुए भी रास्ते में उतार दिया जाता है। तब उनका मन क्षोभ से भर जाता है आदमी की आदमी के प्रति इतनी नफरत को देखकर उनका मन निश्चय कर लेता है कि उन्हें अब मानवता के खिलाफ हो रहे इस अत्याचार का उन्मूलन करना है वे उन लोगों में से नहीं थे जो हार मानकर घर बैठ जाये उपन्यासकार ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में समसामयिक स्थिति को रेखांकित किया है। समय की समस्याएँ समसामयिक संदर्भ एवं प्रसंगों का विषय होती है डॉ. भटनागर ने अवसर को तलाश नहीं किया अपितु अवसर की चेतना को सार्वकालिक संदर्भो में प्रासंगिक बताया है।

### धर्म, सम्प्रदाय एवं समसामयिकता

धर्म एवं सम्प्रदाय का भी हर युग में अपना प्रभाव होता है धर्म के प्रभाव का समाज भोक्ता होता है समाज की स्थिरता में धर्म का विशेष महत्व है धर्म के आदर्शों से समाज के

नियमों रीति–रिवाजों एवं परम्पराओं का पालन होता है धर्म ने प्रत्येक युग में अपने प्रभाव को स्थिर रखा है समाज में राज्य का शासन भी धर्म के सिद्धान्तों के आधार पर ही स्थापित होता है साहित्य में समाज में स्थापित धर्म के आदर्शों का मूल्यांकन समय समय पर होता रहा है। ''धर्म वह अनुशासन है जो अन्तरात्मा को स्पर्श करता है और हमें बुराईयों से संघर्ष करने में सहायता देता है काम, क्रोध और लोभ से हमारी रक्षा करता है। नैतिक बल को उन्मुक्त करता है। संसार को बचाने के महान कार्य करने का साहस प्रदान करता है।''[38] डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर साहित्य के ऐसे मर्मज्ञ है जिन्होंने धर्म का समयानुकुल प्रभाव का वर्णन अपने साहित्य में किया गया है उपन्यासों में वर्णित समाज के प्रभाव एवं व्यवहार का परीक्षण धर्म एवं प्रचलित सम्प्रदायों के आधार पर किया है तत्कालीन परिस्थितियों में धर्म का आदर्श एवं यथार्थ रुप का वर्णन भी धर्म की परीक्षा मानवता के संदर्भ में करते हुए इन्होंने धर्म और प्रचलित सम्प्रदायों का विश्लेषण किया है धर्म का मानव धर्म कहलाना ही सत्य एवं सार्वकालिक स्वरुप है।

डॉ. भटनागर ने धर्म का प्रभाव समाज पर देखा था एवं इन्हीं पर आधारित कथाओं का चलन भी देखा है। कथा का स्वरुप तात्कालीन कारणों से भी प्रभावित रहा है अतः उनका विश्लेषण भी उपन्यासकार ने अपने साहित्य में किया है धर्म ने सदैव शासन को प्रभावित किया है। अतः धर्म सदैव समसामयिक है शासन के साथ धर्म का चलन एवं परिवर्तन धर्म के स्वरुप को भी प्रभावित करता है। डॉ.भटनागर ने समय के बोध को जानकर 'जोगिन' उपन्यास में धर्म की समसामयिक स्थिति को उभारने का प्रयास किया है–''संकट का समय है भारतीय राजाओं का पराभव हो रहा है। आज उनकी प्रजा पीड़ित है। धर्म में ठगी चल रही है। प्रजा का मानसिक शोषण हो रहा है। ........यह देखकर अत्यन्त दुख होता है साधना में अंधकार कैसा। जीत–हार कैसी। धर्म में हठ कैसा! चारों और अधर्म है ''मीरा ने कुछ रुककर कहा'' मानव मानव का शत्रु है। मानव  मानव से घृणा करता है। मानव मन से उस विकार को मिटाना होगा, जो उसे मानव पद से गिराता है मानव बस मानव रहे। एक दूसरे से प्रेम से रहे। ना उसे जाति काटे, ना धर्म, ना धन–दौलत!''[39] मीरा के माध्यम से उपन्यासकार ने धर्म की यथार्थ स्थिति का मूल्यांकन किया है।

धर्म का शासन से सम्बन्ध होना समाज के लिए अनुशासन की बाध्यता है परन्तु सत्ता परिवर्तन के साथ धर्म का परिवर्तन एक समस्या है जो कि समाज की मानसिकता, एकता में भ्रम उपस्थित करती है स्वार्थी एवं ढोंगी, आडम्बरी, पाखण्डी ऐसे समय को अवसर मानते हुए अपने सम्प्रदायों की कुत्सित परम्पराओं को बढ़ावा देते है भारत की अधिकांश जनता अशिक्षा के अंधकार से व्यथित है इसी का फायदा उठाकर धर्म के ठेकेदारों ने अपने मत को अनेक कुतर्कों से प्रचलित किया धर्म के नाम पर प्रचलित सम्प्रदायों ने धर्म की भ्रांतियों को बढ़ावा दिया। ऐसे समय में धर्म परिवर्तन, सम्प्रदायों का उद्‌भव, अंधविश्वास, खण्डन–मण्डन, कई अन्य कुप्रथाओं का योग

भी उस समय की धार्मिक अवस्था को प्रभावित करता है। डॉ. भटनागर ने 'विवेकानंद' उपन्यास में धर्म की इस समसामयिक व्यवस्था पर प्रकाश डाला है–"यदि किसी के मन में यह बात घर किए है कि एकता उसी के धर्म की जय से और दूसरे धर्म के विनाश से आयेगी। तो मेरा मानना है कि यह उनका भ्रम है। धर्म परिवर्तन का चमत्कार बंद हो जो जिस धर्म में जन्मा है इस जन्म में वह उसी धर्म में रहे। और उस धर्म में यदि बेढंगी परम्पराऐ हो तो उनके लिए प्राण प्रण से अंत तक संघर्ष करे।

"उन्होनें वज्र शब्दों कहा–" कोई हिन्दू न ईसाई बने और न कोई ईसाई हिन्दू। यही प्रक्रिया अन्य धर्मों पर भी लागू हो। धर्म का राजनीतिकरण बंद हो। उससे राजनीतिक इच्छाएँ पूरी नहीं की जाएँ। सभी धर्म मनुष्य को महान लक्ष्य की ओर ले जाते है। कोई भी धर्म छोटा बड़ा नहीं है। जहाँ वास्तव में धर्म है, वहाँ मारकाट, हिंसा, बलात धर्म बदलवाने के प्रयास दूसरे धर्म वालों को दुख पहुँचाने की कोशिश कभी नहीं होगी।

अमर पुत्रों, इस विश्व धर्म सम्मेलन से हमें जो सीखने को मिला है। वह है कि आध्यात्मिकता, पवित्रता, और उदारता किसी एक धर्म की सम्पत्ति नहीं है। वह सब धर्म में यथाशक्ति विद्यमान है। अंत में मैं कहूँगा कि सहयोग करो, संघर्ष या प्रतिस्पर्द्धा नहीं। हमें विनाश नहीं शांति चाहिए।"[40] उपन्यासकार ने धर्म की संकीर्णता से परे मानव धर्म की व्याख्या की है। मानवता, प्रेम, सद्भाव, विकास एवं शांति की स्थापना का प्रयास किया है अफसोस जनक बात यह है कि हम आज भी धर्म परिवर्तन की पीड़ा का अनुभव करते है समाज में आज भी धर्म की श्रेष्ठता एवं प्रचार के नाम पर समाज में धर्म परिवर्तन का व्यापार बड़े पैमाने पर फल फूल रहा है धर्म की यह अवस्था समसामयिक होने के साथ सार्वकालिक रुप में हर युग में उपस्थित रही है।

## आर्थिक परिस्थितियाँ एवं समसामयिकता

संसार की कोई ऐसी समस्या है जिस से मानव आज तक मुक्ति नहीं पा सका है, तो वह है आर्थिक समस्या अर्थ उपार्जन एवं जीवन यापन दोनों एक दूसरे के पूरक है भारत की सत्तर प्रतिशत से अधिक जनता अर्थ की समस्या से ग्रसित है। जीवन यापन में अर्थ की समस्या ने ग्रहण लगाया हुआ है यह स्थिति युगों से चली आ रही है और मानव समाज इससे आज तक मुक्ति नहीं पा सका है कारण चाहे कोई भी रहा हो मानव इस पीड़ा को वर्षों से भोग रहा है। अर्थ की समस्या समसामयिक एवं सार्वकालिक दोनों स्वरुप में युगों से स्थापित है।

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में तात्कालीन समाज में व्याप्त इस समस्या के कारण प्रभाव, परिणाम एवं समाधान पर प्रकाश डाला है क्योंकि जीवन मूल्यों पर अर्थ महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है। उपन्यास मनोरंजन ही नहीं करता अपितु समाज, देश, राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्यों की पूर्ति भी करता है उपन्यास साहित्य के माध्यम से जिन महापुरुषों की

जीवनी को प्रस्तुत किया है उनके समय की समस्या का कारण और निकारण ढूँढने का प्रयास डॉ.भटनागर ने अपने उपन्यासों में किया है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, के पुरुषार्थ चतुष्ट्य में दूसरा स्थान अर्थ का है अतः यह एक ऐसा पहिया है जो जीवन की गाड़ी के गतिमान होने के लिए आवश्यक है। डॉ. भटनागर ने समाज की इस व्यवस्था में वर्ग संघर्ष से परे एक मानवीय चिंतन को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है जीवन की व्यवस्था में शोषण एवं उसके प्रभाव का मूल्यांकन किया है जीवन की आवश्यकता पर धनाढ्य वर्ग का अतिक्रमण और शोषण के चक्र का प्रस्तुतिकरण मानव मन के भावात्मक क्षणों की पीड़ा को अभिव्यक्त करता है।

डॉ. भटनागर के उपन्यास 'विवेकानंद' में भारत की आर्थिक दशा को व्यक्त किया है— डॉ. भटनागर के उपन्यास 'विवेकानंद' में भारत की आर्थिक दशा को व्यक्त किया है। ''भारत आर्थिक रुप से एक गरीब मुल्क है। कभी यह सोने की चिड़िया हुआ करता था। ......पतन हुआ और अब भी तेजी से हो रहा है। क्योंकि गाँव का दोहन करके बड़े शहर बसा लिए है।''[41] कृषि प्रधान देश होने के कारण भारत की अधिकांश जनसंख्या ग्रामों में निवास है। गाँवों की संस्कृति एवं सभ्यता का पतन होने लगा है क्योंकि शहरों की ओर होने वाले पलायन ने गाँवों के सांस्कृतिक स्तर को प्रभावित किया है ग्रामीण एवं शहरी दोनों ही अर्थ की समस्या का सामना कर रहे है जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए संघर्ष आज भी जारी है परन्तु समाधान मानव के पास आज भी अल्प मात्रा में है। 'युग पुरुष अम्बेडकर' में उपन्यासकार ने सभ्य समाज के मुखौटे को हटाकर जीवन्त चित्र प्रस्तुत किया है अम्बेडकर जैसे व्यक्तित्व को भी जीविका के संकट का निर्वाह करना पड़ा था तो सामान्य व्यक्ति की आर्थिक समस्या तो और भी विकराल थी।

डॉ. भटनागर ने उस समय सामाजिक मानसिकता के साथ जीवन के आर्थिक पक्ष का भी चित्रण किया है—''पर .....। भीमराव इतना ही कह पाते पानी पीकर पूरा दिन निकाल देना, किसी के आगे हाथ नहीं पसारना। बच्चों का भी भूखे रह जाना। यह सब उनके पौरुष और प्रयत्नों का गला दबाने लगता था। वे अपने आपसे विद्रोह कर उठते थे। वे पूछते थे—'' ईश्वर यदि तू है तो यह सब क्यों? नेक, मेहनत और ईमानदार व्यक्ति के साथ ऐसा क्योंकि उसे दो जून की रोटी नसीब नहीं? वह अपने परिवार का भरण पोषण नहीं कर सके।..... योग्य भी हूँ। अनेक योग्य से अकेला योग्य। पर मिल रहा है। मुझे अपमान, उपेक्षा, घृणा, और दुत्कार।''[42] डॉ. भटनागर ने समाज की इस समस्या का समाधान ढूँढने का प्रयास किया और मानव को अस्पृश्यता और ऊँच—नीच के भेद से मुक्त होने का संदेश दिया है।

डॉ. भटनागर ने 'सरदार' उपन्यास में किसानों की आर्थिक समस्या का चित्रण किया है जो कि तात्कालिक परिस्थितियों में और भी विकराल होने की ओर मुड़ सकती थी किसानों ने अपने आप को बचाने के लिए सरदार पटेल के नेतृत्व में सत्याग्रह आंदोलन का मार्ग चुना परन्तु

यहाँ भी उनका भय बराबर बना रहता हैं वे आंदोलन में शामिल होते हैं यहाँ भी उनको लम्बे समय तक संघर्ष करना पड़ता है। स्वतंत्रता के साथ अपने जीवन की आर्थिक समस्याओं का संघर्ष निर्धनता पर चौतरफा आक्रमण है उस पर जो महाजन, साहूकार, जमींदार के पास चला गया तो उसका पीढ़ियों तक शोषण होगा समाज की उस समय की यह तस्वीर प्रस्तुत करते हुए उपन्यासकार ने समसामयिकता का प्रस्तुतिकरण किया है। "तीसरा माह जा रहा था। सन्नाटा तना हुआ था। आंदोलन के स्वरों में थकावट का पुट स्पष्ट झलकने लगा था। वल्लभ भाई पटेल मन ही मन छटपटाहट से भर उठते थे परन्तु उनमें रत्ती भर भी अनास्था नहीं कुलबुलाती थी। क्योंकि उनका रास्ता सत्य का था। परन्तु सामान्य किसान घबरा रहा था। कहीं जुर्माना सरकार उन पर ही न थोप दे। सम्पन्न काश्तकार का कुछ बिगड़ने वाला नहीं है। गरीब काश्तकार को सम्पन्न काश्तकार या सेठ साहूकार से ही उधारी लेने जाना पड़ता है। वह चाहे तो कभी कभी घर या खेत अथवा दोनों गिरवी रखवा लेता है। शोषण तो वह भी करता है। अन्याय भी करता है। पर सम्पन्न काश्तकार या बनियों के सामने कौन मुँह खोले और कैसे खोले? उनके पास भी लठैत है। महाजनी व्यवस्था का अपना चक्कर है। भूल से भी किसी के दादा परदादा ने पाँव रख दिया तो उनकी सात पीढ़ियाँ धनचक्कर की तरह अँधेरे में भी हाथ पाँव मारती ढेर हो जाएँगी।"[43] डॉ. भटनागर ने उस समय की आर्थिक समस्या, निर्धनता एवं सत्याग्रह की समसामयिकता को प्रस्तुत किया है।

## संस्कृति एवं समसामयिकता

हर युग में संस्कृति एवं सभ्यता का अपना स्वरुप होता है यह समाज पर अपना प्रभाव छोड़ती है तथा समाज से प्रभावित भी होती है संस्कृति का केन्द्र मानव समाज होता है जो कि अलग अलग रुप में बना होता हैं संस्कृति का सीधा सम्बन्ध धर्म एवं समाज से है। अतः समाज और धार्मिक परिवर्तन या अस्थिरता का पूर्णरुपेण प्रभाव मानव की संस्कृति पर भी पड़ता हैं। समाज में व्याप्त जो भी परम्परा, रीति–रिवाज एवं मान्यताएँ है वे सब संस्कृति के अन्तनर्हित आने वाले तत्व है। जिस काल में जिस प्रकार का समाज आदर्श एवं धर्म रहा उस काल की संस्कृति का स्वरुप भी वैसा ही परिवर्तित रहा है जीवन के साथ संस्कृति का बहुत गहरा सम्बन्ध है हमारी संस्कृति यद्यपि आदर्श जीवन मूल्यों से सम्पृक्त रही है तथापि जीवन के संघर्ष में बहुत कुछ छूट गया है।

डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में संस्कृति और उसके बदलते स्वरुप की समसामयिक परिस्थितियों का चित्रण अपने साहित्यिक रचनाओं मे किया है संस्कृति से मानव मूल्यों का परीक्षण करते हुए वर्तमान हालातों की समीक्षा करने का प्रयास उपन्यासकार ने किया है संस्कृति के माध्यम से डॉ. भटनागर ने मानव जीवन का सम्यक् परीक्षण किया है भारतीय संस्कृति के आदर्श एवं यथार्थ का प्रस्तुतिकरण इनके उपन्यासों में सहज एवं रोचक ढंग से हुआ है धर्म से

जुड़े होने के कारण भारतीय संस्कृति का अध्ययन इन्हीं से संदर्भित प्रसंगों के साथ उपस्थित हुआ है इनके उपन्यासों में भारतीय संस्कृति के साथ समसामयिक परिस्थितियों को भी प्रकाशित किया गया है डॉ. भटनागर के उपन्यासों में संस्कृति के वास्तविक रुप अदृश्य हो चुके है। और उनके नाम पर समाज में अत्याचार एवं अनाचार बढ़ गया है समाज में ऐसी कई कुप्रथाओं ने डेरा डाल दिया जिन्हें परम्परा एवं रीति–रिवाजों का नाम दिया जाने लगा था। 'न गोपी न राधा' में समाज की मानसिकता के नाम पर 'सतीप्रथा' को लेकर उस समय की तत्कालीन परिस्थितियों एवं समाज की मानसिकता का चित्रण उपन्यासकार ने किया है 'सती प्रथा' मानव समाज की एक भंयकर बुराई थी जिसमें स्त्री को जीवित चिता के साथ जलना होता था उसे समाज बाध्य करता था और उसे नशा देकर बेहोशी की हालत में जला दिया जाता था इस प्रथा की भयावहता और कुकृत्य को संस्कृति एवं परम्परा का नाम देकर भारतीय जनमानस पर थोपा जा रहा था।

''क्या ठीक कह रही है। हमन जे रास्ता नाहि चुना। सबन के कहने से क्या?

सती क्यों? किसलिए? जा सू क्या लाभ?जिन्दा इन्सान कूँ आत्महत्या के लिए विवश क्यों करे? यह कैसी परम्परा? यह कैसा उत्सव?''[44] डॉ. भटनागर मीरा के माध्यम से उस समय की परम्परा के नाम पर चलाए जा रहे षड्यंत्रों का रहस्योद्घाटन किया था। इसी प्रकार डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यास 'सूर्यवंश का प्रताप' में युद्ध एवं मानवीय मूल्यों की व्याख्या करते हुए समसामयिकता पर दृष्टि डाली है 'जीओ और जीने दो' की परम्परा का निर्वाह करने वाला देश अपने संस्कार एवं संस्कृति की रक्षा करने के लिए सदैव तत्पर दिखाई देता है उसका चिंतन सदैव मानवता का पक्षधर रहा है तथा मूल्यों पर भारतीय संस्कृति का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है।

मीरा के माध्यम से उपन्यासकार ने उस समय की सामाजिक व्यवस्था एवं स्त्री की दशा का चिंतन करते हुए मानव संस्कृति की परम्परा एवं रीतियों का वर्णन किया है। मीरा अल्प आयु में ही विधवा हो गई थी उसका मन अपने आराध्य प्रभु श्रीकृष्ण की भक्ति में रम गया था वह साधु संतो ंके संग भजन गाती भाव विभोर होकर नृत्य करती थी यह एक तरह से सामाजिक मर्यादा के विरुद्ध माना जाता था। उस समय की संस्कृति ऐसी नहीं थी विधवा जीवन स्त्री जाति के लिए अभिशाप था। वह ना तो अच्छे कपड़े पहन सकती, नहीं किसी प्रकार का श्रृंगार कर सकती थी उसका शुभ कार्य में आना निषेध था राजमाता करमेती ने भी मीरा को विधवा धर्म का पालन करने को कहा था–'' बहू राजघराने की भी कोई मर्यादा है। अभी भोज को सिधारे अधिक समय नहीं हुआ और तू साधु संतों के साथ उठने बैठने गाने लगी है। यह निर्लज्जता सहन नहीं होगी। युवा पति की मृत्यु पर उसकी पत्नी द्वारा ऐसे शौक मनाने की चर्चा से सारी प्रजा में थू–थू हो रही थी। लोक लाज का ध्यान रखना तेरा धर्म है। विधवा का नियम धर्म निभा। अब इसी से तेरा लोक परलोक बनेगा, सधेगा समझ रही है न मीरा।''[45] डॉ.भटनागर ने समाज की

संस्कृति का सूक्ष्म विश्लेषण किया है वह समाज में व्याप्त हर बुराई के कारण, प्रभाव एवं समाधान का मार्ग तलाशते है मीरा का व्यक्तित्व भक्ति की विराट साधना का पथ है उसी पथ में वह समाज की रुढ़ियों का निस्तारण करती हुई चली जा रही थी वह भक्त थी संत थी, समाज सुधारक एवं स्त्री जाति की बुलन्द आवाज थी वर्षों से चली आ रही अस्पृश्यता एवं ऊँच नीच की व्यवस्था जिसे कुछ लोगों ने परम्परा या संस्कृति का नाम दे दिया था मीरा ने समस्त प्रतिबंधों को नकार कर संस्कृति को शुद्ध एवं परिमार्जित करने का प्रयास किया है।

मीरा का प्रयास मानवता की रक्षा करना था इस कारण वह उपेक्षित और निम्न वर्ग के उत्थान के प्रयास में जुटी रही थी ''मीरा का उपेक्षित बस्ती में जाना उनके लिए सिर दर्द बनता जा रहा है। जिन्होंने उसे मंदिर से निकलवाया था। उसने तो नये मंदिर के कपाट खोल दिये। उसने सर्वथा नवीन नवनीतप्रिय की स्थापना कर डाली है। उनको लगने लगा है कि सुवर्ण जाति के मंदिरों की उपेक्षा उनके यह गारे मिट्टी के नये मंदिर अच्छे हैं वे यहाँ उससे संवाद कर सकते है। संवाद की यह नयी भाषा जो मीरा ने गढ़ी है जीवन की भाषा है।''[46] डॉ. भटनागर ने उस समय की परिस्थितियों के साथ समसामयिकता को भी स्पष्ट किया है समाज में व्याप्त बुराईयों पर मंथन किया है।

डॉ. भटनागर ने जिन समसामयिक विषयों की प्रस्तुति देने का प्रयास किया है वह समसामयिक होने के साथ साथ सार्वकालिक भी है समाज में आज भी धर्म एवं संस्कृति के नाम पर मानव का जीवन पीड़ा, वेदना को भोग रहा है विधवा नारी जीवन का ऐसा अभिशाप है जिससे मुक्ति आज तक नारी को नहीं मिल सकी है संभ्रांत लोगों की सामाजिक व्यवस्था में उसका पग–पग पर अपमान होता है वह जीवन के शुभ मंगल कार्यो में निषेध भोगती है ऊँच–नीच के भेद को भोगता यह मानव समाज दरिंदगी, बलात, शोषण के चक्र में फँसा हुआ है जिससे उसे मुक्ति मिलना असंभव सा लगता है।

**राजनीति एवं समसामयिकता**

भारत एक महान राष्ट्र है राष्ट्र निर्माण के प्रति यहाँ की जनता की निष्ठा सदैव शासन में रही थी शासन से भी इनकी उम्मीद यही थी कि भारत की एकता एवं अखण्डता बनी रहे कालांतर लगातार होने वाले आक्रमणों ने भारत की अखण्डता को नष्ट कर उसे छोटे–छोटे राज्यों तक सीमित कर दिया था अब राष्ट्र के स्थान पर राज्य का शासन सर्वोच्च हो गया था सत्ता परिवर्तन का दंश प्रजा को भोगना था स्वार्थों के वशीभूत होकर शासन की मनमानी को भारतीय जन मानस अनचाहे रुप में स्वीकार कर रहा था।

डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में महान नेतृत्व के व्यक्तित्व को विचारों के माध्यम से उस समय की राजनीति एवं समसामयिक स्थितियों को समझाने का प्रयास किया है

इनके उपन्यासों में राजनीति के सिद्धान्तों के बदलते स्वरुप के साथ घटित होने वाली प्रत्येक स्थिति का सूक्ष्म अवलोकन किया है राजनीति में होने वाली उथल–पुथल के मानवीय मूल्यों की सम्पृक्ति ने पाठक के समक्ष एक चिंतन उपस्थित किया है जो समसामयिक राजनीति होने के साथ–साथ सार्वकालिक भी है। किसी उपन्यासकार के समक्ष यह चुनौती सदैव बनी रहती है कि वह एक द्रष्टा होने के साथ साथ मानव भी है डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में अपने आप को सभी पूर्वाग्रहों से मुक्त रखा है। राजनीति को समझने के लिए इतिहास के तथ्यों का अपने आप में महत्वपूर्ण योगदान है क्योंकि इतिहास की सतह पर ही राजनीति के सिद्धान्तों का परीक्षण किया जाता है। इनके उपन्यासों ने मध्ययुग से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति तक के परिवेश को एक मंच प्रदान किया है जिसके कारण हम भारत की तात्कालीन राजनीतिक एवं समसामयिक परिस्थितियों को आसानी से समझ सकते है।

'सूर्यवंश का प्रताप' नामक उपन्यास में राजनीति में अचानक होने वाले परिवर्तन और राजनीतिक मूल्यों के ह्रास पर चिंता व्यक्त की है। सत्ता प्राप्ति के संघर्ष ने परिवार में ही शत्रुता एवं षड्यंत्रों को जन्म दे दिया है उत्तराधिकार की भूख ने मूल्यों एवं परम्पराओं का हरण कर लिया है महाराणा प्रताप को उत्तराधिकारी न बनाकर छोटे पुत्र जगमाल को उत्तराधिकारी बनाना किसी भी प्रकार से न्याय संगत नहीं था परन्तु राजनीति का कोई विशेष सिद्धान्त नहीं होता है।

"क्या? कुंवर प्रताप ज्येष्ठ है। वरी है। राजनीति कुशल है। वे ही गिरती हुई दशा को संभाल सकते है।

तुमने कैसे जाना?

सब कहते है।

फिर सबने क्या उसे उत्तराधिकारी बनवा दिया? कहने और करने में बड़ा अंतर है। राजनीति में कौन क्या कहता है और क्या करता है यह सवाल बड़े पेच का है।"[47] डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने उस समय की राजनीतिक मूल्यों के पतन को स्पष्ट किया है उदयसिंह का शासन काल राजनीति की दृष्टि से विशेष नहीं रहा मेवाड़ की स्थिति में काफी गिरावट आई थी।

डॉ. भटनागर ने राजनीति में होने वाले परिवर्तनों के लिए सत्ता के स्थायीकरण की नीति को जिम्मेदार माना है। मुगलों को सत्ता एवं शासन की लम्बी पारी का निर्वाह करने के लिए राजपूतों से कछवाहों सम्बन्ध स्थापित करना राजनीति का ही एक पक्ष था क्योंकि विवाह सम्बन्धों के कारण ही मित्रता बढ़ेगी ओर शासन लम्बे समय तब स्थायी रह सकेगा। शासन के लिए किये गये समझौतों ने राजनीति में तो स्थिरता ला दी किन्तु यहाँ की जनता की मानसिक स्थिति को संतुष्ट नहीं कर पाये। अकबर यह राजनीति तथ्य समझाते हुए कहते है–"शहजादे, राजपूत कौम भयंकर लडाकू कौम है। यह एक न हो सके, यही जरुरी है।..... जिन्होंने हमारी अधीनता स्वीकार

कर ली। वे कभी भी विद्रोही नहीं हो सकते है। इसलिए हमने इनसे विवाह सम्बन्ध किये।....... इससे एक इजाफा यह हुआ कि राजपूत हमारे प्रति वफादार हो गये। और दूसरे कुछ राजपूत जो स्वाभिमानी है, हमारे वफादार नहीं बन सके। उनमें महाराणा सबसे खतरनाक है। इस प्रकार राजपूतों के दो दल हो गए है। हमसे शादी सम्बन्ध बनाने के कारण जहाँ वे राजपूत हमारे प्रति वफादरी हुए वहाँ उनके सम्बन्ध उन राजपूत शासकों से बिगड़ गये है। जिन्होंने हमारी अधीनता कबूल नहीं की है। वे दोनों आपस में जानी दुश्मन हो गये है।.......... वे दोनों इसी तरह बने रहे, इसलिए हम महाराणा के खिलाफ मानसिंह को भेजना चाहते है।''[48] अकबर की यह नीति उस समय की समसामयिक परिस्थितियों को स्पष्ट करती है शक्ति का संतुलन बनाए रखना राजनीति की महत्वाकांक्षा को सुरक्षित रखता है।

डॉ. भटनागर ने राजनीति की समसामयिक परिस्थितियों के कारणों पर प्रकाश डालते हुए अंग्रेजों द्वारा अपनायी गई कूटनीतिक चालों का भी पर्दाफाश किया है। भारत में अंग्रेजों ने जातियों की आपसी समझ को विवाद में तब्दील कर दिया जिसके कारण भारतीय समाज पर शासन किया तथा भारत के नेतृत्व में कभी एकता स्थापित नहीं होने दी साम्प्रदायिकता की खाई को और गहरा किया था भारत की सहिष्णुता को नष्ट कर उसे अस्पृश्यता जाति, धर्म एवं वर्गों में विभक्त किया है। भारत जब स्वतंत्र होने के लिए प्रयास कर रहा था तब अम्बेडकर भी उसी राह के राहगीर थे वे प्रतिनिधित्व चाहते है इसी कारण सभा में मतभेद बनने लगे थे और अंग्रेज इस तनाव को भुनाना चाहते थे–'' 'रम्जै' मैक्डडोनाल्ड भीमराव अम्बेडकर के तर्कों उनकी व्याख्या और स्पष्ट अभिव्यक्ति के प्रशंसक हो गए थे। गाँधी जी के प्रति उनका सम्मोहन घटा था। चर्चिल को एक बात कॉफ्रेंस में अच्छी लग रही थी कि आजादी का स्वप्न दूर होता जा रहा था। और साम्प्रदायिकता की खाई को कभी नहीं पाट पाएंगे। वे अंदर ही अंदर सदा लड़तें रहेगें आजाद होकर और दूसरी आजादियों के लिए जिनके अभाव में आजादी बेमानी हो जाती है। सदा खारे पानी की झील की तरह चिढ़ाने लगती है।''[49] डॉ. भटनागर ने समय की स्थितियों का सूक्ष्मातिसूक्ष्म अवलोकन कर समसामयिक राजनीति का वर्णन किया है। आपसी फूट और झगड़ा दो पक्षों के बीच तीसरे पक्ष को अनावश्यक रुप से लाभ पहुँचाता है और वर्षों से चला आ रहा यह सत्य आज के इस आधुनिक दौर में भी प्रासंगिक एवं सार्वकालिक है।

## (घ) साहित्य की विविध दृष्टियाँ

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने साहित्य सृजन में साहित्य की विविध दृष्टियों का प्रयोग किया है। इनकी साहित्य साधना में इनका प्रयोग दो प्रकार से हुआ है। पहला तो यह स्वतः ही आ गया दूसरा भावों की अभिव्यंजना के लिए साहित्यात्मक प्रस्तुतिकरण के लिए हुआ है। डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में साहित्य की विविध दृष्टियों का प्रयोग किया है। वे निम्नलिखित है।

1. प्रयोगात्मक दृष्टि
2. कल्पनात्मक दृष्टि
3. समीक्षात्मक दृष्टि
4. समाजशास्त्रीय दृष्टि
5. हास्य व्यंग्य दृष्टि

1. **प्रयोगात्मक दृष्टि :** डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर द्वारा उपन्यासों में साहित्य सृजन में विविध प्रकार के प्रयोग परिलक्षित हुए है इन प्रयोगों से साहित्य में अनेक स्थानों पर पाठक की जागरुकता को टटोला है उसके चिंतन को एक नया आयाम दिया है इन्होंने ने उपन्यासों में इतिहास के महापुरुषों की जीवनी को उपन्यास विधा का स्वरुप प्रदान किया है उपन्यास में विजयी महापुरुष की जीवन गाथा को सम्मिलित करते हुए उसके चरित्र को जीवंत करना सरल कार्य नहीं है इस पर उपन्यास का पात्र और विषय इतिहास का महानायक हो तो यह कार्य दुरुहतर हो जाता है। डॉ. भटनागर ने जीवन की व्याख्या को धर्म और कर्म की समन्वयात्मक रुप से उल्लेखित किया एवं साहित्य को अनेक प्रयोगों के द्वारा रुचिकर बनाया है। इनके द्वारा सर्वाधिक प्रयोग भाषा, भाव, वातावरण, अन्तर्द्वन्द्व, चरित्र आदि को लेकर किए गये है इनके संवाद को पढ़कर पाठक चरित्र के सम्मोहन से विलग नहीं रह सकता है इनके द्वारा भाषा के शब्दों, कहावत, मुहावरे, लोकोक्ति का जो प्रयोग किया हैं वे पाठक के चित्त में प्रसंगानुकुल नवीन एवं रुचिकर लगते है।

डॉ. भटनागर ने उपन्यासकार होने का धर्म निभाते हुए साहित्य के क्षेत्र में योगदान दिया है उपन्यास विद्या यद्यपि अंग्रेजी एवं बांग्ला साहित्य से प्रचलित मानी जाती है हिन्दी के साहित्यकारों ने इसमें बहुधा नवीन प्रयोगों के द्वारा इसके स्वरुप एवं प्रकार में विस्तार किया है। डॉ. भटनागर ने अपने समय की आवश्यकता को पहचाना और पतन होते हुए जीवन मूल्यों को संरक्षित करने का प्रयास किया  इतिहास के संदर्भो की सार्वकालिकता को ग्रहण किया और जीवन मूल्यों के साथ सम्पृक्ति देने का अतुल्य प्रयास किया है। इनका प्रयास सार्थक नवीन और प्रासंगिक भी है। भारत जैसे विशाल देश की सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण एवं संवर्द्धन करने का इनका प्रयास सार्थक रहा है इनके द्वारा किये गये प्रयोग पाठक की रुचि एवं स्मृति को दीर्धकालिक बनाने में सक्षम है इनकी प्रयोगात्मक दृष्टि ने उपन्यास को विविध दृष्टियों से सम्पृक्त किया है जीवन की संघर्ष गाथा का वर्णन करने के लिए इनकी रचनाओं में जिस अन्तर्द्वन्द्व का प्रयोग किया गया है वह इनकी मौलिकता एवं सार्वकालिकता चेतना का प्रस्तुतिकरण है।

'अन्तर्यात्रा' उपन्यास में महर्षि अरविन्द के इसी चिन्तनात्मक स्वरुप के दर्शन होते है–''मृत्यु विलाप करने का समय नहीं है। वह समाधि का एक छोर है। देह का महोत्सव।........

.... वो रहा मेरा वासुदेव, मीरा कारागार में आकर उसने ही मुझे जगाया था। मुझे उसके साथ जाना है। यही मेरी इच्छा मृत्यु है। मनुष्य कभी मरता नहीं। देह शाश्वत नहीं है, भौतिक तत्वों से निर्मित है–ऐसी निर्मिति सदा एक सी नहीं रहती। यह एक सहज प्रक्रिया है।''[50] 'मृत्यु' एक सार्वकालिक सत्य है। इसकी प्रक्रिया को सहजता प्रदान करने का कार्य उपन्यासकार ने किया है डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में एक पक्षीय चिंतन नहीं किया है वह भारतीय समाज की स्थिति पर भी ध्यानार्कषण करना चाहते है।

'न गोपी न राधा' उपन्यास में मीरा के भक्ति भाव में भारत की निर्धनता एवं समाज में व्याप्त विषमता का चित्रण डॉ. भटनागर का कुशल प्रयोग है जो पाठक को सामाजिक दशाओं के प्रति सचेत करता है–'' जे माखन मिश्री खाना छोड़। पता नहीं तू कैसा है रे। कितनों को एक जून का भरपेट खाना तक तो जुटे नहीं और तू माखन मिश्री उड़ा रहा है। जे थारे कूँ कैसे भा जाता है रे!''[51] ईश्वर के प्रति भक्ति भाव भी है और समाज की दशा का चिंतन दोनों की एक साथ प्रस्तुति देने का प्रयास उपन्यासकार ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में किया है इनके द्वारा स्थापित चिंतन मानव की मानसिक भ्रांति का समाधान भी किया और मानव की मानसिक स्मृतियों से ढूँढ़–ढूँढ़ कर भ्रांतियों को नष्ट करने का प्रयास करता है।

'विवेकानंद' उपन्यास में इतिहास की भ्रांति का समाधान भी किया और मानव को चेतना भी प्रदान की है–''भाइयों, तुम्हें वह अकेला उदाहरण याद है पर यह क्यों भूलते हो कि ईसा ने अपने समय के न्याय का सम्मान किया, अपमान नहीं और न उसके प्रति विद्रोह किया। तब से न जाने कितने ईसा सूली पर चढ़ चुके है और कितने चढ़ने वाले है। पर क्यों ...... क्यों हमने उन परिस्थितियों से अपने को बाहर निकाला, जिनके कारण ईसा के साथ उनका समय न्याय नहीं कर सका है। कब तक हम सूली पर चढ़े उस आदमी की गहरी पीड़ा का व्यापार करते रहेगें? कब पाऐंगें उन निर्मम क्रूर, कष्टदायी और विषम परिस्थितियों से हम मुक्ति?''[52] डॉ. भटनागर ने अपनी प्रयोगाात्मक दृष्टि का परिचय देते हुए मानव के मूल्यों को संरक्षित करने का प्रयास किया है जीवन संदर्भों के हार्दिक भावों को अभिव्यक्त करते हुए मानव को चेतना भी प्रदान की है उपन्यासकार ने अपने उपन्यासों में पाठक की रुचि जागृत करने के लिए स्मरणात्मक प्रसंगों की भी योजना की है इनके द्वारा 'अमृत घट' उपन्यास में संवाद का इस प्रकार का प्रयोग पाठक को ऊर्जा प्रदान करता है यहाँ भी स्मरण और रुप वर्णन का संयुक्त प्रयास इनकी प्रयोगात्मक दृष्टि का ही परिणाम है–''उसकी एक लड़की थी जाह्नवी। अति सुन्दर। मेघ से बालों वाली। उसकी गहरी झील सी बड़ी बड़ी आँखे थी। चेहरा एकदम रक्तिम सुर्ख। वह जितनी सुन्दर थी उतनी ही अध्ययनशील और मनीषी भी। चित्रकारी में उसकी विशेष रुचि थी। नवाचार और नव कलात्मकता के प्रति उसमें गहरी आसक्ति थी। नये नये वस्त्र पहनना और भिन्न भिन्न श्रृंगार करना उसका स्वभाव था।''[53] डॉ. भटनागर ने यहाँ साहित्य का मान बढ़ाने का सार्थक प्रयास किया है एक प्रसंग में रुप, गुण स्वभाव, कला का

वर्णन स्मरण के माध्यम से करना साहित्यिक रचना धर्म की श्रेष्ठतम उपलब्धि है। डॉ. भटनागर ने भावों की अभिव्यंजना एवं प्रसंगों की रोचकता को प्रस्तुत करने प्रयोगात्मक दृष्टि का सहारा लिया है।

2. **कल्पनात्मक दृष्टि :** साहित्य और कल्पना का चोली दामन का साथ है। 'कल्पना' अजस्त्र झरना है जो साहित्यकार की प्यास कभी बुझने नहीं देता है कल्पना के सहारे ही साहित्यकार विषयों के भँवर से अपनी नाव को सुरक्षित निकाल लेता है। डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर कल्पना सागर के दक्ष नाविक है इनकी क्षमता ही है कि इन्होंने एक ही ऐतिहासिक पात्र पर एक से अधिक उपन्यास लिख दिये भावों की अभिव्यंजना के लिए तथ्यों के प्रस्तुतिकरण को सरल एवं स्पष्ट करने के लिए साहित्यकार कल्पना का आश्रय लेते है यूं तो कल्पना सत्य से परे होती है परन्तु एक कथाकार के लिए भावों को समझाने एवं सरल रुप में व्याख्या करने के लिए कल्पना का आश्रय अति आवश्यक हो जाता है कल्पना कम, तथ्य अधिक होना साहित्य के लिए बेहद आवश्यक है। अतः साहित्यकार को कल्पना का प्रयोग अत्यंत सावधानी के साथ करना चाहिए।

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने उपन्यासों में इतिहास से सम्पृक्त चरित्रों की जीवनी को चुना है किसी के जीवन की व्याख्या करना सरल कार्य नहीं है यह जटिलता तब और अधिक बढ़ जाती है जब पात्र ऐतिहासिक महानायक हो महानायक का समाज एवं मानव पर पड़ने वाले प्रभाव को ध्यान में रखकर ही उपन्यासकार अपनी कल्पनात्मक दृष्टि का प्रयोग करता है। कल्पना भावों की अभिव्यंजना के लिए जरुरी है इसका प्रयोग करते समय उपन्यासकार को यह ध्यान रखना पड़ता है कि कहीं इतिहास की अवहेलना नहीं हो जाए। इतिहास मनुष्य के लिए बेहद आवश्यक हैं अतः साहित्य साधना में बहुत ही सतर्कता की आवश्यकता होती है।

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में इतिहास एवं कल्पना का प्रयोग बड़ी दक्षता एवं कुशलता के साथ किया है इनके प्रयास की सार्थकता का प्रभाव यह है कि इन्होंने इतिहास के मूल स्वरुप को भी बनाए रखा है। तथा भावों की अभिव्यंजना में कल्पना का भी आश्रय लिया है। इनकी विशेषता यह है कि इसकी कल्पनात्मक दृष्टि ने हर उस गूढ़ रहस्य की सरलतम व्याख्या की जो इतिहास के शुष्क पन्नों में दबी हुई थी। डॉ. भटनागर ने जिस जगह अनुकूल एवं उचित स्थान पाया कल्पनात्मक दृष्टि का परिचय दिया कल्पना भी ऐसी जो भावों को स्पष्ट करने में सहायक सिद्ध हुई है। कल्पना के साथ भावों का प्रस्तुतिकरण महानायक के जीवन चरित्र की संघर्ष गाथा को अभिव्यक्त करने में सफल रहा। इनका प्रत्येक उपन्यास कल्पनात्मक दृष्टि का श्रेष्ठ उदाहरण है अपनी कल्पनात्मक दृष्टि के

सहारे ही इन्होंने महानायकों के ऐतिहासिक निर्णयों के पीछे के कारणों को पाठक के समक्ष उपस्थित किया है।

कल्पना का प्रयोग उपन्यासकार ने भावों की रोचकता एवं सरलता के लिए किया गया है क्योंकि उपन्यास को पढ़ने वाले पाठक विभिन्न वर्गों से होते है अतः भाव की क्लिष्टता को दूर करने के लिए एवं पाठक की समझ को सरलतम रुप प्रदान करने के लिए कल्पना का प्रयोग किया गया है। कल्पना का प्रयोग प्रसंग को द्वन्द्व से मुक्त करता है साथ ही पाठक के मानस पटल पर तात्कालिक परिस्थितियों के साथ अनुकूलता स्थापित करता है कल्पना का सागर उपन्यासकार की प्रतिभा का परीक्षण भी करता है क्योंकी कल्पना के सागर में ऊँची नीची लहरों की उठा पटक उसके लेखन की परीक्षा भी करते है 'विवेकानंद' उपन्यास में लेखक ने स्वामी विवेकानंद के माध्यम से ईश्वर, धर्म, माया एवं आस्तिक नास्तिक के प्रश्नों के समाधान में कल्पना का आश्रय अवश्य लिया है लेकिन सिर्फ उतना ही जितना के तथ्यों के प्रस्तुतिकरण में सहायक हो ''यही तो कठिनाई है, मिस क्रिसमस, हमें जो बोलना चाहिए, वह नहीं बोलते, जो करना चाहिए वह नहीं करते। यहीं से हम माया से घिरने लगते है जैसे धधकते कोयले पर राख जमती है तो उसकी धीरे–धीरे लपटे शांत होने लगती है। आप भी अपनी ईश्वरीय लपटों पर माया के वशीभूत होकर राख डालते जाते हो और दुख पाते हो, घबराते हो, कभी भाग्य को दोष देते हो, कभी व्यवस्था को और हारकर गिरजे की शरण में जाते हो। फिर भी ईसा को अपना जैसा नहीं मानते? दुखी बने रहते हो यहाँ तक कि ईसा के वजूद की खिल्ली उड़ाने लगते हो और अचानक आस्तिक से नास्तिक हो जाते हो और कहने लगते हो कि ईश्वर नहीं है। यह ढोंगियों का चक्र व्यूह है, उनकी रोजी रोटी का साधन है।.... ....क्यों क्या ऐसा अनुभव नहीं करते?''[54] डॉ. भटनागर ने कल्पनात्मक दृष्टि का प्रयोगकर भावों की सहजता को रोचक बनाया है मस्तिष्क में उलझते हुए प्रश्नों के द्वन्द्व को शांत करने का प्रयास किया है उनकी कल्पनात्मक दृष्टि ने समाज के मूल्यों का चिंतन सहज रुप में किया है।

डॉ. भटनागर ने प्रसंगों की आवश्यकता को समझ कर कल्पनात्मक दृष्टि का प्रयोग किया है। 'अन्तर्यात्रा' उपन्यास में महर्षि अरविन्द को ईश्वरीय साक्षात्कार प्रतिभा शक्ति का सहारा लेकर प्रसंग को कल्पनात्मक दृष्टि के साथ प्रस्तुत किया है।

''पर आप है कहाँ?''

''तू मुझे कहाँ देखना चाहता है। या कहाँ कहाँ देखना चाहता है, यह तू निश्चय कर।''

अरविन्द सोच में पड़ गया। क्या उत्तर दे? अचानक उसके मुहँ से निकल गया,

''सर्वत्र;;

''तो देख जहाँ तक तू देख सकता है।''

''अरविन्द ने दीवारों की ओर देखा, छत की ओर, कल कोठरी के बाहर, लोहे के फाटक को, तारकोल से पुती दो टोकरियों, लकड़ी के दरवाजे में गोलाकार छेद....... और जिधर जिधर देख सकता था, देख रहा था कि चहुँ ओर एक वासुदेव नारायण, उनके उंगली में सुदर्शन चक्र है।

वे अर्जुन के रथ के सारथी है।''

''आप वासुदेव, आप!'' अरविन्द के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। क्या वास्तव में ऐसा ही है। वह वासुदेव के दर्शन कर रहा है। वह बोले, यहाँ प्रभु।''

''हाँ वत्स, अब तुझसे छोटा सा काम कराना है, तो आना मुझे ही पड़ेगा न। अन्यथा तुझे विश्वास कैसे होगा कि तू इस जगत में मेरे कार्य हेतु आया है या मैंने तुझे अमुक कार्य हेतु भेजा है। इस जगत में अटल विश्वास के बिना कोई मनुष्य कोई काम नहीं कर सकता।........ तुम मेरी शरण में हो, अरविन्द।''[55] उपन्यासकार ने ईश्वरीय संवाद में कल्पनात्मक दृष्टि के माध्यम से विचारों की सार्थकता एवं आध्यात्मिकता को सरल किया है कल्पना का प्रयोग तथ्यों की बुनावट एवं बनावट को रोचक एवं सरल बनाता है।

3. **समीक्षात्मक दृष्टि :** डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर भावों के कुशल शिल्पी है। इनका शिल्प बेजोड़ है। साहित्य में इनकी दृष्टि समीक्षात्मक रही है। समीक्षा करते समय साहित्यिक विचारों के साथ जुड़े भावों, समस्याओं एवं विषयों पर साहित्यकार का अधिकार होना चाहिए। हिन्दी में साहित्य की विविध विधाओं के द्वारा साहित्यकार अपने युग एवं समाज की समीक्षा करते है। यह समीक्षात्मक दृष्टि विषय की गम्भीरता को समझकर समाज के व्यवहार के साथ उनकी समस्त गतिविधियों का निरीक्षण एवं परीक्षण करती है। समाज का व्यवहार, प्रभाव और परिणाम को दर्शाता है। साहित्यकार अपनी सूक्ष्म दृष्टि से उन मूल्यों का अनुसंधान करता है जो कहीं ना कहीं समाज के समक्ष सही रुप में प्रस्तुत नहीं हो पाये।

एक उपन्यासकार जब उपन्यास में विषयों के प्रति गम्भीर होकर मानव एवं समाज से जुड़ी हुई समस्याओं या विषयों पर लेखन करता है तो इनकी दृष्टि में एक समीक्षक का भाव आना सहज है क्योंकि जितनी गम्भीरता से वह विषय को आत्मसात् कर अनुभूत करेगा उतना ही सटीक उसका विश्लेषण होगा। साहित्य में समीक्षा को केवल दृष्टि बोध ही नहीं माना जाता अपितु भावों की अभिव्यंजना के लिए भी आवश्यक माना जाता है डॉ. भटनागर द्वारा रचित ऐतिहासिक उपन्यासों का विषय इतिहास के महानायक है चरित्र का सम्यक् अवलोकन करने के पश्चात् ही कोई उपन्यासकार उपन्यास में इनसे जुड़े संदर्भों एवं प्रसंगों का विवेचन कर पायेगा। महाराणा प्रताप के संघर्ष को समझना हर किसी के बस की बात नहीं है एक विशाल साम्राज्य के समक्ष एक छोटे से राज्य का अधिपति अपनी स्वतंत्रता एवं अस्तित्व के लिए खड़ा हुआ था। इतने कम संसाधनों के साथ अपनी प्रजा को स्वतंत्रता के भाव से लवरेज कर चेतना भरना महान कार्य

है डॉ. राजेन्द्र मोहन ने युद्ध में हार–जीत का विश्लेषण नहीं किया अपितु स्वतंत्रता से जुड़े मूल्यों की अभिव्यंजना की है जो व्यक्ति के व्यक्तित्व में महानता का बोध कराती है डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने उपन्यास 'जोगिन' एवं 'न गोपी न राधा' में मीरा के माध्यम से स्त्री पक्ष की वेदना, पीड़ा और संघर्ष की समीक्षा की है। मीरा का व्यक्तित्व कृष्णमय होने के साथ साथ समाज की समस्त विषमता का खण्डन भी करता है। वर्षों से चली आ रही दासता की बेड़ियों से भारत को स्वतंत्र कराने के लिए किये गये महानतम प्रयासों की व्याख्या को समीक्षात्मक दृष्टि देने में डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

डॉ. भटनागर का लेखन विचारों की समीक्षा करने में सक्षम रहा है किसी महान विचारक के विचारों का विश्लेषण करना उपन्यास साहित्य की श्रेष्ठतम उपलब्धि है उपन्यासकार ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में विषय की गंभीरता को सरल करने के लिए समीक्षात्मक दृष्टि का प्रयोग किया है 'सरदार' उपन्यास में देश की आजादी के जिस स्वप्न को इन्होंने अंधेरों में देखा था वह साकार हुआ लेकिन उसका रुप वैसा नहीं जैसा होना चाहिए। आजादी की जय में जीवन मूल्यों की पराजय लेखक को व्यथित कर देती है और वह वर्तमान हालात की समीक्षा अपने उपन्यासों में वर्णित करते है।–''सपनों का क्या, वे मोहने भी लगते है और कभी डरा भी इतना जाते है कि सपने में व्यक्ति चीखने चिल्लाने लगता है बहुत कुछ वही हुआ–आजादी का सपना डरा गया। जश्न होते रहे परन्तु आजादी लुकती छिपती भागती  रही हिंसक पशुओं से आँख बचाकर। घर गया, आबरु इज्जत गई, कुमारी बच्चियाँ पेट से हो गई, मजहब नहीं रहा, उखड़े पलस्तर सा जूनून ठोकर खाता रहा। और सूरज उगने से पहले ही डूबने का अभ्यास करता रहा । कोई उत्तर नहीं था किसी के पास मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारों चर्च आदि के सामने सब कुछ हुआ। ये चश्मदीद मूक गवाह बने रहे। क्या ऐसी आजादी के लिए इतनी लड़ाई गई थी कि स्वयं आजादी को अपने ही बन्दों से जान बचाने के लिए दर दर की ठोकर खानी पड़े?''[56] डॉ. भटनागर के उपन्यासों में ऐसे विषयों की प्रसंगानुसार समीक्षा जब मानवीय सोच अन्तर्द्वन्द्व में उलझने लगती है तब उनकी समीक्षात्मक दृष्टि साहित्य के माध्यम से विषय का सही एवं यथार्थ मूल्यांकन करने में सक्षम होती है। जीवन के ऐसे विषय जिन पर चिंतन होना मानव के लिए सहज है परन्तु समीक्षा के साथ उसे मानव के लिए प्रस्तुत कर देना उपन्यासकार का श्रेष्ठतम प्रयास है। जन चेतना के लिए मुद्दे की व्याख्या और समीक्षा आवश्यक है डॉ. भटनागर ने इस तथ्य का अनुभव करते हुए जीवन के विविध प्रसंग, छूआछूत, अमीर–गरीब, ऊँच–नीच, अशिक्षा, धर्म, राज्य, अर्थ, मूल्य एवं निर्धनता जैसे गम्भीर मसलों पर प्रकाश ही नहीं डाला है। अपितु अपनी समीक्षात्मक दृष्टि से सटीक मूल्यांकन भी किया है। 'युग पुरुष अम्बेडकर' उपन्यास में निर्धनता जैसे ज्वलन्त मुद्दे को समीक्षात्मक रुप में  प्रस्तुत करने का श्रम उपन्यासकार ने किया है।

"गरीबी से शर्म आ गई। उससे आँख मिलाने की हिम्मत नहीं हुई।.... उसकी बदसूरती से डर गया! पगले, वह डरने की वस्तु नहीं है और न घबराने अथवा शरमाने की। वही हम जैसों का धर्म है। ईमान है और हमारी जीवन भर की वही कमाई है.... वही हमारा स्वाभिमान है उसी से हमारी पहचान है।" रामजी कहते गये। वह सुनता रहा। उसकी समझ में एक एक शब्द आता रहा। उसने पहले अपने पिताजी के ऐसे तेवर नहीं देखे थे। और ऐसा सोच नहीं जाना था। भीमराव अम्बेडकर के सामने बैसाख की नंगी धूप जिद्दी लड़की सी आ पसरी थी।

राम जी कह रहे थे–" अंबे, गरीबों के वेद, उसकी गीता, उसकी बाइबिल और उसकी कुरान मात्र रोटी है।.....व्यवस्था का अर्थ भी यही है कि वह गरीबी मिटने नहीं दे। वह मिट गई तो फिर व्यक्ति की आवश्यकता कहाँ रहेगी?......... मैंने कितनी बार भूखे रहकर अनुभव किया कि गरीबी कितनी गरीब है, कितनी विवश है और कितनी निर्लज है।......... इसलिए तो अंबे मैं चाहता हूँ, तू खूब पढ़, समझ और मान कर ऐसा रास्ता तलाश कर जिससे अस्सी प्रतिशत से अधिक जनता को सुकून मिल सके।"[57] डॉ. भटनागर ने निर्धनता की समीक्षा ही नहीं कि अपितु अशिक्षा को कारण बताते हुए प्रेरणादायक मंच भी प्रदान किया है।

4. **समाजशास्त्रीय दृष्टि :** डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर की साहित्य साधना में समाज के विविध रुपों को संदर्भित किया गया है। समाज की अवस्था एवं स्वरुप पर किया गया उनका अनुसंधान इनकी औपन्यासिक कृतियों में परिलक्षित होता है। साहित्य रचना करने के पीछे इनका उद्देश्य केवल मनोरंजन नहीं था अपितु विभिन्न काल खण्डों में होने वाले परिवर्तनों में जो कारण रहे उनके प्रति गहन अध्ययन एवं विश्लेषण है इनके उपन्यास समाज में आने वाले बदलाव को महसूस करते हुए मानवीय चेतना का प्रतिबिम्ब है। उपन्यास विधा के सक्षम हस्ताक्षर के रुप में इन्होंने समाज को एक दिशा दी है मानव का इतिहास से गहरा सम्बन्ध है वह अपने इतिहास के साथ अपने वर्तमान का निर्माण करता है तथा भावी पीढ़ी के भविष्य को एक स्वप्न की तरह बुनता है।

समाज की समस्त मान्यताओं एवं परम्पराओं में घुलने वाले अंधविश्वास, ढोंग, पाखण्ड, कुरितियों पर डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने बड़ी गम्भीरता से चिंतन मनन किया है। समाज को इनके कारणों से अवगत कराने का सरलतम प्रयास किया है समाज के सम्यक् अवलोकन के साथ इन्होंने उन कारणों की प्रस्तुति दी है समाजशास्त्र के सिद्धान्तों के साथ उपन्यासों में इनकी दृष्टि समाज में व्याप्त उन सिद्धान्तों के व्यवहार का निरंतर परीक्षण करती है जो युग को एक स्वप्न की तरह बुनने का प्रयास किया है।

समाज का निरीक्षण परीक्षण करते हुए इन्होंने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में वर्णित पात्रों को सामाजिक नियमों एवं संस्कृति के साथ इतिहास के महत्वपूर्ण तथ्यों से सम्पृक्त किया है इनके उपन्यासों में वर्णित पात्र अपने समय के युग निर्माता रहे हैं। इन्होंने साहित्य के माध्यम

समाज को विशेष रुप में व्याख्यायित किया है मानव के व्यवहार को मूल्यों के साथ प्रस्तुत कर भावों की अभिव्यंजना से समाज की सोच एवं सत्यता को दृष्टि दी है आने वाली सामाजिक समस्याओं को समाज के समक्ष प्रस्तुत कर चेतना प्रदान की है इनके उपन्यासों में इतिहास के साक्ष्यों प्रमाणों, आदर्शों एवं संघर्षो से समाज की आदर्श व्याख्या को रुचिकर बनाया है जीवन की विषमता को समाप्त कर समाज में समता एवं शांति की स्थापना के सिद्धान्तों की सरल व्याख्या प्रदान की है।

'युग पुरुष अम्बेडकर' उपन्यास में भीमराव अम्बेडकर के विचारों में इस प्रकार का वर्णन प्रस्तुत किया गया है।–'' हमें घृणा को प्रेम से जीतना है असत्य पर सत्य की विजय के लिए त्याग का मार्ग अपनाना है जड़ जिद को सविनयी चेतना से सक्रिय करना है हमें किसी दूसरे को नहीं अपने आपको जीतना है किसी भी विषम परिस्थिति में सत्य अहिंसा और प्रेम पथ से हटना नहीं है हमारा कोई शत्रु नहीं है न हमारी किसी से लड़ाई है और न हम किसी को नीचा दिखलाना चाहते है।.......... सवर्ण हिन्दू यह क्यों भूल जाते है कि श्री राम ने उपेक्षित और जनजातियों को अपने गले लगाकर उनकी शक्ति से रावण का विनाश किया था''[58] उपन्यासकार ने इतिहास से प्रेरणा भी प्राप्त की और नैतिक मूल्यों के प्रति श्रद्धा भी साथ में व्यक्त की है समाज में व्याप्त छुआछूत के भेद को समाप्त करने की दिशा भी प्रदान की है।

डॉ. भटनागर ने समाज को जीवन मूल्यों का पालन करने का मंत्र दिया है धैर्य एवं संयम से समाज की घृणा एवं विषमता को दूर किया जा सकता है डॉ. भटनागर ने समाज की अवस्था को गंभीर मानकर उसके प्रश्नों का उत्तर प्रस्तुत करने का प्रयास किया है जीवन में धर्म एवं ईश्वर से जुड़े हुए तथ्यों की जिज्ञासा मानव को अध्यात्म का मार्ग सुझाती है अध्यात्म का सीधा सम्बन्ध मानव समाज से है इसलिए मानव की ज्ञानात्मक अवस्था से पहले उसकी सामाजिक अवस्था का अध्ययन आवश्यक है डॉ. भटनागर ने अपनी समाजशास्त्रीय दृष्टि से ऐसे अवसरों पर मानव को एक चिंतन प्रदान किया है।

विवेकानंद उपन्यास में स्वामी विवेकानंद के माध्यम से समाज की आंतरिक सूक्ष्म अवस्था का चित्रण किया है– ''संसार में असम्भव कुछ नहीं है।.... क्या तुम ह्रदय से अनुभव करते हो कि लाखों लाख इन्सान भूखे मर रहे है? क्या तुम्हें अनुभव हो रहा है कि करोड़ों करोड़ जन को यहाँ अंधकार के अज्ञान ने ढक लिया है? क्या इससे तुम द्रवित होते हो? क्या देश की दुर्दशा की चिंता तुम्हारे ध्यान के विषय का केन्द्र बन चुकी है? क्या इस चिंता में डूबकर अपने नाम यश, स्त्री पुरुष, धन सम्पत्ति यहाँ तक कि अपने शरीर को भी तुम बिसार चुके हों? यदि हाँ तो यह जीने की पहली शर्त है। इंसान होने की पहली पहचान है।......... जाओ, मेरे बदनसीब वर्तमान, तुम झुनझुने हो, तुमसे कुछ नहीं हो सकता।..... कुछ भी नहीं...... तुम्हें दलित गलित और क्षुद्र इंसान कहना भी उनका अपमान है जो इस नरक को भोग रहे है जाने कब से, जाने कब

तक?''[59] डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों की रचना में समाज का अध्ययन कर उसकी समस्याओं का निराकरण भी ढूँढा है।

समाज में स्त्री का पक्ष भी बड़ा दयनीय एवं विचारणीय है उसका शोषण हर स्थिति परिस्थिति में होता रहा है उसकी चेतना का कोई केन्द्र नहीं है उसका दर्जा समाज में हर स्तर पर निम्न है उसकी अवस्था पर उपन्यासकार ने गहन मनन एवं मंथन किया है 'धर्म' जैसे पवित्र एवं आध्यात्मिक विषय भी इसके प्रभाव से नहीं बच पायें है स्त्री को माया कहकर पुकारना उसके सम्मान को उसके अस्तित्व को नकारने का प्रयास है डॉ. भटनागर स्त्री पक्ष की मनोस्थिति को समझते है वे जानते है कि धर्म की आड़ में स्त्रियों के प्रति होने वाला अत्याचार समाज की नींव को हिलाने वाला है मानवीय मूल्यों का ह्यस होने की सीढ़ीयाँ है उसके अस्तित्व के प्रति चुनौती है उसकी रक्षा का दायित्व निभाने वाला पुरुष उसे माया का प्रतिरुप बताकर अपनी जिम्मेदारी से पीछे हट जाता है। समाज स्त्री पुरुष के मेल एवं दायित्वों का पुनीत फल है। स्त्री पक्ष का भी उतना ही महत्व है जितना कि पुरुष का है मनुष्य जाति में अतिक्रमण की भावना ने स्त्री को बंधनों में बाँधा है।

'गौरांग' उपन्यास में स्त्री का पक्ष रखने का प्रयास उपन्यासकार ने किया है। ''माया स्त्री की नहीं, पुरुष की भी है। और सच पूछा जाए तो पुरुष ही कठोर मायावी है, क्यों कि उसी ने स्त्री को बाजार में बिठाया है। रखैल बनाया है। चकले कोठे पर बैठाया है। देवदासी वारविलासिनी आदि उसी ने उसे बनाया है। और उसका मनचाहा प्रयोग किया है। शक्ति से भी हठ से भी। यौन शोषण तो उसने अपनी पत्नी का भी किया है।''[60] उपन्यासकार की समाज पर गहरी पकड़ है उनका सामाजिक चेतना का प्रयास हर अवसर पर दिखाई देता है समाज में वर्षो से चली आ रही परम्पराओं का स्वरुप विकृत हो चुका है। रुग्ण हो गई मान्यताएँ घृणित होकर समाज की सभ्यता एवं संस्कृति को चुनौती दे रही है। प्रश्नों का उत्तर ढूँढने में जब मानव विफल रहता है। और मानव श्रृंखला कमजोर पड़ने लगती है तब साहित्य की दृष्टि समाज में चेतना का प्रसार करती है। ''दीदी यह समाज तो न जाने कब से उन बीमारियों, अत्याचारों, शोषण और अन्याय से लड़ रहा है पर हुआ क्या? वहीं ढाक के तीन पात! पहले जहाँ थे, आज भी वहीं है, बल्कि उससे भी बदतर हालात में है।''[61] डॉ.भटनागर ने हर स्तर पर समाज के प्रति दायित्वों का निर्वाह किया है इनकी मौलिक प्रतिभा ने समाज के सभी पक्षों का चित्रण किया है समाज में व्याप्त विषमता और कृत्रिमता का खण्डन किया है जीवन मूल्यों के जुड़ाव को समाज में स्थापित करने का प्रयास किया है एक समाजशास्त्रीय की भाँति समाज का मूल्यांकन किया और अनसुलझे पहलुओं को सुलझाने का प्रयास भी किया है समाज की विसंगतियों को दूर करने का साहस इनके उपन्यासों की श्रेष्ठता है।

**हास्य एवं व्यंग्यात्मक दृष्टि** – साहित्य भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम है भाव का विश्लेषण करने के लिए मानव के चरित्र के अनुसार या प्रसंगानुसार प्रस्तुति देनी होती है। अतः साहित्यकार के समक्ष यह गम्भीर चुनौती होती है कि वह प्रसंग का प्रस्तुतिकरण किस प्रकार से करे कि पाठक की रुचि साहित्य में बनी रहे। अतः पाठक को रोचकता एवं सरलता प्रदान करने के लिए व्यंग्य का आश्रय लेता है व्यंग्य का सहारा लेकर साहित्यकार बोझिल होती मानस स्मृति को तरोताजा कर देता है वह नियमित अंतराल के बाद साहित्य में ऐसे प्रसंगों का निर्माण अपनी कल्पना या वास्तविक स्थिति के अनुसार करके पाठक के मन को ऊर्जावान बनाता है।

पाठक के लिए रुचि उत्पन्न करना साहित्यकार के लिए कठिन कार्य नहीं है। परन्तु भावों की सजगता को बनाए रखना भी आवश्यक है। साहित्यकार की यह नैतिक जिम्मेदारी होती है कि वह समाज की वास्तविकता एवं तात्कालिक परिस्थितियों का मूल्यांकन एवं विश्लेषण समाज के सन्दर्भ में प्रस्तुत करे। अतः वह कुछ इस प्रकार के प्रसंगो में व्यंग्य के माध्यम से भावों के प्रस्तुतिकरण की सशक्त योजना बनाता है। इनके द्वारा प्रयुक्त व्यंग्यात्मक दृष्टि में इतिहास के धूमिल होते प्रसंगों को स्पष्ट करने का सफल प्रयास किया है। पाठक जहाँ कहीं भी अरुचि या बेमन होने लगता है वहीं इनकी व्यंग्यात्मक दृष्टि साहित्य को रुचिकर बनाने में सफल होती है। जीवन की गम्भीर समस्याओं के बीच प्रसंगों को स्मरणीय बनाने के लिए उपन्यासकार के लिए व्यंग्य का सहारा अत्यावश्यक है। उपन्यासकार ने इतिहास नायकों के जीवन चरित्र को अपने उपन्यासों की विषय वस्तु बनाया है जीवन की विषमता एवं साम्यता में हँसी–मजाक के सामान्य क्षणों का प्रयोग करते हुए विषयों की क्लिष्टता को थोड़ा सरल करने का उपाय किया है। 'सूर्यवंश का प्रताप' उपन्यास में प्रताप एवं रानी के बीच यह संवाद प्रेम एवं व्यंग्य का समन्वयात्मक स्वरुप प्रस्तुत करता हुआ पाठक के चित्त में प्रसन्नता उत्पन्न करता है–

–"हमें वचन दीजिएगा।

–कैसा?

–जानकर वचन दीजिएगा?

–चलिए,दिया।

–वचन दिया है, प्रिये,याद रखिएगा।

–जानती हूँ वचन के पीछे नहीं हटूँगी।

–तो आज से कभी इस तरह भूख के प्रति अन्याय और अत्याचार नहीं करेगी।

–वह कह कहा लगा उठी।

–क्यों क्या हुआ है?

–तुमने मेरे लिए ही मुझसे वचन लिया है।..... मेरे हित के लिए ही.......। उसने होठों और आँखो में स्मित दबाते हुए कहा और वातायन की ओर देखने लगी।

–तो क्या बुरा किया?

बुरा क्या होता?..... कुछ भी नहीं। इसका मतलब यह हुआ कि हम खाने पीने में भी स्वतंत्र नहीं है।''[62]

डॉ. भटनागर ने उपन्यासों में व्यंग्य का आश्रय लेकर लेकर राजनीति एवं युद्ध के प्रसंगों में की सार्वकालिक चेतना की अभिव्यक्ति दी है वे 'नीले घोड़े का सवार' उपन्यास में मानसिंह और महाराणा प्रताप की राजनीतिक वार्ता में भी उपन्यासकार ने व्यंग्य का आश्रय लेकर विषय की गम्भीरता को अस्तित्व एवं स्वतंत्रता के चिंतन से जोड़ दिया है।

''शहंशाह जंग नहीं चाहता।''

''जंग हम भी नहीं चाहते, राजा–सा।''

''फिर तो सुलह हो जानी चाहिए।''

कैसे? महाराणा प्रताप ने सहज होकर पूछा।

''आप चाहे तो........। मानसिंह अधूरा वाक्य छोड़ कर रह गया।

''वो कैसे?''

'' आप अकबर शहंशाह से मिले ले।''

''दरबारी होने के लिए।'' महाराणा प्रताप के स्वर में व्यंग्य तैर गया।''[63]

डॉ. भटनागर ने व्यंग्य का सहारा लेकर भावों की प्रस्तुति भी सहजता से की है। वे विषय एवं भाव का विश्लेषण करने के लिए अथवा भावों की अभिव्यक्ति को सरल एवं रुचिपूर्ण बनाने के लिए संवाद में व्यंग्य का पुट देते है। जिससे पाठक के लिए प्रसंग का अर्थ ग्राह्य होता है।

''मानसिंह ने कहा युवराज हम जाना चाहते है।''

''परन्तु भोजन..................!''

वह हम कर चुके है।'' मानसिंह के हृदय को जो गहरी चोट लगी थी, उससे वह तिलमिला उठा था।

''हमसे कोई गलती हो गई है, राजा सा।''

''नहीं गलती हो गई है जो हम यहाँ आए।..... आपने तो हमें कृतार्थ कर दिया।'' मानसिंह ने व्यंग्य से कहा।''[64]

डॉ. भटनागर उपन्यास विद्या के कुशल शिल्पकार है उनकी दक्षता है कि वह अपने उपन्यासों की सर्जना में इतिहास के गम्भीर विषयों की ग्राह्यता को सहज बना देते है। इनकी हास्य एवं व्यंग्यात्मक कुशलता ने पाठक को जहाँ रोचकता प्रदान की थी वहीं समाज के समक्ष चिंतन को एक आयाम भी प्रस्तुत किया है। उपन्यास और उपन्यासकार की सफलता इसी बात मे है कि चिंतन एवं मनन को वह सरलता प्रदान करते हुए विषय की सार्वकालिकता को प्रस्तुत कर

सके। डॉ. भटनागर के उपन्यासों में हास्य व्यंग्य की सृष्टि ने सार्वकालिक व्याख्या को प्रसंगानुकूल स्वरुप प्रदान करने में सफलता प्राप्त की है।

## (ङ) शिल्प विधान

डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने साहित्य रचना कर्म की साधना के लिए उपन्यास विधा को माध्यम के रुप में चुना है साहित्यिक विधाएँ भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम है। साहित्य में इतिहास से जुड़े व्यक्तियों के जीवन संदर्भ के विषयों के साथ उस समय की तत्कालीन परिस्थितियों के विषय में चिंतन करना सहज कार्य नहीं है। डॉ. भटनागर जैसे साहित्यिक समीक्षक के लिए यह चुनौती बौनी साबित होती है साहित्य के माध्यम से इन्होंने इतिहास के अनसुलझे रहस्यों पर चिंतन किया है उपन्यास की वृहद्ता तथ्यों के प्रस्तुतिकरण एवं विश्लेषण की आवश्यकता को पूर्ण करती है डॉ. भटनागर ने अपने साहित्य की विशालता को उपन्यास के पृष्ठों में समेटने का प्रयास किया है जीवन की विशालता में से उन महत्वपूर्ण रचनात्मक कार्यों की व्याख्या को स्पष्ट करने का और कोई सरल माध्यम इन्हें रास नहीं आया है। भाव पक्ष एवं कला पक्ष का बड़े ही सरल, रुचिकर रुप में उपन्यासों में वर्णन किया गया है इनके द्वारा रचित उपन्यासों के कला पक्ष को हम निम्न लिखित औपन्यासिक तत्वों के माध्यम से समझ सकते हैं।

उपन्यास विधा का शिल्प निम्नांकित तत्वों के द्वारा निर्मित होता है।

i.कथानक

ii.चरित्र का पात्र

iii.संवाद/कथनोपकथन

iv.देशकाल/वातावरण

v.भाषा शैली

vi.उद्देश्य

**उपन्यास में कथानक** :— उपन्यास साहित्य में कथानक प्राण तत्व के रुप में परिभाषित किया जाता है। कथानक उपन्यास का वह तत्व है जो विषय की मौलिकता एवं क्रमबद्वता को बनाये रखता है। कथानक के स्वरुप पर ही अन्य औपन्यासिक तत्वों का निर्धारण होता है। किसी भी विषय को प्रस्तुत करने के लिए साहित्यकार उसे रोचक एवं क्रमबद्ध बनाने में कथा शिल्प का आश्रय लेता है कथा शिल्प के द्वारा ही वह भावों की विविधताओं को बिखरने से बचाता है भावों के जीवन दृष्टि प्रदान करने का अद्वितीय कार्य उपन्यास में कथानक के माध्यम से ही संभव हो

पाता है इस संदर्भ में डॉ.प्रेम कुमार कहते है–''एक श्रेष्ठ उपन्यास का आधार निश्चय ही कोई कथा होती है जिसकी नींव पर कथाकार अपनी जीवन दृष्टि को खड़ा करता है यह जीवन दृष्टि व्यापक अनुभवों के सहारे खड़ी हो पाती है।''[65] कथानक का मूल कार्य विषय की क्रमबद्धता, मौलिकता, रोचकता एवं नवीनता को पाठकों के समक्ष इस प्रकार प्रस्तुत करना है जो विषय के केन्द्रीय भाव स्पष्ट कर सके उपन्यास का यही गुण कथानक को प्रमुख बनाता है। डॉ. भटनागर अपने उपन्यासों के संदर्भ में लिखते है ''हर एक दार्शनिक, कलाकार और साहित्यकार को अपने समय की राख कुरेदनी पड़ती है और चिनगारी को फिर से आग बन जाने तक बिना रुके मशक्कत करनी होती है। एक बार आग हाथ लग जाए तो फिर अंधेरे रास्ता देने के लिए मजबूर हो जाते हैं। मुझे कुछ ऐसा ही अनुभव हुआ कि मानव की कहानी आग से शुरु होती है और आग तक जाती है। लिखने के लिए इस आग की जरुरत है।''[66]

डॉ. भटनागर साहब अपने उपन्यास लेखन में कथानक का चयन इतिहास से ग्रहण करते है। इतिहास शाश्वत, सत्य एवं सार्वकालिक होता है उपन्यास विधा ऐतिहासिक तत्वों का कथ्यात्मक निरुपण करने में सक्षम विधा है डॉ. भटनागर जी ने अपने उपन्यासों में ऐतिहासिक पात्रों का चित्रण करते हुए इतिहास की मौलिकता को नवीनता के साथ प्रस्तुत करने में सफल रहा है इनके द्वारा कथानक को इस प्रकार क्रमबद्ध किया गया है कि इतिहास पुनरावृत होते हुए भी रुचिकर लगता है नवीन एवं रोचक बनाने के क्रम में कहीं ऐतिहासिक तथ्यों की अवहेलना न हो इस पर पूर्ण ध्यान देते हुए भटनागर जी ने अपने उपन्यासों को वृहद् रुप में प्रस्तुत किया। उपन्यासकार ने 'न गोपी न राधा' उपन्यास में लिखा है ''इस बार से मेरा यही प्रयत्न रहा है। आकार से बाहर आकर निराकार जगत् में प्रवेश करने से पूर्व की अनंत मीरा–अनुभूतियों में से कुछ अनुभूतियों से अपने पाठकों को जोड़ सकूँ, ताकि उनका तन भीग उठे, उनका मन रीझ उठे और उनका तन–मन एकाकार हो सके। भिद्य कुछ नहीं रहे, सब अभिद्य हो जाए।''[67] प्रत्येक ऐतिहासिक पात्र की अपनी एक जीवन दृष्टि होती है अपने संदर्भ एवं परिस्थितियाँ होती है इन सभी तथ्यों को एक सूत्रता में बाँधकर रोचक एवं नवीन ढंग से मूल्यांकन का कार्य डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों के कथानक में किया है।

डॉ.भटनागर द्वारा लिखे गये उपन्यासों में विवेकानन्द, अम्बेडकर, महर्षि अरविन्द, महात्मा गाँधी, मीरा, सुभाष चन्द्र बोस, सरदार वल्लभ भाई पटेल आदि है यह कोई व्यक्ति नहीं इतिहास को जीवन दृष्टि देने वाले विचार है। इनके विचारों का समाज एवं जीवन पर आध्यात्मिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, वैयक्तिक, नैतिक, दार्शनिक, आर्थिक, धार्मिक, एवं अन्य रुपों में प्रभाव पड़ता है। उपन्यासकार के रुप में डॉ. भटनागर ने इनके जीवन संदर्भो को कथानक में रुप में क्रमबद्ध करने में पूर्णतया सफल रहा। ''यह उपन्यास न केवल उनके समय की संवेदना–व्यंजना से संबद्ध है अपितु आज के जीवन की संचेतना का एक अपरिहार्य अंग भी है।''[68]

**उपन्यासों में पात्र या चरित्र** :– कथानक के उपरांत उपन्यास साहित्य में पात्र योजना या चरित्र चित्रण महत्वपूर्ण तत्व है कथानक में विषय के अनुसार ही पात्र योजना का निर्धारण किया जाता है उपन्यासकार जब किसी चरित्र को अपनी पात्र योजना का अंग बनाता है तो उसके मन में उस पात्र से जुड़े सम्पूर्ण पहलू, हर घटनाक्रम, स्मृति के मानस पटल पर मँडराने लगते है पात्र का चयन नहीं किया जाता है अपितु वह कथानक में स्वयं उपस्थिति दर्ज करवा देता है किसी कथानक को जीवन्तता प्रदान करने का महत्वपूर्ण कार्य पात्र के द्वारा ही सम्पन्न होता है। डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों ममें पात्रों के संबंध में बहुत ही सावधानी बरती है। उपन्यासकार ने पात्र का चरित्र प्रस्तुत करते हुए चारित्रिक विशेषताओं को उभारने का प्रयास किया है। वह किसी भी चरित्र का एक पक्षीय न होकर सर्वांगीण व्यक्तित्व को परिभाषित करता है। मीरा को एक स्त्री ही नहीं अपितु भक्त, संत एवं समाज सुधारक के रुप में भी प्रस्तुत किया है।'' मीरा ने आँखें बन्द की लीं और शनैः–शनैः उनमें एक आकार उभरा। वह आकार नव कृष्ण बना गया। मुरलिका उसके हाथ में थी। वह पूछ रही थी, ''जगत् नियन्ता कान्हा, यह सब क्या है ? तेरी यह सृष्टि कैसी है ? ब्रजवासी कष्ट में है। लाखों लाख जनता, परास्त होने की घनघोर पीड़ा भोग रही है। पर तू है कि हाथ में मुरलिका लिये चिरस्मित् से श्रीयुत् है। तू मौज में है। सबसे निश्चित है। तूने यह स्वभाव कब से बना लिया है? तू तो पर पीड़ा को हरने वाला और अन्याय करने वालों को दण्ड देने वाला है। हे मेरे प्रभु, मेरे स्वामी, यह सब क्या है? मैं यह सब क्या देख रही हूँ? क्या सुन रही हूँ? तेरे नाम के अनेक अधिकपति हैं, मठाधीश है और धर्मीश है। वे धर्म की आड़ में तेरे भक्तों को लूट रहे है। तू सब जानता है। तू सर्वज्ञ है। फिर, क्यों हाथ पर हाथ धरे हुए है और इस ओर से अनभिज्ञ है?

मेरी विनती सुर रे, गीता के कृष्ण ! महाभारत के यशस्वी योद्धा ! तू सुन तो रहा है। तेरी सृष्टि बिगड़ रही है। अब तू सुदर्शन उठा और फिर से इस कुरुक्षेत्र में आ।''[69] डॉ. भटनागर ने सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक चरित्र को 'विवेकानंद' उपन्यास में रेखांकित किया है –''अमर पुत्रों इस विश्व धर्म सम्मेलन से हमें जो सीखने को मिला है वह है कि आध्यात्मिकता, पवित्रता और उदारता किसी धर्म की सम्पति नहीं है। वह सब धर्म में यथा शक्ति विद्यमान है। अंत में, मैं कहूँगा कि सहयोग करो संघर्ष या प्रतिस्पर्धा नहीं। हमें विनाश नहीं शांति चाहिए।''[70] उपन्यासकार ने अपने ऐतिहासक उपन्यासों में पात्रों की दृष्टि से कई प्रकार के काल्पनिक पात्रों की सृष्टि की है लेकिन ऐसा करते हुए उन्होंने इतिहास के तथ्यों को भी सुरक्षित रखा है। इन्होंने आत्मसंवाद, आत्मचिंतन, स्वप्नदर्शन एवं विचारात्मक रुप से पात्रों का सृजन किया है। ''इस बार गोपाल मोर मुकुट धारण कर मुस्करा उठे। वह सत्रह–अठारह वर्ष के युवा थे। उके एक हाथ में बाँसुरी थी। उनके नयन विशाल थे। उनके हृदय प्रदेश पर पुष्प माला शोभायमान थी। वह कह रहे थे–अब हम चलते हैं, सूरा।

–फिर कब मिलोगे ?

–जे सब तिहारे पर है।

–मेरे पर।

–हाँ, तेरे पर, सखा। तू बुलाएगा तो मुझे आना ही पड़ेगौ।

–बिन बुलाए, तू नहीं आएगौ।

–गोपाल मुस्करा उठे। कुछ बोले नहीं। सिर्फ मुस्कराते रहे।

–उत्तर दो न, गोपाल।

–वो तू, अपने मन से बूझ।

–तिहारे से बहस में आज तक कोई जीता है क्या, गोपाल, जो मैं जीत सकूँगौ।

–काश, तू यहाँ न आता।

–आना पड़ा रे।

–क्यों भला?

–मैं क्या करुँ, गोपाल? अंधो हूँ न।

–तो ?''[71]

साहित्यकार ने सुभाष चंद बोस, महर्षि अरविन्द, सरदार पटेल के माध्यम से राष्ट्रीय चरित्र को शब्दबद्ध किया है। डॉ. भटनागर उपन्यास जगत के ऐसे उपन्यासकार हैं जिन्होंने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों को धर्म, संस्कृति, स्वतंत्रता, राष्ट्रीयता, समाज, दर्शन जैसे विषयों से सम्पृक्त कर एक ही चरित्र पर एक से अधिक उपन्यासों की रचना की है।

उपन्यासकार पात्रों को लेकर सदा गम्भीर रहता है वह पात्र को विभिन्न संदर्भो में विभिन्न परिस्थितियों में तौलता हुआ अपने उपन्यास को गति देने का प्रयास करता है। पाठक के समक्ष उपन्यास के पात्र जीवित व्यक्ति के समान मस्तिष्क में विचरण करते है वह उन पात्रों को आत्मसात् करते हुए चरित्रांकन करते है। हर पात्र की अपनी जीवन दृष्टि, उसका अपना समर्थन एवं विरोध है विचारों का परीक्षण करते हुए मूल्यों को जीवन दृष्टि के साथ जोड़ने का कार्य साहित्यकार को करना पड़ता है चरित्र सृष्टि को प्रतिपादित करते हुए मुंशी प्रेमचन्द्र कहते है–''चरित्रों का चित्र जितना स्पष्ट, गहरा और विवेकपूर्ण होगा उतना ही पढ़ने वालों पर उसका असर होगा।''[72]

डॉ. भटनागर जी अपने उपन्यासों में जिन पात्रों का चित्रण किया है वे सभी ऐतिहासिक महापुरुष है इनके युग, विचार, भाव, परिस्थितियों एवं प्रवृतियों का सटीक एवं सार्वकालिक मूल्यांकन करने का सफलतम प्रयास डॉ.भटनागर जी द्वारा किया गया है सार्वकालिक चेतना से आधार ग्रहण कर मूल्यों एवं प्रवृतियों की व्याख्या इन चरित्रों के माध्यम से की गई है साहित्यिक, राजनीतिक, नैतिक, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक चेतना की सार्वकालिक व्याख्या का पुनीत कार्य इनके चरित्र चित्रण के द्वारा किया है वे अपनी कालजयी विचारधारा से सामान्य से विशेष बन गये उनके संधर्ष की गाथा प्रेरणास्पद रही है। 'दिल्ली चलो' उपन्यास में डॉ. भटनागर ने सुभाष चंद बोस के राष्ट्रीय चरित्र को प्रस्तुत करते हुए स्वतन्त्रता के यज्ञ में जीवन के सर्वस्व समर्पण की आहुति के प्रण को पुर्नस्थापित किया है। 'गौरांग' उपन्यास में गृहस्थ, संन्यास, धर्म जैसे विषयों के साथ महाप्रभु चैतन्य के चरित्र की शाश्वतता की व्याख्या की है। साहित्य का चिंतन भी इसी विशेषता को प्रतिपादित करता है कि मूल्यों का आदर्श स्वरुप बना रहा किसी उपन्यास में जब पात्र ऐतिहासिक चरित्र से सम्बन्धित हो तो साहित्यकार का दायित्व और अधिक बढ़ जाता है वह ऐतिहासिक सन्दर्भों, तथ्यों, की मौलिकता को बिना छेड़े मानवीय संवेदनाओं से सामाजिकता को जोड़ता है बाबू गुलाब राय इस पर अपना मत व्यक्त करते हुए कहते है – ''यदि उपन्यास का विषय मनुष्य है तो चरित्र चित्रण उपन्यास का सबसे महत्वपूर्ण तत्व है क्योंकि मनुष्य का अस्तित्व उसके चरित्र में है चरित्र के कारण ही हम एक मनुष्य को दूसरे से पृथक करते है एवं उसके व्यक्तित्व को प्रकाश में लाते है।''[73]

अतः हम कह सकते है कि डॉ. भटनागर के उपन्यासों में वर्णित पात्र योजना एवं चरित्र चित्रण इतिहास के मूल्यों को ग्रहण कर नवीनता एवं रोचकता के साथ सार्वकालिक चेतना की व्याख्या करता है।

**संवाद/कथनोपकथन** :– उपन्यास साहित्य का तीसरा महत्वपूर्ण तत्व संवाद या कथनोपकथन हैं कथा में जहाँ पाठक को अरुचि होने लगती या पढ़ते पढ़ते उसका ध्यान हटने लगता है वहाँ संवाद अपनी भूमिका का निर्वाह करते हुए पाठक को पुनः विषय से जोड़ देता है। साहित्य में कथानक के प्रसंगानुसार संवाद का प्रयोग किया जाता है। संवाद कथा को भावात्मक रुप से संगठित करने में कुशल होते है अतः उपन्यास में संवाद की भूमिका भाव एवं विचारों को स्पष्ट करने में निहित है उपन्यास साहित्य में संवाद का प्रयोग बड़ी सावधानी के साथ करना पड़ता है क्योंकि लेखक समाज के सम्मुख जिस उद्देश्य को लेकर जाना चाहता है उसके अनुसार ही संवाद का प्रयोग करना चाहिए। प्रेमचंद जी संवाद पर अपना मत व्यक्त करते हुए कहते है –''उपन्यास में वार्तालाप जितना अधिक हो और लेखक की कलम से जितना कम लिखा जाए उतना ही अच्छा है। किसी भी चरित्र के मुख से निकले प्रत्येक वाक्य को उसके मनोभावों और चरित्र पर कुछ प्रकाश डालना ही चाहिए।''[74]

उपन्यासकार ने 'अमृत घट' उपन्यास में भारतीय दर्शन एवं अध्यात्म की चेतना की प्रस्तुती दार्शनिक संवाद के द्वारा की है।

—मैं कुछ नाही समझा, बाबा! थ्तहारी बातन की समझ म्हारे में नाहीं है।..... जा मैं तिहारा कसूर कछु नाहीं। सब कछु जे अँधा भाग्य है, जिसे न कछु दीखता है और न सूझता है।

—ना रे, बालक, ना। ऐसा नहीं कहते। ऐसा नहीं सोचते।

—पतो नाँय, बाबा......कछु भी पतो नाँय।

—पतो करेगौ तो ही तो पतो लगेगौ।

—पर क्यों, बाबा? .....कैसे, बाबा. ..... न उसकी महतारी है, न पिता।। न वो हाड़ मांस को है, न बामें कोई गुन—अवगुन है। .....ना बाको कछु पतो—ठिकाना है। फिर बाहे जानने सूं का लाभ ?

—सूर सोच—सोचकर कहता गया अपने मन को टटोलता हुआ।

—प्रश्न हानि—लाभ का नहीं है, बालक, जानने का है। जानकर समझने और भजने का है।

—बा सूं का होगा ?

—जे, तो बाहे भजकर ज्ञात होगा।.....अब तक तूने बाहे नाहीं भजो तो नाहीं भजो पर अब भज रे। जान रे, जो हाड़ मांस का नाहीं है, गुण—अवगुण से भी परे है और जो न जनमता है, न मरता, वह का है, कैसा है और कहाँ है ?''[75]

डॉ. भटनागर जी ने अपने उपन्यासों में बड़ी कुशलता से संवाद शैली का प्रयोग किया है भटनागर जी अपने पात्रों के मुख से निकलने वाले प्रत्येक संवाद की अर्थवत्ता एवं संदेश पर विशेष ध्यान दिया है डॉ. भटनागर ने संवादों को रुचिकर बनाते हुए विविध रुपों में प्रस्तुत किया है। प्रश्नोत्तर, विचारात्मक, आत्ममंथन, चिंतन, देवीय स्वरुप, दार्शनिक आदि रुपों में संवादों का प्रस्तुतीकरण उपन्यासों में पाठक के समक्ष विषय को सरल रोचक एवं नवीन भाव में प्रस्तुत करता है। युग पुरुष अम्बेड़कर ने उपन्यासकार ने आत्मचिंतन को संवाद के रुप में उभारा है ''भीमराव जुहू समुद्र तट पर अकेले बैठे सोच रहे थे। अंततोगत्वा लहर की हृदयकांक्षा क्या है? क्या वह तट से टकराकर लौअ जाने को ही अपने जीने का एकमात्र लक्ष्य मानती है? आते सममय उसमें कैसा उद्‌दाम उत्साह, अदमित उल्लास और उच्च स्वर में जय निनाद सावन की घनी घटा—सा उमड़ता होता है और तट से टकराकर लौटते समय कैसा पराड्.मुख भाव, पराजय शून्य चीत्कार और अरण्य रुदन सिमट आता है ! 'नहीं......नहीं....मैं लहरों जैसा नहीं......' उनमें एक आवाज उठी और उनके हृदयाकाश पर चपला—सी कौंध गई। वे उठ खड़े हुए। उनके सामने इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट

की वही चिर–परिचित चाल आ ठहरी। तीन मंजिला चाल। हर एक माले में एक कमरे के अस्सी मकान। हर माले पर दो नल और दो शौचालय। मजदूरों की अभाव वाली वह चाल ! अछूतों की शरण स्थली !''[76]

कथनोपकथन का प्रयोग प्रसंग के अनुसार किया है भटनागर जी के उपन्यासों के पात्र ऐतिहासिक व्यक्ति है अतः इन्होंने संवाद का विशेष ध्यान रखा है प्रत्येक संवाद एक अर्थ, विचार और मूल्य का संचालक होता है अतः उपन्यासकार संवाद का प्रयोग करने में सावधानी रखता है। 'गौरांग' उपन्यास में साहित्यकार ने धार्मिक संवाद के रुप में महाप्रभु चैतन्य की अंतर्दृष्टि को प्रस्तुत किया है ''गौरांग देख रहा था कि वैष्णव धर्म छला जा रहा है, कमजोर पड़ रहा है और असहाय भी। वह उपहास का पात्र बनता जा रहा है।

गौरांग गंगा–तट पर आकर उसके निर्बाध प्रवाह को तल्लीन होकर देखते–देखते आत्मानुभव से जुड़ने लगते। वह मात्र गंगा नहीं, महानात्मा है। उसमें शीतल जल नहीं, अमृत बहे जा रहा है। निस्संदेह वह अमृतमयी है। आत्मा का इतना प्रसार कि आत्मा ही अमृत बन झर–झर स्वर में गा उठता है।

''ठहरो, गौरांग। सुनो। सुनते रहो!''

''कौन हो, शुभचिंत बंधु, क्या चाहते हो?''

''अपने को पहचानो कि तुम कौन हो?''

''क्या होगा, बंधु? अपने को पहचानने वालों की स्थिति देख रहे हो, वह हिंदु धर्म का त्याग कर इस्लाम मज़हब स्वीकार कर रहे हैं। धर्म बल से है। जैसे–जैसे बल चुकता जाता है वैसे ही वैसे धर्म भी दीन–हीन होकर लुंजपुंज होकर रह जाता है–पराश्रित!''

''तुम तर्क मत बुनो। पोथियों से बाहर भी कुछ अनुभव करते जो अशेष का शेष है और जिससे, पूर्णता की ओर बढ़ा जा सकता है। शून्य से आगे जानना चाहते हो तो पहले शून्य के अनुभव को आत्मसात करो।''

''नहीं, बंधु, तुम अपनी माया समेटो। मुझे जो करणीय है, वह मैं करुंगा। हो सकता है, नहीं भी करुं, क्योंकि मेरा और आने वाला कल भी आज है। पर मेरे लिए और कुछ नहीं है।''[77]

उपन्यासों में संवाद की बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका होती है कथानक और पात्र ऐतिहासिक हो तो उपन्यासकार की जिम्मेदारी और अधिक बढ़ जाती है। इतिहास वर्तमान को प्रेरणा देता है तथ्यों की प्रामाणिकता और वर्तमान संदर्भ में प्रासंगिकता को ध्यान में रखकर संवादों का चयन किया जाता है। डॉ. भटनागर जी ने अपने उपन्यासों में इस बात का अधिक ध्यान रखा है क्योंकि इनके पात्र ऐतिहासिक होने के साथ भारतीय जनमानस में एक आदर्श भी है अतः लेखक

ने इसे संवादों के जरिए सार्वकालिक चेतना को प्रकाशित करने का कार्य किया है सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में संवादों का चयन कर आध्यात्मिक, राजनीतिक, धार्मिक, ग्रामीण जीवन, सांस्कृतिक, आर्थिक आदि तथ्यों , मूल्यों को आदर्श रुप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

**देशकाल/वातावरण** :– ''यदि वे (पात्र) भगवान की भांति देशकाल के बंधनों से परे हो, तो वे भी हम लोगों के लिए अभेद रहस्य बन जाऐगे इसलिए देशकाल का वर्णन भी आवश्यक हो जाता है व्यक्ति के निर्माण में वातावरण का बहुत कुछ हाथ होता है। जिस प्रकार बिना अँगूठी के नगीना शोभा नहीं देता उसी प्रकार बिना देशकाल के पात्रों का व्यक्तित्व भी स्पष्ट नहीं होता है। और घटना क्रम के समझने के लिए भी इसकी आवश्यकता होती है।''[78]

वातावरण से तात्पर्य तत्कालीन परम्परा और संस्कृति से है कथानक के अनुसार ही वातावरण का वर्णन किया जाता है। तत्कालीन रीति–रिवाज, रहन–सहन, जीवन मूल्य, प्रवृतियों, त्यौहार, समाज, व्यापार, नैतिकता और भी अनेक तत्वों का वर्णन वातावरण के अंतर्गत किया जाता है इन सब तत्वों का वर्णन जहाँ पाठक को काल विशेष की जानकारी देता है वहीं उसे पात्रों की मनःस्थिति एवं व्यवहार को भी समझने में सहायता मिलती है। डॉ. भटनागर ने 'अमृतघट' उपन्यास में ब्रज क्षेत्र के कृष्णोत्सव का वर्णन करते हुए भारतीय संस्कृति एवं त्योहारों की सुंदर प्रस्तुति दी है ''वह बहुत देर तक कृष्ण जनमाष्टमी के शुभ अवसर पर होने वाले महोत्सव का वर्णन करती रही। हर घर–मन्दिर में हिंडोले पड़े थे। रोज नया शृंगार सजता था। किसी–किसी मन्दिर में आज पीत श्रृंगार होगा, कल नीला श्रृंगार होगा और परसों गुलाबी। कही झूला फूलों का पड़ा है, कहीं स्वर्णिम धागों का। उस झूले में पड़ा पालना कहीं चाँदी का है और कहीं सोने का।

बज्र में एक ही धूम है। एक ही मस्ती है। एक ही गीत है। कृष्ण जन्मोत्सव है। सारा गाँव–वही केवल नहीं, बज्र का प्रत्येक गाँव–जन्मोत्सव की तैयारी और झाँकी प्रदर्शन की उमंग में डूबा हुआ है। मानो इसके अलावा उसे कोई काम ही न हो। सन्ध्या होते–होते घर–बार छोड़कर वहाँ के लोग मन्दिरों के दर्शनों के लिए नव मेघशावकों की तरह, हर्षोल्लसित होकर निकल पड़ते हैं।''[79] वातावरण से कथानक की रोचकता एवं सरलता में वृद्धि होती है। डॉ. मक्खन लाल शर्मा के अनुसार –''देश काल के अंतर्गत समाज, राष्ट्र या राष्ट्र की धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, परिस्थितियाँ, आचार, विचार, रहन–सहन, रीति–रिवाज, आदि आते है।''[80]

डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों का कथानक ऐतिहासिकता से ग्रहण किया है इसी कारण उनके उपन्यासों में ऐतिहासिक वातावरण का वर्णन किया है वातावरण या देशकाल का वर्णन करने में उन्होंने सावधानी बरतते हुए इतिहास के उसी स्वरुप की मौलिकता को वास्तविक रुप में दिखाया है उपन्यासकार जब कथा इतिहास से ग्रहण करता है तो उसकी जिम्मेदारी

अधिक बढ़ जाती है वह कल्पना का सहारा अवश्य लेता है परन्तु केवल उतना ही, जिससे इतिहास के मौलिक स्वरुप की कोई क्षति न पहुँचे। डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में तत्कालीन रीति–रिवाज, परम्परा, रहन–सहन, वेशभूषा, हथियार, नैतिकता, धार्मिकता, संस्कृति, त्योहार, प्रकृति, प्राकृतिक सौन्दर्य, युद्धकला, गृह–सज्जा, ग्रामीण संस्कृति, लोक जीवन, व अन्य तत्वों का बड़ी कुशलता के साथ वर्णन किया है। महाराणा प्रताप और अकबर की सेना के मध्य युद्ध का सजीव वर्णन उपन्यासकार के लेखन का सौन्दर्य है ''महाराणा की दृष्टि मानसिंह पर पड़ गयी। वह चेटक को एड़ लगाते हुए उधर ले गया। चेटक ने हाथी की सूँड पर पाँव जमा दिये। प्रताप ने भाले से वार किया। महावत को अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा। मानसिंह छिप गया। इसी समय मानसिंह के लघु भ्राता माधवसिंह ने बाण तानकर मारा, वह चेटक के लगा। अवसर पाकर मानसिंह ने अपना हाथी दूरी तरफ मोड़ लिया। प्रताप पर चारों ओर से शत्रु–दल टूट पड़ा। वह मुट्ठीभर राजपूतों के साथ वहाँ घिर गया। भील मुखिया ने एक बाण तानकर मानसिंह के हाथी के मारा। वह पाखर से हटकर लगा। हाथी तिलमिला पड़ा। हौदे पर बैठा हुआ मानसिंह हाथी को आहत देखकर घबरा गया। उसने दूसरा तीर मानसिंह को निशाना बनाकर छोड़ा, जो उसके हाथ में लगा। वह प्रताप पर हुए आक्रमण का बदला ले रहा था।''[81]

डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में जिस प्रकार का वातावरण चित्रित किया है जो सदैव इतिहास से प्रेरित है एवं वर्तमान के स्वरुप का निर्माण करने में सहायक है। समाज को सही दिशा मिले और भविष्य में सकारात्मक विचारों के द्वारा भावी पीढ़ियाँ हमारे इतिहास से गौरव का अनुभव कर सके इन्हीं सार्वकालिक मूल्यों को चेतना के साथ प्रस्तुत करने का कार्य डॉ.भटनागर ने सफलता पूर्वक किया है।

**भाषा शैली** :– '' भाषा ऐसे सार्थक शब्द समूहों का नाम है, जो एक विशेष क्रम से व्यवस्थित होकर हमारे मन की बात तक पहुँचाने और उसके द्वारा उसे प्रभावित करने में समर्थ होते है। अतएव भाषा का मूलाधार शब्द है।''[82]

उपन्यासों में भाषा का प्रयोग जहाँ रोचकता को बढ़ाता है वहीं लोक संस्कृति का भी परिचायक होता है भाषा के कुशल प्रयोग पर ही संवाद की सफलता निर्भर करती है भाषा अर्थात् शब्द समूह अतः किसी भाषा के शब्दों का प्रयोग करने से पूर्व उस पात्र और परिस्थिति का पूर्ण ज्ञान होना अनिवार्य है पात्रानुसार एवं प्रसंगानुसार ही भाषा का प्रयोग करना चाहिए शब्दों की बनावट एवं बुनावट का कुशल प्रयोग ही संवादों का प्राण होता है। 'एक अंतहीन युद्ध' उपन्यास में महाराणा प्रताप के स्वप्न दर्शन में जिस भाषा एवं शैली का प्रयोग उपन्यासकार ने किया है वह पात्रानुकुल मनोस्थिति को दर्शाता है ''यह कैसा स्वप्न था! महा भयानक स्वप्न! घमासान युद्ध! माँ खप्पर लिये रक्तिम जिह्वा निकाले क्रोध से देख रही है। मानो कह रही हो–प्रताप, माँ का खप्पर भर, चल उठा।....दूर–दूर रक्त की नदी। फिर माँ का अट्टहास।....अट्टहास के साथ चट्टानों

का गिरना।.....कम्पन महानाद.....आकाश में मेघ घटा....वर्षा.....रक्तिमम वर्षा.....रक्तिम उपल.....चपला कौंधती.....थरथरा उठता जीव का मन.......मारो.....पकड़ो......भागो.....विकराल शोर.....रक्त के सागर पर खड़ी माँ फिर उसका पतन.....भयावह शोर–उत्तरोत्तर हाहाकार पुनः हा.....हा.....हा......आँधी...... काली आँधी......मेवाड़ पतन......चीते का मुस्कुराना धड़ाम से.....हैं चेटक......चीता नहीं.....चेटक।''[83] डॉ. भटनागर ने महात्मा गाँधी के जीवन चरित्र में सत्य अहिंसा का दर्शन उनके संवादों में व्यक्त किया है। जेलर द्वारा गाँधीजी की पिटाई करने पर भी वह जेलर को धन्यवाद देते हैं। उपन्यासकार ने गाँधीजी के चरित्रानुसार भी भाषा और शैली का प्रयोग किया है ''हाँ जेलर साहब, यह विनम्र प्रार्थना है। जरा गौर कीजिए–पेशाब–पखाना खुले में! नहाने के लिए सवा सौ फुट की दूरी तक एकदम नंगे बाथरुम तक जाना–आना! यह सब अमर्यादित है, शील–आचरण के विरुद्ध है।''

''यह घर नहीं है, गांधी। यह जेल है। यहाँ कायदे–कानून की बात करना भी जुर्म है।''

''मुझे ऐसा जुर्म करना पसन्द है।''

''तुम बगावत पर उतर आना चाहते हो, गांधी! परन्तु तुम्हारी कुली–बैरिस्टरी यहाँ नहीं चलेगी। चूतड़ों पर ऐसे डण्डे पड़ेंगे कि कानून की नानी, याद आने लगेगी।''

''वह समय बताएगा, मि. क्रासबार!''

''तुम हमें चुनौती देते हो, कुली बैरिस्टर!'' कहते हुए क्रॉसबार उठा और उसने दो–चार तमाचे गांधी को जड़ दिए।

''धन्यवाद, मि. क्रॉसबार!''

क्या स्साला! इस पर भी धन्यवाद देता है! पिटने पर शर्म महसूस नहीं करता।''[84]

लेखक को अपने उपन्यास लेखन में प्रत्येक क्षण, घटना एवं वातावरण का ध्यान रखना होता है क्योंकि हर क्षण, घटना एवं वातावरण के लिए शब्द चयन करना भी महत्वपूर्ण कार्य होता है बाबू श्याम सुन्दर दास कहते है–''भाषा मूलाधार शब्द को उपयुक्त रीति से प्रयुक्त करने के कौशल को ही शैली का मूल तत्व समझना चाहिए भाव या रुप चमत्कार या रचना चमत्कार को ही शैली का नाम दिया जाना चाहिए।''[85]

साहित्यालोचकों के अनुसार शैली अभिव्यक्ति का माध्यम है भावों को किस प्रकार से किस देश या पद्धति से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करना है जिससे लेखक का वह उद्देश्य पूर्ण हो सके जो समाज को देना चाहता है। शिवदान सिंह चौहान शैली पर प्रकाश डालते हुए लिखते है –'' साहित्य में शैली का अर्थ है, शब्द चयन और वाक्य विन्यास का ऐसा ढंग जो भाषा एवं उसके विचारों के अनुरुप हो उन्हें अधिक से अधिक मार्मिक और सुस्पष्ट ढंग से व्यक्त कर सके

उसी शैली को हम अच्छी या श्रेष्ठ शैली कह सकते है।''[86] डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में प्रसंग एवं पात्रानुसार चित्रात्मक, प्रश्नोत्तर, आत्म संवाद, वर्णनात्मक, विवरणात्मक व अन्य शैली का प्रयोग किया है। इनके उपन्यासों में शैलीगत विविधता में पाठक की रुचि को जागृत किया है। 'सूर्यवंश का प्रताप' उपन्यास में आत्म संवाद शैली को प्रेरणात्मक रुप में प्रस्तुत किया है ''अचानक महाराणा ने आँखें बन्द कर लीं। उनके सामने सिसोदिया राजवंश की संरक्षिका देवी आ खड़ी हुई। उसने बापा रावल को यह वचन दिया था कि वह तब तक इस गौरवाभिमण्डित शिखर पर रहेगी, जब तक बापा रावल के वंशधर उसकी सेवा में संलग्न रहेंगे।

वह मन ही मन बड़बड़ाया—माँ, आप मुझसे अप्रसन्न हैं क्या? क्या आप भी मुझे क्लीव और कापुरुष समझती हैं?.......बोलो माँ, जबाब दो ?

माँ ने उसके सिर पर वरद हस्त रख दिया। उसने आँखें खोल दीं। उसके मुखमण्डल पर मध्याह्न के सूर्य की तेजस्विता लौट आयी। वह थूक निगलकर बोला—राणी, माँ प्रसन्न हैं। हम शीघ्र ही चित्तौड़ प्राप्त कर सकेंगे। माँ का यही आदेश है। हमें चित्तौड़ नहीं छोड़ना चाहिए था।''[87] उपन्यासकार ने प्रश्नोत्तर शैली के द्वारा संवोदों को संक्षिप्त, सरल एवं रोचक बनाया है।

''और चित्रदास ?''

''उड़ती—उड़ती खबर है कि वह दिव्यानंद का खास आदमी है। लेकिन.....''

''लेकिन क्या?''

''चित्रा की मौत ने.....''

''क्या किया चित्रा की मौत ने ?''

''चित्रदास को पागल बना दिया है।''

''क्यों ?''

''चित्रा ने आत्महत्या नहीं की है, उसे मरवाया गया है।'' ललिता की ओर से मुँह फेरकर धूपद ने कहा।

''यह तुम्हें किसने बताया ?''

''स्वयं चित्रदास ने।''

''क्या ?'' चकित होकर ललिता ने धूपद की ओर देखा।।

''हाँ।''धूपद ने थूक गटककर कहना जारी रखा—''वह बहुत बैचेन और उग्र हो उठा था। माई के लिए षड्यंत्र की बात भी उसने ही अप्रत्यक्ष रुप से बतलाई थी।''[88]

डॉ. भटनागर कुशल उपन्यास शिल्पी है इन्होंने अपने उपन्यासों में शाश्वत सत्य की अभिव्यक्ति के लिए ऐतिहासिकता को आधार बनाया है साहित्य और इतिहास एक दूसरे से इतना साम्य रखते हैं कि इन्हें विलग नहीं किया जा सकता है। जो भी समाज में घटित होता है वह इतिहास है और उसकी व्याख्या करने का कार्य साहित्य है। डॉ. भटनागर ऐसे प्रबुद्ध ऐतिहासिक उपन्यासकार जिन्होंने अपने उपन्यासों में सार्वकालिक चेतना की व्याख्या ऐतिहासिक पात्रों के जीवन चरित्र के माध्यम से की है। भाषा शैली का प्रयोग इस प्रकार किया है कि उपन्यास पाठक के समक्ष इतिहास को पुनर्जीवित करने का सामर्थ्य रखते है। अतः डॉ. भटनागर जी की भाषा शैली भावों, विचारों, मूल्यों को प्रस्तुत करने में पर्याप्त सफल है। ''वास्तव में कोई रचना रचियता के मनोभावों का, उसके चरित्र का उसके जीवन के आदर्शों का, उसके दर्शन का आईना होती है। जिस उपन्यास को समाप्त करने के बाद पाठक अपने अंदर उत्कर्ष का अनुभव करे, उसके सद्भाव जाग उठें, वहीं सफल उपन्यास है।''[89]

उपन्यास जीवन संदर्भों के अनसुलझे पहलुओं को समझने का, गूढ रहस्यों को जानने का माध्यम है जीवन दर्शन के बहुत से प्रश्न मानवीय संवेदनाओं से जुड़े रहते है ऐसे में उन प्रश्नों का उत्तर खोजने का कार्य लेखक की ओर से किया जाता है। जीवन संघर्ष है और हर संघर्ष की एक गाथा जन्म नहीं लेती है अपितु पुनरावृत्ति है उन परिस्थिति या प्रवृत्ति वश या जाने अनजाने में हुई भूल,गलती की घटना की और उन निर्णयों की जो अमर होकर एक संदेश प्रेषित कर गये जिनसे युगों युगों तक समाज के हर तबके हर वर्ग को प्रेरणा मिलती रहेगी।

**उद्देश्य :–** उपन्यास किसी एक उद्देश्य की पूर्ति के लिए नहीं लिखा जाता है। जब उपन्यासकार लेखनी उठाता है तो वह समाज को रुबरु कराना चाहता है ऐसी जीवन स्थिति परिस्थितियों से जो हर काल युग में भिन्न रुपों में समाज के समक्ष आती रही है लेखक का दायित्व होता है कि वह समाज के समक्ष आदर्श और वास्तविक रुप से उन सबका समाधान प्रस्तुत करता है।

भारतीय साहित्य सदैव सत्य, शिव, सुन्दरम की अवधारणा पर बना है हमें आदर्शों की जितनी चिंता है उतना ही चिंतन यथार्थ बोध का भी रहता है उपन्यासकार का उद्देश्य यही रहता है कि वह आदर्श और यथार्थ का साम्य बैठाकर प्रेरणादायक संदेश समाज को दे सके ''लिखने के पीछे मेरा मन्तव्य यह रहा है कि मानव–कर्म की विविधतापूर्ण शैली से मानव को जोड़कर एक मानवीय धारा प्रवाहित कर सकूँ।''[90] डॉ. भटनागर जी ऐतिहासिक उपन्यासों के कुशल शिल्पकार है जिन्होंने अपने उपन्यासों में जीवन के आदर्शों का यथार्थ के साथ समन्वय कर पाठक को सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्त किया है इनके उपन्यासों की विषय वस्तु इतिहास से सम्बद्ध है इतिहास को वर्तमान संदर्भों में नवीनता के साथ प्रस्तुत करने का उद्देश्य उपन्यासकार के रुप में

उन्होंने किया है। ''वह मानव जो मानव होते हुए भी मानव नहीं है, जब अपने में से किसी को मानवोचित आधार पर जीने के लिए संघर्ष करता पाता है, तब विचलित हो उठता है और उस पावन गंगा को जनजीवन में न बहने देने के लिए प्रयास करता है। 'महामानव' उसी का प्रतिफल है। अन्ततोगत्वा मानव है क्या ! इसी का उत्तर देने की चेष्टा मात्र है।''

♦ ♦ ♦ ♦

## सन्दर्भ सूची


1. लहर अंक मार्च 1961 डॉ. लक्ष्मीकांत वर्मा, पृ. 54
2. शल्य ज्ञान और सत् – यशदेव
3. गौरांग– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली (2009), पृ. 57
4. सूर्य वंश का प्रताप – राजेन्द्र मोहन भटनागर, अनुराग प्रकाशन (2005), पृ. 78
5. सूर्य वंश का प्रताप – राजेन्द्र मोहन भटनागर, अनुराग प्रकाशन (2005), पृ. 08
6. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी (2008), पृ. 13
7. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी (2008), पृ. 30–31
8. एक अंतहीन युद्व– राजेन्द्र मोहन भटनागर, अनन्य प्रकाशन (2018) पृ. 168
9. एक अंतहीन युद्व– राजेन्द्र मोहन भटनागर अनन्य प्रकाशन (2018) पृ. 158
10. अर्न्तयात्रा – राजेन्द्र मोहन भटनागर, हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली (2012), पृ. 262
11. सूर्य वंश का प्रताप – राजेन्द्र मोहन भटनागर अनुराग प्रकाशन (2005), पृ. 43
12. एक अंतहीन युद्व– राजेन्द्र मोहन भटनागर, अनन्य प्रकाशन (2018), पृ. 133
13. दिल्ली चलो – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2009), पृ. 70
14. दिल्ली चलो – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2009), पृ. 285
15. नीले घोड़े का सवार– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ. 103–104
16. वातायन नवम्बर 1969, पृ. 15
17. हिन्दी शब्दकोश – हरदेव बाहरी, पृ. 416
18. वैशषिक दर्शन – महर्षि कणाद, पृ. 10
19. धर्म और समाज –डॉ. राधाकृष्ण दास, पृ. 549
20. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी (2008), पृ. 48
21. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी (2008), पृ. 48
22. मीरा का काव्य – विश्वनाथ त्रिपाठी, पृ. 41
23. स्वामी विवेकानंद साहित्य संचयन – रामकृष्ण मठ नागपुर (2014), पृ. 13

24. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 218

25. गौरांग– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली (2009), पृ. 73

26. गौरांग– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली (2009), पृ. 149

27. गौरांग– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली (2009), पृ. 149–150

28. अमृतघट– राजेन्द्र मोहन भटनागर, इरावदी प्रकाशन दिल्ली (2008), पृ. 33

29. अमृतघट– राजेन्द्र मोहन भटनागर, इरावदी प्रकाशन दिल्ली (2008), पृ. 202

30. दिल्ली चलो – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2009), पृ. 25

31. दिल्ली चलो – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 26–27

32. गौरांग– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली (2009), पृ. 57

33. गौरांग– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली (2009), पृ. 37

34. विचार और वितर्क–आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेद्वी, पृ. 95

35. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी (2008), पृ. 43

36. 'न गोपी न राधा'– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, प्रभात प्रकाशन दिल्ली (2008), पृ. 181

37. युग पुरुष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 189

38. हिन्दी साहित्य एक आधुनिक परिप्रेक्ष्य–अज्ञेय सं. 1967

39. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी (2008), पृ. 80

40. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 214

41. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 184

42. युग पुरुष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 101

43. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ. 151

44. 'न गोपी न राधा'– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, प्रभात प्रकाशन दिल्ली (2008), पृ. 154

45. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी (2008), पृ. 60

46. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी (2008), पृ. 114

47. सूर्य वंश का प्रताप – राजेन्द्र मोहन भटनागर, अनुराग प्रकाशन (2005), पृ. 10

48. नीले घोड़े का सवार– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011), पृ.90

49. युग पुरुष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 90

50. अर्न्तयात्रा – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, हिन्द पॉकेट बुक्स, (2008), पृ. 356

51. 'न गोपी न राधा'– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, प्रभात प्रकाशन दिल्ली (2008), पृ. 181

52. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 214

53. अमृतघट– राजेन्द्र मोहन भटनागर, इरावदी प्रकाशन दिल्ली (2000), पृ. 109

54. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 176

55. अर्न्तयात्रा – राजेन्द्र मोहन भटनागर, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृ. 216–217

56. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013), पृ. 280

57. युग पुरुष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 39

58. युग पुरुष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 143

59. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 108–109

60. गौरांग – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 233

61. 'न गोपी न राधा'– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, प्रभात प्रकाशन दिल्ली (2008) पृ. 64–65

62. सूर्य वंश का प्रताप – राजेन्द्र माोहन भटनागर, अनुराग प्रकाशन (2005) पृ. 62–63

63. नीले घोड़े का सवार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011) पृ.51

64. नीले घोड़े का सवार– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011) पृ.57

65. समकालीन हिन्दी उपन्यास कथ्य विश्लेषण – प्रेम कुमार, इन्दु प्रकाशन अलीगढ़ (1983) पृ. 24

66. सूर्य वंश का प्रताप – राजेन्द्र माोहन भटनागर, अनुराग प्रकाशन (2005) (भूमिका)

67. 'न गोपी न राधा'– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, प्रभात प्रकाशन दिल्ली (2008) (भूमिका)

68. युग पुरुष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012) (भूमिका)

69. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी (2008), पृ. 40–41

70. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ.–71

71. अमृतघट– राजेन्द्र मोहन भटनागर, इरावदी प्रकाशन दिल्ली (2000), पृ.–31

72. साहित्य का उद्देश्य–मुंशी प्रेमचंद, प्रकाशक शिवरानी देवी हंस प्रकाशन 1954, पृ. 75

73. काव्य के रुप–बाबू गुलाब रॉय, पृ. 162

74. कुछ विचार–प्रेम चंद, सरस्वती प्रेस बनारस, पृ. 55

75. अमृतघट– राजेन्द्र मोहन भटनागर, इरावदी प्रकाशन दिल्ली (2000), पृ. 47

76. युग पुरुष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 100

77. गौरांग – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012), पृ. 77

78. काव्य के रुप–बाबू गुलाब रॉय, आत्माराम एण्ड संस, पृ. 175

79. अमृतघट– राजेन्द्र मोहन भटनागर, इरावदी प्रकाशन दिल्ली (2000), पृ. 63

80. साहित्य लोचन : बाबू श्याम सुन्दर दास, प्रकाशक रामचंद्र वर्मा साहित्य रत्न माला कार्यालय काशी 1988, पृ. 193

81. एक अंतहीन युद्व– राजेन्द्र मोहन भटनागर अनन्य प्रकाशन (2018), पृ. 165

82. साहित्य लोचन : बाबू श्याम सुन्दर दास, प्रकाशक रामचंद्र वर्मा साहित्य रत्न माला कार्यालय काशी 1988, पृ. 193

83. एक अंतहीन युद्व– राजेन्द्र मोहन भटनागर अनन्य प्रकाशन (2018), पृ. 151

84. कुली बैरिस्टर–डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड संस (2015), पृ. 255–256

85. साहित्य लोचन : बाबू श्याम सुन्दर दास, प्रकाशक रामचंद्र वर्मा साहित्य रत्न माला कार्यालय काशी 1988, पृ. 192

86. हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष–शिवदान सिंह चौहान, राजकमल प्रकाशन दिल्ली, पृ. 87

87. एक अंतहीन युद्ध– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अनन्य प्रकाशन, पृ. 13–14

88. 'न गोपी न राधा'– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, प्रभात प्रकाशन दिल्ली (2008), पृ. 278

89. सूर्य वंश का प्रताप – राजेन्द्र मोहन भटनागर, अनुराग प्रकाशन (2005), भूमिका से

90. सूर्य वंश का प्रताप – राजेन्द्र मोहन भटनागर, अनुराग प्रकाशन (2005), भूमिका से

# उपसंहार

# उपसंहार

हिन्दी उपन्यास साहित्य विधा में डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर स्वर्णिम हस्ताक्षर है। इन्होंने उपन्यास साहित्य विधा की समृद्धि में अपना अमूल्य योगदान दिया है। नाटक, कहानी, एकांकी, बाल साहित्य, उपन्यास, समीक्षा, एवं अन्य गद्य विधाओं में अपनी लेखनी के सामर्थ्य को सार्थक किया है। इतिहास के प्रति विशेष मोह होने के कारण साहित्य रचना में इतिहास से जुड़े महान व्यक्तियों के जीवन संदर्भ को व्याख्यायित करने का सफलतम प्रयास किया है। मानव जीवन मूल्यों का क्षरण होते हुए देखकर साहित्य में ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना की है। मानवीय मूल्यों का ह्रास रोकने का साहित्यिक श्रम किया है। साहित्य और इतिहास की स्वर्णिम परम्परा को अक्षुण्ण रखते हुए महापुरुषों के महान् व्यक्तित्व की जीवन गाथा एवं संघर्ष की भावात्मक प्रस्तुति दी है। इतिहास के प्रति मानव की सुप्त चेतना को चिंतन प्रदान करने का कार्य इन्होंने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों के द्वारा किया है।

इतिहास सदा वर्तमान को दिशा प्रदान करने का कार्य करता है। परन्तु इस कार्य के लिए जिस माध्यम या साधन की आवश्यकता है, वह साहित्य ही है। डॉ. भटनागर ने अपनी प्रतिभा के सामर्थ्य से इतिहास के द्वन्द्व को सुलझाकर मानव के लिए सरल एवं रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। जीवन की विचारधारा में साहित्य का प्रवेश मानवीय मूल्यों का सारथी सिद्ध हुआ है। मानव मूल्यों की प्रस्तुति के लिए मानव का जीवन संघर्ष लोगों को सच्ची प्रेरणा दे सकता है। अतः इन्होंने अपनी साहित्य रचना को महापुरुषों के जीवन संदर्भों के साथ सम्पृक्त किया है। इनका इतिहास चिंतन तत्कालीन परिस्थितियों की व्याख्या तक सीमित नहीं रहा है। अपितु वह आदि से अद्यतन सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में मानवीय मूल्यों से भी सम्बद्ध रहा है। इतिहास से जुड़े व्यक्तियों का जीवन चरित्र प्रस्तुत करते समय लेखक को अत्यधिक सावधानी एवं जिम्मेदारी के साथ लेखन करना पड़ता है, क्योंकि इतिहास का प्रस्तुतिकरण करते समय इतिहास के मौलिक स्वरुप के साथ कोई भी क्षति किसी भी स्तर पर नहीं होनी चाहिए। लेखक को हमेशा इस बात का ध्यान रखना होता है। उपन्यासकार ने अपने साहित्यिक दायित्व की मर्यादा को अक्षुण्ण बनाए रखा है।

डॉ. भटनागर ने एक उपन्यासकार के रुप में ऐतिहासिक तथ्यों की व्याख्या करते हुए इतिहास और साहित्य का समन्वयात्मक रुप प्रस्तुत किया है। जीवन की गाथा को इतिहास से प्रेरणात्मक रुप में स्पष्ट करने का प्रयास किया है। एक साहित्यकार के रुप में इनका चिंतन जहाँ समाज को एक सकारात्मक ऊर्जा से प्रेरित करने का रहा है वहीं इतिहास के महापुरुषों की जीवन कथा के माध्यम मानवीय मूल्यों की पुर्नस्थापना करना भी इनका लक्ष्य रहा है। इन्होंने

कथा साहित्य के द्वारा महापुरुषों के ऐतिहासिक कार्यों को पाठक के समक्ष प्रस्तुत किया है। पाठक को उन घटनाओं के समय उपस्थित मनोविकारों के द्वन्द्व को समझने का अवसर प्रदान किया है। पाठक इन उपन्यासों को समझते हुए रोचकता के साथ सार्वकालिक मूल्यों की निरंतरता को आत्मसात् करता है। इतिहास का कोरा यथार्थ मूल्यांकन न करके इन्होंने उसमें भावों की कल्पनात्मक व्याख्या को भी स्थान दिया है। इनके उपन्यासों की यह विशिष्टता है कि यह पाठक के विवेक को जागृत कर उसे स्वचिन्तन का अवसर देते है।

डॉ. भटनागर एक साधारण परिवार में जन्म लेकर साहित्यिक जगत् की जो सेवा की वह अतुलनीय है। इनके जीवन का उद्देश्य सदैव मानवीय मूल्यों की स्थापना का रहा है। जो आज तक अनंत प्रवाह के साथ अग्रसर है। शिक्षक की भूमिका में कर्तव्यनिष्ठा ने इनको समाज के उन पहलुओं पर चिंतन करने की प्रेरणा दी जो समाज के ऊपर एक बदनुमा दाग थी। भारतीय सामाजिक जीवन में प्रचलित कुप्रथा एवं आडम्बरों ने इनके मन को गहरी पीड़ा पहुँचायी। इनका साहित्य सृजन इस बात का जीता जागता प्रमाण है कि इन्होंने समाज में व्याप्त उन सभी बुराइयों के रहस्य से पर्दा उठाया है। जिनको परस्पर परम्परा के नाम पर पुरातन काल से पूज्यनीय बनाया हुआ था। साहित्य केवल मनोरंजन के लिए नहीं रचा जाता बल्कि उसमें निहित संदेश को जनमानस तक सरल रुप में पहुँचाना होता है। उपन्यासकार ने अपने इस साहित्यिक कर्तव्य का मान रखते हुए समाज को एक सकारात्मक ऊर्जा के साथ प्रेरणा प्रदान की है।

डॉ. भटनागर का उपन्यास साहित्य भारतीय इतिहास एवं गौरव की पुनर्व्याख्या करता है। इन्होंने अपने उपन्यास साहित्य में सार्वकालिक मूल्यों का चिंतन किया है। इनके उपन्यास साहित्य में विषयों की विविधता होने के साथ–साथ उनसे जुड़े ऐतिहासिक घटना क्रम को भी समझाने का प्रयास किया गया है। भक्ति, राजनीति, धर्म, परिवार, साम्प्रदायिकता, स्वतंत्रता, अर्थ, दर्शन, संवेदना, संस्कृति, समाज से जुड़े सार्वकालिक मूल्यों का चिंतन इनके उपन्यास साहित्य में व्यक्त हुआ है। इन्होंने अपने उपन्यासों में मीरा, महाराणा प्रताप, चैतन्य महाप्रभु, महात्मा गाँधी, सुभाष चन्द्र बोस, अम्बेडकर, विवेकानंद, महर्षि अरविन्द योगी जैसे महापुरुषों के जीवन संदर्भ के माध्यम से उपन्यासों में सार्वकालिक चेतना को व्यक्त करने का हर संभव प्रयास किया है। इन्होंने अपने उपन्यासों में कोरा यथार्थ प्रस्तुत नहीं किया अपितु तत्कालीन परिस्थितियों में उत्पन्न होने वाले भाव एवं विचारों के द्वन्द्व को भी परिभाषित किया है। इतिहास से जुड़ी हुई घटनाओं एवं तथ्यों का प्रस्तुतिकरण करते समय इन्होंने ऐतिहासिकता का पूर्ण रुपेण पालन किया है।

डॉ. भटनागर के उपन्यासों में भारतीय समाज के महानायकों के जीवन संदर्भ को केन्द्रीय विषय बनाया है। ये महानायक हर युग में लोगों को प्रेरणा प्रदान करते रहेंगे। उपन्यासकार ने इनसे जुड़े हर पहलू पर अपना और पाठक का ध्यानकर्षण किया है। जिन व्यक्तित्वों पर इन्होंने अपनी लेखनी को श्रम साध्य किया है, वे अपने युग के एक बहुत बड़े वर्ग का प्रतिनिधित्व करते

है इनके द्वारा किये गये कार्यों में अलौकिक सामर्थ्य का बोध होता है। हर युग में मानव को महानायक के रुप में किसी न किसी महापुरुष का नेतृत्व प्राप्त होता रहा है। डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों जिन मूल्यों की व्याख्या की है वे सार्वकालिक चेतना के वाहक है तथा हर युग में इनकी प्रासंगिकता बनी रहेगी।

डॉ. भटनागर ने महाप्रभु चैतन्य, मीरा, सूरदास के माध्यम से वैष्णव भक्ति की महान् सनातन परम्परा के मूल्यों की सम्पृक्ति सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में प्रस्तुत की है। भक्ति के स्वरुप पर व्याख्या प्रस्तुत करते हुए इनका चिन्तन मानवतावादी रहा है। धर्म की आदर्श व्यवस्था की व्याख्या कर उसके मानवीय मूल्यों की पुनर्स्थापना में सहयोग करना ही इनका उद्देश्य रहा है। धर्म के सिद्धान्तों के साथ धार्मिक चेतना से जुड़े हर तथ्य को प्रकाशित करने का श्रम साहित्यकार ने किया है। इनके उपन्यासों में भक्ति के साथ समाज में व्याप्त आडम्बर, कुप्रथाओं, अंधविश्वासों का खण्डन हुआ है। सती प्रथा, बाल विवाह, विधवा विवाह, वेश्या प्रथा, अनमेल विवाह, छुआछूत, ऊँच–नीच जैसे गम्भीर विषयों पर इनके चिंतन ने पाठक के प्रखर वेग को प्रभावित किया है। एवं नारी विमर्श में आदर्श एवं मर्यादा को स्थापित करने का स्तुत्य प्रयास किया है। धर्म और सम्प्रदाय से जुड़े तथ्यों का प्रकाशन करते हुए समाज में उचित अनुचित का विवेक जागृत किया है। धर्म के के मूल आदर्शों की शाश्वत एवं सैद्धान्तिक व्याख्या प्रस्तुत की है। सम्प्रदाय के नाम पर होने वाले धार्मिक मिथ्याचरण का पर्दाफाश किया है। डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में संन्यास एवं गृहस्थ के आदर्शों के समन्वयात्मक स्वरुप की स्थापना पर जोर दिया है। धर्म प्रचार के नाम पर धर्म परिवर्तन का कुत्सित प्रयास करने वाले अधर्म के व्याख्याकारों फटकारा ही नहीं अपितु धर्म के आदर्श एवं मूल सिद्धान्तों को मानवीय मूल्यों के साथ सम्पृक्त कर स्थापित किया है।

इतिहास का महत्वपूर्ण एवं सार्वकालिक मूल्य स्वतंत्रता है। यह शब्द इतिहास का अत्यधिक संघर्षशील एवं संवेदनशील चेतना से सम्पृक्त विषय है। डॉ. भटनागर ने इस मूल्य के संदर्भ से जुड़े हर तथ्य का विश्लेषणात्मक वर्णन किया है। जिसके कारण यह मूल्य इनके उपन्यासों में सर्वव्यापकता एवं सार्वकालिक चेतना का प्रतीक बनकर उपस्थित हुआ है। स्वतंत्रता का विषय एकाकी हो ही नहीं सकता। क्योंकि इसके साथ मानव का अस्तित्व उसके अधिकार जुड़े है। वह किसी भी कीमत पर इसके साथ समझौता नहीं करता है। इनके ऐतिहासिक उपन्यासों में स्वतंत्रता से जुड़े तथ्यों का चिंतन सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में किया गया है। स्वतंत्रता मानव के अस्तित्व एवं व्यक्तित्व का परिचायक है। उपन्यासकार ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में महाराणा प्रताप, महात्मा गाँधी, सुभाष चन्द्र बोस, विवेकानंद, महर्षि अरविन्द योगी, सरदार पटेल जैसे व्यक्तियों के जीवन संदर्भ के साथ जिन सार्वकालिक मूल्यों का चिंतन किया है। यह संघर्ष अमर है। भारतीय इतिहास को वैश्विक पटल पर स्मरण करने योग्य बनाने का

अमर प्रयास स्वतंत्रता संघर्ष के नायक महाराणा प्रताप ने किया है। वह अतुलनीय है। स्वतंत्रता के इस पुरोधा ने राजनीति के क्षुद्र स्वार्थों से ऊपर उठकर मेवाड़ को स्वतंत्र रहने का गौरव प्रदान किया था। स्वतंत्रता के प्रति महाराणा प्रताप की निष्ठा ने जनमानस के सुप्त जीवन में आशा के प्राण फूँक दिये थे। डॉ. भटनागर ने महाराणा प्रताप के जीवन संदर्भ के साथ जुड़े इस सार्वकालिक चेतना के वाहक मूल्य का विविध प्रसंगों के साथ उद्घाटन किया है। स्वतंत्रता का पथ एकाकी नहीं है। इससे मानव चेतना को ऊर्जा मिलती है। इसकी चेतना मनुष्य को संघर्ष की चरमावस्था तक ले जाती है। 'दिल्ली चलो' उपन्यास में सुभाष बोस के स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए किये गये संघर्ष में जो ऊर्जा है, वह इन मूल्यों के प्रति निष्ठा का ही परिणाम है। जीवन में मनुष्य को सदैव अपने अधिकारों के प्रति जागृत करने का कार्य इन महापुरुषों ने किया वह स्वतंत्रता की ऊर्जा से ही प्रेरित था।

डॉ. भटनागर ने साहित्य रचना में संवेदना के हर स्तर को स्पर्श किया है। इनकी संवेदनात्मक अनुभूति ने ही पाठक के समक्ष तत्कालीन परिस्थितियों एवं प्रसंगों के दौरान आने वाले भावों की श्रृंखला से तादात्म्य स्थापित करने में सहयोग किया है। संवेदना और साहित्य एक दूसरे के पूरक है। क्योंकि संवेदना भावों से सम्पृक्त होती है। साहित्य संवेदना को अभिव्यक्त करता है। उपन्यासकार ने अपने उपन्यासों में संवेदना को अनुभूत करके उसके सार्वकालिक पक्ष को भी उजागर किया है। संवेदना के माध्यम से पाठक के मानसिक ज्वार को शांत करने का सार्थक प्रयास किया है। संवेदना के कई स्तर इनके उपन्यासों में देखने को मिलते है। राष्ट्र के प्रति जो चिंतन है उसमें राष्ट्रीय संवेदना का उत्कृष्ट रुप हमें दिखाई पड़ता है। वहीं धर्म, सम्प्रदाय के प्रति जो चिंतन है उसमें धार्मिक संवेदना के दर्शन होते है। मानव समाज में अस्पृश्यता का दंश झेलते हुए नारकीय जीवन जीने वाले मानुष के प्रति उत्पन्न भावों में दलित संवेदना तो स्त्री के संघर्ष और अत्याचार को व्यक्त करने वाले विचारात्मक प्रस्तुतिकरण में स्त्री संवेदना को देखा जा सकता है। संवेदना को हर अवसर पर स्पर्शात्मक अनुभूति प्रदान करने का सामर्थ्य डॉ. भटनागर के उपन्यासों को सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्त कर कालजयी रचना घोषित करता है। संवेदना की मूल्यों के साथ सम्बद्धता उसके प्रवाह को युगों की सीमाओं से पार ले जाती है। संवेदना के साथ आत्मसात् होकर साहित्य में अभिव्यक्त करने की दक्षता डॉ. भटनागर के उपन्यासों में परिलक्षित होती है।

डॉ. भटनागर के उपन्यासों में समय के साथ उपस्थित भावों एवं विचारों की गहन अनुभूति है। उनके पात्रों की मानसिक स्थिति का मूल्यांकन अपने समय की घटनाओं के साथ समायोजन की कुशल व्याख्या है बदलते परिवेश एवं मानस के पटल पर उपस्थित हर भाव एवं विचार की गहराइयों को मापने का अद्भुत प्रयास उपन्यासकार ने अपने उपन्यासों के माध्यम से किया है। जीवन जीना एक सामाजिक पक्ष है। यह समायोजन की व्याख्या करता है। परन्तु समय

के साथ होने वाले द्वन्द्वात्मक वातावरण को भी अनुभव करता है। डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में अवसर की सुलभता के साथ समसामयिक संदर्भों का भी वर्णन किया है। समसामयिक विषयों के प्रति उपन्यासकार की दृष्टि एक समीक्षक की रही है। ये मूल्यों के ह्रास एवं पतन का कारण ढूँढते हुए समसामयिक संदर्भों की कुशल व्याख्या करते है। जीवन अनुभवों के आधार पर प्रदर्शित होता है। अतः साहित्य में समय के साथ भावों की संवेदना को समझना भी अत्यंत आवश्यक है। उपन्यासों में चरित्र चित्रण को लेकर डॉ. भटनागर अत्यधिक सतर्क रहे हैं। क्योंकि इनके पात्र कोई कल्पित कथा के नहीं है बल्कि इतिहास के युग पुरुष है। सामान्य जन के आदर्श एवं प्रेरणा स्त्रोत है। इनके साथ जुड़ी हर घटना एवं प्रसंग से वर्तमान एक सकारात्मक प्रेरणा को ग्रहण करता है। चरित्रों की सृष्टि में इनके द्वारा किया गया अनुसंधान इनके चरित्रों में केवल ऐतिहासिक तथ्यों से ही सरोकार नहीं रखता है। बल्कि उनके प्रेरणात्मक कार्यों की व्याख्या भी मानवीय मूल्यों के संदर्भ में करता है। चरित्र का अपना एक मार्ग होता है। वह पथ उसके कर्तव्य एवं दायित्वों का बोध करता है। डॉ. भटनागर ने अपने साहित्यिक सामर्थ्य से इस तत्व का विश्लेषणात्मक अनुसंधान किया है। किसी चरित्र की मौलिकता को बिना छेड़े उसके दर्शन को सामान्य जन तक पहुँचाने का कार्य इनके उपन्यासों द्वारा किया गया है। इनके द्वारा चरित्रों की दार्शनिकता, ऐतिहासिकता, धार्मिकता, मानवीयता, राजनीतिक संवेदना जैसे कई स्तरों द्वारा मूल्यांकित किया गया है। इनके पात्रों की लौकिकता को उपन्यासकार ने पाठक के समक्ष लौकिक सीमा, समय और अवधि से परे सिद्ध करने का प्रयास उपन्यासकार ने किया है।

डॉ. भटनागर के उपन्यासों में चरित्र को काफी हद तक समझने के साथ आत्मसात् करने का भी प्रयास किया है। चरित्र चित्रण कल्पना के सागर में डुबकी लगाकर प्रस्तुत करना और उसका साहित्यिक मूल्यांकन सरल हो सकता है। परन्तु जहाँ चरित्र ऐतिहासिक सागर की गहराइयों में बिखरा पड़ा हो वहाँ से उसको ढूँढ कर पाठक के समक्ष मूल्यांकित करना साहित्यकार के लिए असंभव तो नहीं श्रम साध्य अवश्य रहा है। डॉ. भटनागर द्वारा चरित्र की ऐतिहासिकता को भी बरकरार रखा गया है और कल्पना के सहारे पाठक के चित्त में उद्वेलित मानस को भी शांत किया गया है। चरित्र चित्रण में किसी व्यक्तित्व का बाह्य पक्ष तो सभी के समक्ष ज्ञेय होता है। परन्तु आंतरिक पक्ष का मूल्यांकन केवल कुशल साहित्यिक समीक्षक ही कर सकता है। उपन्यासकार ने ऐतिहासिक उपन्यासों में इतिहास की गरिमा को पुनः प्रतिष्ठित करते हुए साहित्य के सहारे उन द्वन्द्वों को सुलझाने का प्रयास किया है। जो संभवतः पाठक की रुचि एवं जिज्ञासा को शांत कर सके। ऐतिहासिक चरित्र के मानसिक संवेगों के साथ कल्पनात्मक दैवीय साक्षात्कार समस्त प्रश्नों का समाधान प्राप्त करता हुआ मानव को एक प्रेरणा प्रदान करता है। इनकी कुशलता कहे या फिर कल्पना कि चरित्र का इतना सटीक आत्म विश्लेषण हमें कहीं नहीं प्राप्त होता है। उपन्यासों में वर्णित मानव अपने युग के प्रेरणा पुरुष है। जिनके कार्य एवं

संघर्ष को आज भी प्रेरणादायक एवं प्रासंगिक माना जाता है। डॉ. भटनागर ने इतिहास के साथ बिना छेडछाड़ किए चरित्र में मौलिकता एवं कल्पना का समन्वय कर पाठक एवं समाज को एक नवीन मूल्यांकन प्रस्तुत किया है।

इतिहास मानव के लिए सदा प्रेरणादायी रहा है। इतिहास के द्वारा ही मानव को संघर्ष की प्रेरणा मिलती है। परन्तु भारत जैसे देश में कुछ सत्ता लोलुप मनुष्यों के कारण भारत को वर्षों की गुलामी का दंश झेलना पड़ा था। भारत की जनता को शासित करने के लिए उन्हें अज्ञानता के अंधेरे में रखा गया। आदर्शों के संघर्ष को प्रताड़ित किया गया। परन्तु इतिहास का सच सदैव आलोकित रहने वाला मार्तण्ड है। उसकी आशा को प्रकाशित होने से कोई नहीं रोक सका है। जीवन के संदर्भ में जब कभी भी हमें ऐसे लगा कि निराशा के बादल गहराने लगे तब बुजुर्गों की जबानी जो कहानी हमें सुनाई गई वो आशा की स्वर्णिम किरण बनकर उपस्थित हुई है। इतिहास ने चेतना प्रदान कर मानव को सुप्तावस्था से जगाने का प्रयास किया है। डॉ. भटनागर ने इतिहास के कालखण्डों से उन नायको के कर्तव्य को प्रकाशित किया है। जिन्होंने इतिहास को सार्वकालिक बनाते हुए अमर कर दिया है। आज भी उनके महानायकत्व को कर्तव्य पथ का आदर्श माना जाता है। उपन्यासकार ने जिस सार्वकालिक ऐतिहासिक चेतना को प्रस्तुत किया है। वह हमारी धरोहर जो हर युग में प्रासंगिक रही और रहेगी।

भारतीय संस्कृति से जुड़े मूल्यों ने मानव को व्यक्तिगत तौर पर हमेशा प्रभावित किया है। संस्कृति से हमारी सभ्यता, संस्कारों का परिचय मिलता है। हमारी संस्कृति के मूल्यों को सम्पूर्ण विश्व में सराहा जाता है। 'वसुधैव कुटुम्बकम' 'अतिथि देवो भव', 'सर्वे भवन्तु सुखिन' की महान् विचारधारा का पालन करने वाला देश सभी सभ्यताओं में सर्वाधिक सम्मानजनक रहा है। यही कारण है कि हम कहीं नहीं गये परन्तु भारत की सांस्कृतिक परम्परा का अनुशीलन करने सम्पूर्ण विश्व से लोग यहाँ आते रहे है। हमारा ज्ञान, विज्ञान, तकनीक व अन्य विधाओं ने हमें 'विश्व गुरु' की संज्ञा से अभिहित किया था। डॉ. भटनागर ने उपन्यासों में उपस्थित सांस्कृतिक मूल्यों को पाठक के समक्ष ऐतिहासिकता के साथ प्रस्तुत किया है। साथ ही समाज को यह अहसास कराया है। कि सांस्कृतिक मूल्यों के साथ हमारी सम्पृक्ति का कितना महत्व है। यह हमारे जीवन की आधारशिला है। मानव के व्यक्तित्व पर इनका गहरा असर है। स्वतंत्र रहना मानव का अधिकार है। परन्तु स्वतंत्र रहकर दूसरों के लिए जीना हमारी संस्कृति है। उपन्यासकार का यही लक्ष्य रहा है कि वह सांस्कृतिक मूल्यों को वर्तमान पीढ़ी को हस्तान्तरित करने में सक्षम है।

डॉ. भटनागर ने उपन्यासों में सामाजिक चेतना के रुप में समाज में रुढ़ हो चुकी बुराईयों के कारण, प्रभाव और निवारण को पाठक के समक्ष प्रस्तुत किया है। समाज मानव संघ है। जो कि मानव के हित एवं अधिकारों का संरक्षण करता है। परन्तु कुछ लोग अपने क्षुद्र स्वार्थों की पूर्ति के लिए सम्पूर्ण मानवता को शर्मसार कर देते है तो कुछ लोग त्याग समर्पण के द्वारा सम्पूर्ण

समाज के पथ प्रदर्शक बने रहते है। डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने सामाजिक दायित्व को समझा है। इसी कारण इनका चिंतन सामाजिक रुढ़ियों पर अधिक रहा है। इन्होंने उपन्यास में वर्णित चरित्रों के व्यक्तित्व एवं जीवन प्रसंगों के द्वारा सामाजिक आदर्शों की व्याख्या कर समाज को प्रेरणा प्रदान की है।

राजनीति में जहाँ आज का युवा अपने आप को दिशाहीन एवं ठगा हुआ सा महसूस कर रहा है। डॉ. भटनागर ने राजनीति के गिरते मूल्यों को चैतन्य करने का कार्य किया। राजनीति मानव के मानव मूल्यों की हितकारी होनी चाहिए परन्तु जब राजनीति सत्ता के गलियारों की सजावट का रुप ग्रहण कर लें तो मानव मन की कौन सुने। उपन्यासकार ने अपने उपन्यासों में राजनीति के आदर्शों में महापुरुषों के उज्ज्वल चरित्र को प्रस्तुत कर एक आदर्श राजधर्म, दायित्व को शासन सम्मत स्वीकृत आधार प्रदान किया है।

भारतीय समाज की अर्थव्यवस्था कृषि एवं लघु, कुटीर उद्योगों पर आधारित रही है। आज भारत की सत्तर प्रतिशत से अधिक जनता किसान है या अन्य कोई लघु उद्योग धन्धों से जुड़े हुए है। हमारे यहाँ मानवीय हितों के संवर्द्धन को प्रोत्साहित किया गया है। इसी कारण यहाँ सम्पन्नता एवं वैभव सदा बना रहा है। भारत देश की सम्पन्नता को लोग सोने की चिड़िया के नाम से सम्बोधन करते थे। परन्तु कालांतर में मानवीयता के लुटेरों ने हमारे वैभव को लूटना शुरु किया और लगातार युद्ध, हिंसा के साथ अकाल, महामारी, विलासिता ने भी हमारी आर्थिक सम्पन्नता को विपन्नता में तब्दील कर दिया था। किसान के रुप में प्रजा को समझ ही नहीं आया कि वह कब कैसे इतना लाचार और बेवश हो गया। अन्नदाता की भूमिका का निर्वहन करते हुए वह कब याचक की भूमिका में उपस्थित हो गया। डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में इस अवस्था पर पर्याप्त मंथन किया है। मंथन, मनन के साथ उन सनातन तथ्यों की सार्वकालिक चेतना को स्थापित किया है। जिसके कारण किसान का आर्थिक भार एवं पीड़ा आज भी वैसी बनी हुई है जैसी पहले थी।

भारतीय संस्कृति में धर्म का स्थान दैवीय सत्ता से पूर्ण रुपेण आधृत रहा है। एक अज्ञात अलौकिक सत्ता में अपनी सुरक्षा का भाव प्रारम्भ से ही मनुष्य में बना रहा है। भारतीय संस्कृति में ईश्वर के नाम पर स्थापित धर्म हमारे मूल्यों के साथ मानव के हितों की पूर्ति में सहायक था। आस्था एवं श्रद्धा के साथ धर्म ने हमारे संस्कारों को पुष्पित एवं पल्लिवत किया। परन्तु कालांतर में धर्म के मूल आदर्शों को अनदेखा कर समाज में स्थापित धर्म गुरुओं ने अपनी हठधर्मिता के चलते धर्म सम्प्रदायों की स्थापना की और अपनी पूजा पद्धति का महिमा मंडन किया। डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में धर्म की अवस्था पर चितंन किया और साथ ही इसके प्रभाव का मूल्यांकन भी किया। चैतन्य महाप्रभु, विवेकानंद, मीरा, महर्षि अरविन्द जैसे धर्मज्ञों के चिंतन में धर्म दर्शन, वेद एवं मानव मूल्यों की सार्वकालिक चेतना को अभिव्यक्त किया है। साहित्य के माध्यम

से मानव को आस्था के साथ चिंतन मनन की भावना को प्रासंगिकता के साथ प्रस्तुत करने में उपन्यासकार को पूर्ण सफलता मिली है। धर्म परिवर्तन एवं धर्म प्रचार की सही व्याख्या इनके उपन्यासों में धर्म की रुढ़ान्धता का खण्डन करती है।

प्रेम एक सात्विक भाव है। जिसके विविध रुप मानव के जीवन में विभिन्न संदर्भों में देखने में मिलते है। माँ, परिवार, पत्नी, प्रजा, मित्र, भक्ति आदि अन्य रुपों में इसकी स्पर्शात्मक अनुभूति को सार्थक करने का प्रयास उपन्यासकार ने अपने उपन्यासों में किया है। प्रेम का दृष्टिकोण एक पक्षीय न होकर सर्वत्र विकीर्ण होने वाला सात्विक भाव है। जीवन की निराशा में आशा भाव लाने का सामर्थ्य केवल इसी की तरंग में समायोजित किया जाता है। डॉ. भटनागर ने जहाँ अपने उपन्यासों प्रेम के अनेक चित्रों में रंग भरने का कौशल दिखाया वहीं प्रेम के नाम पर काम वासना का भी पुरजोर खण्डन किया है। डॉ. भटनागर ने देश प्रेम, ईश्वर प्रेम, दाम्पत्य प्रेम आदि के माध्यम से इसकी सार्वकालिक अवस्था का बोध अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में किया है।

डॉ. भटनागर के ऐतिहासिक उपन्यासों में समाज के दो रुप देखने को मिलते हैं। नगरीय एवं ग्रामीण। इन दोनों समाज के मध्य जो भेद है उस पर उपन्यासकार का चिंतन रहा है। डॉ. भटनागर ने नगरीय एवं ग्रामीण के मध्य जो विभिन्नताएँ हैं उनका चिंतन करते हुए यथार्थ बोध को समझने का अवसर पाठक को दिया है। ग्राम एवं शहर की अपनी परम्पराएँ है। इनके बीच उपस्थित तनाव, संत्रास, पीड़ा, घुटन आदि को रेखांकित करते हुए इनका मानव स्वभाव में पर पड़ने वाले प्रभाव को भी दर्शाया है। शहरों की ओर आकर्षित ग्रामीणों की मानसिकता के द्वन्द्व को पठनीय रुप में प्रस्तुत किया है।

डॉ. भटनागर ने जहाँ अपने उपन्यासों में सामाजिक समस्याओं के चिंतन में स्त्री एवं दलित समस्या को भी प्रमुखता से प्रस्तुत किया है एवं उनके द्वारा समाज पर पड़ने वाले प्रभाव–दुष्प्रभाव का भी मूल्यांकन किया है। समाज के प्रबुद्ध नेताओं द्वारा समाज के इस खण्डनात्मक पक्ष का पुरजोर विरोध किया है। मीरा जहाँ अपने आपको स्त्री संघर्ष की प्रतिमूर्ति के रुप में प्रस्तुत करते हुए स्त्री के जीवन संघर्ष को भक्तिमय चेतना प्रदान करती है। तो अम्बेडकर, महात्मा गाँधी, विवेकानंद आदि महापुरुषों ने समाज के दलित वर्ग की पीड़ा को सत्याग्रह एवं अहिंसा का मार्ग प्रस्तुत कर अग्रसर होने को प्रेरित करते हैं। दलित एवं स्त्री पक्ष का चिंतन सदैव हर युग में प्रासंगिक बना रहेगा क्योंकि यह एक शासक वर्ग द्वारा स्थापित सोच है। समाज की एकता को तोड़ने का कुत्सित प्रयास है। परन्तु यदि संघर्ष सत्य सम्पृक्त हो तो परिणिती सुखद ही होती है।

डॉ. भटनागर के उपन्यासों में सत्य का चिंतन है जो सार्वकालिक चेतना को प्रस्तुत करता है। मानवीय मूल्यों के द्वारा समाज के प्रति कर्त्तव्य, दायित्व, शोषण, अत्याचार, उन्मूलन आदि पक्षों का सही मूल्यांकन किया जा सकता है। सत्य, अहिंसा, प्रेम, भक्ति, विश्वास, लोभ,

पीड़ा, संत्रास, घुटन, कुंठा, प्रकृति, स्वतंत्रता, अस्तित्व और भी अन्य विषयों पर उपन्यासकार ने एक सटीक भावात्मक विश्लेषण कर सार्वकालिक चेतना को परिलक्षित किया है। भारतीय साहित्य की श्रेष्ठता हमारे धर्म एवं ग्रंथों पर आधृत है। इसी कारण हमारे ऋषि मुनियों के ज्ञान–विज्ञान एवं दर्शन का सम्पूर्ण विश्व में डंका बजता है। उपन्यासकार ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में धर्म दर्शन की अंतर्दृष्टि को चैतन्य बनाते हुए पाठक के मन में उपस्थित सभी ग्रन्थियों का निस्तारण कर उसके मानस को विवेक का मार्ग दिखाया है। विवेकानंद जैसे व्यक्तित्व का धर्म एवं वेदों पर चिंतन सम्पूर्ण विश्व में हमें गौरव प्रदान करता है। उसी दर्शन का पुनः प्रस्तुतीकरण करते हुए डॉ. भटनागर ने भारत के ऐतिहासिक गौरव की पुनः प्रतिष्ठा की है। उपन्यासकार ने महर्षि योगी अरविन्द के विचारों के साथ योग एवं अध्यात्म की सरल व्याख्या प्रस्तुत कर इस विषय को नवीन चिंतन और आधार प्रदान कर प्रस्तुत किया है।

डॉ. भटनागर ने अपने समय के साथ कालातीत घटनाओं का सम्यक् विश्लेषण किया है। यही कारण है कि इनका लेखन साहित्य की हर कसौटी पर परखने योग्य है। वह सामयिक विषयों के साथ मानवीय संवेदना की अनुभूति का संवेदनाजन्य स्तर पर मूल्यांकन करने में सक्षम रही है। इनके द्वारा समाज के विषयों पर जो चिंतन किया है, वह हर युग में अपनी उपस्थिति बनाए हुए है। स्त्री का संघर्ष कहे या मानव मात्र के अधिकारों का संघर्ष हर युग में एक सकारात्मक चेतना का निर्देश प्राप्त करता रहा है।

डॉ. भटनागर ने साहित्य में हर स्तर पर भावों की व्याख्या करने का प्रयास किया है। जहाँ जैसा आवश्यक लगा वैसा ही ढंग और विधि का प्रयोग कर आत्मपरक, विश्लेषणात्मक, प्रश्नाकुल, कल्पनागत, चिंतनात्मक पद्धति आदि के साथ मानव मूल्यों के संघर्ष को टटोलने का साहस ही नहीं अपितु एक नवीन और प्राचीन संस्कृति का समन्वय कर भारतीय ऐतिहासिक गौरव को युवा वर्ग और आने वाली पीढ़ी के लिए सरल रुप में प्रस्तुत करने का भी अद्भुत प्रयास किया है। साहित्य में इसी कारण इनके उपन्यास साहित्य की विविध दृष्टियाँ परिलक्षित होती हैं। शिल्प विधान में उपन्यासकार ने उपन्यास शिल्प के समस्त तत्वों के साथ फिर वह कथानक हो, चरित्र हो, संवाद, भाषा शैली अथवा नियामक तत्व उद्देश्य तभी का सही तालमेल स्थापित किया है।

डॉ. भटनागर ने उपन्यासों का लेखन जनमानस को दिशा प्रदान करने के उद्देश्य से किया है। इनका चिंतन सार्वकालिक है। कारण इनका लेखन इतिहास के संघर्ष की अमर गाथा से प्रेरित है। संघर्ष और शोषण के मध्य जो भाव उपस्थित रहे उनका मानवीय मूल्यांकन इनका कौशल है। निःसंदेह इनके द्वारा स्थापित चिंतन समाज को सदैव सार्वकालिक चेतना प्रदान करता रहेगा।

♦♦♦♦

# शोध–सारांश

# शोध–सारांश

**"इतिहास बीता हुआ कल–मात्र नहीं है, अपितु वह हमारा वर्तमान तथा अनागत भी है। व्यक्ति कभी अकेले न वर्तमान जी सकता है, न अतीत और अनागत। इन तीनों का संतुलित समन्वय ही मानव जाति को समीचीन रास्ता दिखला सकता है।"**

**डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर**

इतिहास वर्तमान को दृष्टि देता है वह शाश्वत मूल्यों का साक्षी होता है। इतिहास अधिकांशतः तथ्यात्मक विश्लेषण के द्वारा स्थापनाएँ करता है फलस्वरुप वह जीवन के आधारभूत तत्वों से बहुत कुछ वंचित रह जाता है इसलिए ही उपन्यासकार अपने नायक के चरित्र को स्थापित करने के लिए बारम्बार प्रयत्नशील होता है। इतिहास यदि पारंगत इतिहासकार के हाथ लग जाए तो वह समग्र तत्कालीनता को एक वृहद् परिपेक्ष्य में प्रस्तुति देने का हर संभव प्रयास करता है। साहित्य समाज का दर्पण है और इस दृष्टि से साहित्य ही समाज का जीवंत इतिहास भी है। श्रेष्ठ साहित्य सदा सार्वकालिक होता है यूँ तो काल का बन्धन तोड़कर साहित्य का सृजन मानव मन की गहराईयों से जुड़ा होने के कारण किसी न किसी सीमा तक कालातीत होता है साहित्य मानव जाति से सम्बद्ध होने के कारण बहती नदी की तरह सदैव गतिशील रहता है। साहित्य मानव जीवन के अतीत, वर्तमान और भविष्य तीनों से इस प्रकार सम्पृक्त होना चाहिए कि उसकी गतिशीलता निर्बाध रुप से अपना सक्रिय योगदान समाज को प्रदान करती रहे इसके लिए साहित्य का आधार मानव जीवन के शाश्वत मूल्य ही हो सकते हैं क्योंकि जीवन मूल्य ही जीवन को सक्रिय बनाते हुए हर युग में समाज को शाश्वत दृष्टि प्रदान करने में सहायक होते हैं। डॉ. भटनागर के उपन्यास काल सीमा से परे शाश्वत जीवन मूल्यों से सम्बद्ध है। इनके उपन्यासों की चेतना मानव और मानवता में सन्निहित है परिणामतः इनके ऐतिहासिक उपन्यास कालजयी है इनके उपन्यास सार्वभौमिक मूल्यों पर केन्द्रित होने के कारण उन शाश्वत कथानक चरित्रों से अपनी स्थापना को सुदृढ़ बनाते है। 'नीले घोड़े का सवार', 'सरदार', 'विवेकानंद', 'सुभाष एक खोच', 'कुली बैरिस्टर', 'योगी अरविन्द', 'मीरा', 'युग पुरुष अम्बेडकर', 'अर्न्तयात्रा जोगिन', 'अमृतघट', 'गौरांग', आदि उपन्यास के सभी चरित्र अपने समय से लेकर आज तक मानव जीवन के लिए निरंतर प्रेरणादायी बने हुए है एवं आज भी प्रासंगिक है और आने वाले कल में भी प्रासंगिक रहेंगे।

महापुरुषों के प्रति श्रद्धा एवं विश्वास होने के कारण ही उनके जीवन चरित्र को आत्मसात् करने के लिए मेरा जिज्ञासु मन सदैव लालायित रहता है। शोध के क्षेत्र में मुझे अवसर मिला तो मैंने राजकीय महाविद्यालय कोटा की हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ. मुरलिया शर्मा जी से इस विषय पर

चर्चा की। डॉ. मुरलिया जिनका चिन्तन सदैव जीवन मूल्यों एवं सामाजिक विषयों पर अधिक रहा है। मेरी जिज्ञासा को सार्थक दिशा देने का प्रयास डॉ. मुरलिया शर्मा जी के कुशल निर्देशन में प्रारम्भ हुआ। डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर हिन्दी उपन्यास विधा के एक सशक्त हस्ताक्षर है। इनके लेखन का उद्देश्य भारतीय इतिहास के महान् व्यक्तियों के जीवन चरित्र के माध्यम से वर्तमान चिंतन को दिशा प्रदान करना रहा है। डॉ. भटनागर के उपन्यासों का अध्ययन करने पर इनके उपन्यासों में जो दृष्टि एवं चिंतन परिलक्षित होता है। वह सार्वकालिक चेतना के अधिक निकट है। शोध निर्देशक जी ने गहन अध्ययन एवं मनन के उपरांत डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर जी के ऐतिहासिक उपन्यासों का अध्ययन (सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में) विषय पर मुझे शोध कार्य करने के लिये प्रेरित किया।

इस शोध विषय को मैंने पाँच अध्यायों में विभाजित करते हुए अंत में उपसंहार प्रस्तुत किया है। शोध कार्य के अंत में जिन पुस्तकों, उपन्यासों, संदर्भ ग्रंथों, पत्रिकाओं, शब्दकोशों और मेगजीनों की सहायता ली है। इन्हें संदर्भ ग्रंथ सूची में सूचीबद्ध किया गया है।

प्रथम अध्याय सार्वकालिक चेतना के विविध आयाम एवं स्वरुप से संबंधित है। इसमें सार्वकालिक चेतना के अर्थ, स्वरुप, प्रकृति, अन्तर्सम्बन्ध, विविध स्वरुप आदि का विवेचन किया गया है। यह इसलिए है कि शोध कार्य की क्रियान्विति सार्वकालिक चेतना की परिधि में ही रहे।

**प्रथम अध्याय – सार्वकालिक चेतना के विविध आयाम व स्वरुप**

(क) सार्वकालिक चेतना से आशय

(ख) सार्वकालिक चेतना : प्रकृति एवं स्वरुप

(ग) साहित्य और सार्वकालिक चेतना अंत सम्बन्ध

(घ) सार्वकालिक चेतना के विविध स्वरुप

(ड.) गद्य की विविध विधाएँ एवं सार्वकालिक चेतना

उपर्युक्त विवरणानुसार सार्वकालिक चेतना के विविध आयाम व स्वरुप को प्रकाशित करने का हर सम्भव प्रयास किया है। 'सार्वकालिक' शाश्वत सत्य का परिचायक है, जो चिरंतन है, नित्य है, सब समय एवं सब काल में है। डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में सर्वकालिक चेतना की सम्पृक्ति के साथ मानवीय मूल्यों की पुनर्व्याख्या करने का स्तुत्य प्रयास किया है सार्वकालिक चेतना सदैव जीवन मूल्यों के संदर्भ में परिभाषित की जाती है क्योंकि जीवन मूल्य शाश्वत, सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक होते है। सार्वकालिक चेतना से तात्पर्य मानव मूल्यों की संघर्षशील व्याख्या से है मानव के युग नायक बनने के पीछे जो कहानी है वह सार्वकालिक चेतना से जुड़े मूल्यों की सतर्क व्याख्या है। अहिंसा, धर्म, प्रेम, समाज, संस्कृति, राजनीति,

इतिहास, प्रकृति, स्वतन्त्रता, राष्ट्र, ईश्वर, भक्ति व अन्य कई रुपों में सार्वकालिक चेतना का आशय एवं विविधता को देखा जा सकता है उपन्यासकार ने उपन्यासों में जिन मूल्यों की व्याख्या की है वह सार्वकालिक चेतना के सारथी है साहित्य और सार्वकालिक चेतना का सम्बन्ध युगों से धारावाहिकता के साथ सार्वभौमिक सत्य का शोधक रहा है साहित्य में वर्णित हर विषय, मूल्यों एवं चिंतन सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्ति रखता है जीवन की समस्त चेतना में सार्वकालिक मूल्यों सतर्क व्याख्या का बोध होता है। साहित्य में इसका मूल्यांकन सभी प्रचलित विधाओं में हुआ है अहिंसा, धर्म, स्वतन्त्रता, संस्कृति, दर्शन, व्यक्ति, इतिहास, स्त्री–पुरुष, समाज या अन्य विषय या प्रसंग सभी में सार्वकालिक चेतना सहज परिलक्षित होती है।

हिन्दी उपन्यास साहित्य विधा में डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर स्वर्णिम हस्ताक्षर है। इन्होंने उपन्यास साहित्य विधा की समृद्धि में अपना अमूल्य योगदान दिया है। नाटक, कहानी, एकांकी, बाल साहित्य, उपन्यास, समीक्षा, एवं अन्य गद्य विधाओं में अपनी लेखनी के सामर्थ्य को सार्थक किया है। इतिहास के प्रति विशेष मोह होने के कारण साहित्य रचना में इतिहास से जुड़े महान व्यक्तियों के जीवन संदर्भ को व्याख्यायित करने का सफलतम प्रयास किया है। मानव जीवन मूल्यों का क्षरण होते हुए देखकर साहित्य में ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना की है। मानवीय मूल्यों का ह्रास रोकने का साहित्यिक श्रम किया है। साहित्य और इतिहास की स्वर्णिम परम्परा को अक्षुण्ण रखते हुए महापुरुषों के महान् व्यक्तित्व की जीवन गाथा एवं संघर्ष की भावात्मक प्रस्तुति दी है। इतिहास के प्रति मानव की सुप्त चेतना को चिंतन प्रदान करने का कार्य इन्होंने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों के द्वारा किया है।

इतिहास सदा वर्तमान को दिशा प्रदान करने का कार्य करता है। परन्तु इस कार्य के लिए जिस माध्यम या साधन की आवश्यकता है, वह साहित्य ही है। डॉ. भटनागर ने अपनी प्रतिभा के सामर्थ्य से इतिहास के द्वन्द्व को सुलझाकर मानव के लिए सरल एवं रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। जीवन की विचारधारा में साहित्य का प्रवेश मानवीय मूल्यों का सारथी सिद्ध हुआ है। मानव मूल्यों की प्रस्तुति के लिए मानव का जीवन संघर्ष लोगों को सच्ची प्रेरणा दे सकता है। अतः इन्होंने अपनी साहित्य रचना को महापुरुषों के जीवन संदर्भों के साथ सम्पृक्त किया है। इनका इतिहास चिंतन तत्कालीन परिस्थितियों की व्याख्या तक सीमित नहीं रहा है। अपितु वह आदि से अद्यतन सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में मानवीय मूल्यों से भी सम्बद्ध रहा है। इतिहास से जुड़े व्यक्तियों का जीवन चरित्र प्रस्तुत करते समय लेखक को अत्यधिक सावधानी एवं जिम्मेदारी के साथ लेखन करना पड़ता है, क्योंकि इतिहास का प्रस्तुतिकरण करते समय इतिहास के मौलिक स्वरुप के साथ कोई भी क्षति किसी भी स्तर पर नहीं होनी चाहिए। लेखक को हमेशा इस बात का ध्यान रखना होता है। उपन्यासकार ने अपने साहित्यिक दायित्व की मर्यादा को अक्षुण्ण बनाए रखा है।

डॉ. भटनागर ने एक उपन्यासकार के रुप में ऐतिहासिक तथ्यों की व्याख्या करते हुए इतिहास और साहित्य का समन्वयात्मक रुप प्रस्तुत किया है। जीवन की गाथा को इतिहास से प्रेरणात्मक रुप में स्पष्ट करने का प्रयास किया है। एक साहित्यकार के रुप में इनका चिंतन जहाँ समाज को एक सकारात्मक ऊर्जा से प्रेरित करने का रहा है वहीं इतिहास के महापुरुषों की जीवन कथा के माध्यम मानवीय मूल्यों की पुनर्स्थापना करना भी इनका लक्ष्य रहा है। इन्होंने कथा साहित्य के द्वारा महापुरुषों के ऐतिहासिक कार्यों को पाठक के समक्ष प्रस्तुत किया है। पाठक को उन घटनाओं के समय उपस्थित मनोविकारों के द्वन्द्व को समझने का अवसर प्रदान किया है। पाठक इन उपन्यासों को समझते हुए रोचकता के साथ सार्वकालिक मूल्यों की निरंतरता को आत्मसात् करता है। इतिहास का कोरा यथार्थ मूल्यांकन न करके इन्होंने उसमें भावों की कल्पनात्मक व्याख्या को भी स्थान दिया है। इनके उपन्यासों की यह विशिष्टता है कि यह पाठक के विवेक को जागृत कर उसे स्वचिन्तन का अवसर देते है।

द्वितीय अध्याय में डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर के उपन्यासों का तात्विक विवेचन किया गया है। जिसमें उपन्यास की परिभाषा, स्वरुप, संवेदना, शिल्प, समसामयिक संदर्भ के साथ ही चरित्रगत विविध स्वरुप पर प्रकाश डालते हुए उपन्यासकार के व्यक्तित्व एवं कृतिव का संक्षिप्त परिचय भी सम्मिलित किया गया है।

**द्वितीय अध्याय – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर के उपन्यास : तात्त्विक चिंतन**

(क) उपन्यास की परिभाषा एवं प्रकार

(ख) डॉ. भटनागर के उपन्यास : एक अध्ययन

(ग) डॉ. भटनागर के उपन्यास : संवेदना और शिल्प

(घ) डॉ. भटनागर के उपन्यास : समसामयिक संदर्भ

(ड.) डॉ. भटनागर के उपन्यास : चरित्रगत विविध स्वरुप

डॉ. भटनागर एक साधारण परिवार में जन्म लेकर साहित्यिक जगत् की जो सेवा की वह अतुलनीय है। इनके जीवन का उद्देश्य सदैव मानवीय मूल्यों की स्थापना का रहा है। जो आज तक अनंत प्रवाह के साथ अग्रसर है। शिक्षक की भूमिका में कर्तव्यनिष्ठा ने इनको समाज के उन पहलुओं पर चिंतन करने की प्रेरणा दी जो समाज के ऊपर एक बदनुमा दाग थी। भारतीय सामाजिक जीवन में प्रचलित कुप्रथा एवं आडम्बरों ने इनके मन को गहरी पीड़ा पहुँचायी। इनका साहित्य सृजन इस बात का जीता जागता प्रमाण है कि इन्होंने समाज में व्याप्त उन सभी बुराइयों के रहस्य से पर्दा उठाया है। जिनको परस्पर परम्परा के नाम पर पुरातन काल से पूज्यनीय बनाया हुआ था। साहित्य केवल मनोरंजन के लिए नहीं रचा जाता बल्कि उसमें निहित संदेश को जनमानस तक सरल रुप में पहुँचाना होता है। उपन्यासकार ने अपने इस साहित्यिक कर्तव्य का मान रखते हुए समाज को एक सकारात्मक ऊर्जा के साथ प्रेरणा प्रदान की है।

डॉ. भटनागर का उपन्यास साहित्य भारतीय इतिहास एवं गौरव की पुनर्व्याख्या करता है। इन्होंने अपने उपन्यास साहित्य में सार्वकालिक मूल्यों का चिंतन किया है। इनके उपन्यास साहित्य में विषयों की विविधता होने के साथ–साथ उनसे जुड़े ऐतिहासिक घटना क्रम को भी समझाने का प्रयास किया गया है। भक्ति, राजनीति, धर्म, परिवार, साम्प्रदायिकता, स्वतंत्रता, अर्थ, दर्शन, संवेदना, संस्कृति, समाज से जुड़े सार्वकालिक मूल्यों का चिंतन इनके उपन्यास साहित्य में व्यक्त हुआ है। इन्होंने अपने उपन्यासों में मीरा, महाराणा प्रताप, चैतन्य महाप्रभु, महात्मा गाँधी, सुभाष चन्द्र बोस, अम्बेडकर, विवेकानंद, महर्षि अरविन्द योगी जैसे महापुरुषों के जीवन संदर्भ के माध्यम से उपन्यासों में सार्वकालिक चेतना को व्यक्त करने का हर संभव प्रयास किया है। इन्होंने अपने उपन्यासों में कोरा यथार्थ प्रस्तुत नहीं किया अपितु तत्कालीन परिस्थितियों में उत्पन्न होने वाले भाव एवं विचारों के द्वन्द्व को भी परिभाषित किया है। इतिहास से जुड़ी हुई घटनाओं एवं तथ्यों का प्रस्तुतिकरण करते समय इन्होंने ऐतिहासिकता का पूर्ण रुपेण पालन किया है।

डॉ. भटनागर के उपन्यासों में भारतीय समाज के महानायकों के जीवन संदर्भ को केन्द्रीय विषय बनाया है। ये महानायक हर युग में लोगों को प्रेरणा प्रदान करते रहेंगे। उपन्यासकार ने इनसे जुड़े हर पहलू पर अपना और पाठक का ध्यानकर्षण किया है। जिन व्यक्तित्वों पर इन्होंने अपनी लेखनी को श्रम साध्य किया है, वे अपने युग के एक बहुत बड़े वर्ग का प्रतिनिधित्व करते है इनके द्वारा किये गये कार्यों में अलौकिक सामर्थ्य का बोध होता है। हर युग में मानव को महानायक के रुप में किसी न किसी महापुरुष का नेतृत्व प्राप्त होता रहा है। डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों जिन मूल्यों की व्याख्या की है वे सार्वकालिक चेतना के वाहक है तथा हर युग में इनकी प्रासंगिकता बनी रहेगी।

डॉ. भटनागर ने महाप्रभु चैतन्य, मीरा, सूरदास के माध्यम से वैष्णव भक्ति की महान् सनातन परम्परा के मूल्यों की सम्पृक्ति सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में प्रस्तुत की है। भक्ति के स्वरुप पर व्याख्या प्रस्तुत करते हुए इनका चिन्तन मानवतावादी रहा है। धर्म की आदर्श व्यवस्था की व्याख्या कर उसके मानवीय मूल्यों की पुनर्स्थापना में सहयोग करना ही इनका उद्देश्य रहा है। धर्म के सिद्धान्तों के साथ धार्मिक चेतना से जुड़े हर तथ्य को प्रकाशित करने का श्रम साहित्यकार ने किया है। इनके उपन्यासों में भक्ति के साथ समाज में व्याप्त आडम्बर, कुप्रथाओं, अंधविश्वासों का खण्डन हुआ है। सती प्रथा, बाल विवाह, विधवा विवाह, वेश्या प्रथा, अनमेल विवाह, छुआछूत, ऊँच–नीच जैसे गम्भीर विषयों पर इनके चिंतन ने पाठक के प्रखर वेग को प्रभावित किया है। एवं नारी विमर्श में आदर्श एवं मर्यादा को स्थापित करने का स्तुत्य प्रयास किया है। धर्म और सम्प्रदाय से जुड़े तथ्यों का प्रकाशन करते हुए समाज में उचित अनुचित का विवेक जागृत किया है। धर्म के के मूल आदर्शों की शाश्वत एवं सैद्धान्तिक व्याख्या प्रस्तुत की है। सम्प्रदाय के नाम पर होने वाले धार्मिक मिथ्याचरण का पर्दाफाश किया है। डॉ. भटनागर ने अपने

ऐतिहासिक उपन्यासों में संन्यास एवं गृहस्थ के आदर्शों के समन्वयात्मक स्वरुप की स्थापना पर जोर दिया है। धर्म प्रचार के नाम पर धर्म परिवर्तन का कुत्सित प्रयास करने वाले अधर्म के व्याख्याकारों फटकारा ही नहीं अपितु धर्म के आदर्श एवं मूल सिद्धान्तों को मानवीय मूल्यों के साथ सम्पृक्त कर स्थापित किया है।

इतिहास का महत्वपूर्ण एवं सार्वकालिक मूल्य स्वतंत्रता है। यह शब्द इतिहास का अत्यधिक संघर्षशील एवं संवेदनशील चेतना से सम्पृक्त विषय है। डॉ. भटनागर ने इस मूल्य के संदर्भ से जुड़े हर तथ्य का विश्लेषणात्मक वर्णन किया है। जिसके कारण यह मूल्य इनके उपन्यासों में सर्वव्यापकता एवं सार्वकालिक चेतना का प्रतीक बनकर उपस्थित हुआ है। स्वतंत्रता का विषय एकाकी हो ही नहीं सकता। क्योंकि इसके साथ मानव का अस्तित्व उसके अधिकार जुड़े है। वह किसी भी कीमत पर इसके साथ समझौता नहीं करता है। इनके ऐतिहासिक उपन्यासों में स्वतंत्रता से जुड़े तथ्यों का चिंतन सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में किया गया है। स्वतंत्रता मानव के अस्तित्व एवं व्यक्तित्व का परिचायक है। उपन्यासकार ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में महाराणा प्रताप, महात्मा गाँधी, सुभाष चन्द्र बोस, विवेकानंद, महर्षि अरविन्द योगी, सरदार पटेल जैसे व्यक्तियों के जीवन संदर्भ के साथ जिन सार्वकालिक मूल्यों का चिंतन किया है। यह संघर्ष अमर है। भारतीय इतिहास को वैश्विक पटल पर स्मरण करने योग्य बनाने का अमर प्रयास स्वतंत्रता संघर्ष के नायक महाराणा प्रताप ने किया है। वह अतुलनीय है। स्वतंत्रता के इस पुरोधा ने राजनीति के क्षुद्र स्वार्थों से ऊपर उठकर मेवाड़ को स्वतंत्र रहने का गौरव प्रदान किया था। स्वतंत्रता के प्रति महाराणा प्रताप की निष्ठा ने जनमानस के सुप्त जीवन में आशा के प्राण फूँक दिये थे। डॉ. भटनागर ने महाराणा प्रताप के जीवन संदर्भ के साथ जुड़े इस सार्वकालिक चेतना के वाहक मूल्य का विविध प्रसंगों के साथ उद्घाटन किया है। स्वतंत्रता का पथ एकाकी नहीं है। इससे मानव चेतना को ऊर्जा मिलती है। इसकी चेतना मनुष्य को संघर्ष की चरमावस्था तक ले जाती है। 'दिल्ली चलो' उपन्यास में सुभाष बोस के स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए किये गये संघर्ष में जो ऊर्जा है, वह इन मूल्यों के प्रति निष्ठा का ही परिणाम है। जीवन में मनुष्य को सदैव अपने अधिकारों के प्रति जागृत करने का कार्य इन महापुरुषों ने किया वह स्वतंत्रता की ऊर्जा से ही प्रेरित था।

डॉ. भटनागर ने साहित्य रचना में संवेदना के हर स्तर को स्पर्श किया है। इनकी संवेदनात्मक अनुभूति ने ही पाठक के समक्ष तत्कालीन परिस्थितियों एवं प्रसंगों के दौरान आने वाले भावों की श्रृंखला से तादात्म्य स्थापित करने में सहयोग किया है। संवेदना और साहित्य एक दूसरे के पूरक है। क्योंकि संवेदना भावों से सम्पृक्त होती है। साहित्य संवेदना को अभिव्यक्त करता है। उपन्यासकार ने अपने उपन्यासों में संवेदना को अनुभूत करके उसके सार्वकालिक पक्ष को भी उजागर किया है। संवेदना के माध्यम से पाठक के मानसिक ज्वार को शांत करने का

सार्थक प्रयास किया है। संवेदना के कई स्तर इनके उपन्यासों में देखने को मिलते है। राष्ट्र के प्रति जो चिंतन है उसमें राष्ट्रीय संवेदना का उत्कृष्ट रुप हमें दिखाई पड़ता है। वहीं धर्म, सम्प्रदाय के प्रति जो चिंतन है उसमें धार्मिक संवेदना के दर्शन होते है। मानव समाज में अस्पृश्यता का दंश झेलेते हुए नारकीय जीवन जीने वाले मानुष के प्रति उत्पन्न भावों में दलित संवेदना तो स्त्री के संघर्ष और अत्याचार को व्यक्त करने वाले विचारात्मक प्रस्तुतिकरण में स्त्री संवेदना को देखा जा सकता है। संवेदना को हर अवसर पर स्पर्शात्मक अनुभूति प्रदान करने का सामर्थ्य डॉ. भटनागर के उपन्यासों को सार्वकालिक चेतना से सम्पृक्त कर कालजयी रचना घोषित करता है। संवेदना की मूल्यों के साथ सम्बद्धता उसके प्रवाह को युगों की सीमाओं से पार ले जाती है। संवेदना के साथ आत्मसात् होकर साहित्य में अभिव्यक्त करने की दक्षता डॉ. भटनागर के उपन्यासों में परिलक्षित होती है।

डॉ. भटनागर के उपन्यासों में समय के साथ उपस्थित भावों एवं विचारों की गहन अनुभूति है। उनके पात्रों की मानसिक स्थिति का मूल्यांकन अपने समय की घटनाओं के साथ समायोजन की कुशल व्याख्या है बदलते परिवेश एवं मानस के पटल पर उपस्थित हर भाव एवं विचार की गहराइयों को मापने का अद्भुत प्रयास उपन्यासकार ने अपने उपन्यासों के माध्यम से किया है। जीवन जीना एक सामाजिक पक्ष है। यह समायोजन की व्याख्या करता है। परन्तु समय के साथ होने वाले द्वन्द्वात्मक वातावरण को भी अनुभव करता है। डॉ. भटनागर ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में अवसर की सुलभता के साथ समसामयिक संदर्भों का भी वर्णन किया है। समसामयिक विषयों के प्रति उपन्यासकार की दृष्टि एक समीक्षक की रही है। ये मूल्यों के ह्रास एवं पतन का कारण ढूँढते हुए समसामयिक संदर्भों की कुशल व्याख्या करते है। जीवन अनुभवों के आधार पर प्रदर्शित होता है। अतः साहित्य में समय के साथ भावों की संवेदना को समझना भी अत्यंत आवश्यक है। उपन्यासों में चरित्र चित्रण को लेकर डॉ. भटनागर अत्यधिक सतर्क रहे हैं। क्योंकि इनके पात्र कोई कल्पित कथा के नहीं है बल्कि इतिहास के युग पुरुष है। सामान्य जन के आदर्श एवं प्रेरणा स्त्रोत है। इनके साथ जुड़ी हर घटना एवं प्रसंग से वर्तमान एक सकारात्मक प्रेरणा को ग्रहण करता है। चरित्रों की सृष्टि में इनके द्वारा किया गया अनुसंधान इनके चरित्रों में केवल ऐतिहासिक तथ्यों से ही सरोकार नहीं रखता है। बल्कि उनके प्रेरणात्मक कार्यों की व्याख्या भी मानवीय मूल्यों के संदर्भ में करता है। चरित्र का अपना एक मार्ग होता है। वह पथ उसके कर्तव्य एवं दायित्वों का बोध करता है। डॉ. भटनागर ने अपने साहित्यिक सामर्थ्य से इस तत्व का विश्लेषणात्मक अनुसंधान किया है। किसी चरित्र की मौलिकता को बिना छेड़े उसके दर्शन को सामान्य जन तक पहुँचाने का कार्य इनके उपन्यासों द्वारा किया गया है। इनके द्वारा चरित्रों की दार्शनिकता, ऐतिहासिकता, धार्मिकता, मानवीयता, राजनीतिक संवेदना जैसे कई स्तरों द्वारा

मूल्यांकित किया गया है। इनके पात्रों की लौकिकता को उपन्यासकार ने पाठक के समक्ष लौकिक सीमा, समय और अवधि से परे सिद्ध करने का प्रयास उपन्यासकार ने किया है।

डॉ. भटनागर के उपन्यासों में चरित्र को काफी हद तक समझने के साथ आत्मसात् करने का भी प्रयास किया है। चरित्र चित्रण कल्पना के सागर में डुबकी लगाकर प्रस्तुत करना और उसका साहित्यिक मूल्यांकन सरल हो सकता है। परन्तु जहाँ चरित्र ऐतिहासिक सागर की गहराइयों में बिखरा पड़ा हो वहाँ से उसको ढूँढ कर पाठक के समक्ष मूल्यांकित करना साहित्यकार के लिए असंभव तो नहीं श्रम साध्य अवश्य रहा है। डॉ. भटनागर द्वारा चरित्र की ऐतिहासिकता को भी बरकरार रखा गया है और कल्पना के सहारे पाठक के चित्त में उद्वेलित मानस को भी शांत किया गया है। चरित्र चित्रण में किसी व्यक्तित्व का बाह्य पक्ष तो सभी के समक्ष ज्ञेय होता है। परन्तु आंतरिक पक्ष का मूल्यांकन केवल कुशल साहित्यिक समीक्षक ही कर सकता है। उपन्यासकार ने ऐतिहासिक उपन्यासों में इतिहास की गरिमा को पुनः प्रतिष्ठित करते हुए साहित्य के सहारे उन द्वन्द्वों को सुलझाने का प्रयास किया है। जो संभवतः पाठक की रुचि एवं जिज्ञासा को शांत कर सके। ऐतिहासिक चरित्र के मानसिक संवेगों के साथ कल्पनात्मक दैवीय साक्षात्कार समस्त प्रश्नों का समाधान प्राप्त करता हुआ मानव को एक प्रेरणा प्रदान करता है। इनकी कुशलता कहे या फिर कल्पना कि चरित्र का इतना सटीक आत्म विश्लेषण हमें कहीं नहीं प्राप्त होता है। उपन्यासों में वर्णित मानव अपने युग के प्रेरणा पुरुष है। जिनके कार्य एवं संघर्ष को आज भी प्रेरणादायक एवं प्रासंगिक माना जाता है। डॉ. भटनागर ने इतिहास के साथ बिना छेडछाड़ किए चरित्र में मौलिकता एवं कल्पना का समन्वय कर पाठक एवं समाज को एक नवीन मूल्यांकन प्रस्तुत किया है।

तृतीय अध्याय में डॉ.भटनागर के ऐतिहासिक उपन्यासों में निहित ऐतिहासिकता, सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक चेतना का अध्ययन सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में किया गया है। इन बिन्दुओं के माध्यम से मानवीय जीवन मूल्यों को लेकर साहित्यकार के चिंतन को स्पष्ट करने का संक्षिप्त प्रयास किया है।

**तृतीय अध्याय – डॉ. भटनागर के उपन्यास : सार्वकालिक चेतना**

(क) ऐतिहासिक चेतना

(ख) सांस्कृतिक चेतना

(ग) सामाजिक चेतना

(घ) आर्थिक चेतना

(ड.) राजनैतिक चेतना

इतिहास मानव के लिए सदा प्रेरणादायी रहा है। इतिहास के द्वारा ही मानव को संघर्ष की प्रेरणा मिलती है। परन्तु भारत जैसे देश में कुछ सत्ता लोलुप मनुष्यों के कारण भारत को वर्षों की गुलामी का दंश झेलना पड़ा था। भारत की जनता को शासित करने के लिए उन्हें अज्ञानता के अंधेरे में रखा गया। आदर्शों के संघर्ष को प्रताड़ित किया गया। परन्तु इतिहास का सच सदैव आलोकित रहने वाला मार्तण्ड है। उसकी आशा को प्रकाशित होने से कोई नहीं रोक सका है। जीवन के संदर्भ में जब कभी भी हमें ऐसे लगा कि निराशा के बादल गहराने लगे तब बुजुर्गों की जबानी जो कहानी हमें सुनाई गई वो आशा की स्वर्णिम किरण बनकर उपस्थित हुई है। इतिहास ने चेतना प्रदान कर मानव को सुप्तावस्था से जगाने का प्रयास किया है। डॉ. भटनागर ने इतिहास के कालखण्डों से उन नायको के कर्तव्य को प्रकाशित किया है। जिन्होंने इतिहास को सार्वकालिक बनाते हुए अमर कर दिया है। आज भी उनके महानायकत्व को कर्तव्य पथ का आदर्श माना जाता है। उपन्यासकार ने जिस सार्वकालिक ऐतिहासिक चेतना को प्रस्तुत किया है। वह हमारी धरोहर जो हर युग में प्रासंगिक रही और रहेगी।

भारतीय संस्कृति से जुड़े मूल्यों ने मानव को व्यक्तिगत तौर पर हमेशा प्रभावित किया है। संस्कृति से हमारी सभ्यता, संस्कारों का परिचय मिलता है। हमारी संस्कृति के मूल्यों को सम्पूर्ण विश्व में सराहा जाता है। 'वसुधैव कुटुम्बकम' 'अतिथि देवो भव', 'सर्वे भवन्तु सुखिन' की महान् विचारधारा का पालन करने वाला देश सभी सभ्यताओं में सर्वाधिक सम्मानजनक रहा है। यही कारण है कि हम कहीं नहीं गये परन्तु भारत की सांस्कृतिक परम्परा का अनुशीलन करने सम्पूर्ण विश्व से लोग यहाँ आते रहे है। हमारा ज्ञान, विज्ञान, तकनीक व अन्य विधाओं ने हमें 'विश्व गुरु' की संज्ञा से अभिहित किया था। डॉ. भटनागर ने उपन्यासों में उपस्थित सांस्कृतिक मूल्यों को पाठक के समक्ष ऐतिहासिकता के साथ प्रस्तुत किया है। साथ ही समाज को यह अहसास कराया है। कि सांस्कृतिक मूल्यों के साथ हमारी सम्पृक्ति का कितना महत्व है। यह हमारे जीवन की आधारशिला है। मानव के व्यक्तित्व पर इनका गहरा असर है। स्वतंत्र रहना मानव का अधिकार है। परन्तु स्वतंत्र रहकर दूसरों के लिए जीना हमारी संस्कृति है। उपन्यासकार का यही लक्ष्य रहा है कि वह सांस्कृतिक मूल्यों को वर्तमान पीढ़ी को हस्तान्तरित करने में सक्षम है।

डॉ. भटनागर ने उपन्यासों में सामाजिक चेतना के रुप में समाज में रुढ़ हो चुकी बुराईयों के कारण, प्रभाव और निवारण को पाठक के समक्ष प्रस्तुत किया है। समाज मानव संघ है। जो कि मानव के हित एवं अधिकारों का संरक्षण करता है। परन्तु कुछ लोग अपने क्षुद्र स्वार्थों की पूर्ति के लिए सम्पूर्ण मानवता को शर्मसार कर देते है तो कुछ लोग त्याग समर्पण के द्वारा सम्पूर्ण समाज के पथ प्रदर्शक बने रहते है। डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर ने अपने सामाजिक दायित्व को समझा है। इसी कारण इनका चिंतन सामाजिक रुढ़ियों पर अधिक रहा है। इन्होंने उपन्यास में

वर्णित चरित्रों के व्यक्तित्व एवं जीवन प्रसंगों के द्वारा सामाजिक आदर्शों की व्याख्या कर समाज को प्रेरणा प्रदान की है।

राजनीति में जहाँ आज का युवा अपने आप को दिशाहीन एवं ठगा हुआ सा महसूस कर रहा है। डॉ. भटनागर ने राजनीति के गिरते मूल्यों को चैतन्य करने का कार्य किया। राजनीति मानव के मानव मूल्यों की हितकारी होनी चाहिए परन्तु जब राजनीति सत्ता के गलियारों की सजावट का रुप ग्रहण कर लें तो मानव मन की कौन सुने। उपन्यासकार ने अपने उपन्यासों में राजनीति के आदर्शों में महापुरुषों के उज्ज्वल चरित्र को प्रस्तुत कर एक आदर्श राजधर्म, दायित्व को शासन सम्मत स्वीकृत आधार प्रदान किया है।

भारतीय समाज की अर्थव्यवस्था कृषि एवं लघु, कुटीर उद्योगों पर आधारित रही है। आज भारत की सत्तर प्रतिशत से अधिक जनता किसान है या अन्य कोई लघु उद्योग धन्धों से जुड़े हुए है। हमारे यहाँ मानवीय हितों के संवर्द्धन को प्रोत्साहित किया गया है। इसी कारण यहाँ सम्पन्नता एवं वैभव सदा बना रहा है। भारत देश की सम्पन्नता को लोग सोने की चिड़िया के नाम से सम्बोधन करते थे। परन्तु कालांतर में मानवीयता के लुटेरों ने हमारे वैभव को लूटना शुरु किया और लगातार युद्ध, हिंसा के साथ अकाल, महामारी, विलासिता ने भी हमारी आर्थिक सम्पन्नता को विपन्नता में तब्दील कर दिया था। किसान के रुप में प्रजा को समझ ही नहीं आया कि वह कब कैसे इतना लाचार और बेवश हो गया। अन्नदाता की भूमिका का निर्वहन करते हुए वह कब याचक की भूमिका में उपस्थित हो गया। डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में इस अवस्था पर पर्याप्त मंथन किया है। मंथन, मनन के साथ उन सनातन तथ्यों की सार्वकालिक चेतना को स्थापित किया है। जिसके कारण किसान का आर्थिक भार एवं पीड़ा आज भी वैसी बनी हुई है जैसी पहले थी।

चतुर्थ अध्याय में डॉ. भटनागर के उपन्यासों में सार्वकालिकता के विविध आयामों का विवेचन करते हुए, धर्म और सम्प्रदाय, प्रेम विषयक स्थापनाएँ नगरीय एवं ग्रामीण बोध, स्त्री विमर्श, दलित विमर्श जैसे बिन्दुओं को व्याख्यायित किया गया है। साहित्यकार द्वारा निहित उद्देश्य की क्रियान्विति को स्पष्ट रुप से समझा जा सके।

**चतुर्थ अध्याय – डॉ. भटनागर के उपन्यास : सार्वकालिकता के विविध आयाम**

(क) धर्म और सम्प्रदाय

(ख) प्रेम विषयक स्थापनाएँ

(ग) नगरीय एवं ग्रामीण बोध

(घ) स्त्री विमर्श

(ङ.) दलित विमर्श

भारतीय संस्कृति में धर्म का स्थान दैवीय सत्ता से पूर्ण रुपेण आधृत रहा है। एक अज्ञात अलौकिक सत्ता में अपनी सुरक्षा का भाव प्रारम्भ से ही मनुष्य में बना रहा है। भारतीय संस्कृति में ईश्वर के नाम पर स्थापित धर्म हमारे मूल्यों के साथ मानव के हितों की पूर्ति में सहायक था। आस्था एवं श्रद्धा के साथ धर्म ने हमारे संस्कारों को पुष्पित एवं पल्लिवत किया। परन्तु कालांतर में धर्म के मूल आदर्शों को अनदेखा कर समाज में स्थापित धर्म गुरुओं ने अपनी हठधर्मिता के चलते धर्म सम्प्रदायों की स्थापना की और अपनी पूजा पद्धति का महिमा मंडन किया। डॉ. भटनागर ने अपने उपन्यासों में धर्म की अवस्था पर चितंन किया और साथ ही इसके प्रभाव का मूल्यांकन भी किया। चैतन्य महाप्रभु, विवेकानंद, मीरा, महर्षि अरविन्द जैसे धर्मज्ञों के चिंतन में धर्म दर्शन, वेद एवं मानव मूल्यों की सार्वकालिक चेतना को अभिव्यक्त किया है। साहित्य के माध्यम से मानव को आस्था के साथ चिंतन मनन की भावना को प्रासंगिकता के साथ प्रस्तुत करने में उपन्यासकार को पूर्ण सफलता मिली है। धर्म परिवर्तन एवं धर्म प्रचार की सही व्याख्या इनके उपन्यासों में धर्म की रुढ़ान्धता का खण्डन करती है।

प्रेम एक सात्विक भाव है। जिसके विविध रुप मानव के जीवन में विभिन्न संदर्भों में देखने में मिलते है। माँ, परिवार, पत्नी, प्रजा, मित्र, भक्ति आदि अन्य रुपों में इसकी स्पर्शात्मक अनुभूति को सार्थक करने का प्रयास उपन्यासकार ने अपने उपन्यासों में किया है। प्रेम का दृष्टिकोण एक पक्षीय न होकर सर्वत्र विकीर्ण होने वाला सात्विक भाव है। जीवन की निराशा में आशा भाव लाने का सामर्थ्य केवल इसी की तरंग में समायोजित किया जाता है। डॉ. भटनागर ने जहाँ अपने उपन्यासों प्रेम के अनेक चित्रों में रंग भरने का कौशल दिखाया वहीं प्रेम के नाम पर काम वासना का भी पुरजोर खण्डन किया है। डॉ. भटनागर ने देश प्रेम, ईश्वर प्रेम, दाम्पत्य प्रेम आदि के माध्यम से इसकी सार्वकालिक अवस्था का बोध अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में किया है।

डॉ. भटनागर के ऐतिहासिक उपन्यासों में समाज के दो रुप देखने को मिलते हैं। नगरीय एवं ग्रामीण। इन दोनों समाज के मध्य जो भेद है उस पर उपन्यासकार का चिंतन रहा है। डॉ. भटनागर ने नगरीय एवं ग्रामीण के मध्य जो विभिन्नताएँ हैं उनका चिंतन करते हुए यथार्थ बोध को समझने का अवसर पाठक को दिया है। ग्राम एवं शहर की अपनी परम्पराएँ है। इनके बीच उपस्थित तनाव, संत्रास, पीड़ा, घुटन आदि को रेखांकित करते हुए इनका मानव स्वभाव में पर पड़ने वाले प्रभाव को भी दर्शाया है। शहरों की ओर आकर्षित ग्रामीणों की मानसिकता के द्वन्द्व को पठनीय रुप में प्रस्तुत किया है।

डॉ. भटनागर ने जहाँ अपने उपन्यासों में सामाजिक समस्याओं के चिंतन में स्त्री एवं दलित समस्या को भी प्रमुखता से प्रस्तुत किया है एवं उनके द्वारा समाज पर पड़ने वाले प्रभाव–दुष्प्रभाव का भी मूल्यांकन किया है। समाज के प्रबुद्ध नेताओं द्वारा समाज के इस खण्डनात्मक पक्ष का पुरजोर विरोध किया है। मीरा जहाँ अपने आपको स्त्री संघर्ष की प्रतिमूर्ति के

रुप में प्रस्तुत करते हुए स्त्री के जीवन संघर्ष को भक्तिमय चेतना प्रदान करती है। तो अम्बेडकर, महात्मा गाँधी, विवेकानंद आदि महापुरुषों ने समाज के दलित वर्ग की पीड़ा को सत्याग्रह एवं अहिंसा का मार्ग प्रस्तुत कर अग्रसर होने को प्रेरित करते हैं। दलित एवं स्त्री पक्ष का चिंतन सदैव हर युग में प्रासंगिक बना रहेगा क्योंकि यह एक शासक वर्ग द्वारा स्थापित सोच है। समाज की एकता को तोड़ने का कुत्सित प्रयास है। परन्तु यदि संघर्ष सत्य सम्पृक्त हो तो परिणिती सुखद ही होती है।

पंचम अध्याय में डॉ. भटनागर के उपन्यासों में स्थापित मूल्य चिंतन एवं शिल्प गत सौन्दर्य को निरुपित किया गया है। इस अध्याय के अंतर्गत मानवीय मूल्यों का चिंतन दर्शन धर्म एवं संस्कृति, समसामयिकता, साहित्य की विविध दृष्टियाँ एवं शिल्प विधान के महत्व को रेखांकित किया है।

**पंचम अध्याय – डॉ. भटनागर के उपन्यास : मूल्य चिंतन और शिल्पगत सौन्दर्य**

(क) मानवीय मूल्य : चिंतन

(ख) दर्शन धर्म एवं संस्कृति की अर्न्तदृष्टि

(ग) समसामयिक संदर्भ

(घ) साहित्य की विविध दृष्टियाँ

(ड.) शिल्प विधान

डॉ. भटनागर के उपन्यासों में सत्य का जो है वह सार्वकालिक चेतना को प्रस्तुत करता है। मानवीय मूल्यों के द्वारा समाज के प्रति कर्त्तव्य, दायित्व, शोषण, अत्याचार, उन्मूलन आदि पक्षों का सही मूल्यांकन किया जा सकता है। सत्य, अहिंसा, प्रेम, भक्ति, विश्वास, लोभ, पीड़ा, संत्रास, घुटन, कुंठा, प्रकृति, स्वतंत्रता, अस्तित्व और भी अन्य विषयों पर उपन्यासकार ने एक सटीक भावात्मक विश्लेषण कर सार्वकालिक चेतना को परिलक्षित किया है। भारतीय साहित्य की श्रेष्ठता हमारे धर्म एवं ग्रंथों पर आधृत है। इसी कारण हमारे ऋषि मुनियों के ज्ञान–विज्ञान एवं दर्शन का सम्पूर्ण विश्व में डंका बजता है। उपन्यासकार ने अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में धर्म दर्शन की अंतर्दृष्टि को चैतन्य बनाते हुए पाठक के मन में उपस्थित सभी ग्रन्थियों का निस्तारण कर उसके मानस को विवेक का मार्ग दिखाया है। विवेकानंद जैसे व्यक्तित्व का धर्म एवं वेदों पर चिंतन सम्पूर्ण विश्व में हमें गौरव प्रदान करता है। उसी दर्शन का पुनः प्रस्तुतीकरण करते हुए डॉ. भटनागर ने भारत के ऐतिहासिक गौरव की पुनः प्रतिष्ठा की है। उपन्यासकार ने महर्षि योगी अरविन्द के विचारों के साथ योग एवं अध्यात्म की सरल व्याख्या प्रस्तुत कर इस विषय को नवीन चिंतन और आधार प्रदान कर प्रस्तुत किया है।

डॉ. भटनागर ने अपने समय के साथ कालातीत घटनाओं का सम्यक् विश्लेषण किया है। यही कारण है कि इनका लेखन साहित्य की हर कसौटी पर परखने योग्य है। वह सामयिक विषयों के साथ मानवीय संवेदना की अनुभूति का संवेदनाजन्य स्तर पर मूल्यांकन करने में सक्षम रही है। इनके द्वारा समाज के विषयों पर जो चिंतन किया है, वह हर युग में अपनी उपस्थिति बनाए हुए है। स्त्री का संघर्ष कहे या मानव मात्र के अधिकारों का संघर्ष हर युग में एक सकारात्मक चेतना का निर्देश प्राप्त करता रहा है।

डॉ. भटनागर ने साहित्य में हर स्तर पर भावों की व्याख्या करने का प्रयास किया है। जहाँ जैसा आवश्यक लगा वैसा ही ढंग और विधि का प्रयोग कर आत्मपरक, विश्लेषणात्मक, प्रश्नाकुल, कल्पनागत, चिंतनात्मक पद्धति आदि के साथ मानव मूल्यों के संघर्ष को टटोलने का साहस ही नहीं अपितु एक नवीन और प्राचीन संस्कृति का समन्वय कर भारतीय ऐतिहासिक गौरव को युवा वर्ग और आने वाली पीढ़ी के लिए सरल रुप में प्रस्तुत करने का भी अद्‌भुत प्रयास किया है। साहित्य में इसी कारण इनके उपन्यास साहित्य की विविध दृष्टियाँ परिलक्षित होती हैं। शिल्प विधान में उपन्यासकार ने उपन्यास शिल्प के समस्त तत्वों के साथ फिर वह कथानक हो, चरित्र हो, संवाद, भाषा शैली अथवा नियामक तत्व उद्‌देश्य तभी का सही तालमेल स्थापित किया है।

डॉ. भटनागर ने उपन्यासों का लेखन जनमानस को दिशा प्रदान करने के उद्‌देश्य से किया है। इनका चिंतन सार्वकालिक है। कारण इनका लेखन इतिहास के संघर्ष की अमर गाथा से प्रेरित है। संघर्ष और शोषण के मध्य जो भाव उपस्थित रहे उनका मानवीय मूल्यांकन इनका कौशल है। निःसंदेह इनके द्वारा स्थापित चिंतन समाज को सदैव सार्वकालिक चेतना प्रदान करता रहेगा।

♦♦♦♦

# सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

# संदर्भ ग्रन्थ सूची

## आधार ग्रंथ/सहायक ग्रन्थ


1. युग पुरुष अम्बेडकर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012)
2. अमृतघट– राजेन्द्र मोहन भटनागर, इरावदी प्रकाशन दिल्ली (2000)
3. अर्न्तयात्रा – राजेन्द्र मोहन भटनागर, हिन्द पॉकेट बुक्स
4. दिल्ली चलो –राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स, नई दिल्ली (2009)
5. सूर्य वंश का प्रताप – राजेन्द्र मोोहन भटनागर, अनुराग प्रकाशन (2005)
6. नीले घोड़े का सवार– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2011)
7. सरदार – डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2013)
8. विवेकानंद– राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2012)
9. गौरांग – राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2009)
10. एक अंतहीन युद्ध – राजेन्द्र मोहन भटनागर, अनन्य प्रकाशन (2018)
11. तरुण संन्यासी – राजेन्द्र मोहन भटनागर, विश्वविद्यालय प्रकाशन (2007)
12. जोगिन– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, अजमेरा बुक कम्पनी (2008)
13. 'न गोपी न राधा'– डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर, प्रभात प्रकाशन दिल्ली (2008)
14. कुली बैरिस्टर–राजेन्द्र मोहन भटनागर, राजपाल एण्ड सन्स (2008)
15. अंतिम सत्याग्रही –राजेन्द्र मोहन भटनागर, अरु पब्लिकेशन प्रा.लि. (2008)
16. अली असगर–भारत में साम्प्रदायिकता इतिहास और अनुभव–इतिहास बोध प्रकाशन 2004
17. अग्रवाल डॉ. सुरेश–भारतीय काव्य शास्त्र के सिद्धान्त, अशोक प्रकाशन 1994
18. उपाध्याय डॉ. देवराज–कल्पना, अंक सितम्बर 1962
19. कुमार डॉ. राजेन्द्र–स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में ग्राम जीवन और संस्कृति, परिमल पब्लिकेशन
20. कुमार जैनेन्द्र–साहित्य का श्रेय और प्रेय–पृ. पूर्वोदय प्रकाशन सं. 1976 पृ. 20
21. कोहली, कार्तिकेय – एक व्यक्तित्व नरेन्द्र कोहली, क्रिएटिव बुक कम्पनी 2000
22. कासंबी दामोदर धर्मानंद–प्राचीन भारत की संस्कृति एवं सभ्यता, राजकमल प्रकाशन दिल्ली 2009

23. कौशिक जयनारायण – छात्रोपयोगी हिन्दी शब्द कोश

24. कपूरिया डॉ. देव–हिन्दी कहानी में प्रेम एवं सौन्दर्यत्व का निरुपण

25. गुप्त, तनसुखराम –व्यावहारिक हिन्दी भाषा व्याकरण कोश, ठलाहबाद 1963

26. गुप्त, गणपति चंद्र – साहित्यिक निबंध लोक भारती प्रकाशन 1999

27. गुप्त गणपति चंद–भारतीय साहित्य के श्रृंगार रस

28. गुप्त डॉ. ज्ञानचंद–स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास और ग्राम चेतना अभिनव प्रकाशन 1989

29. गुप्ता, दुर्गा प्रसाद – आधुनिकतावाद, बाकाशदीप प्रकाशन मेहरोली, नई दिल्ली 1995

30. गोयल डॉ. नीलम–स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी लेखिकाओं के उपन्यासों अलगाव

31. गणेशन डॉ.–हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन राजपाल एण्ड संस दिल्ली 1962

32. चातक, गोविन्द – पर्यायवाची शब्द कोश, तक्षशिला प्रकाशन

33. चतुर्वेदी परशुराम–संत और सूफी साहित्य

34. चिन्तामणि डॉ. बी. एस – ऐतिहासिक उपन्यास में कल्पना और सत्य, विद्या भवन वाराणसी, 1959

35. चौहान शिवदान सिंह – हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

36. जैन, पुखराज – भारतीय प्रतिनिधि राजनीतिक विचारक, साहित्य भवन पब्लिकेशन, 2014

37. जैन ऋषभचरण–हिन्दी उपन्यास : प्रेम चन्द्रोत्तर काल संतति नई दिल्ली 1981

38. जोशी सिद्धि – अमृतलाल नागर के उपन्यासों में सामाजिक चेतना क्लासिक पब्लिकेशन, जयपुर

39. तिवारी भोलानाथ – हिन्दी पर्यायवाची कोश प्रभात प्रकाशन दिल्ली 1989

40. त्रिपाठी–विश्वनाथ– मीरा का काव्य, वाणी प्रकाशन 2017

41. देशमुख डॉ. दिलीप–पं. विद्यानिवास मिश्र का निबंध लोक

42. दोमड़िया, डी. एम. – निर्मल वर्मा के उपन्यासों में युग चेतना, पेराडाइज पब्लिकेशन

43. द्विवेद्वी हजारीप्रसाद–हिन्दी साहित्य : उद्भव एवं विकास राजकमल प्रकाशन 1991

44. द्विवेदी, मुकुन्द– हिन्दी उपन्यास युग चेतना और पाठकीय संवेदना, लोक भारती प्रकाशन

45. द्विवेद्वी हजारी प्रसाद–ऐतिहासिक उपन्यासों में कल्पना और सत्य की प्रस्तावना, चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी

46. पाण्डेय, मैनेजर – साहित्य और इतिहास दृष्टि वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, 2013

47. प्रेमचंद–कुछ विचार–सरस्वती प्रेस बनारस 1980

48. प्रियदर्शनी – सुषमा– हिन्दी उपन्यास,राधाकृष्ण प्रकाशन 1998
49. बाहरी डॉ. हरदेव – राजपाल हिन्दी शब्द कोश, राजपाल एण्ड संस 1996
50. बैचेन डॉ.–समकालीन साहित्य और समीक्षा–सन्मार्ग प्रकाशन दिल्ली 1976
51. बौदिवडेकर चंद्रकांत – उपन्यास की सिथति एवं गति पूर्वोदय प्रकाशन नई दिल्ली
52. भारद्वाज–डॉ. एस.पी.– संस्कृत, हिन्दी, इंग्लिश डिक्शनरी, युगल एन्टर प्राइजेज 2010
53. भुवनेश्वर–हिन्दी एकांकी का रंगमंचीय अनुशीलन, अन्नपूर्णा प्रकाशन, कानपुर 1970
54. भारद्वाज– हेतु– हिन्दी उपन्यास उद्‌भव और विकास पंचशील प्रकाशन 2005
55. माली शिवराम– नाटक और रंगमंच चंदूलाल दूबे अभिनंदन ग्रंथ
56. मुखर्जी डॉ. रवीन्द्रनाथ–भारतीय सामाजिक व्यवस्थाएँ, एसबीपीडी पब्लिकेशन, 2019
57. मिश्र मनोरमा– मिथकिय चेतना समकालीन संदर्भ, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली
58. मिश्र विद्यानिवास–इतिहास परम्परा और आधुनिकता, वाणी प्रकाशन 2017
59. मिश्र रामदरश – आज का हिन्दी साहित्य संवेदना और दृष्टि अभिनव प्रकाशन दिल्ली
60. नगेन्द्र डॉ. – वीणा अंक (01 / 1991)
61. प्रभुदयाल–छायावादी काव्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन, नीरज बुक सेन्टर सं. 2007
62. राय बाबू गुलाब–भारतीय संस्कृति की रुपरेखा 1952 साहित्य प्रकाशन मंदिर ग्वालियर
63. राय–गोपाल– हिन्दी उपन्यास का इतिहास राजकमल प्रकाशन
64. वाचस्वति–गैरोला– भारतीय संस्कृति और कला 30 प्रकाशन हिन्दी संस्थान लखनऊ 1985
65. वाष्णेय डॉ. लक्ष्मीसागर–हिन्दी उपन्यास : उपलब्धियाँ राधाकृष्णन प्रकाशन नई दिल्ली 1970
66. विद्यालंकार डॉ. सत्यकेतु – भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास, सरस्वती सदन, मंसूरी 1976
67. वर्मा डॉ. वृन्दावन लाल–आलोचना उपन्यास विशेषांक 1954
68. वर्मा–डॉ. श्याम– आधुनिक हिन्दी गद्य शैली का विकास,ग्रंथम रामबाग कानपुर, 1971
69. वर्मा डॉ. निर्मल–आदि, अंत और आरम्भ, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 2001
70. वर्मा– रामचंद्र– मानक हिन्दी कोश हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग
71. वर्मा डॉ. लाल बहादुर – इतिहास के बारे में, इतिहास बोध प्रकाशन इलाहबाद 2010
72. वायु पुराण (16 / 21)

73. शर्मा डॉ. रामविलास – आस्था और सौर्न्य, राजकमल प्रकाशन, इलाहबाद सं 1990
74. शर्मा डॉ. करुणा–लक्ष्मीनारायण लाल का नाट्य साहित्य : सामाजिक दृष्टि, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली 2002
75. शर्मा डॉ. सुरेश–निराला के साहित्य में सामाजिक चेतना
76. शर्मा मक्खनलाल – हिन्दी उपन्यास : सिद्धान्त और समीक्षा प्रभात प्रकाशन दिल्ली
77. शर्मा डॉ. मुंशी राम–भक्ति का विकास, राधाकृष्णन प्रकाशन, दिल्ली 1974
78. शर्मा शेखर – समकालीन संवेदना और हिन्दी नाटक, भावना प्रकाशन दिल्ली
79. शर्मा डॉ. ब्रजभूषण–मानव तथा मानवतावाद श्री कला प्रकाशन दिल्ली 1996
80. शास्त्री,सं. केशवराम – वृहत गुजराती कोश खण्ड
81. शुक्ल–आ.रामचंद्र – हिन्दी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा काशी 1997
82. शुक्ल डॉ. बैजनाथ भगवती चरण वर्मा के उपन्यासों में युग चेतना प्रेम प्रकाशन नई दिल्ली
83. शाह डॉ. साधना–नई कहानी में आधुनिक बोध पुस्तक संस्थान कानपुर सं.1978
84. सलिल, अनिल कुमार – गरिमा, हिन्दी, पर्यायवाची शब्द कोश
85. सुन्दरला – प्रो.श्याम– नारायण हिन्दी शब्द सागर
86. सुधीन्द्र प्रो. हिन्दी कविता में युगांतर–आत्माराम एण्ड संस
87. सिन्हा डॉ. सुरेश– हिन्दी कहानी का उद्‌भव और विकास अशोक प्रकाशन दिल्ली
88. सिन्हा डॉ. सुरेश–हिन्दी उपन्यास, लोक भारती प्रकाशन इलाहबाद 1977
89. सिंह–डॉ. सरोज– अमृतलाल नागर की कथा दृष्टि से समाजशास्त्रीय आयाम राका प्रकाशन, इलाहबाद 2007
90. सिंह–डॉ. त्रिभुवन – हिन्दी उपन्यास और यर्थाथवाद, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय वाराणसी 1960
91. सिंह रामधारी दिनकर – संस्कृति के चार अध्याय– राजपाल एण्ड संस, दिल्ली 1956
92. सिंह डॉ. शम्भुनाथ–व्यक्ति और स्रष्टा, लोकभारती प्रकाशन
93. सिंहल – डॉ. शशी भूषण – हिन्दी उपन्यास की प्रवृत्तियाँ, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 1970

♦ ♦ ♦ ♦

# प्रकाशित शोध पत्र

International Indexed, Peer Reviewed & Refereed Research Journal Related to Higher Education For all Subject

AUGUST, 2020

IMPACT FACTOR 5.901 (SJIF)

# SHODH, SAMIKSHA AUR MULYANKAN

ISSN 0974-2832 (Print), E-ISSN- 2320-5474,RNI RAJBIL 2009/29954

**Editor in Chief**

***Dr. Krishan Bir Singh***

**www.ugcjournal.com**

**Editor's Office**
**A- 215, Moti Nagar,**
**Street No.7**
**Queens Road**
**Jaipur- 302021, Rajasthan,**
**India**

**Contact - 094 139 70 222**
**094 600 700 95**

**E-mail:**
**www.ugcjournal@gmail.com**
**dr.kbsingh@yahoo.Com**
**professor.kbsingh@gmail.Com**

**e[q; lEiknd & MkW d".kchj flag dk ekun in ,oadk;Z iw.kZ% vOSfud gSA**
bl 'kks/k i=dk dsi zdk'ku] lEiknu ,oaeqnz.k esai w.kZ% lo/kkuh cjrh xbZ gSA fdlh Hkh i zdkj dh =qfV egt ekuoh; Hkwy ekuh tk,A 'kks/k i= dh leLr ft Eesnkjh 'kks/k i= ys[kd dh gksxhA =qVh gsrq lEikn] i zdk'kd ,oaeqnzd ft Eesnkj ugha gksxkA
**leLr fookn dk U;k; {ks= t;iqj 'kgj gh gksxkA**

1. Editing of the research journal is processed without any remittance. **The selection and publication is done after recommendation of Peer Reviewed Team, Refereed and subject expert Team.**
2. Thoughts, language vision and example in published research paper are entirely of author of research paper. It is not necessary that both editor and editorial board are satisfied by the research paper. **The responsibility of the matter of research paper is entirely of author.**
3. Along with research paper it is compulsory to sent Membership form and copyright form. Both form can be downloaded from website i.e. **www.ugcjournal.com**
4. In any Condition if any National/International university denies to accept the research paper published in the journal then it is not the responsibility of Editor, Publisher and Manangement.
5. Before re-use of published research paper in any manner, it is compulsory to take written acceptance from Chief Editor unless it will be assumed as disobedience of copyright rules.
6. All the legal undertaking related to this research journal are subjected to be hearable at jaipur jurisdiction only.

# EDITORIAL BOARD


## Patron

**Prof. Kala Nath Shastri**

***(Rashtrapati Puraskar" For His Contribution To Sanskrit)***

**Prof. Dr. Alireza Heidari**

***Full Professor And Academic Tenure, USA***

## Chief Editor

**Dr. Krishan Bir Singh**

## International Advisory Board

Aaeid M. S. Ayoub

***Geotechnical Environmental Engineering***

Uqbah bin Muhammad Iqbal

***Postgraduate Researcher***

Badreldin Mohamed Ahmed Abdulrahman

***Associate Professor***

Dr. Alexander N. LUKIN

***Principal Research Scientist & Executive Director***

Dr. U. C. Shukla

***Chief Librarian and Assistant Professor***

Dr. Abd El-Aleem Saad Soliman Desoky

***Professor Assistant***

Prof. Ubaldo Comite

***Lecturer***

Moustafa Mohamed Sabry Bakry

Dr Sajid Mahmood

Shameemul Haque

## Associate Chief Editor

Ravindrajeet Kaur Arora

S. Bal Murgan

Dr. Sandeep Nadkarni

Dr. A Karnan

Dr. S.R. Boselin Prabhu

Deepika Vodnala

Dr. Kshitij Shinghal

Christo Ananth

Gopinath Palai

Dr. Neeta Gupta

Dr. Vinita Shukla

Harold Jan R. Terano

Dr Sajid Mahmood

Dr Pavan Mishra

## Editor

Dr.H.B.Rathod

Dr.Naveen Gautam

Dr. Mohini Mehrotra

Dr. Arvind Vikram Singh

Dr. Suresh Singh Rathore

Dr.kishori Bhagat

Dr.murari Lal Dayma

Kamalnayan. B. Parmar

Dr.deepak Sharma

Dr.sanjay B Gore

Dr. A.karnan

Dr.amita Verma

Dr . Ity Patni

Dr. Somya Choubey

Dr.surinder Singh

Dr. Manoj S. Shekhawat,

Dr. Anshul Sharma

Dr. Ramesh Kumar Tandan

S N Joshi

Dr. Sant Ram Vaish

Bindu Chauhan

Dr. Vinod Sen

Dr. Sushila Kumari

Dr Indrani Singh Rai

Dr Abhishek Tiwari

Prof.S.K.Meena

Prof.Praveen Goswami

G Raghavendra Prasad

Dr. Dnyaneshwar Jadhav
Akshey Bhargava
Dr. A. Dinesh Kumar
Dr. Pintu Kumar Maji
Dr Hanan Elzeblawy Hassan
Sandeep Kumar Kar
Dr.R.devi Priya
Dr.P.Thirunavukarasu
Dr. Srijit Biswas
Parul Agarwal
Dr. Preeti Patel
Archana More
Dr. Harish N
Dr. Seema Singh
Dr. Ram Singh Bhati
Dr. Pankaj Gupta
Dr Arvind Sharma
Dr. Ramesh Chandra Pathak

Dr. Ankush Gautam
Dr Markandey Dixit
Dr. Manoj Kumar
Ratko Pavlovi, Phd
Dr.S.Mohan
Dr Ramachandra C G
Dr.Sivakumar Somasundaram
Dr. Sanjeev Kumar
Dr. Padma S Rao
Dr Munish Singh Rana
Dr. Piyush Mani Maurya

## Associate Editor

Dr. Yudhvir Redhu
Dr.Kiran B.R
Dr Richard Remedios
Dr. R Arul
Anand Nayyar
Dr . Ekhlaque Ahmad
Dr. Snehangsu Sinha
Dr Niraj Kumar Singh
Sandeep Kataria
Dr Abhishek Shukla
Somesh Kumar Dewangan
Amarendra Kumar Srivastav
Dr K Jayalakshmi
Dilip Kumar Jha

## Assistant Editor

Jasvir Singh
Dr.pintu Kumar Maji
Dr. Soumya Mukherjee
Prof Ajay Gadicha
Ashutosh Tiwari
Gyanendra Pratap Singh
Jitendra Singh Goyal
Ashish Jaiswal
Hiten Barman
Dr. Priti Bala Sharma

## Subject Expert

Dr. Jitendra Arolia
Dr. Suresh Singh Rathore
Dr.kishori Bhagat
Dr Mrs Vini Sharma
Ranjan Sarkar
Chiranji Lal Parihar
Dr. Lalit Kumar Sharma
Dr Amit Kumar
Santosh Kumar Jha
Dr . Ekhlaque Ahmad
Naveen Kumar Kakumanu
Dr. Chitra Tanwar
Jyotir Moy Chatterjee
Somesh Kumar Dewangan
Raffi Mohammed
Dr. Sunita Arya
Dr. Ram Singh Bhati
Dr. Janak Singh Meena
Dr. Neha Kalyani

Dr. Rajeev Nayan Singh
Dr. Pankaj Rathore
Dr. Mahendra Parihar
Pradip Kumar Mukhopadhyay
Dr Vijay Gaikwad

## Research Paper Reviewer

Dr. B H Kirdak
Amit Tiwari
Dr Dheeraj Negi
Dr. Shailesh Kumar Singh
Dr. Meeta Shukla

Dr. Ranjana Rawat
Sonia Rathi
Dr.Anand Kumar
Dr.Pardeep Sharma
Anil Kumar
Dr. Deepa Dattatray Kuchekar
Dr Ade Santosh Ramchandra

## Guest Editor

Dr. Lalit Kumar Sharma
Dr. Falguni S. Vansia

## Chief Advisory Board

Ashok Kumar Nagarajan

## Advisory Board

Dr. Naveen Kumar
Manoj Singh Shekhawat
Pranit Maruti Patil
Vishnu Narayan Mishra

International Double Blind Peer Reviewed,Refereed,Indexed Research Journal,ISSN(Print)-0974-2832, E-ISSN-2320-5474, RNI:RAJBIL2009/29954, Impact Factor:5.901(SJIF),Aug-2020

'kks/k i=- fgUnh

# MkW-vEcsMdj ds lkekftd ,oa 'kS{kf.kd fpUru esa L=h&foe'kZ

*l Ei vkuUn xkSMe

*'kks/kkFkhZ jkt d h; dykegkfo| ky; ] dksVk fo'ofo| ky; dksVk ¼jkt -

MkW-vEcsMdj lkekftd U;k; ds eSlhgk] fgUnh lkfgR; esa nfyr pkSjs d loky us lkfgR; esa tsks xrkoj fpUru j'kZ dk }kf 'kk;ek gksxk lkfgR; dk d Lof.kZe vkHkkl seaVh fd; kA lkfgR; esa nfyr Hkkouk dks fpUru foe'k;k dks usl kgR; d sek/;e l s viuh Hkwfedk dks le>k ds pr'ku esa cnyko dk jkLrk xgu dj dks o`gn l eut; LFkkfir djr sgq ekuo dks /;ku dks fpUru dks gkfn; dk /;ku usekuo dks dr`Ro i Hkkij pyus dh vkn'kZ;Ok i zkk dhgSA dk;Z esa nfyr dk foe'kZu bruk egRoiw.kZ gksrk gS fd ml dh l kgr ekuo eu dh iHko dks gj us dk dk;Z gt rkl sfd; kA

i zkphu dky Hkkjr dh mi ukfof/k;ksa dks ;gh fd; kA bu l c ds dk;Z.kor dk y dh gj i fjfLFkfr v/;kRe pruk dk i zfrfuf/kRo djrh gS ckn esa t kfr&fgr l Hkh l k/ kuk ds nksfoi jhr i Hkko ds l ikyu y{; Hkh ,d gh FkkA ; g dsoy nfyr oaKku dk Hkh FkkA l xq.k&fuxq.k dsoy ekufl d i fr: Ik FkkA bZoj dh o`)ki drk dk dksbZ Hkh eksZ LFkki ukdj ukpkgrh Fkh fojks/kku dj l dk dsoy fuf'pr i }fr ghvyx FkkA

fuf'pr dky dh eq[; i zo`fRr Hkfä gS t l ds l kFk gS usvi us Hkkoksa dks i zLrqr fd; k gSA l xq.k Hkfä esa ekxZ esa jke ,oa d`".k dks ekuo vorkj ds :Ik esa i zLrqr fd; kA bu nksuksa ds Lo: i ksa usekuo dks l ekt dk i j.kk ghugha nh vfirq Hkou i fjfLFkfr; ksa dks le>kus dk mik; Hkh i zLrqr fd; kA ukfrxr vkn'kksZa ds l kFk ekuoh; eY; ksa dh vfHkO;fDr bu ds fopkjksa esa ekuo t xr dks i kIr gqbZ MkW-vEcsMdj us vi us ,fr gkfld d mi U;kl ksa esa Hkfä r Ro dks foopu ekjkegk i zkphu dky l jwnkl vkfn ds ekgku pfj=ks l si kIr fd, gSa bUgksaus mi U;kl ksa esa Hkfä ds l kFk l ekt n'kZu Hkh i zLrqr fd; k FkkA bu dk Hkfä r Ro fo'ks"k/ kdkj FkkA bu dh Hkfä Hkkouk us bZ oj h; Li : Ik dh O;k[;k ekuoh; eY; ksa dh ,dro ds l kFk dh gSA

ehjk ds ek/;e l s MkW-vEcsMdj us vi us *'k'kkfu* mi U;kl esa *dk t kfoopu fd; k gS og vkt ds Hkkjrh; okn ; q esa Hkh ekuo eu ds vk/kkj dks u"V djus okys eku Zo gSA ehjk us Jh d`".k dh l k/kuk esa bu fo'okl rk dks Hkh l e; rk ds : Ik esa LFkkfir dj fn; k gSA ml dh l EiwZ.k Jh d`".k r Ro dk fo'ys"k.k dj n~fo pu gS^ ehjk ds fy, l ekt x d".k e; gS og d".k xrkoky dh vuqHkwfr l vksi ksa gSA ml dk gj i y fxj/kj xksiky gS**

ehjk ds ek/;e l s MkW-vEcsMdj us Jh d".k dks l R; , oa f'ko ekuk gSA og l eU; Hkkouk l s fjiw.kZ gSA og viuh l R; Hkkouk ds l kFk gj i y Jh d".k ds fpUru esa yhu jgrh gSA t xr ml h ij e l Ùkk ds ukuk fo/kkuksa ds dk ghnwl jk uke gSA—f'ko ogh gS t ks d".k gS; kjke gS vFkok Hkks gSA uke ugha vkRekugha i jekRekl R; gSA dq N Hkh vl R; ugha l Hkh l R; gSA l R; ks'kho nr %ghvuqHkwfr djrk gSA***

ehjk us Hkfä esa dks bZ Hkh Lor dkj ugha fd; kgSA og Hkks d t xr ds L=h i q"k Hkh dks Hkh vLor dkj dj l Hkh esa d".k Lo: Ik dks Lor dkj djrh gSA

Hkkjr dk O;fDr Ro Hkfä ds jax esa jaxk gqvk gSA bl dh Hkfä esa pruk gh l okn gS fonkg gS l eU; gSA ehjk d".k e; t xr es Hkh Hkkoksa dks feVkdj d".k r Ro dh LFkki ukdj ukpkgrh gSA ehjk gj ml l k/kuk i Fk dk [kMu djrh t gk¡ bZoj h; l k/kuk esa L=h i q"k dk Hksn O;kIr gSA ehjk ds ed y hu E nk; ksa esa L=; ksa dks l k/kuk i Fk esa ck/ kk ekuk dj Hkh FkkA bl Hkh dks MkW-vEcsMdj us cMh gt rk l s nwj dj l R; dh O;k[; k dh gSA ^; gk¡ fy [kk gS fd vkJe esa L=h i o'sk fu'ks/k gSA o'kZ Hkh L=h fy;x gSA bl fy, rq ml d s cko j ses a c ry k us fgp d jgs gksA o'kZ dks u rq jks d l dr s gks vkSj u rq Egkjs egku vkpk; Z—Hkh t u] l R; i gpkuks l R; fy[kk s l R; cksyks M l sMjks ; k d rjko ks ugha A cz e pkjh gks oz dk fuHkk vkSA cz ep; Z dks vkpj.k esa O;Dr gksus nksA**¹³½

ehjk dh l okn "kfDr esa fui qkrk vkSj v/;kRe fpUru gS t l ds dkj.k og t xr ds l R; dk vuqHko dj us esa Qy j gh ml dk ehjk dh l okn 'kfä esa Hkfä fui qkrk vkSj vè; kRe fpUru gS t l ds dkj.k og t xr ds l R; dk vuqHko dj us esa Qy j gh ml dk Hkkokfd t xr l s l ok dk dsoy –".k; Hkk ml s L=h d s vf/kdkjksa dh Qpr kFkk og Hkh ä l ksdukeks dsoy Hkh ä dh Hkfä dk dk fuokZ, djuk pkgrh FkhA bu kur sgks i M+ Qyw vkSj Qy i Qyyx gS i jnq i Ùkh dy hL=h gS xA t MHkh L=h gS x gSA 'kjhj ds

vxaksdksghnf{k.k ckgqtuk'kvkSj ckgqy L=hçcYyx gS] j dj ;kuh gkFkh i Qfyx gS vkSj dyk L=hçcYyx gSA Hkt u r eq dgkaskd gka L=hl scpk s Aog L=hrks oZ gSA M-HkVukxj uselhjk dseke e l s L=hdhpurukdks'kfä çnku dhgS AHkfä vkSj 'kfä dkl efUor : i ekuo dksvkRel Qkkfdj djrk gSA ml dhvkRe 'kfä t kxzr gksusi j ghÃ'ojh; Lo: i dkn'kZu l gt gksrk gSA bl dsfy, vkRe l keuk dh vko';drk gSA Hkfä vkRekdh 'kfä gSA og ekuo t hou dkst xk, j[kusdk ç;kl gSA og vCgl kdkekeZ gSA çe gS r vkHhvi us,dka esvkRe çdk'kdhvuHkfw djusdh p"Vk djrkA r eq sHkhogÈl sfnO; T;kfr feyrhAoghv{k; rRkvun 'kfä dkL=ksr gSA** eljk dk ekxZ Hkfä dk Hkkog Hkfä esJ)- ".kdsLo: i ds lkFk, dkdkj gksukpkgrh Fk] vkSj l Hkor %gksHkhxÃA eljk dh Hkfä usL=; ksdks, s k ekxZ fn[kyk; kt ks ek dh: f<;ksdk[kMu djrhgS eljk Hkä HkhgSvkSj vkRe 'kfä l sçfsjr L=hHkhgSA eljk usHkä gksdj Hkfä dsfl ) kalaksdks jy fd; kogÈL=hgksdj l kekft d : f<;+ksdk[kMu Hkhfd; kgSAog ; eq çorZd dh çfrfuf/kr ewfÃ gSA eljk dk – ".ke; t xr nsh , oa vykSfd d gSA ml dhl kekukusl ekt dks; g l kpusi j foo'kfd; kgS fd L=hi #q"kdk Hkh doy euksfodkj gS t ksfl QZ vkpj.kdh 'kq)rkl snjwfd; kt kl drkgSA eljkusvi uhHkokRed l Ùkkl s, d , s k Ofä Ro çdkf'kr fd; kft l dkvfLrRo l nkdsfy, l koZHkkfyd gksx; kA eljkHkko d t xr dsfdl hHkhHkh dksLohdkj ugÈdjrh gSA bvkdkj : i hoL= R; kxusdsckn gj i #q"kvkSjL=hjkekk –".k; k– ".kjkekkgkst krkgS cu dkÃL=hgksrhgSvkSj ui #q"kA ¼6½ eljkust ksHkfä ekxZ pqukogl kekft d ceku l seq ugÈFkkijarqeljkdhHkfä esl 'kfä dkçokg Fkk t ks#d u l dkvkSjfoaksg dsl kFkcaku dksrksM+kx; kA ÞHkfä 'kfä fcukvèkwjhgSvFkZghu gSvkSjfu"çHkgSA ¼7½ M-HkVukxj usl xqkHkfä 'kk[kkesewfÃi twkij t ksÇpru ,oa euu fd; kog , d , s kl ekekku çLrqr dj x; kt ks; qka l spyysvkjgsHksn dksfuemZw l kfcr dj x; kA *t ksxu* mi U; kl ese eljkvkSji kxy ckck dkl okn bl dh J'B Q; k[; kgSA
r ewewfÃ dksydj mf} Xu gS Þ hckckÞ
ÞewfÃ i RFkj dhgS; ghuk*
Þ hckckÞ
Þ ksi RFkj ksdksi twrs gSAosi RFkj gksrsgSAÞckckuseljkdks i <+kgq dgkAoklro esaeljkesdÃ fnuks s, g } U) py jgkFkkfd vc og ewfÃ dhi twkdjs; kugÈAml usdgk Þ dQ dQ , s kghgSA** ÞcVheuq ewfÃD; ksx<+kgSÞ ÞçHkqdsfy, ]ßml dksn[kusdsfy, ]Þ Þ j D; ksÞ

Þckckust ks nd j i NkA ÞQol k; d sfy, Þ ÞugÈcVh, s kugÈgSewfÃ x<ukeuq; dhvkRekdkekeZ gSml dsfo'ok dkeeZ gSAml dst husdkvoyEc gSA ml dhvkjkekukgSAi twkghml dkl oZo gSAog vl R; ugÈAog l R; dkghçR; gSAefnj esLFkkfir ewfÃt c Ofä dseu esLFkkfir gkst krhgS c ogl t ho gkstkrh gSvkSjl kjkl akj ml sefnj yxusyxrkgSA ¼8½ M-HkVukxj usHkfä rRo dksvkRekvuHkfw xgjkb; kal s e>kFkkbl ds mi U; kl kesHkfä dsfl ) kalaksdhxgu+kdksl jy dj i kBd dsefLr"d esvk; gq çÚuksdkgy çLrqr djrsgSAbudk fprul xq&fuxqk] } S&v} S ds eLr Hksakdksl ekur dj l eiZk; R; kx dhHkkoukl svkÜoLr djrsksgSA Þrjsk ‘; ke gS, ; g ; eq esFkkvkSj vkt Hkh gSvkSj Hkfo"; esHkh gksxkA r wml dst kuukpkgrh gSD;kfd rqsvkt r d ml dsfoNksg dkLej .kgSArjsk‘; ke u fuxqkesgS u l xqk esgS t ksfuxqk esaml srykk'krsgSa[kkst rsgSaml dsgkFk ek= fuxqkvkSj l xqkghvkr kgSAl xqkoghugÈvkrkA rwml dsçfr Hkh dhl eLr fHkfÙk; kaxfxjkdj l eiZr gks l drhgSArjskoghfuylkkl eiZkrqsml vun dhvy[k l kSi ; kfkl sHkj nsxkAÞ ¼9½ M-jkt Uæ ekgu HkVukxj ds mi U; kl kseljkdsegku Ofä Ro dksxfjekvkSjl kekft d e; kZnkdsl kFkçLrqr fd; kgSAeljkdhvykSfd d Hkfä dh l kekukdsl kFkl ekt dsulfr fu; eksdhHkh Okk; k mi U; kl dkj usdhgSAekuoh; l ädksdksvfHkOä fd; k gSAL=hdsl kekft d i {kdkQpru fd; kgSA eljkdh vykSfd d Hkfä dhl kekukdsl kFkl ekt dsulfr fu; eksa dhHkhOk[; kmi U; kl dkj usdhgSAekuoh; l ä'kksdks vfHkOä fd; kgSAL=hdsl kekft d i {kdkQpru fd; k gSA

eljkdkt Ue L=hdsvfèkdkjksdhvlokt cux; kgSAeljk dkOogkj l ekt dhmu l eLr ekU; rkvksdk[kMu djrkgS t ksL=hvkSji #q"kdhl ekurkdksLohdkj ugÈdjrs gSAeljkfuHkhd rkdsl kFkvi useksZ j pyrhgSAml us urksfdl hçdkj dhl kekft d e; kZkdkmYy?ku fd; k u ghLoPNapkfj.khgSAeljkrksl ekt esOkIr djhfr; ksa dksvLohdkj dj Hkfä ekxZ j fujarj unhdsçokgl hcgrh jgrhgSAl ekt dh, s hdjhfr; ka t ksUgksusL=hdst hou dkscakd cukj[kkFkkAml dsvfLrRo dksudkjusdkç; kl fd; kt kjgkFkk, s s l e; est c l ekt dsulfr fu; eksa dhOk[; kvuks d Oogkj l sdyfqkr gksusyxhFkhAeljk usvi uhHkfä ds}kjk–".ke; t xr dhLFkki ukdhft l esa L=hi #q"kdsçhp l eLr Hksn l ekIr gkspysFksA EwkZ xr –".ke; Fkkft l esfl QZ çes] vCgl k] l fg".kqk] ekuorkj HkkÃpkjkvkSj Hkfä dhvt L= èkkjkfucksZkxfr l scgjgh

FkhA ehjkusl rhçFkk] cky fookg] vuesy fookg] fo/kok t hou] i qu/ZfookgZ] oS;kofÙk vkfn l sukjh dksefqä çnku djusdk ç;kl fd;kA og –".kHkfä dhvykSfdd rk es dcLo; a –".kcu xÃ; g i rkghugÈpykA og ukjhdh osnuk] ihM+k vkjSml dsvUr}U} dhNfo i VkgV dks l ekt ds l e{kj[kl dhA og mu l eLr cU/kukadksrkM+ht ks ukjhdksdeZdsukei ij nklrjknt kUnrsgSA og mu l eLr cU/kukadksLFkkfir dj , d vkn'kZ=hpfj=dksçLrqr djrh gSml dhHkkoukl ekt dksHkfä dsekè; e l svkil es, d l w= esaifjksusdhgSA

ehjkl EwkZt xr dks–".ke; ekurhFkhvkjS ml esbl dkfoÙkk vfMx FkkA ehjkdsçfr ylksadhHkkouk Hkh–".ke; vuqHkfw FkhA M,- jkt Lke ekgu dsmiU;kl ksea fpf=r ehjkdht hou xkFkk ek= t hou oÙkugÈgSA vfir q ehjkdsekè; e l sekeZ ekt ds l e{k–".kr Ro dhLFkki uk gS ks EwkZt xr dksekuork] çse] vçgl kvkfn ekuoh; xq.kksadkl ns'knsrhgSA ehjkusdeZdseeZdks e>kog deZdhl gt rkvkjSml dsvkn'kZesafoÙkk j[krhFkhA Ikuhdk deZcgukgS ckny dk deZcjl ukgS ehjrhdk deZ cdksLohdkj djçl Uuj[kukg& fdl hdksvLohdkj uk] nq%[kj ukugÈgSA deZdkvFkZgS husdkfoÙkk AP[10]

ehjkusdeZdsukei ij Q;Sk, t kjgsHkksadksnjw djusdsç;kl fd, Aog deZesl fg".kqkdhvko';drk ij cy nsrhgSA og deZdhvkM+esavdeZdkfojksdkdj ekuo deZdhLFkki ukij t ksj nsrsgq dgrhgS& IdeZu ykyp gSu vkrd gS deZesauj cfy dsfy, dkÃLFkku ugÈgSA vkjSu ?k.kk}}"k]HksnHkko] NvqkNr] velh] xjhc] n'sk] t kfr vkfn dsfy, ml esaj ÙkhHkj Hkhtxg ugÈgSA l jkt dk deZrt s rki dkçdk'kgS] paæ dk 'khry veÌ] ekjrh dkl gt l fg".kqkvkjSvkdk'kdkbaæ/kuq"kh Nk;k bl rjg ge l cdk deZgS& ekuo deZAP[11]

ehjk dk egku Qfä Ro ghml dsvfLrRo dks l kodkfyd cukrk gSA ehjkusft ruhrUe;rk dsl kFk –".kdhHkfä dkst upr ukvkdkj cuk;k og viusvki esavnHkqr gSA og Nkw&vNkwd sHksnkadks ekt dkvfHk'kki ekurhgSA og ekuo ekuo esbl çdkj dsHksn dksLohdkj ughdjrhA P Nkwv NwD;kgks kgSHkkÃ\ eu"; l c eu"; ghcjkcj gSA ogh jä oghgkM&ekla] oghgkFk i ko] fQj Hksn D;kavkjS dS k? P[12]

ehjkl ekt dks tkxr djrhgS og vdeZfoÙkk dk ijt kjs [kMu djrhgSA og <ksa ik[k.M dksekufl d fodkj ekurhgS ks ekt dhuhfr drkdks[kM djrk gSA P ml sbl ckr dki ô kfo'okl Fkkfd t knwVksuk] xMk] rkcht ]rq ] ea= >kM+Qwd vkfn l c Bx fo|k,agSA bl l s l ekt det kjs gkrk gSvkjS bl dk euksy VwVrk gSA P[13]

ehjkusl ekt vkjS deZdsukei ij fd, t kjgs ?k.kr vkjSvekuoh; dk;ksadkfojksdkr dZwkZ<xl sfd;k og l ekt esdeZdsukei ij f'k'kqfy] ujcfy o i 'kqfy dkfojksdkdjrhgSA og bl sik vkjSvdeZdhJskhesa ekurh gSvkjSÃ oj esa fuLokFkZ Hkko l sfd, x, l ei Zkdksghl Pph Hkfä ekurhgSA P ejsk bl fofèk&fo/kku esaj ÙkhHkj Hkh fo'okl ugÈgS ksnohi twk es i 'kqfy gks; g ckr & ejsseu dks LohdkjugÈgSA

**fu"d"kZ**

mi ; ZDr foopu dsvk/kkj ij dgkt kl drkgS d jkt se ekgu HkVukxj usvi us, fr gkfl d mi U;kl ksaesa ehjk ds ekè; e l s–".kr Ro dkfoopu djrsgq rRdkyhu l ekt dhcjqkbo;ksaij Hkhçdk'kMkykgSA ehjk , d l n dhHkkfr dk esavi usl ekt dks, d uohu fn'kk nrsgq unhd çokg l hfuj r j xfr 'khy jghgSA bud hHkfä ]l ei Zk vkjS R;kx fuLokFkZgS ks;xq&;xqksrd ekuo dksçsj.kk nrsjgxsA

**l anHkZ l wph**


¼1½ t kxu M,- jkt Lke ekgu HkVukxj i ‘-1
¼2½ t kxu M,- jkt Lke ekgu HkVukxj i ‘-15
¼3½ t kxu M,- jkt Lke ekgu HkVukxj i ‘-69
¼4½ t kxu M,- jkt Lke ekgu HkVukxj i ‘-70
¼5½ t kxu M,- jkt Lke ekgu HkVukxj i ‘- 28
¼6½ t kxu M,- jkt Lke ekgu HkVukxj i ‘- 14
¼7½ t kxu M,- jkt Lke ekgu HkVukxj i ‘- 27
¼8½ t kxu M,- jkt Lke ekgu HkVukxj i ‘- 65
¼9½ t kxu M,- jkt Lke ekgu HkVukxj i ‘- 66
¼10½u xkshu jkèkk M,- jkt Lke ekgu HkVukxj i ‘-48 -
¼11½u xkshu jkèkk M,- jkt Lke ekgu HkVukxj i ‘-49
¼12½u xkshu jkèkk M,- jkt Lke ekgu HkVukxj i ‘-111
¼13½u xkshu jkèkk M,- jkt Lke ekgu HkVukxj i ‘-114
¼14½u xkshu jkèkk M,- jkt Lke ekgu HkVukxj i ‘-116

International Double Blind Peer Reviewed, Refereed & Indexed Research Journal Related to Higher Education For all Subject

Issue : Aug.- 2020

IMPACT FACTOR 6.315 (SJIF)

# RESEARCH ANALYSIS AND EVALUATION

ISSN 0975-3486 (Print), E-ISSN- 2320-5482 RNI RAJBIL 2009/30097

www.ugcjournal.com

## Dr. Krishan Bir Singh

Editor in Chief

**Editor's Office**
**A- 215, Moti Nagar,**
**Street No.7**
**Queens Road**
**Jaipur- 302021, Rajasthan,**
**India**

**Contact - 094 139 70 222**
**094 600 700 95**

**E-mail:**
**www.ugcjournal@gmail.com**
**dr.kbsingh@yahoo.Com**
**professor.kbsingh@gmail.Com**

**e[;; lEiknd & MkW d".kcht flag dk ekun in ,oa dk;Z iw.kZ% vOSfud gSA**
bl 'kks/k i=dk ds izdk'ku] lEiknu ,oa eqnz.k esa iw.kZ% LoSfPNd cjrh xbZ gSA fdlh Hkh izdkj dh =qfV gsrq ekuoh; Hkwy ekuh tk,sA
'kks/k i= dh leLr ftEesnkjh 'kks/k i= ys[kd dh gksxhA =qfV gsrq lEikd] izdk'kd ,oa eqnzd ftEesnkj ugha gksxkA
**lEiw.kZ fookn dk U;k; {ks= t;iqj 'kgj gh gksxkA**

1. Editing of the research journal is processed without any remittance. **The selection and publication is done after recommendation of Peer Reviewed Team, Refereed and subject expert Team.**
2. Thoughts, language vision and example in published research paper are entirely of author of research paper. It is not necessary that both editor and editorial board are satisfied by the research paper. **The responsibility of the matter of research paper is entirely of author.**
3. Along with research paper it is compulsory to sent Membership form and copyright form. Both form can be downloaded from website i.e. **www.ugcjournal.com**
4. In any Condition if any National/International university denies to accept the research paper published in the journal then it is not the responsibility of Editor, Publisher and Manangement.
5. Before re-use of published research paper in any manner, it is compulsory to take written acceptance from Chief Editor unless it will be assumed as disobedience of copyright rules.
6. All the legal undertaking related to this research journal are subjected to be hearable at jaipur jurisdiction only.

# EDITORIAL BOARD


## Patron

**Prof. Kala Nath Shastri**

***(Rashtrapati Puraskar" For His Contribution To Sanskrit)***

**Prof. Dr. Alireza Heidari**

***Full Professor And Academic Tenure, (USA)***

## Chief Editor

**Dr. Krishan Bir Singh *(Jaipur)***

## International Advisory Board

Aaeid M. S. Ayoub

***Geotechnical Environmental Engineering***

Uqbah bin Muhammad Iqbal

***Postgraduate Researcher***

Badreldin Mohamed Ahmed Abdulrahman

***Associate Professor***

Dr. Alexander N. LUKIN

***Principal Research Scientist & Executive Director***

Dr. U. C. Shukla

***Chief Librarian and Assistant Professor***

Dr. Abd El-Aleem Saad Soliman Desoky

***Professor Assistant***

Prof. Ubaldo Comite

***Lecturer***

## Associate Chief Editor

Dr.Surinder Singh
S.Balamurugan
Dr. Seema Habib
Dr.S.R.Boselin Prabhu
Deepika Vodnala
Christo Ananth
Dr. Snehangsu Sinha

## Editor

Dr. Suresh Singh Rathor
Dr. Arvind Vikram Singh
Ranjan Sarkar
Dr.Naveen Gautam
Dr.I U Khan
Dr. Deepak Sharma
Dr. S.N.Joshi
Dr. Kamalnayan B. Parmar
Dr. Sandeep Nadkarni
Dr.Bindu Chauhan
Dr.Vinod Sen
Dilip Jiwan Ramteke
Dr. Sushila Kumari
Dr Indrani Singh Rai
Prof. Praveen Goswami
Dr. Shubhangi Dinesh Rathi
G Raghavendra Prasad
Dr.Dnyaneshwar Jadhav
Dr. A. Dinesh Kumar
Anand Nayyar
Dr.R.Devi Priya
Dr. Srijit Biswas
Dr.Rajender singh
Dr Dheeraj Negi
Dr. Sandeep Kataria
Swapnil Murlidhar Akashe
Dr. Sunita Arya
Dr. Meeta Shukla

## Associate Editor

Sangeeta Mahashabde
Rama Padmaja vedula
Guptajit Pathak

Dr R Arul

Dr. Kshitij Shinghal

Dr . Ekhlaque Ahmad

Dr Niraj Kumar Singh

Raffi Mohammed

## Assistant Editor

Dr.Pintu Kumar Maji

Dr. Soumya Mukherjee

## Subject Expert

Ravindrajeet Kaur Arora

Dr. R. K. Sharma

Parser Seelwal

Kumar Sankaran

Dr. Chitra Tanwar

Dr. Neeta Gupta

JyotirMoy Chatterjee

Dr. Gunjan Mishra

Dr. Seema Singh

Archana More

Dr Ajay Kumar

## Research Paper Reviewer

Dr. S. K. Singh

Dr. Pradip Chouhan

Dr. Narendrakumar S. Pal

Dr.shama khan

Dr Indrani Singh Rai

Dr.Surinder Singh

Amit Tiwari

Naveen Kumar Kakumanu

Dr Dheeraj Negi

Dr. Shailesh Kumar Singh

Ashim Bora

Dandinker Suryakant N

## Guest Editor

Dr. Lalit Kumar Sharma

## Advisory Board

Dr. Kanchan Goel

Praveen Kumar

Manoj Singh Shekhawat

Abilash

Vishnu Narayan Mishra

Dr. Gunjan Mishra

Jyotir Moy Chatterjee

Dr. Janak Singh Meena

# M,- jktæ ekgu HkVukxj d ,frgkfld miU;kl e xk/kh n'ku

*lEi.kkuUn xkre

*'kks/kkFkhZ jktdh; dyk egkfo|ky;] dkVk fo'ofo|ky; dkVk ¼jkt·

egkRek xk/kh dk lEi.k thou ekuo fgrk dh lk/kuk e rRLFk Hkko l çj.kk çnku dju okyk gA viu thou dky e jk"Vfirk egkRek xk/kh u ekuoh; eY;k ,o thou eY;k dh lkodkfyd pruk dk çk.koku cuk, j[kk gA thou dk gj iy ekuoh; fgrk dh ifr d y{; d çfr lkoèkku jgk gA egkRek xk/kh dk thou lR; ,o vfgl k d fl )kUrk dh lkodkfyd 0;k[;k gA bud }kjk çfrf"Br fd; x; thou eY;k u ekuo dk ,d fn'kk ,o lEcy fn;k ftlu 'kfä dk 'kkfr l lkeuk dju dh {kerk çnku dh gA 'kkfr dh Hkkouk dk ydj mUgku ij thou eu"; d ufrd x.kk dk vkpj.k e mrkju dk i.k ç;kl fd;k FkkA

egkRek xk/kh dh fopkj èkkjk ij èke ,o vè;kRe dk xgjk çHkko gA èke d vulkj viu thou dk mUgku ekuoh;rk l lEiä dj ,d vu'kklu LFkkfir fd;kA vkpj.k e Hkh tc lR; çdV gku yxrk g rk ekuo fuMj vkj fuHkÊd rk l fdl h Hkh leL;k dk lekèkku çklr dju e lQy gk tkrk gA thou e lR; d lkFk vfgl k dk ç;kx ekuo dk 'kkfr d ekx ij pyu dh çj.kk nrk gA egkRek xk/kh th ekuo dk mld ekuoh; x.kk dk vkpj.k e çfrf"Br dju ij cy nrA og ,d ,l lekt dh dYiuk djr g ftle ekuo viu dr0; ,o nkf;Ro dk ikyu djr g, 'kkfr dh LFkkiuk e lg;kx djA ,lk gku ij eu"; thou e jktuhfr] lkekftd vkj èkkfed thou e leUo; LFkkfir go ekuo thou ufrd x.kk d lkFk lo= çe ,o lnHkko dk çpkj djxkA

xk/kh th dk er Fkk fd dFkuh vkj djuh e vrj ugh gkuk pkfg,A vxj vki lR; vkj vfgl k dk vulj.k djr g rk vki dk bl viuh vUrjkRek d lkFk Lohdkj djuk gkxkA thou e lR; ,o vfgl k dk ç;kx ekufl d 'kkfr vkj vkfRed cy çnku dju okyk gkrk gA ^^xk/khoknh fopkj èkkjk e lokPp egRo lR; vkj vfgl k d fl )krk dk çklr gA

lR; vkj vfgl k dk xk/kh th eu"; e vrfufgr èkkfed Hkko d fodkl d fy, vifjgk; le>r FkA bu nkuk dk ,d vfHkHkkT; tkMk gA xk/kh th dk lR; bÜoj g vkj tk 0;fä nlj dk vk?kkr igpkrk gA lR; dk mYy?ku djrk gA fglk vlR; gA D;kfd og thou dh ,drk vkj ifo=rk d fo:} gA blfy, thou e vfgl k dk ikyu djuk lR; d mikld dk lcl cMk dr0; gA**¼1½

xk/kh th u viuh fopkjèkkjk e lR; vkj vfgl k dk 'kkfey gh ugh fd;k vfir llkj dh leLr vkljh çofÙk;k ij fot; çklr dju ljy vkj 'kkfrçn çe ekx ç'kLr fd;k gA** xk/khokn dh ey èkkj.kk gA vfgl k ekuo tkfr d ikl miyCèk egkure 'kfä gA o vfgl k dk foÜo d fouk'kdkjh 'kkL=k d lEi.k ;kx dh ryuk e Hkh vfèkd 'kfä 'kkyh vkj çHkkodkjh cukr FkA vfgl k ,d thou 'kfä g rFkk ijk llkj bl 'kfä }kjk fu;f=r ,o lpkfyr gkrk gA**¼2½

M,-jktUæ ekgu HkVukxj u viu ,frgkfld miU;kl e egkRek xk/kh th d thou pfj= dk çLrr djr g, bld fpru ,o fopkjèkkjk l tM fofoèk çlx ,o lnHkk dk Hkh 0;ä fd;k gA xk/kh th d egku 0;fäRo d fl )krk dk thou l ?k"k ,o ifjfLFkfr;k d lkFk çLrr dju dk lkFkd ç;kl miU;kl dkj u fd;k gA bUgku viu miU;kl e xk/khoknh fpru dk ikBd d le{k HkkokRed :i e çLrr fd;k gA

xk/khoknh fpru d nk cM fl )kr lR; vkj vfgl k gA lR; vkj vfgl k dk 0;kogkfjd thou e fdl çdkj] fdu ifjfLFkfr;k e ç;kx fd;k tkuk pkfg, bl dk foopu xk/kh th d thou lnHkk d eè;e l bud miU;kl e fd;k x;k gA

; viu miU;kl *dyh cfjLVj* d çkjEHk e fy[kr g **xk/kh ,d l?k"k gA mu vPNkb;k vkj cjkb;k d lkFk tk fdlh e de vkj fdlh e T;knk gkrh gA ij gkrh nkuk e gA mldk gkuk gh ekuo dk ekuo lk fn[kuk d fy, ckgj vnj l u doy vUrçfjr djrk gA cfYd viuh vkx ij ink gVku dh ftftfo"kk d lkFk thu vkj ?kjk dk rkMdj ckgj vku dh p"Vk Hkh djrk gA og fdl dk tkMrk gA vkj fdl dk rkMrk gA ;g tkuuk tkmud lkFk jg] mud fy, Hkh mruk gh dfBu FkkA ftruk mud u jgu ij mUg i<dj ]mud ckj e i<dj vkj Hkh ehekl dk dk utfj;k tku le>dj mudk tkuu dk nkok djukA

xUFkj] vefjdk d fo[;kr y[kd ;g ekur g, Hkh fd mue o lc vPNkb cjkb;k FkhA tk cM l cM egkRek

vorkj] jkturk] uhfrdkj] èke lLFkkid e Hkh gk ldrh gA mUg o lcl cM ipnkj 0;fä yx] tk fdlh dh idM e ugh vk ldrA dnkfpr egkurk ;gh gkrh g Bhd l ;g dguk Hkh dfBu gA**¼3½

M,- HkVukxj u egkRek 'kCn dh egkure ofÙk;k dh ljpukvk d vUr tky l Lo; dk vyx j[kdj ekuo dh 'kfä dk igpkuu dk lkFkd ç;kl *xkèkh d thou lnHkk l fd;k gA egkRek xkèkh dk egku ekuuk ykxk dh èkkj.kk gA ijUr mlegkure 0;fäRo d ihN lkodkfyd lR; tk lHkor% dgh u dgh egku 'kCn dh voèkkj.kk e NV x;k Fkk M,-HkVukxj u LFkkfir dju dk dk; fd;k gA

fdlh ,frgkfld 0;fä d thou e >kdu dk tk utfj;k lkfgR; dkjk dk gkrk gA olk utfj;k M,- HkVukxj dk ugh gA og mu ifjfLFkfr;k e Lo; dk vkRe lkr vuHko djr gA vkj fujrj o"kk dh dfBu lkèkuk d mijkUr mI ,frgkfld pfj= d thou dh ifjfLFkfr dk eY;kdu djr gA bud miU;kl thou pfj= dk 0;k[;ku ek= ugh vfir thou l?k"k dh HkkokRed çLrfr gA l?k"k l çfjr gkuk lgt gA ijUr l?k"k dk vuHko djuk dfBu gA ijUr miU;kldkj u viu miU;klk e bud thou l tM lkodkfyd lR; dk eY;kdu dju e lQy jgA

M,- HkVukxj u xkèkh d thou pfj= d ekè;e vè;kRe èke jktuhfr] lekt] çe] ekuoh; x.k] ufrd dr0;k] nkf;Rok dk fpru fd;k gA ogh vU;k;] vR;kpkj vkj 'kk"k.k HkznHkko d f[kykQ viuh vkfRed 'kfä d cy ij çfrjkèk Hkh fd;k gA egkRek xkèkh u ekuo dk ,d tkfr ekuk g og ekuo d fgr"kh gA blh dkj.k og ekuo ekuo e Hkn dju okyh gj uhfr pkg og tkfr çFkk gA uLy Hkn] jxHkn] Åp uhp] xjhc veh ;k vU; lHkh dk fojkèk djr gA&

** ,lk D;k gkrk g\ D;k ekuo dk ;g irk ugh g fd ekuo dh ,d tkfr gA] ,d èke gA vkj ,d gh uLy gA fQj HknHkko D;k**¼4½

xkèkh th lHkh èkek dk lEeku djr gA vkj lHkh d çfr mudh fu"Bk FkhA ijUr og èke ifjoru dh uhfr dk lHkh lgh ugh ekur gA D;kfd èke dk cnyuk ekuork dk çHkkfor djrk gA o ekur g fd çR;d 0;fä dk viu èke dk ikyu djr g, ekuo mRFkku d dk; dju pkfg,A èke ij mudk er blçdkj jgk fd og ekuo d fy, lgt ,o ljyrk d lkFk vkilh lnHkko d :i e mifLFkr jgA tc mUg blkb cuku d fy, dgk tkrk g rk og dgr g&

^^blkb gku e vkidk 'kHk fNik gA**

^^ejk 'kHk ej viu èke gA D;k dkb viu ek cki cny ldrk gA------ èke cnyu d fy, ugh gkrkA vki ykx D;k vU; èkeokyk dk fØf'p;u cuku d vfHk;ku e yxg, gA dHkh viu lkpk g fd vki nljk l èke ifjoru djkuk D;k pkgr g\ viu èke d fufeÙk dkb ,lk dke dhft, ftld vkid èke okyk dk mRFkku gk ldA] og vR;kpkj ugh djk nljk dk 'kk"k.k ugh djA vki viu èke okyk dk vkpj.k] 0;ogkj vkj orko nlj èkekoyfc;k d lkFk n[kdj pi cu g, gA

ij D;k**¼5½ xkèkh th dh lgtrk dk M,- HkVukxj u pruk dk :i çnku fd;k gA og gj txg vU;k; vkj vR;kpkj dk fojkèk djr gA mudk ekuuk g vR;kpkj dh lgu djuk vR;kpkj dk c<kok nukA xkèkh th e n'eu dk viuk cuk yu dh vnHkr {kerk FkhA og viu çfr}U}h dk {kek djr jgA D;kfd mudk ekuuk g fd dkb Hkh eu"; gn; l cjk ugh gA ml lR; dk Kku ugh gkrk gA ftld dkj.k og ?k.kk vkj vU;k; dk i{kèkj gk tkrk gA

Þekuo en 0;ogkj dk l;kl gA nfu;k e dVhy tu fxurh d gA lTtuk dk ckyckyk g dk'k fdlh fnu lTtu ox e vkRe lEeku d çfr tkx:drk vk tk, vkj og vU;k;] vR;kpkj vkj fojkèk dh Bku y rk eBBh Hkj ntu ox ikuh ekxrk utj vk;xkA ijUr mue ,lh pruk dku txk,xkA vk tr dk lTtu ox blfy, viekfur vkj Mjk gvk jgk gA vR;kpkj] vU;k; lgrk vk jgk gA D;kfd mldk viu ij l Hkjkslk mB x;k gA**¼6½

M,- jktUæ ekgu HkVukxj fgUnh Hkk"kk ,l miU;kldkj gA ftudk y[ku lkfgR; dh xfjek dk cuk, j[ku e fl) gA lkfgR; e Hkkok d çokg dk lryu bud miU;klk e n[kk tk ldrk gA egkRek xkèkh tl egku 0;fäRo d fopkjk dk fpru bud miU;klk e n[kk tk ldrk gA bUgku miU;klk e xkèkh }kjk çnÙk pruk dk ekuo lenk; d le{k mlh :i e çLrr fd;k g ftl :i dh dYiuk xkèkh th u dh FkhA ekuo dk ekuo d çfr çe bud ekuorkokn fopkjk dh vkèkkj f'kyk gA

M,- HkVukxj dk jk"Vfirk xkèkh d 0;fäRo u bruk vfèkd çHkkfor fd;k fd bUgku bud nf{k.k vÝhdk çokl d çlxk l lnHk xg.k djr g, bud thou ij ^dyh cfjLVj* uke l ,d Lor= miU;kl fy[kkA nf{k.k vÝhdk e vU;k; vkj vR;kpkj vkj 'kk"k.k pje ij FkkA

jx Hkn] uLy Hkn] veh xjhc tl rPN Hkknk e ekuo lEcUèkk dk rkyk tk jgk FkkA Lo; xkèkh th dk bl rPNrk dk vuHko djuk iMkA bUgku viu vfèkdkjk d çfr yMkb yMh vkj lkFk gh mu çokl h Hkkjrh;k d fy, Hkh ftud ekuoh; vfèkdkjk dk guu gk jgk FkkA bUg Þdyhß uke dk lEckèku fn;k tkrk FkkA tk mudh -f"V e ghurk

dk ifjpk;d FkkA xkèkh th dk l?k"k ykxk d fy, çj.kk cuk vkj çok lh Hkkjrh;k u mUg ÞHkkbß d lEckèku l idkjkA xkèkh th dk thou lR; vkj vfg lk dk thoUr mnkgj.k gA vkj m ldh çk lfxdrk u bl l kodkfydrk çnku dh g A

^egkRek* cuu d fy, ri djuk iMrk gA ri dj Lo.k vfèkd vkHkk nrk gA Bhd o l gh xkèkh th dk l?k"k u fujrjrk ndj Lo.kkfdr cuk fn;k g A o {kek ] n;k vkj lgkuHkfr] lR;] vkj vfg lk d lkFk pyu oky ifFkd g bUgku v lR; rk dk lkFk u ndj lR; dk ekx pukA i l dh ped] ned ] çfr"Bk dk ykHk] Hkkfrd l[k lefèk Hkh bud ekx e vojkèk u ik ldhA ekuo dk vkfRed cy vrjkRek l feyrk g] vkj vrjkRek lR; l çklr gkrh gA vr% bUgku lR; dk ekx viuk;k vkj vfg lk d vek?k vL= l l lkj dh 'kfä'kkyh lÙkk dk pukrh nhA thou dh vlQyrk Hkh budh çj.kk cuhA vkj lR;kxg budk iFk çn'kd jgkA xkèkh th d egku fopkjk u l lkj dk ,d uohu fn'kk çnku dh ftl l ekuo dk thou dh my>h xfRFk;k dk vklkuh l ly>k;k tk ldrk gA

xkèkh th lno ekuorkd i{kdkj FkA o ekur Fk fd ge lc ,d bÜoj dh lrku gA ge lHkh dk çe lnHkko vkj Hkkbpkj d lkFk jguk pkfg,A mudk fpru lno ekuo fgrk d y{; çfr lpr jgk&^^eu"; eu"; d chp ;g ?k.kk dgk l vk xb\ D;k vkneh vkneh d çfr uQjr dk Tokj HkkVk meMrk gA D;k uQjr dju oky ge Hkh] ?ke.Mh vkj vunkj 0;fä ,lk djr g, l[kh vuHko djr g\ D;k o vkun dk Hkh vuHko djr g\ D;k lekt HknHkko] jxHkn] tkfr Hkn vkfn l l?kM cuxkA d l mud 0;ogkj] vkpj.k l dkV gVkdj l;kj] n;k] lgkuHkfr] d :.kk] eerk] lfg".krk vkfn dh vkune;h c;kj dk cgk;k tk,**⁽⁷⁾

xkèkh th dk fpru lno lR; ,o vfg lk dk ydj jgk gA o budk ikyu viu Hkkfrd lxe rd djr gA o lR; dk bÜoj ekur g&** xkèkh okn h fopkjèkkjk e lokPp egRo lR; vkj vfg lk d fl ) kUrk dk çklr gA lR; vkj vfg lk d xkèkh th eu"; e vUrfufgr èkkfed Hkko d fodk l d fy, vifjgk; le>r Fk bu nkuk dk ,d vfoHkkT; tkMk gA xkèkh th d fy, lR; bÜoj g vkj tk 0;fä n lj dk vk?kkr igpkrk g] lR; dk mYy?ku djrk gA fg lk v lR; g] D;kfd og thou dh ,drk vkj ifo=rk d fo#) g blfy, thou e vfg lk dk ikyu djuk lR; d mik ld dk lcl cMk drO; gA**⁽⁸⁾

xkèkh dk thou l?k"k egku g] egkurk ifjfLFkfr;k d lkFk t>u dh gA mud 0;fäRo d le{k fcfV'k lÙkk dk vfLrRo Mxexku yxkA lÙkk d LokFkÊ 'kk ldk u mUg çykHku fn; ijUr ftl ekuo e ijekRek fn[kkb nu yx ml vkj D;k pkfg,A o lR; d fy, viu Hkko dk lefir dju dk Hkko j[kr gA o ekur g fd ç;kx ,o 'k:vkr Lo; l djuh pkfg,A èkhj&èkhj ykxk dk ;g ckr le>u vku yxrh gA

^^xk.Mho gj ,d ugh mBk ldrk vkj u ln'ku ç;kx gj ,d d cr dh ckr gA Bhd ,l gh vfg lk dk vL= 'kL= mBkuk gj ,d d l lHko ugh gA dkb ekj ;k uk ekj Lo; eju dh rjQ c<uk iMrk gA ,l fcUn vrrkxRokeR; e gh 'keu ikr gA eR; Hkh vfg lk g] c'kr cgr l ykxk d fgr d fy, gA ;k og 'kHk Hkh gA**⁽⁹⁾

egkRek xkèkh dk lEi.k thou ykxk d thou l?k"k vkj fofoèk çlxk d fy, vkt Hkh çklfxd gA mudk fpru ekuorkokn dh LFkkiuk dk çfrf"Br djrk gA mUg ,d ;x çord d :i e n[kuk gh lkodkfyd pruk dk ifjpk;d gA

fuLokFk ekuo lok dk ,lk lkèkd ftlu fuHkÊd ,o fuMj gkdj ekuo dk m ld vfèkdkjk dk fnyku d fy, leLr thou vfir dj fn;k Fkk A ge mUg bl jk"V dk ;x çord eku ijUr mudk drO; iFk ,d firk 0;fäRo dk ifjHkkf"kr djrk gA ,l jk"Vfirk egkRek xkèkh d fopkjk dk Lej.k gku ij gkFk Lo; J)k l tM tkr gA

**lnHk lph**


1- çfrfufèk Hkkjrh; jktuhfrd fopkjd&i[kjkt tu i- 147
2- çfrfufèk Hkkjrh; jktuhfrd fopkjd&i[kjkt tu i- 148
3- dyh cfjLVj&M,-HkVukxj i- 08
4- dyh cfjLVj&M,-HkVukxj i- 77
5- dyh cfjLVj&M,-HkVukxj i- 80
6- dyh cfjLVj&M,-HkVukxj i- 39
7- dyh cfjLVj&M,-HkVukxj i- 191
8- çfrfufèk Hkkjrh; jktuhfrd fopkjd&i[kjkt tu i- 147
9- dyh cfjLVj&M,-HkVukxj i- 09